उषाकाल

पं० हरिनारायण आपटे

उषाकान्त

(ऐतिहासिक उपन्यास)

(दूसरा भाग)

मूल लेखक—

स्वर्गीय हरिनारायण आपटे

प्रकाशक—

हिन्दी पुस्तक एजेन्सी

१२६, हरिसन रोड, कलकत्ता।

ब्रांचः—देहली और काशी

१९८१

प्रथमबार

मूल्य २॥)
खद्दर जिल्द ३)
रेशमी जिल्द ३।)

मुद्रक
किशोरीलाल केडिया
वणिक् प्रेस
१, सरकार लेन, कलकत्ता

उषाकाल

दूसरा खण्ड

इकतालीसवां परिच्छेद ।
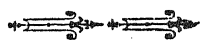
यह क्या बला !

एक पूरा दिन होगया, दूसरा दिन भी व्यतीत होगया; किन्तु नानासाहबका वह पागलपन दूर नहीं हुआ। वह और भी अधिकाधिक बढ़ने लगा। प्रति दिन वे अपने कामके लिए बाहर निकलते, पर काम तो एक ओर रह जाता; और उसी युवा पुरुषके महलके सामनेसे बार बार चक्कर काटते रहते कि, एक बार फिर उसके दर्शन होजावें। बस, यही सिलसिला जारी रहा। उनके मनकी अशान्ति अधिकाधिक बढ़ने लगी। तानाजी इत्यादिने कई बार उनसे पूछा कि, जिस कामके लिए हम लोग आये हैं, उसकी ओर तो तुम्हारा कुछ भी ध्यान नहीं है; और यह क्या लगा रखा है? पर उनकी ओरसे उसका कोई भी सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिला। नानासाहबने बहुत कुछ पूछ-तांछ की कि, यह किसका महल है? यहां जो सरदार रहता है, वह कौन है? वह युवा पुरुष कौन है? इत्यादि जहां-तक उनसे पता लगाते बना, सब कुछ पता लगाया; पर कोई भी पता नहीं लगा। कोई कुछ नाम बतलाता, कोई कुछ। कोई उनकी हँसी ही करने लगता। इसके सिवाय एक बात उन दो दिनोंमें और भी हुई कि, जिससे नानासाहबकी अशान्ति बढ़नेमें और भी अधिक सहायता मिली। वह बात इस प्रकार

है कि, पहले दिन रातको जिस विचित्र व्यक्तिने उनको रहनेके लिए स्थान दिया था; और कह गया था कि, "हमारा और आपका दुश्मन एक ही है, उससे बदला लेने—आजतकके दुष्कृत्योंके लिए उसको दण्ड देने—का कार्य हम दोनों ही मिलकर करेंगे; और जब अन्तिम दण्ड देनेका मौक़ा आजाय, तब यह काम आप मेरे ही लिये रख छोड़ें। आपके पंजेमें भी आजाय, तो भी आप उसे दण्ड न दें। आपको यदि किसी सहायताकी आवश्यकता हो, तो मुझसे कहियेगा। मैं आपको सब प्रकारकी मदद करूंगा।" इत्यादि इत्यादि लम्बी-चौड़ी बातें करके वह यह भी कह गया था कि, "मैं प्रति दिन रातको आपसे मिलता रहूंगा।" परन्तु वह आज दो-तीन दिनसे नाना साहबको बिलकुल नहीं दिखाई दिया था; और न उसकी ओर-से कोई सन्देशा या संकेत इत्यादि ही मिला था। इसकारण नानासाहबकी चित्तवृत्ति और भी अधिक अशान्त होरही थी। उनकी यह दृढ़ श्रद्धा थी—और उनकी ऐसी श्रद्धा होनेका कारण भी पर्याप्त था—कि,हम इस विचित्र व्यक्तिसे कोई न कोई लाभ अवश्य उठा सकेंगे। बीजापुर शहरमें आये उनको अभी पूरे पूरे दो घंटे भी नहीं हुए थे कि, जिस व्यक्तिने उनको पूरा पूरा पहचान लिया, यही नहीं, बल्कि किस कामके लिए आये हैं, सो भी बतला दिया, उस व्यक्तिको ऐसी ऐसी बातें अवश्य ही मालूम होनी चाहिए कि, बीजापुरमें कहां क्या होरहा है, कौन कहां रहता है, किसके कैसे विचार हैं, इत्यादि। यही क्यों?

बलिक बीजापुरके सम्पूर्ण मुख्य मुख्य व्यक्तियोंकी सब बातोंपर पूरी पूरी नज़र रखकर उनके विषयमें सब समाचार जानते रहना—यही उसका काम ही दिखाई देता था। इसलिए नाना-साहबको यह विश्वास होचुका था कि, वह व्यक्ति भी, हमारी ही तरह, ऐसे ही किसी कामके लिए, आया है। परन्तु वह आया किसकी तरफसे; और कैसे आया, तथा वास्तवमें यह है कौन, इत्यादि बातोंका उन्हें कुछ भी पता न चला। उनका ख़याल था कि, शायद मार्गमें घूमते हुए वह हमें कहीं मिल जायगा, और तब हमको अपनी पहचान देगा, अथवा कुछ संकेत करेगा; पर यह आशा भी उनकी इन दो दिनोंमें पूरी नहीं हुई। इसके सिवाय उस बड़े महलमें जिस नवयुवकको उन्होंने देखा था, उसका नाम-ग्राम मालूम होनेकी उत्कण्ठा उनके मनमें पराकाष्ठातक पहुँच चुकी; और इसके बिना उनको और कुछ सूझने ही न लगा। अन्तमें उनके साथीको मानो उनकी वह अत्यन्त विलक्षण दशा बिलकुल दुस्सहसी जान पड़ने लगी, तब तीसरे दिन रातको तानाजीने उनसे कहा, "नाना-साहब, आज दो दिनसे मैंने अपने मनको अत्यन्त कठिनाईके साथ रोक रखा है। समझा था कि, तुम अपने मनकी बात कुछ न कुछ बतलाओगे—न अभी बतलाओगे, तो कुछ देर बाद बतलाओगे—अथवा उसमें कुछ भी तत्व न समझकर उसको छोड़ ही दोगे; और जिस कार्यके लिए हम आये हैं, उसकी ओर कुछ ध्यान दोगे; पर तुम्हारी कुछ हालत ही समझमें नहीं आती। पहले

दिनसे आज देखता हूं, तो तुम्हारी दशा और भी कुछ विलक्षण दिखाई देरही है। मैंने समझा था कि, तुम्हारे मनमें जो बात है, उसको तुम साफ़ साफ़ मुझे बतला दोगे; और इससे उसका निर्णय करने अथवा उसका और भी अधिक पता लगानेमें हमको सुभीता होगा, पर ऐसा कुछ तुम्हारी ओरसे दिखाई नहीं देता। इधर राजा शिवाजीने तो हम लोगोंसे ताकीद कर दी है कि, जिस कामके लिए हम आये हैं, वह, जितनी जल्दी होसके, करके हमको वापस चलना चाहिए। हां, काम करनेमें हमको चाहे कुछ दिन लग भी जावें, उसकी बात अलग है; पर दो दिन जिस प्रकार हमने व्यतीत कर दिये, उसी प्रकार यदि और आगे भी व्यतीत करते रहेंगे, तो कैसे काम चलेगा? कल यहांसे थैली जानी चाहिए। उस थैलीमें क्या लिख भेजेंगे? यही कि, हम कुशलपूर्वक पहुँच गये? इसके सिवाय और क्या लिखेंगे? 'जिस कामके लिए आये हैं, उस कामकी तैयारीमें लग गये'—यह भी तो नहीं लिख सकते; क्योंकि अभीतक यहां आकर किसी कामका प्रारम्भ ही नहीं किया है। इसलिए बतलाइये, आपका ऐसा ही हाल और कितने दिनतक रहेगा? अबतक हमको कुछ न कुछ कार्य छेड़ देना चाहिए था।"

तानाजी जिस समय यह सब कह रहे थे, उनकी चेष्टा कुछ गम्भीर भी होरही थी;और इसकारण ऐसा जान पड़ा कि,नाना-साहबको उनका कुछ भय भी मालूम हुआ। तानाजी जिस

वक्त उपर्युक्त बातें कह रहे थे, मानो उनको उत्तर देनेके लिए ही नानासाहबके होंठ कई बार फड़केसे थे; परन्तु बाहर उनके मुँहसे एक अक्षर भी नहीं निकला। तानाजीका भाषण समाप्त हुआ। तब भी उनके मुँहसे कोई शब्द न निकला—यद्यपि पहले उनके होंठ इतने फड़क रहे थे कि, ऐसा जान पड़ता था कि, उनके भाषणके समाप्त होते ही शायद ये बहुत कुछ बोल जायँगे। परन्तु कह नहीं सकते, उनके मुँहसे कोई उत्तर क्यों नहीं निकला—शायद, तानाजीकी चेष्टामें उस समय जो एक प्रकारकी निष्ठुरता दिखाई देरही थी, उसी कारणसे वे कुछ न कर सके हों; और जो शब्द कि, बिलकुल उनके होंठोंपर ही आरहे थे, वे जैसेके तैसे भीतर ही रह गये हों। जो कुछ भी कारण हो; किन्तु तानाजीने नानासाहबकी वह सब दशा देखी अवश्य। हां, यह अवश्य ही उनके ध्यानमें नहीं आया कि, नानासाहबके ऐसा करनेका कारण क्या है। जो कुछ भी हो, तानाजी जिस कार्यके लिए आये हुए थे, उस कार्यके अतिरिक्त और कोई भी बात उनके मस्तिष्कमें आ नहीं सकती थी। वे ऐसे व्यक्तियों-मेंसे एक व्यक्ति थे जोकि, अपने कार्यके सामने और किसी भी बातको महत्व नहीं देते; और अपनी धुनके बिलकुल पक्के होते हैं। उनके मनमें यह बात बार बार आरही थी कि, देखो, इन्हीं दो दिनके बीचमें हमने न जाने कितना काम कर लिया होता; और इसकारण उनका मन अत्यन्त असन्तुष्टसा होरहा था। उन्होंने सोचा कि, देखो, नानासाहब अपने पिताकी हालत जान-

कर उनको छुड़ानेके लिए आये थे, सो इस विषयका तो ये रत्तीभर भी पता नहीं लगाते; और न इस विषयमें कुछ विचार ही करते हैं। हां, एक खिड़कीमें उस युवक सरदारको जबसे इन्होंने देख लिया है, तबसे उसीके पीछे पड़े हैं—उसीका पता लगानेके लिए इतने आतुर होरहे हैं। इसका कारण कुछ उनकी समझमें न आया; और न नानासाहबने स्वयं ही कुछ बताया। ऐसी दशामें तानाजीका असन्तुष्ट होना स्वाभाविक ही था। और कोई व्यक्ति होता, तो शायद नानासाहबसे इस प्रकार डांटकर न पूछता। वह शायद फेरफारसे नानासाहबके मनकी बात जान लेनेका प्रयत्न करता; पर तानाजी मालुसरे एक मावलेका सच्चा-सीधा बच्चा था। उसको फेरफारकी बातें क्या मालूम ? शिवाजी महाराजपर उसका अत्यन्त प्रेम था; और उनके बतलाये हुए कार्यको सचाईके साथ पूर्ण करना ही उसका मुख्य उद्देश्य था। इधर दो दिन होगये; और जिस उद्देश्यसे आये, उसके लिए कोई प्रयत्न भी नहीं होसका। ऐसी दशामें उसे सन्तोष कैसे होसकता था ?

नानासाहबको तानाजीकी बातोंसे बहुत खेद हुआ; परन्तु फिर भी वे अपना दिल खोलकर यह नहीं बतला सके कि, उस युवा पुरुषका पता लगानेके लिए वे इतने उत्सुक क्यों होरहे हैं। उस समय भी वे अपने संकोचको छोड़ नहीं सके; और बड़ी लाचारीके साथ सिर्फ इतना ही कहा, "मेरे मनमें सिर्फ यही बात बार बार आरही है कि, पहले दिन रातको, जिस

मनुष्यने हम लोगोंको इस मकानमें स्थान दिया था, वही यदि एक बार फिर आपसे भी मिल जाय, तो बड़ा अच्छा हो। उसके मिलनेसे हम लोगोंको अपने काममें बड़ी सहायता मिलेगी। ऐसा जान पड़ता है कि, उसको यहांके दरबारकी सब छोटी-बड़ी बातें मालूम हैं। जो कुछ उसने बतलाया; वह यदि सब सच है, तो उस मनुष्यसे हमको बहुत कुछ लाभ पहुँच सकता है; और वह लाभ हम क्यों न उठा लें ? बस, यही मेरा कहना है। लेकिन आज दो दिनसे उसका कुछ पता ही नहीं है। ऐसी दशामें आज रातको रास्ता देखकर कलसे हम अपना कार्य निस्सन्देह प्रारम्भ करेंगे।"

तानाजीको उनका यह उत्तर कुछ सन्तोषजनक नहीं मालूम हुआ। उनको यह स्पष्ट ही मालूम होगया कि, असली बात नानासाहब अब भी हमसे छिपा रहे हैं। परन्तु इसका कारण क्या है, सो कुछ उनके ध्यानमें नहीं आया। तथापि, नानासाहबकी उस समयकी चेष्टा; और ऊपर जो शब्द उन्होंने कहे, उनके उच्चारण करनेका ढंग इत्यादि देखकर फिर तानाजीको ऐसी इच्छा बिलकुल ही नहीं हुई कि, उनसे और कुछ पूछा जाय, अथवा उनको और कुछ कहा जाय। उन्होंने सोचा कि, इसपर अब इनसे क्या कहें—हां, कुछ कहना चाहिए, इसलिए इतना उन्होंने कह दिया कि, "अच्छा, ठीक है।"

नानासाहब भी आखिर चतुर ही थे, वे उनके मनकी बात समझ गये;और मन ही मन बड़े लज्जितसे हुए; पर करते क्या ?

अपने मनकी बातको स्पष्ट रूपसे बतलानेका उनको साहस ही न होता था। यह वे भलीभांति जानते थे कि, अन्तमें इनको सब बतलाना ही पड़ेगा, बिना बतलाये काम ही न चलेगा, आज नहीं बतलावेंगे, तो कल बतलावेंगे। जैसी भयंकर शंका उनके मनमें आरही थी, वैसी यदि सचमुच ही दशा थी, तो सब बातें उनको बतलानी चाहिए थीं; और नानासाहबको भी यह बात भलीभांति ज्ञात थी, पर उनके होंठोंके बाहर शब्द ही न निकलते थे, इसके लिए वे बेचारे करते क्या?

उपर्युक्त रीतिसे दोनोंकी बातें हुईं; और फिर वह विषय वहींतक रह गया। वही विषय क्यों? फिर और कोई विषय ही उनकी बातोंमें नहीं छिड़ा, अथवा यों कहिये कि, फिर आगे उस समय, उनमें कोई बात-चीत ही नहीं हुई। सभी अपने ही अपने मनमें उन्हीं बातोंपर विचार करते हुए रह गये। हां, नानासाहब उस दिन, शामके पहर, फिर बाहर नहीं गये। तानाजी अपने साथियोंमेंसे एक दूसरे ही साथीको अपने साथ लेकर, फिर उस दिन, रोज़मर्राकी तरह, भेष बदलकर गये। नानासाहब साथ नहीं गये, इस बातपर उन्हें एक प्रकारसे सन्तोष ही हुआ। क्योंकि नानासाहब होते, तो फिर इधर-उधर घूमकर उसी महलके पास उन्हें बार बार आना होता कि, जिसकी खिड़कीमें उन्होंने उस नवयुवक सरदारको देखा था। अबतक सारे बीजापुरका एक बार चक्कर होजाना चाहिए था; पर सो कुछ अभीतक हुआ नहीं था। इसपर तानाजीको बार-बार बड़ा

खेद होरहा था। इसलिए आज उन्होंने सोचा था कि, हम अकेले ही चक्कर लगावेंगे; और तदनुसार बीजापुरके अधिकांश भागमें उन्होंने आज चक्कर लगाया भी।

इधर उस भूतोंकी हवेलीमें आज नानासाहब अकेले ही बैठे हुए मन ही मन विचार कर रहे थे। जिस मनुष्यने हमसे उस रातको इतनी लम्बी लम्बी बातें मारीं; और इस प्रकारके वचन दिये कि, हम रोज तुमसे मिलते रहेंगे; और जो कोई काम हो, हमें बतलाना,—वह महाशय आजतक क्यों नहीं दिखाई दिया? आज रातको क्या उसके आनेकी कोई सम्भावना है? बस, इसी प्रकारकी विवेचनामें नानासाहिब उस समय इधरसे उधर चक्कर काट रहे थे। इसके सिवाय, उस समय उनके मनमें और भी नाना प्रकारकी तरङ्गें उठ रही थीं। उन तरङ्गोंमेंसे अधिकांश तरंगें उस नवयुवक मराठेके सम्बन्धमें थीं, सो बतलानेकी यहां आवश्यकता ही नहीं। क्योंकि वह उस समय नानासाहबके मनका एक ख़ास विषय होरहा था। जो हो। इस प्रकार धीरे धीरे रात हो-गई। चारों तरफ अन्धकार झुकने लगा। लेकिन तानाजी और उनके साथियोंका बिलकुल पता नहीं। रोज़का उनका आनेका समय व्यतीत होगया। इससे नानासाहबके हृदयमें और भी अनेक प्रकारकी शंकाएं उपस्थित होने लगीं। जिनमें एक शंका यह भी थी कि, देखो, तानाजीने हमसे बार बार पूछा, लेकिन हमने उनके प्रश्नोंका ठीक ठीक उत्तर नहीं दिया,

अच्छी तरह बोले नहीं, इससे कहीं वे नाराज़ तो नहीं होगये! हमको छोड़कर कहीं चले तो नहीं गये? ऐसी विचित्र शंका उनके मनमें आई। रोज़का समय निकल गया—नहीं, नहीं, उससे और भी अधिक देर होगई; फिर भी उनका कोई पता नहीं। अब हम जाकर उनका पता लगावें; पर पता भी कहां लगावें? बस, इसी प्रकारके विचारोंमें नानासाहबका मन चक्कर खारहा था कि, इतनेमें किसीने दरवाज़ेपर थाप मारी। इसलिए यह समझकर कि, अब हमारे साथी आगये, उन्होंने अपने दूसरे साथीसे, जो वहां मौजूद था, दरवाजा खोलनेके लिए कहा। पर विचित्रता क्या हुई कि, वह मनुष्य दरवाजा खोलकर देखता है, तो वहां कोई नहीं—आसपास किसी मनुष्यके आनेकी आहट भी नहीं। दरवाजेपर थाप ज़रूर बैठी थी; और उन दोनोंने उसे स्पष्ट रूपसे सुना था। इसलिए नानासाहबने अब सोचा कि, शायद दरवाजेपर थाप मारकर कोई इधर-उधर छिप रहा हो। उनके मनमें यह भी आया कि, कदाचित् वही विचित्र पुरुष हमसे कहीं मिलने न आया हो। इसलिए नानासाहबने, अपने साथीसे वहीं बैठनेके लिए कहकर, स्वयं उसको देखनेके लिए जानेका विचार किया। उनको पूरी पूरी आशा हुई कि, शायद वही पुरुष आया होगा। हमसे मिलनेके लिए वह वचन भी देगया था, अतएव अब उसको जाकर देखना चाहिए।

यह सोचकर नानासाहबने अपने साथीसे तो वहीं बैठनेके

लिए कहा; और आप एक छोटीसी लालटेन लेकर बाहर निकले। हां, बाहर निकलते समय उन्होंने अपने पीछेका दरवाजा अवश्य बन्द कर लिया। इसमें उनके मनका हेतु यही था कि, शायद वही विचित्र पुरुष न आगया हो कि, जिसका हम इतनी देरसे रास्ता देख रहे थे—किंबहुना जिसके लिए हम अब एक प्रकारसे निराशसे होरहे थे; और यदि वह आगया होगा, तो उससे जब हम बातें करने लगेंगे, तब वे भीतर सुनाई देंगी; और यह ठीक न होगा। इसलिए यह दरवाजा बन्द कर लेना चाहिये। अस्तु। उस दरवाजेको मज़बूतीके साथ बन्द करके वे बाहर निकले; पर किसी मनुष्यकी उन्हें आहट भी न मिली। मकानके बाहर चारों तरफ उन्होंने पता लगाया; पर सब व्यर्थ! तब उन्होंने सोचा कि, शायद दरवाजा हवासे ही खड़का होगा, कोई मनुष्य तो आया नहीं। इतनेमें उनको क्या आहट मिली कि, जैसे बहुत दूरपर कोई मनुष्य आरहे हों, अतएव उन्होंने सोचा कि, ये अवश्य ही हमारे साथी तानाजी इत्यादि होंगे। फिर उन्होंने विचार किया कि, इनके पास आनेके पहले ही हमको जो कुछ पता लगाना हो, शीघ्रतापूर्वक लगा लें। अतएव इसी विचारसे फिर एक बार उन्होंने उस हवेलीके आस-पास चक्कर लगाया। इतनेमें वे मनुष्य, जो दूरसे आरहे थे, अब बिलकुल पास हो आपहुँचे। इसलिए यह सोचकर, कि अब किसीका पता यहां नहीं लगेगा, नानासाहब फिर अपने दरवाजेसे अन्दर जाने लगे। परन्तु पीछे मुड़कर क्या देखते

हैं कि, किवाड़ोंकी दराज़में कोई सफ़ेदसी चीज़ अटकी है। उसको निकालकर देखा, तो वह एक काग़ज़का टुकड़ा दिखाई दिया! उसको उन्होंने अपने साथ लेलिया; और दीपकके उजेलेमें देखा। "आज आधी रातके बाद, जब सब लोग सो जायँ, आप इस हवेलीके उत्तरकी ओर, बरगदकी पांतके पास, आवें"—बस, इतने ही अक्षर उसमें लिखे थे। अक्षर बहुत जल्दी जल्दी वैसे ही घसीटसे दिये गये थे। उसको पढ़कर नाना-साहब बहुत ही चकराये। नीचे किसीका हस्ताक्षर भी नहीं था। और न यही प्रकट किया था कि, हम कौन हैं, किस-लिए आपको बुलाते हैं, इत्यादि। अतएव नानासाहब अब इस विचारमें पड़े कि, शायद यह उसीका बुलावा आया हो कि, जिसने हमको मिलनेका वचन दिया था। फिर उन्होंने यह सोचा कि,ऐसा न हो,जो कोई धोखा देकर हमको वहां बुलाता हो; और फिर वहांसे पकड़ लेजाय। आज तीन दिनसे हम बस्तीमें घूमते तो रहे ही हैं, सो शायद किसीने पहचान लिया हो, अथवा दरबारमें जाकर ख़बर ही देदी हो, अथवा ख़बर भी न दी हो; और यों ही पकड़ लेजाकर हमको कहीं बन्द कर दे! इसका क्या ठीक है! इस तरह नाना प्रकारके कुतर्क नानासाहबके मनमें आने लगे। इतनेमें उनको अपने पीछे किसीके आनेका भास हुआ। मुड़कर देखते हैं, तो वही, उनके साथी, जो बस्तीमें घूमने गये थे। अब एक क्षणभरके लिए ही उनके मनमें यह विचार आया कि, हमारे पास जो यह

संकेतपत्र आया है—यह रातको एकान्तमें मिलनेका जो आमंत्रण आया है—यह हम अपने साथियोंको दिखावें या नहीं। यह अभी उन्होंने सोचा ही था; और अभी शायद किसी निश्चयपर पहुँचे भी न थे कि, इतनेमें तानाजीने उनसे—"क्यों नानासाहब, तुम बिलकुल पागलकी तरह यह क्या बातें कर रहे हो? बिलकुल अकेले बाहर आकर क्या देख रहे थे? तुम्हारी चेष्टा ऐसी क्यों होरही है?" इत्यादि प्रश्न किये। उनको प्रश्न करते देर नहीं हुई थी कि, नानासाहबका उक्त विचार यह निश्चित हुआ कि, अभी इस विषयमें हमें इनसे कुछ न कहना चाहिये। शायद वही मनुष्य हो कि, जिसने रातको आकर मिलनेका वादा किया था; और यदि वही होगा, तो उसको चूंकि हम यह वचन देचुके हैं कि, तुम्हारे विषयमें हम किसीसे कुछ कहेंगे नहीं, चुपके ही तुमसे मिला करेंगे, इसलिए वचन भङ्ग होगा, यह भी अच्छा नहीं। यह सोचा और तुरन्त ही तानाजीको उत्तर दिया—"कुछ नहीं। तुम्हारे आनेका समय निकल गया था; और फिर भी तुम आये नहीं, इसलिए चिन्ताके कारण कुछ अस्वस्थ था; और भीतर बाहर निकल निकलकर घूम रहा था। तुम आज कहां कहां गये? इतनी देर कहां लग गई?" इस प्रकार पूछते पूछते नानासाहब भी उनके साथ भीतर चले गये; और हाथमें जो कागज़ लिये थे, उसको चुपकेसे फाड़-फूड़कर फेंक दिया। नानासाहबका उपर्युक्त कथन तानाजीको सच मालूम हुआ।

इसके सिवाय वे उस समय कुछ आनन्दमें भी थे, इसलिए ऐसा जान पड़ा कि, उनका मन भी उस समय ऐसी अवस्थामें न था कि, नानासाहबकी उस सारी दशाका बारीकीके साथ विचार करता। अस्तु। सब लोग जब अन्दर चले गये, तब तानाजी आज कहां कहां कैसे कैसे घूमे, क्या क्या देखा, सुना, अथवा किया, इत्यादि सब वृत्तान्त नानासाहबको बतलाने लगे। "गत तीन दिनसे जो बाज़ार और मुहल्ले नहीं देखे थे, उनमेंसे अधिकांश आज देख लिये। सैयदुल्लाखां, अबदुल्लाखां, रणदुल्लाखां, मुरारपन्त इत्यादि सरदारोंके महल देखे। हमको जो जानकारी आगे चाहिए, उस जानकारीको प्राप्त करनेके लिये क्या क्या उपाय करना चाहिए, सो सब आज हमने सोचे। अप्पासाहब जहां रहते हैं, वह मुक़ाम भी देखा; और जिस युवा पुरुषपर तुम्हारा इतना प्रेम होगया है, उसका भी कुछ थोड़ासा पता लगा आये।" यह अन्तिम वाक्य उच्चारण करते हुए तानाजी कुछ मुस्कुराये; और कुछ विनोदपूर्ण दृष्टिसे नानासाहबकी ओर देखने लगे। नानासाहब, जोकि अप्पासाहबका नाम निकलते ही उत्कंठित हुए थे, अब अन्तिम वाक्यसे और भी अधिक उत्कंठित दिखाई दिये। परन्तु ज्यों ही उन्होंने देखा कि, तानाजी कुछ विनोदपूर्वक बोल रहे हैं, त्यों ही उनको अपनी वह उत्कण्ठा भीतर ही भीतर दबा रखनी पड़ी। आगे कुछ भी और पूछनेका उनको साहस न हुआ। परन्तु तानाजीने और कुछ पूछनेकी आवश्यकता ही नहीं रखी;

क्योंकि तुरन्त ही वे फिर बोल उठे, "देखो, तुम दो दिनतक बराबर उस महलके ही आसपास घूमते रहे; और कुछ भी पता न लगा सके; और हम आज बातकी बातमें ही कितनी बातोंका पता लगा आये! कल जहां हम फिर गये कि, सब बातोंका पूरा पूरा पता लगा आये बिना लौटेंगे नहीं। और परसोंसे फिर अपने उद्योगमें लग जायंगे। अपने उद्योगके लिए जो महल देख आये हैं, वह बिलकुल वैसा ही है, जैसाकि हमको चाहिए था—बीच बाज़ारमें, जहांकि हमारी इच्छा थी, वहीं वह है। अच्छा तो तुमको उस युवा सरदारके विषयमें जानना है न? उसके विषयमें आज जितना पता मिल सका है, उतना मैं तुमको बतलाता हूं; इससे शायद तुम्हारा चित्त कुछ शान्त हो। और फिर कल जो कुछ पता लगेगा, उसे कलही बतलावेंगे। इस नवयुवक सरदारको रणदुल्लाख़ां लेआया है। रणदुल्लाख़ां अप्पासाहबको क़ैद कर लेआनेके लिए जबकि सुलतानगढ़ जारहा था, तब मार्गमें यह सरदार उसे मिल गया। और जैसा तुम्हारा प्रेम उसपर होगया, वैसा ही उसका भी होगया। इसलिए उसने एकदम ही उससे कहा कि, "चलो तुमको सरदार बनावेंगे। तुम हमारे साथ दरबारको चलो।" वह युवा पुरुष उसको यद्यपि बहुत कुछ मना करता रहा, पर रण-दुल्लाख़ां नहीं माना; और आग्रहपूर्वक उसे अपने साथ लेता आया। अब यह महल देकर उसने उसीमें उसको रख दिया है। परन्तु बादशाहसे अभी उसकी मुलाक़ात नहीं कराई।"

इत्यादि इत्यादि बातें बतलाकर तानाजीने अपनी देखी हुई और भी अनेक बातें बतलाईं। परन्तु नानासाहबका चित्त अब उन बातोंमें नहीं लगा—वे मानो और भी अधिक घबड़ाहटमें पड़ गये; और तानाजीकी अन्य बातें उनको बिलकुल नहीं रुचीं। अन्तमें निद्रा आनेका बहाना करके, बिना भोजन किये ही, वे बिछौनेपर पड़ रहे।

अब उनका सारा चित्त उस बुलावेकी ओर लग गया। उन्होंने सोचा कि, अब कुछ भी हो, उस बुलावेके अनुसार हमको जाना अवश्य चाहिए; और बात क्या है, सो देखनी चाहिए—यदि वही मनुष्य होगा, तो सब बातोंका खुलासा आप ही आप होजायगा। बस, यह निश्चय करके आधीरातके क़रीब वे उठे। अपने हथियार बांधे और बाहर निकले। नानासाहबके यह ध्यानमें भी नहीं आया कि, उनकी सारी बातोंकी ओर और भी किसीका ध्यान है। परन्तु जिसका ध्यान था, सो उठा नहीं। क्योंकि उसने समझा कि, ये उसी गुप्त मनुष्यसे मिलने जाते होंगे। अस्तु। नानासाहब बाहर निकलकर उत्तरकी ओर गये। बरगदकी पांतके पास अभी वे पहुँचे ही थे कि, इतनेमें पीछेसे तीन आदमियोंने एकदम उनपर धावा कर दिया। आगेसे दो आदमियोंने उनके मुंहको बांध दिया; और नानासाहब अभी सोचने भी न पाये थे कि, यह क्या होरहा है, कि इतनेमें वे उठाकर उनको लेचले। नाना-साहबने बहुत कुछ हाथ-पैर चलाये, पर कुछ लाभ न हुआ।

बयालीसवां परिच्छेद।

नानासाहब ग़ायब होगये।

जैसाकि हमने पिछले परिच्छेदमें बतलाया, आधीरातके लगभग नानासाहबकी यह दशा हुई। वह दशा जिन लोगोंने की, इतनी ख़ूबीके साथ की कि, पास ही उस हवेलीमें जो लोग थे, उनमेंसे किसीको इसकी आहट भी न लगी। तानाजी और उनके साथियोंको इस बातकी शङ्कातक न थी कि, इस प्रकार-की कोई दग़ाबाज़ी होगी। उन्होंने सिर्फ़ इतना ही समझा था कि, जिस व्यक्तिने अपना नाम-ग्राम इत्यादि गुप्त रखकर यह हवेली हमारे रहनेको खाली कर दी, वही व्यक्ति नानासाहबसे मिलने आया होगा; और नानासाहब सिर्फ उससे बातचीत करने गये होंगे। अब उनकी बातचीत होने देना—उसमें विघ्न न डालना—ही इस समय सर्वथा इष्ट है। नानासाहब हमको वह बात बतलाना नहीं चाहते, ऐसी दशामें हम अपनी तरफ़से बीचमें हस्तक्षेप क्यों करें? हम यदि इसमें कोई दख़ल देंगे, तो सारा उद्देश्य एक ओर रह जायगा; और बीचमें औरका और ही होने लगेगा। आज दो-तीन दिनसे नानासाहबकी तबीयत यों ही ख़राब होरही है, फिर उसमें यदि हम उनके मनके विरुद्ध कोई बात करेंगे, तो व्यर्थके लिए हम मानो अपने कार्यको आप ही हानि पहुँचावेंगे। बाहर कोई दुर्घटना होगी, इसकी

किसीको शङ्का भी नहीं हुई। इससे स्वाभाविक ही बाहर जाकर दूरसे भी देखनेकी किसीको आवश्यकता प्रतीत नहीं हुई।

इधर नानासाहबकी यह अवस्था हुई। यह नहीं कह सकते कि, उनके मनमें वैसा होनेकी शंका नहीं हुई थी। क्योंकि रातको जिस समय उनके हाथमें वह काग़ज़ आया, उसी समय उनके मनमें वैसी शंका आई थी; परन्तु उस शंकाको उन्होंने अपने आप ही रफ़ा कर लिया था, फिर भी इतनी बात ज़रूर उनके मनमें बनी रही कि, हथियारबन्द हुए बिना वहां जाना ठीक न होगा; और इसीकारण चलते समय वे अपने हथियार-वथियार लेते गये थे; परन्तु इस बातका कोई विश्वास तो उनके मनमें था ही नहीं, कि दग़ाबाज़ी अवश्य ही होगी, इसलिये जितनी सावधानीके साथ ऐसी जगह उनको जाना चाहिए थां, उतनी सावधानीके साथ अवश्य ही वे वहां नहीं गये थे; और इसी-कारण वैसी दग़ाबाज़ी उनके साथ हो सकी।

जिन आदमियोंने अचानक उनके ऊपर धावा किया, वे आदमी कौन थे, कहांसे आये थे, इत्यादि बातोंमेंसे किसी बातका उनको कुछ भी अनुमान नहीं होसका। वह सारी घटना इतने थोड़े अवकाशमें होगई, कि उसका वर्णन करनेमें हमें जितना समय लगा, उसका आधा समय भी उस घटनाके घटित होनेमें न लगा होगा। नानासाहबके मुँहको तो उन लोगोंने पहले ही बन्द कर दिया। फिर तीनों आदमियोंने मिलकर उनको उठा

लिया; और उनमेंसे किसीने उनके हथियार बड़ी फुर्तीके साथ छीन लिये; और उनके हाथ-पैर भी बांध दिये। नानासाहबने बहुत हाथ-पैर चलाये, जितना बल वे अपनी तरफसे लगा सकते थे, सब लगाया—और उनमें बल भी कुछ कम न था—पर जब इतने आदमियोंने अचानक आकर एक बेचारे अकेले आदमीपर एकदम धावा कर दिया, तब बेचारे उस अकेले आदमीकी क्या चल सकती थी?

नानासाहब फिर और भी अधिक हाथ-पैर न चलाने पावें, इसलिए उन लोगोंने उनको चारों ओरसे, जहांतक बन सका, ख़ूब कस दिया; और जिस प्रकार कोई एक बड़ा भारी बोझा उठाकर लेचले, उसी प्रकार वे उनको उठाकर लेचले। नानासाहब बेचारे सिर्फ मन ही मन तड़फड़ानेके अतिरिक्त और कर ही क्या सकते थे? अपने ऊपर ऐसा विचित्र प्रसंग आया हुआ देखकर उनको अत्यन्त दुःख हुआ—यहांतक कि, उन्होंने सोचा कि, इससे मर जाना अच्छा; पर ऐसा मौक़ा किसी शत्रुपर भी न आवे! उन्होंने सोचा कि, जो लोग हमको इस प्रकार बांधकर लिये जारहे हैं, वे सबके सब यदि एक ओर होजायँ; और हम अकेले एक ओर खड़े होजायँ, तो हम बड़े आनन्दसे इनके साथ लड़ेंगे; और या तो इन सबको पराजित करके ही छोड़ेंगे, अथवा फिर अपने प्राण ही देदेंगे। किन्तु इस प्रकार जिन्होंने हमको धोखा देकर पकड़ा है, वे शूरके बच्चे तो अवश्य ही नहीं हैं। क्योंकि यदि वे सच्चे शूरके बच्चे होते, तो इस प्रकार-

की कायरता, इस प्रकारकी नामर्दी, कदापि न दिखलाते। हमें यदि बोलनेतककी ये स्वतन्त्रता देवें, तो हम स्पष्ट इनके मुँहपर यही बात कह देंगे; और फिर जब चिढ़कर ये हमारे साथ लड़ने लगेंगे, तब हम भी अपने दो दो हाथ इनको दिखलाकर इनके साथ युद्ध करेंगे। बस, इसी प्रकारके विचार नानासाहबके मनमें आरहे थे; पर बेचारे करते क्या? हाथ, पैर, मुंह, सब बन्द!

इधर जो लोग उनको उठाये लिये जारहे थे, वे सीधे अपने रास्तेसे जारहे थे; पर मार्गमें किसीसे कोई एक अक्षर भी नहीं बोल रहा था। नानासाहब बार बार यही सोच रहे थे कि, इनमेंसे यदि कोई ज़रा भी शब्द निकाले, तो शायद उसे हम पहचान लें; क्योंकि अब यह भी उनके मनमें आने लगा था कि, जिस मनुष्यने उस भूतोंकी हवेलीमें रहनेके लिये हमसे इतना आग्रह किया; और जिसने हमसे यह कह कहकर बड़ी बड़ी लम्बी-चौड़ी बातें मारीं कि, देखो, हम मुसलमानोंके बड़े कट्टर शत्रु हैं; यही नहीं, बल्कि हमारा जो बड़ा भारी कट्टर दुश्मन है, उसका सिर काटकर उसीके रक्तसे नहानेके लिये हम यहां आये हैं,—बस, उस मनुष्यके अतिरिक्त और यह विश्वासघात किसीने भी नहीं किया होगा। क्योंकि हमारे आनेका पता उसके अतिरिक्त और किसीको हो ही नहीं सकता। इसके बाद फिर उनके मनमें यह भी आया कि, हमारी तरह वह आदमी भी बिलकुल अज्ञातवासमें रह रहा है; और उस दिन उसने जो कुछ हमसे

कहा, उसमें उसकी धूर्तता कुछ भी दिखाई नहीं देती थी। ऐसी दशामें उसपर आज हमें संशय क्यों होरहा है? जिस प्रकार उसने हमें पहचान लिया, उसी प्रकार और भी किसीने न पहचान लिया होगा, यह कैसे कहा जासकता है? हम यहां क्यों आये, यह उसे जिस प्रकार एकदम मालूम होगया, उसी प्रकार और भी कितनोंको न मालूम होगया होगा, सो कैसे कहा जाय? हां, उसने हमसे यह भी कहा था कि, प्रति दिन आकर तुमसे मिला करूंगा; परन्तु हमारी तरह उसे भी किसी-ने दग़ाबाज़ीसे पकड़ लिया हो तो? इस प्रकारके विचार भी नानासाहबके मनमें आये; पर वे बहुत देरतक टिक नहीं सके। अन्तमें फिर उनके मनमें यही विचार आया कि, "हो न हो, हमको ऐसी दशामें डालने—हमारे साथ ऐसी दग़ाबाज़ी करने—का नीच काम उसीने किया। अन्यथा और किसीको यह बात कैसे मालूम होसकती थी कि, हम इस जगह रहते हैं; और फिर आधीरातके समय, इस प्रकार, वह हमको कैसा बुलावेगा; और हम जायँगे भी कैसे? अवश्य, यह विश्वासघात उसीने किया। अच्छा, देख लेंगे, कोई हानि नहीं। मौक़ाभर आने दो—फिर, उस दुष्टसे बदला लिये बिना कभी नहीं रहेंगे......"

इस प्रकार नानासाहबके सिरमें नाना भांतिके विचार चक्कर काट रहे थे। बेचारे इस समय इतने परवश होरहे थे कि, विचारोंके अतिरिक्त और उनके हाथमें रह ही क्या गया था? हां, विचार करना सर्वथा उनके हाथमें था, उसमें किसीकी

रोकटोक नहीं थी, सो बराबर उनके मनमें आरहे थे; और यह बात पाठकोंको ऊपरके वर्णनसे मालूम ही होचुकी होगी। अस्तु। इधर जो लोग उनको लिये जारहे थे, जितनी जल्दी उनसे होसकता था, उतनी जल्दी भग रहे थे। ऐसा जान पड़ता था कि, मानो बीजापुरके सारे कठिनसे कठिन मार्गोंको पार करनेका उन्होंने बीड़ा ही उठा लिया था। लगभग घण्टे-सवा घण्टे बराबर वे लोग मार्ग तै करते रहे। नानासाहब जिस दशामें इतनी देरसे थे, उस दशासे वे अब बहुत ही ऊब गये थे; और उनका मन ऐसा होरहा था कि, जहां कहीं ले-जाकर ये लोग हमको बन्द करना चाहते हों, अथवा जो कुछ करना चाहते हों, सो एक बार लेजाकर कर डालें, तो बहुत अच्छा हो! इस दशासे किसी प्रकार छुटकारा हो! परन्तु उनके मनके अनुकूल कार्य करनेके लिए वे लोग थोड़े ही आये थे? वे तो, जो कुछ उनके मनमें था, उसीके अनुकूल करनेवाले थे। इसलिए स्वाभाविक ही जिन मार्गोंको तै करके उनको जाना था, अथवा जितनी जल्दी या धीरे उनको अपना रास्ता तै करना था, उसीके हिसाबसे वे लोग जारहे थे। परन्तु, अन्त भी प्रत्येक बातका कहांतक न होगा? सो नानासाहबके उस ऊबनेका और उन लोगोंके चलनेका भी अन्त, अन्तमें आ ही गया। अबतक जितने चुपचाप वे लोग आरहे थे, उतने ही चुपचाप वे एक अत्यन्त भव्य—क़िलेके समान दिखाई देने-वाले—महलके पीछे जापहुंचे। इसके बाद उनमेंसे एक आदमी

आगे हुआ; और वहीं पीछेके छोटेसे दरवाजेपर तीन बार थाप मारकर "फ़तिमा, फ़तिमा, फ़तिमा" कहकर तीनों बार धीरेसे पुकारा। उस आवाज़को सुनकर एक युवती मुसलमानिनने दरवाजेको थोड़ासा खोलकर "कौन? अहमद?" कहकर पूछा। इसपर बाहरके लोगोंमेंसे वही आदमी, जिसने फ़तिमाको पुकारा था, उत्तर देता है, "हां, फ़तिमा! जिस शिकारके लिए गये थे, वह शिकार तो मार लिया। अब आगेका सारा बन्दोबस्त भी शीघ्र ही करना चाहिए। मालिकको इसका कोई पता तो नहीं लगा?" फ़तिमाने ज़रा अनखाकर कुछ शब्द कहे; और दरवाजा पूरा पूरा खोल दिया। वे लोग अपना वह मानवी बोझा बिलकुल चुपकेसे भीतर लेगये। नानासाहबने फ़तिमा और अहमद, ये दो नाम; और अहमद तथा फ़तिमाका बोल, ख़ूब ध्यान लगाकर सुना, पर उन दोनोंका बोल कुछ उनकी समझमें नहीं आया; और न अहमद तथा फ़तिमाका कोई परिचय ही उन्हें मिला। अब अहमद और उसके साथी, उसी दशामें, न जाने किस तरफ उनको लेजाने लगे, नानासाहबको इसका कुछ भी पता नहीं लग रहा था। हां, थोड़ी देर बाद उनको इतना अवश्य मालूम हुआ कि, जैसे किसी चीज़पर उन लोगोंने उन्हें रखसा दिया हो। इतनेमें एक आदमीने आकर ख़ूब मोटे कपड़ेसे उनकी आंखोंको भी बांध दिया; और फिर—"फ़तिमा, चिराग़ ला, चिराग़के बिना अब कुछ काम नहीं चल सकता"—ये अहमदके कहे हुए शब्द उनके कानमें पड़े;

और फिर उन्हें ऐसा मालूम हुआ कि, जैसे फिर उनको उठा-
कर वे लोग आगे लिये जाते हों। इसके बाद फिर कई जगह
सीढ़ियोंका चढ़ना-उतरना, फिर चढ़ना और फिर उतरना,
इत्यादि सिलसिला जारी रहा। यह सब क्या गोलमाल हो-
रहा है; और अब हमको न जाने ये कहां लेजाकर डालेंगे, इसका
कुछ भी अनुमान नानासाहबको नहीं होसकता था, दो-चार
चढ़ाव-उतार होजानेके बाद फिर नानासाहबको ऐसा भास
हुआ कि, जैसे कोई बड़ा भारी वज़नी दरवाजासा खोला गया
हो। और उस दरवाजेसे सड़ाइँधकी एक बहुत ही बुरी भभक-
सी निकली। उन लोगोंने अपना वह बोझा चुपकेसे भीतर डाल
दिया; और फिर दरवाजा बन्द करके न जाने कहां चले गये—
कोई समझता भी न था! अब नानासाहबको मालूम होगया
कि, हमको इस प्रकार पकड़कर और बांध-बूंधकर किसी बड़े
भारी महलके तहखानेमें लाकर बन्द कर दिया गया है। पर यह
क्यों? किसने और किसके महलमें लाकर रखा है? सो कुछ
उनके अनुमानमें नहीं आता था।

इधर नानासाहबको गये घण्टा होगया, डेढ़ घण्टा हो-
गया; फिर भी उनके लौटनेका कोई लक्षण ही दिखाई न दिया।
तब, स्वाभाविक ही, जिस व्यक्तिने उनको बाहर जाते देखा था,
उसको कुछ थोड़ीसी चिन्ता उत्पन्न हुई। इतनी देरतक नाना-
साहब उस आदमीसे न जाने क्या बातचीत कर रहे हैं, सो
कुछ उसकी समझमें न आया। इसलिए अब तानाजीने सोचा

कि, हमको स्वयं ही जाकर देखना चाहिए—क्या मामला है! क्योंकि नानासाहबको बाहर जाते हुए उन्होंने देखा था; और यह सोचकर कि, हमारा उनके पीछे पीछे जाना ठीक न होगा, वहीं रुक गये थे। परन्तु जब उन्होंने देखा कि, अब समय बहुत अधिक व्यतीत होगया; और इधर नानासाहबका कोई पता ही नहीं, तब उनका हृदय भी बहुत खिन्न हुआ; और अन्तमें उन्होंने अपने गुप्त हथियार-वथियार बांधकर एक और अपने साथीको जगाया; और कहा कि, हमारे साथ चलो। इस प्रकार वे दोनों उस घरसे बाहर निकले; और इधर-उधर, आस-पास, बहुत कुछ देखा, सुना, आहट ली; पर कोई लाभ न हुआ। मनुष्यकीसी कोई भी आहट वहां सुनाई नहीं दी। तब, नाना-साहब कहां गये, इसका कुछ भी अनुमान उनको न होसका। दोनों आदमी, दो तरफको, दूर दूरतक घूम आये। परन्तु वहां सन्नाटेके अतिरिक्त और कुछ भी दिखाई-सुनाई न दिया। "नानासाहब आज दो दिनसे बिलकुल पागलसे होरहे थे, सो कहीं उनका मस्तक तो नहीं भड़क गया कि, जिसके कारण वे कहीं चले गये हों? अथवा जिस आदमीने उनसे बार बार मिलनेको कहा था, वही शायद कहीं उनको लेता गया हो!" इस प्रकारके एक दो नहीं, कितने ही संशय उनके मनमें आने लगे। जैसाकि हमारे ध्यानमें आया, तदनुसार सचमुच ही यदि कहीं उनका मस्तक बिगड़ गया हो; और वे हमको छोड़-कर कहीं चले गये हों, तो बड़ी मुशकिलकी बात होगी! हम

है वैरागी! मेरा हाथ देखकर मेरा भाग्य बतलाने आया है!"
परन्तु तानाजीने उसकी एक भी न सुनी; और ज़बरदस्ती उसका हाथ खींचकर देखने लगे; फिर हँसते हँसते उससे बोले, "अरे वाह यार! तेरे हाथमें लक्षण तो बहुत अच्छे अच्छे हैं! तेरा प्रेम किसी नवयुवतीपर लग रहा है; और तेरे हाथसे ऐसा जान पड़ता है कि, वह महीने-दो महीनेमें तुझे मिलेगी अवश्य!" ज्यों ही ये शब्द वैरागीके मुंहसे निकले,त्यों ही उस सिपाहीका चित्त कुछ आनन्दितसा दिखाई दिया। हमारे मनकी इतनी गुप्त बात बाबाजीने सिर्फ हाथ देखकर बतला दी; और सो भी बिलकुल ठीक ठीक! इस बातका उसे बड़ा अचरज हुआ; और साथ ही साथ कुछ सन्तोष भी। परन्तु उसने सोचा कि, इस वैरागीको यदि यह मालूम होगया कि, हमको इस बातपर सन्तोष हुआ है; और हम इसपर विश्वास रखते हैं, तो फिर यह हमको और भी अधिक तंग करेगा। बस, यही सोचकर वह फिर पहलेहीकी भांति झिड़ककर कहता है, "चल बे, तू समझता है कि, मैं तेरी ऐसी गप्पोंमें आजाऊंगा, सो मैं नहीं आनेका! जा, ऐसी बातें किसी दूसरेको बतला। मुझे न बतला।"

पर बाबाजी भी पक्के उस्ताद थे। वे काहेको उसकी ऐसी बातोंमें आते हैं! सिपाहीरामका सारा रंग वे क्षणकी बातमें ताड़ गये। उनको विश्वास होगया कि, हमारे कथनका इस-पर प्रभाव पड़ा है; और यह इस प्रकारके किसी न किसी जालमें

अवश्य फँसा है। अतएव वे और भी ढिठाई दिखलाकर उससे फिर कहते हैं, "भाई, मानो, चाहे न मानो। जो बात तुम्हारे हाथसे मुझे दिखाई पड़ रही है, सो मैं बतलाऊंगा सही। जो बात तुम्हारे मनमें है, वह महीने-दो महीनेमें पूरी अवश्य होगी, इसमें शंका नहीं। मैं और भी अनेक पतेकी बातें तुमको बतलाऊं ?" यह कहकर उन्होंने उसका हाथ फिर पकड़ा; और कहा कि, तुम ज़रा उस डेवढ़ीपर चलकर बैठो तो सही, मैं तुमको बहुतसी बातें बतलाऊंगा। सिपाहीराम भी, नहीं नहीं कहते हुए, उनको डेवढ़ीपर लेगये।

तैंतालीसवां परिच्छेद।

इधर क्या होरहा था ?

नानासाहब आदि लोग जबसे बीजापुर गये थे, हमारे बाबाजी (श्रीधर स्वामी) और राजा शिवाजी इत्यादि लोगोंका चित्त उनकी ओर लगा था। उनके मनमें बार बार यही बात आती कि, अब देखें बीजापुरके क्या समाचार आते हैं; क्योंकि इसीपर हमारे सारे अगले प्रयत्न अवलम्बित हैं; इसलिए उधरके समाचार जितनी जल्दी आवें, उतना ही अच्छा। इसके सिवाय नानासाहबको चूंकि बीजापुरकी अच्छी जानकारी थी; और तानाजी उनके साथ गये ही थे, अतएव उनके प्रयत्नोंके विषयमें किसी प्रकारकी शंका शिवाजी इत्यादिके
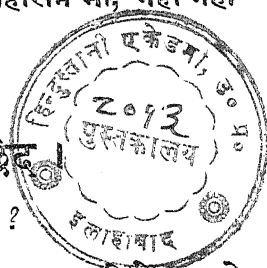
मनमें नहीं थी। कौन कौनसी बात, किस किस प्रकारसे, करनी होगी, इस विषयमें अब विचार करके उनका स्वरूप निश्चित कर दिया गया था; और बीजापुर जानेके बाद क्या क्या प्रबन्ध, किस किस प्रकारसे, किया जायगा, सो भी सब बतला दिया गया था। फिर भी राजनीतिकी बातें एक बड़ी भारी चिन्ताका कारण होती ही हैं। इसके सिवाय, आज-तककी बात दूसरी थी। जब मनमें आवे, तब कोकनमें अथवा महाराष्ट्रके ही किसी दूसरे प्रदेशमें जाकर किसी गांवको लूट-पाटकर द्रव्य एकत्र करना उस समय कोई ऐसा कठिन काम नहीं था। परन्तु सुलतानगढ़के समान क़िलेको हस्तगत करना—और सो भी नवीन राज्यकी नींव जमानेके लिये—कोई सहज कार्य नहीं था। भवानीमाताके कृपाप्रसादसे हम सब कुछ कर लेंगे, इस बातका विश्वास राजा शिवाजीको था सही, पर उनके मनमें चिन्ता भी कुछ कम नहीं रहती थी। अब जिस प्रसङ्गका वृत्तान्त हम यहां बतलानेवाले हैं, उस प्रसङ्गपर राजा शिवाजीके उसी सदैवके जंगलमें, उनके लोग एकत्रित हैं; और श्रीधर स्वामी तथा शिवाजी एक ओर किसी विचारमें निमग्न हैं। जो लोग एकत्रित हुए हैं, वे उनसे लगभग तीस-चालीस हाथके अन्तरपर हैं; और सब लोग बड़े आनन्दितसे दिखाई देरहे हैं। बाबाजी, शिवाजी; और येसाजी, ये तीन आदमी किसी गहरे विचारमें निमग्न थे। अब हम क़िलेको जीतने जारहे हैं,इसलिए अवश्य ही उसमें सौ-दो सौ आदमीकी

आवश्यकता पड़ेगी। उसमें भी यदि क़िलेदार इत्यादि किसी अधिकारीको यह मालूम होगया कि, इस क़िलेपर हमारी नज़र है, तो सौ-दो सौ आदमियोंसे भी काम नहीं चलेगा। अब-तक जितने धावे मारे गये थे, कभी पच्चीस, कभी पचास, बस, इतने ही आदमियोंने उनमें भाग लिया था। ये सब लोग निस्सन्देह हमारी जानपर जान देनेवाले हैं। पर, आगे अब इसी साहस और विश्वासके अन्य लोग भी तो चाहिए, तब काम चले। इसलिए ऐसे ही और बहुतसे लोगोंके संग्रह करनेका क्या प्रबन्ध करना चाहिए—बस, इसी विषयका विचार वे तीनों कर रहे थे। राजा शिवाजीमें काफी साहस और उदारता मौजूद थी; और इसीकारण वहां आसपासके लोगोंमें—विशेषतः ग़रीब मावले लोगोंमें—दिनपर दिन उनके विषयमें प्रेमकी वृद्धि होरही थी। नानाजी और येसाजीके समान उनके भक्तोंने अपने अपने गाँवोंके ग़रीब लोगोंमें, और नवयुवक लोगोंमें, उनके विषयमें अच्छा आदरभाव उत्पन्न कर रखा था। इस प्रकारकी सब तैयारी होचुकी थी सही, परन्तु फिर भी शिवाजी और उनके अन्य साथियोंके मनमें यह आशंका अवश्य थी कि, देखें, वह आदरभाव इस प्रकारके बिकट प्रसंगों-पर कहांतक पूरा उतर सकता है; और कहांतक हम उसका उपयोग कर सकते हैं। आजतक जितने धावे किये गये थे, उनमें सफलता अथवा निष्फलताका कोई बड़ा भारी सवाल नहीं था; किंबहुना, उनमें निष्फलता होनेकी कोई सम्भावना

ही नहीं थी। क्योंकि भीतरी उद्देश्य यद्यपि राजनैतिक ही था ; परन्तु फिर भी बाहरसे उसका वह स्वरूप लोगोंके सामने नहीं आया था। सर्वसाधारण लोगोंके सामने अभी उसका इतना ही स्वरूप था कि, बस, दो-चार उपद्रवी नवयुवक एकत्र होकर इधर-उधर लूटमार किया करते हैं, लोगोंको व्यर्थमें सताते हैं। ऐसी दशामें, उसमें सफलता हुई तो क्या ? और नहीं हुई तो क्या ? वा कम हुई तो क्या ? और अधिक हुई तो क्या ? कोई बड़े महत्वकी बात नहीं थी। परन्तु अब, लोगोंको इकट्ठा करके बिलकुल खुल्लमखुल्ला राजनीतिका प्रारम्भ करना था। क़िलेको जीतना मानो स्पष्टरूपसे संसार-पर यह प्रकट कर देना ही है कि, हम अपना अलग राज्य स्थापित करना चाहते हैं। अपने छुटपनमें जब हम पिताजीके साथ बीजापुरमें थे, तब मुसलमानोंके विषयमें जो कुछ उद्गार हमने निकाले थे ; और अब भी निकालते हैं, सो सब बीजा-पुरवालोंके कानोंमें जाते ही रहते हैं। इससे भी लोग यही कहेंगे कि, हम स्वराज्य स्थापित करनेके लिए बिलकुल खुल्लमखुल्ला प्रयत्न कर रहे हैं—यहांतक कि, अब क़िले जीतनेकी भी नौबत आपहुंची है। अतएव, इस बारकी यह छलांग बड़े महत्वकी है। पहलेपहल तो जबतक चार-पांच क़िले हाथमें न आजायं, निष्फलता न होनी चाहिए ; और यदि निष्फलता नहीं चाहते, तो अच्छे अच्छे और विश्वासपात्र लोगोंकी सहायता चाहिए। लोग हों चाहे थोड़े ही; पर जितने हों, खूब दृढ़ हों, अपने काम-

के लिए जानतक देदेनेवाले हों; और विश्वासपात्र इतने हों कि, चाहे गला काटनेकी भी नौबत क्यों न आजाय, परन्तु उनके हाथसे विश्वासघात न हो। बस, ऐसे ही लोग प्राप्त करनेके लिए क्या क्या तजवीज की जाय, इसी बातपर वे तीनों बैठे हुए आपसमें चर्चा कर रहे थे। येसाजीका कथन था कि, पचास आदमी जो इस समय बिलकुल हमारे हाथमें हैं, वही यदि अपने विश्वासके पांच पांच आदमी भी और लेआवें, तो बस, काम चल जायगा। इसके अतिरिक्त ऐसे काममें यदि हम इस समय अपने लोगोंपर विश्वास दिखलावेंगे, तो उनको भी एक प्रकारसे अपने कार्यका अभिमान होगा; और यह कार्य बड़े आनन्दसे वे करेंगे। हां, यह बात अवश्य उनको अभी नहीं बतलानी चाहिए कि, हमारा उद्देश्य क्या है—हम आदमी क्यों चाहते हैं। उनको तो अभी इतना ही बतलाना काफी होगा कि, तुम्हारे ही समान लगभग दो सौ आदमी हम और चाहते हैं। शिवबा और बाबाजीकी भी सलाह ऐसी ही पड़ी; और आज इस समय जो लोग जमा किये गये थे, वे इसी उद्देश्यसे कि, उनसे इस बातकी प्रार्थना की जाय कि, भाई, तुममेंसे प्रत्येक आदमी-को पांच पांच, छै छै आदमी और लेआना चाहिए। इसके सिवाय, बाबाजी और शिवाजीने यह भी निश्चित किया था कि, इनमेंसे प्रत्येकको कुछ न कुछ इनाम दिया जाय कि, जिससे उपर्युक्त कार्य करनेके लिए इनमें उत्साह आवे। इसलिए इनाम देनेकी भी आज सब तैयारी की गई थी। बाबाजी, शिवबाजी

और येसाजीमें जब यह सलाह होचुकी कि, किसको क्या क्या इनाम दिया जाय, तब अन्तमें शिवबाने अपनी धीर-गम्भीर वाणीसे सबको वहां बुलानेका उद्देश्य बतलाया; और अपने सदैवके नियमके अनुसार मुसलमान लोगोंके अत्याचारोंका ऐसा वर्णन किया कि, जिसको सुनकर सब लोगोंके मनमें अत्यन्त जोश उत्पन्न हुआ। राजा शिवाजीकी वाणीमें ऐसा कुछ ओज भरा हुआ था कि, एक बार भी उसे जो कोई सुन लेता, वह बिलकुल मुग्ध होजाता था। उनकी वाणीमें वह माधुर्य था कि, साधारण तौरपर भी यदि कोई बात वे कह देते, तो कर्म्मा-वाचा-मनसे उनका बतलाया हुआ कार्य करनेके लिए लोग तैयार होजाते थे। जिस समयका हमारा यह कथानक है, उसी समयसे राजा शिवाजीके अनुयायी लोगोंमें, इनका मधुर शब्द प्राप्त करनेके लिए, स्पर्द्धा हुआ करती थी। सभी अपने अपने तौरपर उनकी प्रसन्नता प्राप्त करनेका प्रयत्न किया करते थे। फिर आज तो शिवाजीने जो भाषण किया, उसमें उन्होंने बिलकुल कमाल ही कर दिया। भाषण कुछ बहुत लम्बा न था। उसमें कोई विशेष बात भी नहीं थी। परन्तु हां, जो कुछ कहना था, उसे इतनी उत्तम रीतिसे उन्होंने कहा कि, श्रीधर स्वामी और येसाजीको भी उसे सुनकर बड़ा आनन्द हुआ। भाषणके बाद ही फिर इनाम बांटा गया। इससे उन लोगोंका उत्साह और भी अधिक बढ़ा। यहांतक कि, उनमेंसे सात-आठ मुख्य मुख्य लोगोंने तो छातीपर हाथ रखकर इस बातका

वचन दिया कि, अगले दस-पन्द्रह दिनके बीचमें ही सौ-दो सौ क्या, पांच सौ आदमी लाकर हम आपके सामने खड़े कर दगे। साथ ही साथ उन्होंने यह भी विश्वास दिलाया कि, उनकी विश्वासपात्रताके विषयमें भी क्षणभरके लिए कोई शंका न करनी चाहिए। मुसल्मान लोग चाहे उन्हें जागीरें और गाँव देनेहीके लिए क्यों न तैयार होजायँ, अथवा चाहे उनकी गर्दन-पर छुरा रखकर उनके सारे कुटुम्बको भी नष्ट कर देनेका भय दिखावें; पर तो भी वे अपने समूहको छोड़कर नहीं जायँगे; और न किसी भी दग़ाबाज़ी करेंगे। यह सब कार्यवाही होनेके बाद राजा शिवाजीके मुखसे फिर एक बार कुछ आश्वासनयुक्त भाषण सुनकर सबलोग जहांके तहां चले गये। रह गये सिर्फ तीन आदमी—शिवाजी, स्वामीजी और येसाजी।

तानाजी इत्यादि लोगोंके बीजापुर जानेके बाद पन्द्रहवें अथवा सोलहवें दिन उपर्युक्त कार्यवाही हुई। अब आज ही कलमें बीजापुरसे भी किसी न किसी समाचारके आनेकी आवश्यकता थी; और ये लोग अब उनके पत्रकी प्रतीक्षा ही कर रहे थे। इसलिए स्वाभाविक ही उन लोगोंकी चर्चा निकली कि, वे लोग अब वहां क्या करते होंगे! जिस कामके लिए वे लोग गये हैं, उसके लिए उन्होंने वहां क्या क्या उपाय किये होंगे! और जिस वेशमें वे लोग वहां रहे होंगे, वह वेश उन लोगोंके लिए कहांतक उपयोगी हुआ होगा! इत्यादि विषयोंपर नानाप्रकारके तर्क वे लोग कर रहे थे। बातों बातोंमें और भी

अनेक विषय निकले। शिवाजी अपने मित्र येसाजी इत्यादिको, और बाबाजीको भी, अपने पिता और दादोजी कोंडदेवके विषय-में, तथा अपने घरकी अन्य बातोंके विषयमें भी, खुले दिलसे सब बातें बतलाया करते थे। दादोजी कोंडदेव, शिवाजीके पिता राजा शहाजीको, बार बार पत्र लिखकर उनके विषयमें उपालम्भ दिया करते थे; और साथ ही साथ उनको यह भी सूचित किया करते थे कि, शिवबाको आप कभी कभी कुछ उपदेशकी बातें, अथवा यदि आवश्यकता हो, तो धमकीका पत्र-भी, लिख दिया कीजिए, शायद इससे कुछ लाभ हो; और तद-नुसार शिवाजीके पास राजा शहाजीके पत्र भी आया-जाया करते थे। कभी कभी उनकी माता जिजाबाई भी इस विषयमें उनको उपदेश दिया करती थीं कि, पिताकी इज़्ज़त और प्रति-ष्ठाको एक ओर रखकर तुमने यह क्या अनुचित कार्य प्रारम्भ किया है? शिवाजीके पिता शहाजी महाराज, माता जिजा-बाई; और उनके लड़कपनके गुरु, अथवा अभिभावक, दादोजी कोंडदेव—इन तीनोंहीका यह विचार था कि, लड़का अपनी जागीरको अच्छी तरह सम्हाले; और बीजापुरवालोंकी सेवा भलीभांति करके दरबारके बड़े बड़े कार्य करे। और इस प्रकार स्वामिभक्तके पदको प्राप्त करके स्वार्थ और परमार्थ दोनोंका साधन करे। इधर लड़केकी बुद्धि कुछ और ही थी। वह, यदि कोई मुसलमानोंका नाम भी लेदेता, तो भी ध्यान करता, स्वराज्य स्थापित करनेके लिए सब प्रकारके प्रयत्न

करता; और पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त करके मुसलमानोंका नाश कर देना ही अपना लक्ष्य समझता था। इस प्रकार सम्पूर्ण महाराष्ट्रमें हिन्दूपदपादशाहीका स्थापित करना ही उसका उद्देश्य होरहा था; और जो कुछ भी वह प्रयत्न करता, सब अपने इसी एक उद्देश्यको लक्ष्यमें रखकर करता था। परन्तु, दादोजी कोंडदेव सदैव यही कहकर उसको डरपाया करते कि, "देखो यह समय ऐसा नहीं है। ऐसे समयमें यदि ऐसा पागलपनका प्रयत्न करोगे, तो सफलता तो एक ओर रही; तुमको राजद्रोहका पातक और लगेगा। इधर बादशाहसे जो जागीरें मिली हैं, वे भी जप्त होजायँगी। यह भी सम्भव है कि, राजा शहाजीपर हुज़ूरकी आज जो इतनी कृपा है, सो भी न रहे; और किसी दिन सारी धनदौलत और घरद्वार भी नष्ट होनेकी नौबत आजाय।" इस प्रकारके भयपूर्ण उद्गार सदैव दादोजी कोंडदेव शिवाजीके सामने निकाला करते थे। शिवा-जीके मनमें दादोजी कोंडदेवके प्रति बड़ा आदरभाव और श्रद्धा थी। क्योंकि बालापनसे ही उन्होंने शिवाजीको उत्तम उत्तम शिक्षाएं दी थीं। इसके सिवाय, शिवाजी यह भी जानते थे कि, आज यद्यपि हमसे ये इस प्रकारकी बातें कर रहे हैं, तथापि इसमें भी इनका भीतरी उद्देश्य यही है कि, हमारा हित हो। बस, यही सब सोचकर उन्होंने दादोजीके सामने कभी भी उनके प्रतिकूल उत्तर नहीं दिया। परन्तु लगभग दो दिन पहले दादोजी कोंडदेवने किसी कारणवश शिवाजीको कुछ कठोर

शब्द कहे। उसी दिन राजा शहाजीका भी एक कठोर पत्र दादोजीके पास आया। सुबह ही उन्होंने वह पत्र शिवाजीको दिया; और कुछ देर बाद उनको बुलवाकर फिर दादोजीने कुछ मर्म्मभेदक बातें कहीं:—"तुम्हारे हाथसे होना-जाना तो कुछ है नहीं—वंशकी बदनामी कराओगे, धनदौलतका नाश कराओगे, घरद्वारपर भी चौका फिरवाओगे। ग़रीबगुरबा लोगोंके गांवोंको लूटना कोई पुरुषार्थका काम नहीं है। प्रबल प्रतापी बादशाहके राज्यको अभी तिलभर भी धक्का नहीं लगा सके। ऐसी ही करतूत दिखाओगे, तो ख़ासा स्वराज्य होजायगा। चतुराई तो इसीमें है कि, जो कुछ मिला है, उसीकी रक्षा करो। पिताने जो सुखसामग्री प्राप्त की है। उसका भोग करके पिता और माताको सुख दो, इसीमें स्वराज्य है। उनके चित्तको क्लेशित करके पुरुषार्थकी कोरी बड़बड़ करनेसे क्या लाभ? ईश्वरने दिया है, उसको सुखसे भोगना भी नहीं; और व्यर्थकी बड़बड़ करके इधर-उधरकी दौड़धूप करना बिलकुल व्यर्थ है। स्वराज्य स्थापित करनेवालेके लक्षण ही कुछ दूसरे होते हैं। स्वयं अपना, अपने वंशका; और जिस जिससे तुम्हारा सम्बन्ध है, उन सभीका, सत्यानाशमात्र भले ही कर लो!"

आजतक ऐसी बातें दादोजीने शिवबाके सामने कभी नहीं कही थीं। बलिक सदैव उनका यही विचार रहता था कि, यह हमारे मालिकका जेठा पुत्र है और इसकारण यह हमारे लिए मालिकहीके समान है। इसके साथ सेव्य सेवकभावसे

ही बर्ताव करना उचित है। यह सोचकर दादोजी शिवाजीके साथ सदैव बड़े अदबका बर्ताव करते थे; और कभी कोई बेअदबीकी बात भी नहीं कहते थे। हां, जब कभी कोई शिक्षा इत्यादि देते थे, तब थोड़ी-बहुत कठोरतासे अवश्य ही काम लेना पड़ता था; और उस समय वे ऐसी बातोंका ख़याल भी नहीं रखते थे। इसके सिवाय प्रस्तुत विषय-पर भी उन्होंने कई बार उनके साथ बातचीत की थी—ऐसा नहीं कि न की हो—परन्तु इतनी मर्मभेदक बातचीत कभी नहीं हुई थी। दादोजीका आजका भाषण तो अत्यन्त कठोर होगया। इस बातका कारण भी था; और आज महीने-दो महीनेका शिवाजीका सन्दिग्ध बर्ताव ही इसका कारण था। गत महीने-दो महीनेके बीचमें शिवाजी लगातार चार दिन भी अपने घरमें कभी नहीं रहे। इधर दादोजीने सुन रखा था कि, शिवबा, अपने उपद्रवी साथियोंको जमा करके, पुरन्दरके मार्गवाले मन्दिरमें, अथवा उसी तरफके किसी जङ्गलमें, कुछ उलटे-सीधे विचार किया करता है। बस, इसीकारण इस समय उनका मिजाज बिगड़ गया था। और उन्होंने सोचा था कि, सेव्य सेवकभावको एक ओर रखकर, यदि कुछ शिक्षा इस समय काम कर जाय, तो देख लेवें। अतएव उन्होंने यही निश्चित किया था कि, जिस दिन राजा शहाजीका इस विषयमें पत्र आवेगा, उसी दिन हम शिवबासे ख़ूब फटकारकर बातें करेंगे; और तदनुसार ही आज उन्होंने किया भी। शिवाजीको

स्वाभाविक ही इस बातपर बड़ा खेद हुआ; और उसमें भी जब उन्होंने दादोजीके मुखसे ये वचन सुने कि, "तुम वंशका नाश करोगे, तुमसे मातापिताको क्लेशके अतिरिक्त और कुछ नहीं होगा; स्वयं अपना भी सत्यानाश कर लोगे," तब तो उनको और भी अधिक दुःख हुआ। निस्सन्देह आजतक उन्होंने दादो-जीको कभी भी उत्तर नहीं दिया था, पर आज उनसे नहीं रहा गया; और एकदम वे उनसे कहने लगे, "जिस वंशमें यवनोंकी सेवाके अतिरिक्त और उनके प्रबल प्रतापमें ही पड़े रहनेके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं होता, उस वंशका सत्यानाश होजाना ही अच्छा! मैं अपने उद्देश्यके अनुसार यदि गौ-ब्राह्मणोंके कष्टको दूर करनेके लिए स्वराज्यकी स्थापना न कर सका, तो मेरे ही रहनेसे क्या लाभ? स्वराज्य-स्थापन करनेमें चाहे सफलता न मिले; यह यवनोंकी सेवा तो मुझसे नहीं होसकती—इससे तो यही अच्छा है कि, मेरा नाश होजाय; और मेरे कुटुम्बका भी नाश होजाय। आप यह कहते हैं कि, ग़रीबगुरबा लोगोंके गाँवोंको लूटनेके अतिरिक्त यवनोंके राज्यको मेरे हाथसे कुछ भी धक्का नहीं पहुंचा; और इसके लिए महाराजको शायद खेद भी होरहा होगा, तो लीजिए, इसके लिए मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि, आस-पासके क़िलोंमेंसे कोई न कोई क़िला, बहादुरीके साथ लड़कर, जबतक मैं जीत नहीं लूंगा, तबतक मैं फिर आपको अथवा माताजीको मुँह दिखाने नहीं आऊंगा। इस काममें वहींका वहीं, 'यदि यव-

नोंके हाथमें पड़कर, मार भी डाला गया, तो यह समझकर आनन्द मनाना कि, अपने वंशका नाशकर्त्ता यह अभागा छोकरा, चलो अच्छा हुआ, जो मार डाला गया। और यदि प्रतिज्ञाके अनुसार क़िलेको जीत करके आऊं, तो चाहे जो करना—चाहे आनन्द मनाना, चाहे दुःख मनाना !"

दादोजीको अपने पुराने अनुभवसे यह कभी भी आशा नहीं थी कि, उनके शिष्यकी ओरसे उनको ऐसा उत्तर मिलेगा। अतएव, शिवबाके मुखसे उपर्युक्त वचन सुनकर, उनको बड़ा आश्चर्य हुआ। वे बिलकुल चकितसे रह गये। और यह सोचकर कि, हमारी बातोंसे इसके चित्तको जो खेद हुआ है, उसे दूर करना चाहिए, वे कुछ कहनेहीवाले थे कि, इतनेमें शिवाजी वहांसे उठे; और गुरुजीको साष्टांग-नमस्कार करके चल दिये। वहांसे फिर वे तुरन्त ही माता जिजाबाईके समीप आये; और उनके चरणोंकी वन्दना करके बोले, "माता-जी, अब आपकी और मेरी भेंट कब होगी, इसका कोई ठीक नहीं। भेंट होगी, तो ऐसी दशामें होगी कि, जिससे आपको कुछ आनन्द होगा; और यदि न होगी, तो समझ लेना कि, अपने कुलका कलंक नष्ट होगया !" जिजाबाई कुछ समझ ही न सकीं कि, यह पागलकी तरह क्या कह रहा है; अतएव वे कुछ कहनेहीवाली थीं कि, इतनेमें शिवबा वहांसे भी एकदम चल दिया। जिजाबाई कुछ भी समझ न सकीं। हां, दादोजीने पीछेसे आकर उन्हें सब वृत्तान्त बतलाया; और शिवबाको

ढूँढ़नेके लिए उसके पीछे पीछे आदमी भी भेजे; पर कहीं पता न लगा। राजा शिवाजी इधर अपने मन्दिरमें आकर भवानी-माताके निकट दो दिनतक उनकी मानसिक अर्चा करते रहे।

चवालीसवां परिच्छेद।

बीजापुरका समाचार आनेपर!

जैसाकि हमने पिछले परिच्छेदमें बतलाया, राजा शिवाजी दो दिनतक बिलकुल निर्जल उपवास करके भवानी माताके चरणोंके निकट उनकी मानसिक अर्चा करते रहे। दो दिन बिलकुल बीत गये, तीसरा दिन भी गया; और आधीरात होने आई। शिवबाकी मानसिक अर्चा अभी जारी थी। स्वामीजी उस समय ऊपर बैठे थे। सिर्फ अकेले शिवाजी ही भवानीमाताके सामने आसन लगाये हुए और मन एकाग्र किये हुए बैठे थे। आधीरातके लगभग स्वामी महाराज ऊपर हनुमानजीके मन्दिर-का नियमानुसार बन्दोवस्त करके नीचे आये। वहां आकर वे देखते क्या हैं कि, राजा शिवाजी अब भी अपने ध्यानमें मग्न बैठे हैं! "सच्चा भवानीभक्त इसीको कहना चाहिए। अभी बालापनका तेज भी चेहरेपरसे दूर नहीं हुआ, और ऐसी दृढ़ भक्ति! शाबाश! शिवबा, तुझको शाबाश! समर्थने तुझको जो इस कामके लिये नियत किया है; और यह कहा है कि,

भवानी माताका तुझपर पूर्ण कृपाप्रसाद सदैव रहेगा, सो बिलकुल यथार्थ है! ऐसी दृढ़ भक्तिसे तू क्या प्राप्त नहीं कर सकता? ये आश्चर्य, आनन्द और प्रेमसे युक्त उद्गार स्वामीजीके मुखसे आप ही आप निकल पड़े। यही नहीं, बल्कि उनकी ऐसी इच्छा हुई कि, शिवबाको उसी स्थितिमें हृदयसे लगाकर आनन्दाश्रु बहावें। बहुत देरतक खड़े हुए वे अपने हाथ स्वस्तिकाकार करके उस महान् भवानी-भक्त और देशभक्त युवा पुरुषकी ओर, एकाग्रदृष्टिसे, देखते रहे। ठीक आधीरातका समय हुआ; और शिवाजीके मुखसे एकदम कुछ शब्द बाहर निकलने लगे। स्वामीजीने, अपने सदैवके नियमानुसार, एकाग्रचित्तसे उन शब्दोंको सुनकर उनको अपने ध्यानमें रख लिया। शिवाजीके शरीरमें माताका संचार हुआ; और जैसी उनकी दशा सदैव होती थी, वैसी ही सब दशा हुई; और इस प्रकार माता अपना कृपाप्रसाद देकर अन्तर्धान होगई। शिवबाका ध्यान पूरा होगया। इसके बाद जब उन्होंने स्वामीजीसे पूछा कि, भवानी माताकी आज्ञा आज क्या हुई, तब स्वामीजीने निम्नलिखित शब्द उन्हें बतलाये:—

"गुरुजनोंने जो कुछ कहा, सो तेरे कल्याणके लिए। मेरा कृपाप्रसाद न जानकर ही उन्होंने ऐसा कहा। चित्तमें विषाद मत लाओ। तुम्हारे हाथसे पराक्रम होनेपर वे फिर ऐसा नहीं कह सकेंगे। उस समय फिर वे यह उपदेश देंगे कि, गौ-ब्राह्मण-प्रतिपालन करना ही अपना उद्देश्य समझो। प्रयत्नमें अन्तर न

पड़ने देना चाहिए। प्रतिज्ञा बहुत जल्द पूरी होगी। सहायता जो प्राप्त करनी हो, उसमें अन्तर न पड़े। मेरी कृपा पूर्ण है।"

बस, इसी तरहके कुछ शब्द स्वामी महाराजने शिवबाको बतलाये; और अगले उद्योगमें लगनेके लिए प्रोत्साहन दिया। शिवाजीने जब देखा कि, तीन राततक उपवास करनेके बाद भवानी माताकी पूजाका मानसिक फल यथेष्ट प्राप्त हुआ, तब उनको बड़ा ही आनन्द हुआ। सूर्यका बिम्ब पूर्व क्षितिजपर दिखाई पड़ते ही उन्होंने दुग्ध-पान करके त्रिरात्रि-उपवासका पारण किया। घर छोड़कर आते समय उन्होंने, अपने साथियोंमेंसे किसीको भी पता न लगने दिया था कि, वे कहां जाते हैं; और क्यों जाते हैं। इसलिए अब उन्होंने अपने एक-दो साथियोंको सन्देशा भेजकर बुलवाया; और पहलेका सब वृत्तान्त बतलाया। साथ ही साथ यह भी कहा कि, अब मुसल्मानोंका कोई न कोई क़िला हस्तगत करना अत्यन्त आवश्यक होगया है। जिस क़िलेपर हमारी नज़र है, उसको हस्तगत करनेमें हमारे लिए कितना जनबल चाहिए, कितना शस्त्रबल चाहिए; और द्रव्यबलकी कितनी आवश्यकता होगी, इत्यादि बातोंका उन्होंने मिलकर विचार किया। उस समय उन्होंने यही सोचा कि, हथियारोंकी जितनी आवश्यकता होगी, सो तो सब हमारे पास पूरे पूरे मौजूद हैं, धनकी सामग्रीकी भी कुछ कमी न पड़ेगी। रह गया मनुष्यबल, इसमें अवश्य कमी है। इसलिये ऐसे मनुष्योंका संग्रह, जितनी भी जल्दी होसके, करना

चाहिए कि, जो सब प्रकारसे विश्वासपात्र हों—और ऐसे ही लोग हमारे इस कार्यमें मदद कर सकते हैं। इसलिए जैसाकि पिछले परिच्छेदमें बतलाया, अपने वर्तमान मनुष्योंके द्वारा ही दस दस, पांच पांच आदमी एकत्रित करानेकी संयोजना उन्होंने की; और तदनुसार लोगोंको एकत्रित करके उन्होंने आज्ञा भी देदी। सबको जतला दिया कि, देखो भाई, धनकी चिन्ता कोई मत करो। धन चाहे जितना खर्च हो, कोई परवा नहीं; पर धर्मका कार्य है, सो मनुष्योंकी कमी न पड़नी चाहिए। अस्तु। इतनी सब कार्यवाही होनेके बाद, जैसाकि हमने पीछे बतलाया, सब लोग अपने अपने घरोंको चले गये; और शिवबा इत्यादि—अब आगे क्या करना चाहिए, बीजापुर गये हुए लोग क्या क्या करते होंगे,अपने कार्यमें उनको कहांतक सफलता प्राप्त हुई होगी, इत्यादि बातोंके विषयमें नाना प्रकारके तर्क-वितर्क करने लगे। बीजापुरसे पत्र आनेका समय हो-चुका था; और वे लोग अब आजकलमें वहांसे कोई न कोई पत्र आनेकी प्रतीक्षा ही कर रहे थे, इतनेमें जंगलके बिलकुल बाहरकी ओर उन्होंने अपना जो आदमी देखभाल करनेके लिए रख छोड़ा था, वह दौड़ता हुआ आया; और कहने लगा कि, कोई आदमी आया है; और आपसे मिलनेकी इजाजत चाहता है। उधर बीजापुर गये हुए लोगोंको भी इस बातकी बड़ी चिन्ता थी कि, शिवबाकी आज्ञाके अनुसार पत्र लिखना चाहिए; और पत्रद्वारा प्रकट करनेयोग्य अनेक घटनाएं भी वहां होचुकी

थीं। अतएव, इस समय जो मनुष्य आया था, वह बीजापुरसे ही आया था; और जङ्गलके बिलकुल अन्तमें जो निरीक्षक रखा गया था, उसको उसने अपनी पहचानकी कटार भी स्वामीजी तथा राजासाहबको दिखानेके लिए देदी थी। अतएव स्वामी-जीने उस कटारको देखते ही उस आगत मनुष्यको लानेकी आज्ञा दी। मनुष्य आया; और आते ही नियमानुसार प्रणाम करके अपने पासकी थैली स्वामीजीको देदी। स्वामीजी वहांका समाचार जाननेके लिए उत्कंठित हो ही रहे थे, इसलिये शीघ्रतापूर्वक थैली खोलकर पत्र निकाला; और पहले स्वयं ही उसको ध्यानपूर्वक पढ़ा। स्वामीजी जिस समय उस पत्रको पढ़ रहे थे, शिवबा तथा अन्य लोगोंका ध्यान बराबर उनकी चेष्टाकी ही ओर लगा हुआ था। पढ़ते पढ़ते स्वामीजीकी चेष्टामें खिन्नताका भाव आने लगा; और उसको देखते ही उसका प्रतिबिम्ब अन्य लोगोंकी चेष्टापर भी दिखाई देने लगा। और उस पत्रमें क्या समाचार आया है, सो जाननेके लिए सब लोग अत्यन्त आतुर दिखाई दिये। स्वामीजीने पत्र अन्ततक पढ़ा; और फिर एक दीर्घ श्वास छोड़कर क्षणमात्रके लिए सचिन्त बैठे रहे। इसके बाद पत्र लेकर सबको पढ़ सुनाया। नानासाहब इत्यादि लोग जिस दिन बीजापुर पहुँचे थे, उस दिनसे लेकर और जिस दिन आधीरातके समय नानासाहब एकाएक गायब होगये, उस दिनतकका सारा वृत्तान्त उसमें था। पहलेपहल तो उस पत्रका वृत्तान्त सब लोगोंको अत्यन्त गूढ़सा ही प्रतीत

हुआ। उसमें यही लिखा था कि, बीजापुर हम कब पहुँचे, पहलेपहल कहां गये, वहां कौन मिला, नानासाहबके साथ एकान्तमें उसकी कैसी बातचीत हुई; और फिर हवेली हमारे सिपुर्द करके वह किस प्रकार वहांसे चला गया; फिर दूसरे दिन जब हम बस्तीमें वेश बदलकर गये, तब एक महलमें एक नवयुवक मराठे सरदारको देखकर नानासाहबकी क्या दशा हुई; और फिर तभीसे उनकी चित्तवृत्तिमें कैसा परिवर्तन होता गया; जिस कार्यके लिए वे और हम गये थे, उसकी ओर किस प्रकार उनका ध्यान न लगने लगा; अन्तमें वे हमको न बताते हुए आधीरातके लगभग अकेले बाहर किस प्रकार गये; और यह समझकर, कि, शायद वे उसी व्यक्तिसे मिलने गये होंगे, जोकि उनको वचन देकर, घर हमारे लिये छोड़कर, चला गया था; हम किस प्रकार पहले चुप बैठे रहे; और जब यह मालूम हुआ कि, वे कहीं चले गये, तब हमने किस किस प्रकार उनकी खोज की; फिर हमने समझा कि, शायद वे उसी सरदारके पास चले गये हों, जिसको देखकर उनकी चित्तवृत्ति ऐसी होगई थी; और इसलिए हम फिर किस प्रकार उस महलपर गये; और वहां जाकर दरवानसे मिलकर फिर हमने उस बातका पता लगानेके लिए क्या क्या प्रयत्न किया; और उसमें कहांतक सफलता प्राप्त होनेकी आशा है, इत्यादि सब बातें उस पत्रमें लिखी थीं। पत्र पढ़ते ही लोगोंकी चित्तवृत्ति कुछ विलक्षण प्रकारकी होगई। देखो, हमने किस उद्देश्यसे उनको भेजा; और

यह क्या नवीन बला आगई ! यह सोचकर सब लोग मन ही मन विचार करने लगे। उनके मनमें यही आया कि, देखो, एक दूसरे शहरमें उन लोगोंके साथका एक आदमी इस भांति अचानक ग़ायब होगया—अब उन लोगोंकी क्या दशा होगी, इसकी कल्पना भी करना अन्य लोगोंके लिए कठिन है। फिर उसमें

दरबारका रहस्य जान लेनेकी आप ही आप प्रतिज्ञा करके जो मनुष्य गया था, वही अचानक ग़ायब होगया, यह भी एक बहुत ही बड़ी विचित्र बात हुई। पर वह चला कैसे गया, क्यों चला गया, इसकी कल्पना कोई भी न कर सका। कोई कोई यह भी सोचने लगे कि, शायद उसने यह देखा हो कि, अब हमारी प्रतिज्ञा हमारे हाथसे पूरी नहीं होगी; और इसीलिए शायद वह कहीं चला गया हो, अथवा जिस मनुष्यने उसको अपना घर सौंपा और बार बार मिलते रहनेका वचन दिया, उसी मनुष्यने शायद किसी उद्देश्यसे धोखेबाज़ी की हो। इस प्रकारके अनेक विचार उनके मनमें आने लगे। परन्तु हां, यह शंका किसीके भी मनमें नहीं आई कि, नानासाहबसे मिलकर शायद किसीने दरबारसे उनको बड़े बड़े पद दिलानेका लालच दिखलाया हो; और इस प्रकार अपने स्वीकृत कार्यमें दग़ाबाज़ी करनेका भाव उनके अन्दर भर दिया हो ! और वास्तवमें ऐसी शंका हो ही कैसे सकती थी ? क्योंकि नानासाहबकी दृढ़तापर सब लोगोंको पूरा पूरा विश्वास था। हां, वैसा विश्वास यदि न होता, तो इस प्रकारका संशय होनेके लिए भी कारण इस समय

काफी मौजूद थे। परन्तु उस प्रकारकी कोई शंका नहीं हुई; और इसीकारण लोग इतनी गूढ़तामें भी पड़े। वैसी शंका यदि होती, तो इतनी गूढ़तामें पड़नेकी कोई आवश्यकता ही न थी। नानासाहबके समान मनुष्य बीजापुरके समान शहरमें एकाएक ग़ायब होगया, इसका कारण क्या? यह क्या गोलमाल है? कुछ उनकी समझमें नहीं आया। नाना प्रकारके तर्क-वितर्क हुए। अब आगे नानासाहबका पता यदि न लगा, तो बीजापुरमें वे लोग क्या करेंगे? उनको उत्तर क्या भेजा जाय? जबतक उनकी पूरी पूरी परिस्थिति मालूम न होजाय, तबतक हम क्या कर सकते हैं; और फिर तानाजीके समान ज़बरदस्त आदमी पासमें नहीं है, ऐसी दशामें हम सोच ही क्या सकते हैं? इत्यादि अनेक प्रकारके विचार शिवबाके मनमें आने लगे; और वे बड़े चक्करमें पड़े। पर बहुत देरतक मनको चक्करमें डाले रहना उनके स्वभावके बाहर था। उनकी उस थोड़ीसी अवस्थामें भी उनके चरित्रकी यह एक ख़ास ख़ूबी थी कि, चाहे जितना बड़ा भारी संकट आजाय, वे उसके कारण बहुत देरतक चक्करमें पड़े नहीं रह सकते थे; किन्तु उस संकटको दूर करनेके लिए, अथवा ऐसी कोई तदवीर करनेके लिए, कि जिससे उस संकटके परिणाम ज़रा भी उनको स्पर्श न करने पावें, वे तुरन्त ही किसी न किसी उपायकी योजना करते थे; और यही उनके चरित्रकी ख़ास ख़ूबी थी। बस, अपने उसी नियमके अनुसार क्षणभर एकाग्र होकर उन्होंने विचार किया; और

फिर एकदम बोल उठे, "स्वामी महाराज, नानासाहबके साथ किसीने दग़ाबाज़ी करके उनको पकड़ रखा है। इसलिए और किसीको यहांसे जाना चाहिए; अतः मैं ही स्वयं जाता हूं।" स्वामीजीने चुपकेसे उनका कथन सुन लिया; और उनका पहला आवेग कुछ कम होने दिया। बादको फिर वे बोले, "शिवबा, तुमने यह क्या सोचा? अरे, तुम यदि आप ही आप उनके जालमें चले जाओगे, तो फिर उनको कितना आनन्द होगा! ऐसा विचार ही मनमें मत लाओ। तुम जब उनके पंजेमें पहुंच जाओगे, तब फिर उनको और क्या चाहिए? हमको वहांका वृत्तान्त फिर कुछ मालूम होने दो। थोड़ीसी प्रतीक्षा हमको और करनी चाहिए। इसके बाद कुछ न कुछ उपाय अवश्य किया जायगा।" परन्तु स्वामीजीके इस कथनसे शिवबाको कोई सन्तोष नहीं हुआ। इसलिए वे फिर बोले, "अब फिरसे पत्र आनेतक रास्ता देखते रहना मेरे विचारसे ठीक नहीं—इस प्रकार न जाने कितने दिनतक रास्ता देखना पड़े; और तब-तक उन लोगोंकी न जाने वहां क्या दशा हो! इसलिए आज ही किसीको उनके पास चला जाना चाहिए। और इसके लिए मैं ही जाऊंगा, दूसरा उपाय नहीं।" इसपर स्वामीजी फिर कहते हैं, "शिवबा, तुम्हारे ही भरोसेपर न जाने कितने काम यहां हैं; और तुम इस बातको समझते नहीं हो। चार दिनके लिए भी यदि तुम चुपके यहांसे कहीं चले जाओगे, तो बना-बनाया सारा खेल मिट्टीमें मिल जायगा। जो सौ-पचास आदमी

तुम्हारे लिए जान देनेको आगे बढ़े हैं; और पांच-सात सौ आदमी और भी तैयार कर लेनेकी जो हम लोगोंने आशा की है, सो सब व्यर्थ जायगी। तुम यदि चले जाओगे, तो मानो सुमेरुमणिका दाना ही छूट गिरेगा; और उसीके आधारसे जो और अनेकों मणि शीघ्रतापूर्वक हम मालामें पिरो रहे हैं, सो एक ओरसे हम पिरोते जायँगे; और दूसरी ओरसे, उस आधार-के न रहनेके कारण, वे जल्दी जल्दीसे गिरते जायँगे। इसलिए तुमको अपना स्थान न छोड़ना चाहिए, न अपना प्रयत्न त्यागना चाहिए। तुम जबतक जमे रहोगे, तबतक किसी बातकी चिन्ता नहीं। एक नाना साहब ही क्यों—न जाने कितने लोग तुम्हारे पास आ जायँगे। लेकिन तुम यदि विचल जाओगे, तो कोई भी टिक नहीं सकेगा। यह तुम अच्छी तरह ध्यानमें रखो।"

यह अन्तिम कथन सुनकर शिवबा एकदम स्वामीजीकी ओर देखकर कहते हैं, "स्वामीजी, मेरे स्नेही मुझपर पक्का विश्वास रखकर, केवल मेरे कहनेसे ही, अपने प्राणोंकी भी परवा न करते हुए, जहां मैंने कहा, चले गये। उस नवीन जगहमें क्या संकट आवेंगे; और क्या नहीं आवेंगे, इसका उन्होंने क्षणभरके लिए भी विचार नहीं किया। और अब, जबकि उनपर संकट आया हुआ है, ऐसी दशामें मैं यदि चुप बैठा रहूंगा, तो फिर स्वीकृत कार्यमें सफलता प्राप्त होनेकी आशा ही क्या करनी चाहिए? जबतक उनके मनमें इस बातका दृढ़ विश्वास बना है कि, मैं मौका पड़नेपर उनकी जानके लिए जान देनेको तैयार हूं; और

जबतक वे हृदयसे यह समझते हैं कि, कोई भी लड़ाईका मौक़ा आजाय, मैं मोर्चेपर जानेको तैयार हूं, तभीतक स्वीकृत कार्यमें सफलता प्राप्त करनेकी मैं आशा रख सकता हूं। इस-लिए, मैं एक न सुनूंगा। मेरे ये सहायकगण किसी न किसी भारी संकटमें फँस गये हैं। उनके पास जाकर उनको धैर्य दिलाना ही मेरा कर्तव्य है!"

पैंतालीसवां परिच्छेद।

तहख़ानेमें।

नानासाहबको, कोई न कोई बिलकुल अज्ञात मनुष्य, धोखा देकर किस प्रकार कहां लेगये, सो पाठकोंको मालूम होचुका है। उस तहख़ानेमें जब नानासाहब बन्द कर दिये गये, तब उनके चित्तमें किस किस प्रकारके विचार आने लगे, इस विषयमें पाठकोंके सामने कोई विशेष वर्णन करनेकी आवश्यकता नहीं दिखाई देती। जिस प्रकार नानासाहबका शरीर उस समय अन्धकारमें था, उसी प्रकार उनका मन भी एक तरहसे अन्ध-कारहीमें था। क्योंकि बाहरी अन्धकारके कारण जिस प्रकार उनको यह नहीं मालूम होता था कि, हम कहांपर हैं, और हमारे आसपासकी जगह कैसी क्या है, उसी प्रकार हमको यहां लानेमें लानेवालोंका उद्देश्य क्या है, इत्यादि इत्यादि बातोंके

विषयमें भी उनका मन अन्धकारहीमें था। हां, हमारे हाथ-पैर छूट जाय, इस विचारसे वे उनको इधर-उधर चला रहे थे। साथ ही, यह सारा क्या गोलमाल है, इसको जाननेके लिए उनका मन भी बराबर दौड़धूप और सोच-विचार कर रहा था। बहुत देरतक प्रयत्न करनेके बाद इतनी स्वतंत्रता उन्होंने प्राप्त कर ली कि, जिससे उनके हाथ-पैर छूट गये, मुँह भी खुल गया; और वे अब इधर-उधर टटोलनेको समर्थ होगये। कुछ देर बाद वे उस तहख़ानेकी चारों ओर घूम भी आये। आशा थी कि, वहां कहीं, किसी तरफ़, कोई दरवाजा अथवा खिड़की उनके हाथमें लगेगी; पर सफल नहीं हुई। तहख़ानेमें जिस समय लाकर उनको डाला गया था, उस समय एक दरवाजा खुला था, यह उनको मालूम था; पर इस समय वह भी, किसी प्रकार, उनके हाथमें नहीं लगा। इसलिए उन्होंने समझा कि, दरवाजा ही इतना सपाट लगता होगा, जोकि मालूम नहीं होसकता। इसके सिवाय, खिड़कीका तो उसमें नाम भी नहीं था। जो हो। एक घण्टा होगया। डेढ़ घण्टा होगया। दो घंटे भी होगये। न कोई आया, न कोई गया। यह अहमद कौन है? इसने, और साथके अन्य कुछ लोगोंने, हमको किस महलमें लाकर डाला है? बस, इन दो प्रश्नोंके अतिरिक्त और किसीका भी साथ नानासाहबको नहीं था। सारी रात लौट गई होगी—क्योंकि रात लौटी अथवा नहीं, इस बातको जाननेके लिए नानासाहबके सामने कोई साधन नहीं था। बाहर

सुबह होजाय; सुबह ही क्यों—दोपहर क्यों न होजाय, फिर भी उस तहखानेके अन्दर सूर्यप्रकाशका एक लवलेश भी प्रविष्ट होना सम्भव नहीं था। पर नानासाहब बेचारेको समयकी प्रतीक्षा करते रहनेके अतिरिक्त चूंकि और कोई उद्योग ही नहीं था; अतएव जब चाहते, तब वे यही समझ लेते कि, अब सुबह होगया होगा—अब देखो, सुबह अवश्य होगया—अब कोई आता होगा, इत्यादि। बस, इसी प्रकारकी प्रतीक्षामें वे अपना समय काट रहे थे। कभी कभी उनके मनमें यह भी आता कि, देखो, हमारे पश्चात् हमारे मित्रोंकी क्या दशा हुई होगी, वे हमारा पता लगानेके लिए क्या क्या उपाय करते होंगे; और जिस कामके लिए हम आये, वह तो एक ओर रहा; और यह एक विघ्न बीचमें ही आकर खड़ा होगया, यह सोचकर वे बेचारे हमारे साथी कितने दुखी होते होंगे, इत्यादि विचार भी बेचारे नानासाहबको सता रहे थे। निदान, उनका मन और शरीर उस समय इतना व्याकुल होरहा था कि, जितना व्याकुल होना चाहिए। इसलिए अब वे केवल भाग्यका भरोसा किये चुपके बैठे थे। इतनेमें ऐसा जान पड़ा कि, अब दोपहरके ग्यारह बजे; और इसलिए नानासाहब अब इस प्रकार तैयार होकर एक ओर बैठे कि, जैसे तहखानेका दरवाजा खुलते ही वे मौका पाकर निकल भगना चाहते हों। इतनेमें सचमुच ही दरवाजा खुला; और कोई मनुष्य भीतर आया। भीतर आनेवाला मनुष्य दरवाजेसे ही इधर-उधर देखने लगा। वह बार बार आगे-

पीछे देखता; और मानो यह सोचता हुआसा दिखाई दिया कि, अब मैं पैर भीतर रखूं या न रखूं। फिर मानो उसने यह समझा कि, खैर, भीतर पैर रखनेमें कोई हर्ज नहीं है; इसलिए उसने पैर भीतर रखा; और तुरन्त ही दरवाजा बन्द कर लिया। उसके हाथमें एक छोटीसी लालटेन थी, जिसे उसने आगे बढ़ाया। इसके बाद उसने इस विचारसे कि, उस लालटेनका प्रकाश अच्छी तरहसे पड़े, उसको खूब ऊँचा उठाया; और चारों ओर खूब निगाहसे देखा। इससे, नानासाहब जिधर खड़े थे, उस ओर जब लालटेनका प्रकाश गया; और नानासाहबका चेहरा उस मनुष्यकी निगाहमें आया, तब वह मनुष्य कुछ आश्चर्यचकितसा दिखाई दिया। नानासाहबने भी जब उस भीतर आनेवाले मनुष्यका चेहरा देखा, तब उन्होंने समझा कि, शायद यह वही मनुष्य आया होगा कि, जिसका नाम हमने रातको सुना था। इसके बाद, अब आगे क्या चमत्कार होता है, इस बातकी प्रतीक्षा करते हुए वे चुपके खड़े रहे। उन्होंने पहले यह विचार किया था कि, दरवाजा खुलते ही हम निकल जायँगे, परन्तु यह विचार अब उन्होंने छोड़ दिया। अब उनके ध्यानमें आगया कि, हमारा उक्त विचार कितना असम्भव है; क्योंकि वे लोग रातको उस तहखानेके अन्दर उनको किस फेरफारसे लाये थे, इसका उन्हें अब स्मरण आया; और उन्होंने सोचा कि, तहखानेके दरवाजेसे चाहे हम एक बार निकल भी जावें; परन्तु फिर भी इस महलके बाहर निकल जाना

बहुत ही कठिन बात है। इसलिए उन्होंने सोचा कि, यह मनुष्य जो अभी भीतर आया है, इसीसे यदि होसके, तो सब हाल जान लें; और यदि मुमकिन हो, तो इसीके द्वारा कुछ छूटनेका भी उपाय करें। इधर वह व्यक्ति, जो नानासाहबके चेहरेको देखते ही बिलकुल आश्चर्यचकितसा होगया था, उसका वह आश्चर्य जब कुछ कम हुआ, तब एक एक क़दम आगे बढ़ा; परन्तु प्रत्येक क़दमपर वह मुड़ मुड़कर देखता जाता था कि, हमारे पीछे कोई है तो नहीं, अथवा कोई आता तो नहीं है। इस प्रकार धीरेसे जब वह व्यक्ति नानासाहबके बिलकुल पास आगया, तब कहता है, "जनाब, आपको बहुत भूख लगी होगी; पर मैं यदि कुछ लाऊँ भी, तो आप खायँगे नहीं। यह जगह और किसीको मालूम नहीं है; और न कोई दूसरा यहां आसकता है—मैं आपकी दासी फ़तिमा बड़ी कठिनाईसे आपाई हूं। आपके खाने-पीनेका इन्तज़ाम अब क्या होसकता है? अहमद एक बड़ा दुष्ट आदमी है, वह आपको भूखों ही मार डालेगा।" ये शब्द एक स्त्रीके कंठसे इतनी माधुरीके साथ निकले कि, उन्हें सुनते ही नानासाहब अबतकका अपना सारा दुःख एक क्षणभरमें भूल गये। क्या यह फ़तिमा वही स्त्री है कि जिसने रातको हमें पकड़ लानेवाले अहमद तथा अन्य लोगोंकी सहायता करके हमें इस काल-कोठरीमें बन्द किया? और यदि सचमुच यह वही स्त्री है, तो फिर कल इसने उन लोगोंको इस कार्यमें सहायता क्यों दी? और आज हमसे इतना प्रेम दिखला-

कर बात कर रही है, इसका कारण क्या है? यह भी नहीं कह सकते कि, इसका यह प्रेम बनावटी है; क्योंकि भीतर आते समय यह बहुत डरती हुई आयी है; और पीछे मुड़ मुड़कर देखती आई है कि, इसका यह कार्य कोई देख तो नहीं रहा है? इस विचारने नानासाहबके मनको और भी अधिक गोलमालमें डाला। अभीतक तो इसी विचारसे उनका मन चकरा रहा था कि, हम कहां आगये; और हमको यहां कौन लाया? पर अब यह एक नवीन ही प्रकरण उपस्थित हुआ। हमको यहांपर लाकर क़ैद करनेवाला हमारा कट्टर दुश्मन है, इसमें सन्देह नहीं; और यह फ़तिमा उसको सहायता करनेवाली है, यह भी स्पष्ट है। तब फिर, आज यह इस प्रकारका विलक्षण व्यवहार क्यों करती है? बस, यही विचार नानासाहबके मनमें आरहा था कि, फ़तिमा फिर कहती है, "जनाबमन्, आपको भूख लग रही होगी, इसमें मुझे तो बिलकुल सन्देह नहीं, इसलिए किसी न किसी तरह मैं आपको थोड़े से फल लाये देती हूं। प्यासके लिए—मेरे हाथका पानी तो आप पी ही नहीं सकते, सो मैं एक तरबूज़ लिये आती हूं। किसी न किसी तरह आप शामतक तो वक्त काटें। शाम होते ही मैं एक मराठा स्त्रीके द्वारा आपके लिए कोई न कोई भोजनका प्रबन्ध कराऊँगी। जो कुछ आज मैंने देखा, वह यदि......"

आगे वह क्या गुनगुनाई, सो नानासाहब कुछ भी नहीं सुन सके। इसके बाद कुछ देरतक फ़तिमा कुछ भी नहीं बोली।

हां, अपनी लालटेनका उजेला नानासाहबके चेहरेपर पूरा पूरा डालकर वह उनकी ओर एकटक देख रही थी। बहुत समय होगया; परन्तु उनके चेहरेकी ओर देखनेकी उसकी लालसा मानो तृप्त ही नहीं हुई;पर बेचारी करती क्या? अब बहुत देरतक वह वहां ठहर भी नहीं सकती थी; इसलिए, यही सोचकर, अब वह बिलकुल धीरे धीरे एक एक क़दम दरवाजेकी ओर चलने लगी। नानासाहब उसके इस व्यवहारका कोई भी भेद समझ नहीं सके। यह है कौन? हमपर इसकी इतनी भक्ति क्यों है? यह भक्ति सच्ची है, अथवा इसमें कुछ बनावटीपन है? इससे सब हाल जाननेका प्रयत्न हमें करना है, सो इसी समय करें, अथवा इसका और भी कुछ रङ्गढङ्ग देखकर करें? यह वे सोच ही रहे थे कि, फ़तिमा इतनेमें बाहर निकल गई। दरवाजा खोलते ही उसने एक बार पीछे मुड़कर देखा, फिर एक लम्बी सांस छोड़ी; और लालटेन बुझाकर फिर वह दरवाजा बन्द कर लिया। इधर नानासाहब फिर अपने विचारोंसे ही सलाह-मशविरा करते हुए चुप बैठ गये। सेकंड, मिनट, घंटे, एकके बाद एक, बीतते ही चले जारहे थे। जैसे किसी सिंहको अचानक जाकर कोई पकड़ ले; और फिर उसे किसी बड़े पिंजरेमें लाकर बन्द कर दे, तथा उसके खाने-पीनेका भी कोई बन्दोवस्त न करे; और उस समय जैसी उसकी हालत हो-जाय, बस, वैसी ही हालत इस समय नानासाहबकी होरही थी। उनके शरीर और मन, दोनोंको अन्नकी आवश्यकता थी;

और उसके न मिलनेके कारण उनकी हालत उसी सिंहकी भांति ही होरही थी। उनका मन और शरीर, दोनों बराबर इधरसे उधर चक्कर काट रहे थे। वे बार बार यही सोचते कि, कब फ़तिमा आवे; और कब उससे सब हाल जाननेका मौक़ा मिले। जैसाकि वह कह गई है, क्या फिर भी वह आवेगी? हम उसके पेटमें पैठने लगेंगे, तब वह पैठने देगी क्या? हमको जो मनुष्य यहां पकड़वा लाया है,वह हमको पहचानता अवश्य ही होगा; और यदि वह पहचानता है, तो उसके शत्रु होनेमें भी कोई सन्देह नहीं। और यदि वह सचमुच हमारा शत्रु है; और शत्रुताके कारण ही वह हमें यहां लाया है, तो फिर इस शत्रुके घरमें भी हमपर इतनी भक्ति करनेवाली यह फ़तिमा कौन है? और जिसको यह आप ही आप "वह बड़ा दुष्ट है," कहकर बतलाती है, वह अहमद कौन है? वह जिस समय हमें यहां लाया था, फ़तिमासे उसने पूछा था कि, "मालिकको तो इसका पता नहीं लगा?" इसका कारण क्या है? इसका मालिक कौन है? अपने मालिकको पता न लगने देकर हमको वह यहां क्यों क़ैद कर लाया? ये प्रश्न अपने ही आप पूछते हुए नानासाहब कुछ देरके लिए खड़े होगये। इसके बाद एक बार न जाने उनके मनमें क्या विचार आया कि, उनकी वृत्ति कुछ उल्लसितसी दिखाई दी। "जिस नवयुवक मराठे सरदारके महलके पास हम बार बार खड़े होजाते थे, उसीसे तो इस विषयका कोई सम्बन्ध नहीं है? हम उसके दरवाजेके पास खड़े

होकर बराबर उसकी ओर देखते रहते थे, इससे हमारे विषयमें कोई सन्देह तो नहीं होगया ? और शायद इसीकारण हमको किसीने ऐसी विचित्र दशामें डाल रखा हो ! पर हमारे विषयमें सन्देह क्या होगा ?" इस प्रकारके कुछ विचित्र ही विचार नानासाहबके मनमें आये; और इसके बाद फिर वे फ़तिमाकी प्रतीक्षा करने लगे। इस समय वे जिस दशामें थे, उस दशामें ऐसे ही किसी न किसी व्यक्तिकी सहायता मिले बिना काम नहीं चल सकता था; और यह बात वे भलीभांति जानते थे। जो हो। अन्तमें फिर सन्ध्याका समय आया; और नानासाहब चातककी भाँति बैठकर ताकने लगे। इतनेमें उन्हें मालूम हुआ कि, दरवाजा खुला, अब कोई भीतर आरहा है; और उन्हें बड़ा आनन्द हुआ। सचमुच ही खिन्नवदना फ़तिमा आकर उनके सामने खड़ी हुई। उसके पीछे पीछे एक और भी स्त्री थी। फ़तिमाने उस स्त्रीको भीतर बुलाया; और वह जो कुछ अपने साथ बांधकर लाई थी, उसे वहीं रख देनेके लिए कह-कर उसे जानेका इशारा किया; और स्वयं भी जाने लगी। नानासाहब उससे मिलनेको उत्सुक थे ही। इसलिए वे स्वाभाविक ही उससे ठहरनेके लिए इशारा करने लगे। उसने भी इशारेसे जतलाया कि, मैं अभी आती हूं; और फिर उस दूसरी स्त्रीके साथ चली गई।

अपने इशारेके अनुसार फ़तिमा सचमुच ही कुछ समय बाद आई; और उस दूसरी स्त्रीने लाकर, जहां कुछ पदार्थ रख दिये

थे, वहीं अपनी लालटेन रखकर फ़तिमा कहती है, "जनाब, इस दासीने दोपहरको आपके पास फल-फलहरी पहुँचानेके लिए बहुत उपाय किये, पर आपके पास आनेका किसी प्रकार भी मौक़ा नहीं मिला। जी मानता नहीं था; पर क्या करूं ? यदि ज़रा भी यह प्रकट होजाता कि, मैं आपके पास जाती हूं, तो आपहीके समान मेरी भी गति हुई होती। और एक बार यदि मेरी वैसी गति होगई होती, तो जो मैं आपके पास आकर किसी न किसी तरह यह खाने-पीनेका सामान पहुँचा सकती हूं, सो भी पहुँचाना बन्द होजाता; और फिर न जाने आपकी क्या दशा हुई होती ! बस, इसी डरसे मैंने दोपहरको जल्दी नहीं की। अब आपके लिए ये पदार्थ ख़ास तौरपर तैयार करवा-कर लाई हूं, इनको आप पावें। जो स्त्री ये पदार्थ लाई है, वह ख़ास मराठिन है। उसके हाथके पदार्थ खानेमें तो आपको कोई एतराज़ है ही नहीं।"

नानासाहब चुपके उसका यह कथन सुन रहे थे। यह जाननेके लिये कि, उसके कथनमें हार्दिकता कितनी है, वे बरा-बर उसके चेहरेकी ओर देख रहे थे ; और उसके चेहरेसे उनको विश्वास होगया कि, सचमुच ही मेरे ऊपर इसकी सच्ची भक्ति है। इसलिए यह सोचकर कि, अब हमें इसकी इस भक्तिसे लाभ उठा लेना चाहिए, अत्यन्त धैर्यके साथ वे उससे कहते हैं, "सुन्दरी, तू यदि सचमुच ही मुझपर इतनी भक्ति रखती है, तो क्या तू मेरी बातोंका उत्तर देगी ? यदि सचमुच ही मेरे ऊपर

तेरी भक्ति होगी; और यदि सचमुच ही हृदयसे तू यह चाहती होगी, कि मेरा कल्याण हो—मेरे साथ कोई दग़ा न हो—तो जो कुछ मैं पूछूंगा, उसका उत्तर तू अवश्य ही देगी।"

फ़तिमा बिलकुल चुप खड़ी रही; परन्तु ऐसा जान पड़ा कि, उसकी बोलनेकी इच्छा अवश्य है, पर किसी कारणवश वह बोल नहीं सकती है; और इसकारण उसे बड़ा खेद होरहा है। अतएव नानासाहब उससे फिर कहते हैं, "देख सुन्दरी, यदि तू कुछ न बोलेगी, तो मैं यही समझूंगा कि, जिन लोगोंने मुझे यहां क़ैद कर रखा है, उन लोगोंने कुछ धोखा देनेके लिए ही तुझे मेरे पास भेजा है; और तू मेरे विषयमें यह बनावटी प्रेम दिखला रही है। यदि ऐसा नहीं है, तो तुझे बोलना चाहिए; और जो मैं पूछता हूं, उसका उत्तर देना चाहिए। तू यदि उत्तर नहीं देगी, तो यह कुछ भी मुझे अच्छा नहीं लगेगा।"

यहाँतक नानासाहबने कहा; परन्तु फ़तिमा फिर भी वैसी ही विवेचनामें पड़ी हुई बिलकुल चुप खड़ी रही। परन्तु अन्तमें जब उसने देखा कि, अब कुछ न कुछ बोले बिना काम नहीं चलता, तब बिलकुल धीरेसे कहती है, "जनाब, मेरा कलेजा भी यदि आप मांगें, तो उसे देनेके लिए मैं तैयार हूं; फिर आपकी बातोंका उत्तर क्यों न दूंगी? परन्तु आप आज मुझसे कुछ भी न पूछिये। कल मैं रातको फिर आऊंगी, उस समय आपको जो कुछ पूछना हो, खुशीसे पूछिये। मैं उसका उत्तर दूंगी। परन्तु पहले यह भोजन, जो मैं लाई हूं, उसे कर लीजिए।"

नानासाहब उस समय बिलकुल आतुर होरहे थे। इस-लिए वे फिर कहते हैं, "अरे—पर कल ही क्या है? आज बतला दे तो? कल शामतक—बीचमें कितना समय है, इसकी भी तुझे कुछ कल्पना है? क्या करूं? मैं अचानक धोखेमें पकड़ा गया। नहीं तो, मेरे सामने होकर यदि कोई लड़कर मुझे पकड़ता, तो कभी सम्भव नहीं था कि, मुझे पकड़ लेता। मेरे हाथमें न कोई हथियार है न वथियार। मुझे ऐसी दशामें लाकर डाल दिया है; और इसीकारण तेरे समान स्त्रीकी प्रार्थना करने-की मुझे नौबत आगई है। अच्छा, तू यदि मुझे कुछ बतलाना नहीं चाहती है, तो मत बतला। पर इतना तो बतला दे कि, यह महल किसका है। यह तू मुझे न बतला कि, मुझे यहां क्यों पकड़ लाये—और कौन पकड़ लाये—पर यह बतलानेमें क्या हानि है कि, यह महल किसका है? और यदि सचमुच मुझपर तुझको दया आती हो, तो मुझे थोड़ासा कागज़ और क़लम-दवात ला दे। मैं एक पत्र लिखे देता हूं, सो जहां मैं बतलाऊं, वहां उसे पहुंचानेकी कृपा कर। इतना भी यदि तेरे हाथसे न हो, तो फिर यह झूठी भक्ति मुझपर मत दिखला। जा, मैं यही समझूंगा कि, मेरे शत्रुओंने, मुझे कोई न कोई भयङ्कर धोखा देनेके लिए, यह एक डाइन खड़ी की है।"

कह नहीं सकते, क्या कारण था; पर इस अन्तिम वाक्यको सुनते ही फ़ातिमाकी चेष्टा कुछ विलक्षण ही दिखाई दी। उसकी

आंखोंमें आंसू आगये; और वह बराबर लम्बी लम्बी सांसें लेती हुई खड़ी रही। इसके बाद फिर एकदम नानासाहबसे कहती है, "जनाब, आपने जो कुछ कहा, उसका करना कितना कठिन है, इसकी कल्पना भी आपको नहीं। अस्तु। पर इतनेहीसे यदि आप मेरी भक्तिकी परीक्षा करना चाहते हैं, तो मैं आपकी दूसरी बातको स्वीकार करती हूं। पर वह काम भी कलतक ठहरे बिना हो नहीं सकता। यहांसे अब मैं जाऊंगी;पर काग़ज, क़लम, दवात लाना बहुत ही कठिन है—किंबहुना, बिलकुल ही असम्भव है। आप यदि कुछ धैर्यसे काम लेंगे, तो मैं आपका यह काम अवश्य कर दूंगी; और यही क्यों—मैं आपके यहांसे छूटनेका भी बन्दोबस्त कर दूंगी। पर मुझपर आप विश्वास रखें; और किसी बातके लिए जल्दी न करें।"

उपर्युक्त बातें उसने इतने हृदयपूर्वक कहीं, कि फिर नानासाहबको उसके विरुद्ध बोलनेका साहस ही न हुआ। वे चुप होरहे। फ़तिमाने फिर हाथ जोड़कर उनसे प्रार्थना की कि, आप कृपा करके मेरे लाये हुए इन पदार्थोंको पावें। इसपर नानासाहबके मनमें फिर भी थोड़ीसी शङ्का आई कि, हम इसके आग्रहके अनुसार,इस भोजनका सेवन करें या नहीं? इसमें कोई विषका संयोग तो नहीं कि, जिसका हमपर कोई बुरा प्रभाव पड़े? यह स्त्री हमपर इतना प्रेम दिखलाती है, इसका कारण क्या है? कोई धोखेबाज़ी तो इसमें नहीं? इस प्रकारके विचार फिर भी उनके मनमें आये बिना नहीं रहे। परन्तु अभी-

तक उससे जो बातचीत हुई थी, उससे नानासाहबका मन अब उसपर विश्वास करनेके लिए एक प्रकारसे तैयार ही था। इसके सिवाय, अब उनके पेटकी भी ऐसी दशा होरही थी कि, इसप्रकार आदरके साथ लाये हुए भोजनके विषयमें विशेष शङ्का भी नहीं की जासकती थी। इसलिए नानासाहबने फिर शीघ्र ही उन पदार्थोंका रसास्वाद लिया।

दूसरे दिन शामके वक्त फिर फ़तिमा पहले ही दिनकी भांति आई। आज भी वह पहले ही दिनकी भांति उक्त मराठा स्त्रीके द्वारा सुन्दर भोजन लेआई थी; और पहले दिन जैसाकि उसने स्वीकृत किया था, तदनुसार क़लम, दवात और काग़ज़ भी साथ ही लेती आई थी। पहले ही दिनकी तरह प्रथमतः उसने उस मराठा स्त्रीको वहांसे हटा दिया; और स्वयं अन्दर आकर उसने नानासाहबसे पत्र लिखनेकी प्रार्थना की।

छियालीसवां परिच्छेद।

सरदार साहबकी आतुरता।

"आपके यहां चिराग़ रखकर मेरा यहांसे जाना सम्भव नहीं। इसलिए जो कुछ आपको लिखना हो, जितनी शीघ्रताके साथ आप लिख सकें, लिख देवें। किस समय क्या होगा, इसका कुछ ठीक नहीं। मैं बहुत देरतक यहां रह नहीं सकती। आप जब पत्र लिख चुकें, तब मुझे बतला दें, कि उसे कहां

लेजाना होगा। मैं उसे पहुँचा दूंगी।" इस प्रकार जब फ़तिमा नानासाहबसे प्रार्थना कर चुकी, तब नानासाहबने उसकी लाई हुई सामग्रीका उपयोग किया। परन्तु नानासाहब सिवाय इसके लिख ही क्या सकते थे कि, शहरके बाहर एक बड़े भारी महलके तहख़ानेमें हमें ज़बरदस्ती इस प्रकार क़ैद कर रखा है। जिस महलके तहख़ानेमें, हमको एक गठरीकी तरह बांधकर, डाल दिया है, वह महल है किसका? और हमको पकड़ा किसने? यहां लाया कौन? और क्यों? इत्यादि बातोंके विषयमें वे एक चकार शब्द भी नहीं लिख सकते थे। इस विषयमें तो वे अभीतक भयंकर अन्धकारमें ही थे। हमको गठरीकी तरह बांधकर अहमद लाया है; पर यह अहमद कौन है? यह फ़तिमा कौन है? इत्यादि बातोंका भी उन्हें कुछ ज्ञान न था। हां, अब इतनी आशा अवश्य होचली थी कि, इस फ़तिमाके द्वारा इस सम्बन्धमें हमको कुछ न कुछ ज्ञान अवश्य होगा। नानासाहब पत्र लिखनेके लिए बैठे, पर जब उन्होंने सोचा कि, वास्तवमें हम लिखें इसमें क्या, तब वे एकदम फ़तिमाकी ओर देखकर बोले, "ऐ सुन्दरी, मैं लिखने तो बैठा; पर लिखूं क्या? मुझे कौन पकड़ लाया? मैं किसके महलमें हूं? कुछ मालूम नहीं। इससे तो, यदि तेरे हाथसे होसके, मेरा छुटकारा ही क्यों न कर दे? मैं जन्मभर तेरा उपकार नहीं भूलूंगा।" नानासाहबका यह कथन सुनकर फ़तिमा कुछ हँसी; और फिर कहती है, "जनाबमन्, मौक़ा तो मिलने

दीजिये, मौक़ा मिलनेपर मैं आपका छुटकारा अवश्य करूंगी, आप विश्वास रखिये। पर यह बात आज तो किसी प्रकार नहीं होसकती। आज तो आप—ज़िन्दा हैं, भयका कोई कारण नहीं, इतना यदि किसीको लिखना हो, तो लिख दीजिए। जबतक मैं इस महलमें हूं, तबतक, अब, आपके प्राणोंको कोई धक्का नहीं पहुँचा सकता, इसका आप विश्वास रखिये। मैं स्वयं आपका यह पत्र लेजाकर दूंगी। और जो कुछ बतलानेयोग्य होगा, अवश्य जाकर बतलाऊंगी।" फ़तिमाके इस कथनपर फिर नानासाहब एक अक्षर भी नहीं बोल सके। हम कहां हैं, और हमको क़ैद कर लानेवालोंका इसमें क्या उद्देश्य है, इत्यादि बातें भी उन्होंने फिर उससे नहीं पूछीं। उन्होंने ताड़ लिया कि, हमारे ऊपर इसकी दृढ़ भक्ति है; और अब इसके कहनेके अनुसार ही कार्य करनेमें चतुराई है। बस, यह सोचकर उन्होंने तानाजी इत्यादिके ठहरनेका स्थान उसे बतलाया; और फ़तिमा थोड़ी ही देरमें उनसे बिदा होकर चली गई। हां, जाते समय इतना उसने अवश्य कहा कि, "मैं अब आपका काम करने जारही हूं, इसमें यदि कोई विघ्न नहीं आया, तो मैं आपकी सेवाके लिए फिर आजाऊंगी। और यदि कोई ऐसा ही विघ्न आगया, तो फिर मैं यह नहीं कह सकती कि, आपकी और मेरी भेंट फिर कब होगी। ऐसा यदि कोई विघ्न आगया, तो मैं यह भी नहीं कह सकती कि, उस दशामें फिर आपका क्या होगा। इसलिए इतना मैं आपको बतलाये जाती हूं कि,

आप किसके महलमें हैं। और निशानीके तौरपर एक तावीज भी आपको दिये जाती हूं। वह तावीज मैंने अभीतक किसीके पासतक नहीं जाने दिया। किन्तु इसे आपको देती हूं। इसका क्या उद्देश्य है, सो मैं आज आपको बतला नहीं सकती। जिस कामके लिए मैं जारही हूं, उसमें यदि मुझे अपने प्राण देनेकी नौबत आगई,आपको जो पकड़ लाया है,उसने यदि मेरे शरीरको भी कुछ बुरा-भला कर डाला, तो फिर आपकी और मेरी भेंट कैसे होगी? वह दुष्ट चाण्डाल क्या करेगा;और क्या नहीं,इसका कोई ठीक-ठिकाना नहीं। इसलिए जब आप पूरे तौरपर जान लें कि, अब आपकी और मेरी भेंट नहीं होसकती, तब आप इस तावीजको तोड़कर देखें। इससे अधिक और इस समय मैं कुछ कह नहीं सकती।" इतना कहकर फ़तिमाने नानासाहबके कानमें कुछ कहा; और बहुत जल्द वहांसे निकलकर चल दी। नानासाहबके कानमें उसने जो कुछ कहा, उसे सुनकर वे बिलकुल चित्रकी तरह स्तब्ध रह गये। उनके मनमें सहस्रों प्रकारके विचार आने लगे। जिसके महलमें लाकर वे रखे गये थे; और जिसकाकि नाम फ़तिमाने उनको बतलाया, वह उनके घरानेका बड़ा स्नेही था। उनके घरानेपर उसका बड़ा भारी प्रेम था। फिर उसने उनको क़ैद क्यों कराया? और इस दशामें लाकर उनको क्यों डाला? इसका उन्हें कुछ भी अनुमान न हुआ। यह सारा गोलमाल है क्या? इस विषयमें जितने अचम्भेमें वे पहले थे, उतना ही अचम्भा—किंबहुना

उससे भी अधिक अचम्भा—उन्हें इस समय हुआ। परन्तु अन्तमें यही कहकर उन्होंने समाधान किया कि, "क्या कहा जाय? मुसलमान भाई हैं! मौक़ा आनेपर ये क्या नहीं कर सकते!" इसके बाद फिर वे इस विचारमें पड़ गये कि, देखो, हम किस विचित्र दशामें आपड़े—घरसे निकले, तब क्या विचार था; और फिर इतने दिन बाद आज कौनसी दशाको प्राप्त हुए! इन सब बातोंका चित्र उनकी कल्पनाने अंकित करके उनके सामने रख दिया। सच ही है, हाथ-पैर हिलानेको भी जब जगह न रही, तब मन पिछले सारे चित्रको अंकित करनेमें समय बितावेगा ही। इसमें कोई आश्चर्य नहीं। परन्तु, पाठको! अब नानासाहबको तो हम यहींपर अपने काल्पनिक चित्र-दर्शनमें लगा रहने दें; और हम अब बीजापुरके अपने अन्य कुछ पात्रोंके हालचालको चलकर देखें।

पाठकोंको याद होगा कि, नानासाहबके साथी वैरागीके भेषमें उनको ढूँढ़ते हुए उसी मराठा युवक सरदारके महलके पास पहुँचे थे कि, जिस सरदारको एक ही बार देखकर नाना-साहब इतने पागल होगये थे। वहां पहुँचकर फिर उन्होंने डेवढ़ीपरके पहरेदारसे किस प्रकारकी ढिठाई की; और किस प्रकार वे डेवढ़ीतक पहुँच गये, इत्यादि बातें पाठकोंको अवश्य स्मरण होंगी। वहां जाकर जब हमारे बाबाजीने उन सिपाहीरामको तरह तरहकी मज़ेदार बातें सुनाईं; और उनके भविष्यके विषयमें बहुत ही सुन्दर आशाजनक बातें बतलाईं,

तब सिपाहीराम भी बड़े खुश होगये। उस खुशीमें वे इतने चूर हुए कि, उनके मालिकने सदैवके लिए उनको क्या ताक़ीद देरखी थी, सो भी बिसर गये; और उन्हीं मज़ेदार बातोंमें आकर वे हमारे बाबाजीको, 'नहीं नहीं' कहते हुए भी, एक बार डेवढ़ीतक तो लेगये। फिर क्या पूछते हो? बाबाजीकी अच्छी जम गई। उन्होंने पहलेपहल उस दरवानकी भावी उन्नतिके विषयमें नाना प्रकारके सुन्दर सुन्दर चित्र, जोकि सम्भव थे, खींचकर उसके सामने रखे; और इस प्रकार उसे ख़ूब ही चकाचौंधमें डाला। इसके बाद एक एक करके सभी लोग, बाबाजीके ज्योतिषज्ञानसे लाभ उठानेके लिए, अपना अपना हाथ आगे बढ़ाने लगे। बाबाजीने ज्यों ही देखा कि, अब तो हमारी अच्छी गद्दी जम गई, त्यों ही धीरे धीरे "यह महल किसका है? महलका मालिक कौन है?" इत्यादि बातें भी पूछनी प्रारम्भ कीं। डेवढ़ीके सब सिपाही लोग अपने अपने तौरपर सब बातें उनको बतलाने लगे। इतनेमें एकाएक भीतरसे एक अर्दलीने आकर द्वारपालसे कहा कि, "बाबाजीको ऊपर सरदारसाहबने बुलाया है।" यह सुनते ही—फिर क्या पूछना है—बाबाजीके आनन्दका पारावार हो न रहा! जितना कुछ इष्ट था, उससे भी अधिक प्राप्त होगया। अभी तो सिपाहियोंके मुँहसे सिर्फ वृत्तान्त ही मालूम होनेभरकी आशा थी; पर अब तो स्वयं उस महलके स्वामीसे ही मुलाक़ात करनेका मौक़ा मिल गया—फिर और अब क्या चाहिए? डेवढ़ी-

परके सिपाहियोंने भी समझा कि, यह तो बावाजीका निशाना अच्छा लगा; और वे सब, "बावाजी, आपने तो थोड़े ही समयमें अच्छी जमा ली। अब जाते समय तलाशी लिये बिना न जाने देंगे, याद रखिये!" कहकर उनकी दिल्लगी करने लगे। बावाजीने भी कहा कि, "अच्छी बात है, लेना, तलाशी भाई खूब! हम वैरागियोंके लिए तो एक कौड़ीकी भी आवश्यकता नहीं। यदि तुम्हारे मालिकसे कुछ मिलेगा, तो वह तुम्हींको दे-जायंगे। हम तो खानेके लिए मुट्ठीभर दानेके मालिक हैं!" यह कहकर मुख्य बाबाजीने अपने साथियोंसे तो वहीं बैठनेके लिए कहा; और आप स्वयं उस अर्दलीके साथ, जोकि उनको बुलाने आया था, महलके अन्दर चले गये। जिस बातके लिए वे चिन्तित होरहे थे कि, वह किस प्रकार सिद्ध होगी, सो इतनी जल्दी और अचानक, सिद्ध होगई—अब इससे अधिक और सौभाग्यकी बात क्या होसकती है? यह सोचकर बावाजी मन ही मन अत्यन्त आनन्दित होरहे थे; और ऐसा जान पड़ता था कि, इस बातपर जैसे उन्हें कुछ खेदसा होरहा हो कि, देखो, मन जितनी जल्दी उस युवा सरदारके पास जानेको कह रहा है, शरीर उतनी जल्दी नहीं जारहा है! जो हो, अन्तमें एक बार हमारे बाबाजी उस स्थानतक पहुँच ही गये, जहांकि वह युवा सरदार बैठा हुआ था। और उसको आशीर्वाद-वचन कहकर उन्होंने जिज्ञासा की कि, मुझ ग़रीबको सरकारने कैसे याद किया? परन्तु मराठा सरदार जहां बैठा था, वहां

कुछ अन्धेरासा था, इसलिए उसका चेहरा बाबाजीको भली-भांति दिखाई नहीं देता था। सरदारकी सूरत अच्छी तरह दिखाई देवे, इस हेतुसे बाबाजीने अपनी आंखोंको काफी तक़-लीफ़ दी; पर कोई लाभ न हुआ। बाबाजीका आशीर्वचन जब होगया, तब सरदारसाहबने अपने अर्दलीको, बिलकुल धीमी आवाज़से, बाहर चले जानेको कहा। और फिर धीरेसे ही बाबा-जीसे पूछा, "बाबाजी,आप कहांसे आये? आपके साथ और भी दो-तीन आदमी थे, वे कहांसे आये? और हमारे महलके आस-पास आज चार-पांच दिनसे आप लोग इतनी आतुरताके साथ, चक्कर क्यों लगा रहे हैं? मैं यह जानता हूं कि, आप जैसे दिखाई देरहे हैं, वैसे आप नहीं हैं, इसलिए समझ-बूझकर उत्तर दीजिये। आप इस बातको ख़यालमें भी मत लाइये कि, आप चाहे जो कह देवें; और मैं मान जाऊँ।"

अब हमारे बाबाजीकी वही हालत हुई कि, जैसे कोई पुष्प-वृष्टिकी आशा कर रहा हो; और उसपर अचानक वज्रपात होजावे! सरदारसाहबके उक्त प्रश्नोंका उद्देश्य क्या है, सो कुछ उनकी समझमें नहीं आया। इतना तो वे अवश्य समझ गये कि, इस युवा सरदारने हमारे वेशको पहचान लिया; परन्तु फिर उन्होंने सोचा कि, एकाएक इस बातको क़बूल कर लेना, कि जो कुछ इसने पहचाना है, वही सच है, मानो बिल-कुल पागलपन होगा। इसलिए तुरन्त ही उन्होंने इस प्रकार सरदारको उत्तर दिया, "महाराज, आपको कुछ भी शंका हुई

हो; पर हम लोग तो वैरागी हैं। हमारा न कोई देश है; और न गाँव—न कोई घर है, न द्वार। आज यहां, तो कल काशीमें; और परसों रामेश्वरमें! फिर भी आपको यह शंका हुई कि, हम लोग आपहीके महलके आस-पास क्यों घूम रहे हैं, इसका कारण मेरी समझमें नहीं आया। वास्तवमें हम जैसे दिखाई देते हैं, वैसे ही हैं। हमको तो अब यह आज्ञा हो कि, महाराजने हमें ऊपर क्यों बुलाया। बस, हम आज्ञा पाकर चले जायँगे। हमको क्या? चार मुट्ठी भिक्षा चाहिए—पेटभरके लिए मिल गया, दिन बिताया; और आगे बढ़े। यही हमारा धन्धा है। आपका महल ज़रा बड़ा दिखाई दिया, अतएव आपहीके यहां भिक्षाके लिए आगये। हां,महलकी शोभा देखते हुए ज़रा कुछ देर अधिक थम गये होंगे; पर इसके लिए आप इतने नाखुश न हों। जो कुछ इच्छा हो, भिक्षाका हुक्म होजाय; और हमको जानेकी आज्ञा मिले।"

बाबाजी जिस समय यह सब कह रहे थे, सरदारसाहब बीचमें एक अक्षर भी नहीं बोले। परन्तु उनका कथन समाप्त होते ही वे ज़रा ज़ोरसे हँसकर कहते हैं, "बाबाजी, आपने बात तो अच्छी बनाई; पर मैं पहले ही आपसे कह चुका हूं कि, आपकी ऐसी बातोंमें मैं नहीं आऊंगा। आप जैसे दिखाई देरहे हैं, वैसे अवश्य ही नहीं हैं। मैंने आपको पहचान लिया है, यही नहीं, बल्कि आपके साथ उस दिन एक दूसरे महाशय थे, उनको भी मैंने पहचाना था। इसलिए यदि आप चतुर हैं,

तो आप साफ़ साफ़ अपने इस प्रकार आनेका उद्देश्य बतला दीजिए। मुझसे कोई बात फूट जायगी, इसका भय भी मनमें न लाइये।" यह सुनते ही बाबाजी बड़े चकराये; और अब वे क्या उत्तर देवें, सो कुछ उनकी समझमें न आया। अचानक एक शंका उनके मनमें आई; और वह शंका उन्हें पहले भी एक बार हुई थी; और उस शंकाको दूर करनेके उद्देश्यसे ही वे इस महलकी ओर आये थे। परन्तु सब बातोंपर जब उन्होंने अच्छी तरह विचार किया, तब वह शंका उनके मनमें ठहर नहीं सकी। वह शंका यही थी कि, नानासाहबको इस मराठे सरदारने ही तो कहीं नहीं पकड़ मँगाया। यही शंका अब फिर एक बार उनके मनमें आई—केवल शंका ही नहीं आई; किन्तु अब उन्हें इस बातका कुछ कुछ विश्वास भी होने लगा। और उस दशामें फिर वे यह सोच सोचकर अपने मनमें कुछ भय भी खाने लगे कि, देखो, ऐसी दशामें इसके महलके अन्दर आकर हमने कुछ अच्छा नहीं किया। यह सरदार है कौन? और इसने हमको पहचान किस तरह लिया? और सचमुच इसने पहचाना, अथवा नहीं पहचाना? यह केवल हमारा भ्रम ही तो नहीं है? इत्यादि कोई भी बात ठीक ठीक उनकी समझमें नहीं आई। और अपने मनकी उस गड़बड़ावस्थामें ही वे उस सरदारसे बोले, "सरदारसाहब, हमारे विषयमें आपके मनमें यह शंका आई अवश्य, परन्तु क्या आपने इसी शंकाके वश होकर हमारे उस साथीको कहीं कुछ

कर तो नहीं डाला? इसी शंकाके वश आपने कहीं उसको क़ैद तो नहीं कर रखा? और यदि क़ैद ही कर रखा हो, तो कहीं उसके प्राणोंको तो हानि नहीं हुई? सच कहता हूं, आपका और हम लोगोंका कोई भी सम्बन्ध नहीं है। हम लोग यों ही अपने चार दिनके लिए बीजापुर आये थे। आपको यदि व्यर्थहीमें कोई शंका आई हो, तो आप उसे दूर कर दें; और हमारे साथीको हमारे साथ करें। हम आज ही अपनी कमली लपेटकर यहांसे चले जायेंगे।"

बाबाजीने अपनी उपर्युक्त बातें बिलकुल हृदयसे कही थीं, अतएव सरदारसाहबके मनपर भी उनका प्रभाव पड़ा; और यहांतक कि, उस समय उनकी चेष्टा एक विचित्र ही प्रकारकी होगई। उनको मानो अपना भान ही न रहा; और पहले वे कुछ थोड़ेसे झुके हुए थे; परन्तु अब बिलकुल सीधेसे बैठकर अत्यन्त उतावलीके साथ कहते हैं, "क्या? क्या? आपके साथीको कोई पकड़ लेगया? और उसके प्राण भी लेलिये?"

• ये प्रश्न इतने स्वाभाविक रूपसे किये गये कि, बाबाजीके मनमें अब कोई शंका नहीं रही। अभीतक उनका यह ख़याल था कि, शायद इसी सरदारने हमारे साथीको पकड़वाकर कहीं उसकी प्राण-हानि की हो; पर अब यह ख़याल उनके मनसे बिलकुल ही निकल गया। उन्होंने सोचा कि, इस विषयमें कमसे कम इस सरदारको तो कुछ भी ज्ञान नहीं है; क्योंकि

इसे यदि इस विषयमें कुछ भी मालूम होता, तो इतने स्वाभा-
विक रूपसे यह उपर्युक्त प्रश्न कैसे करता ? बाबाजीके मनमें
जिस समय ये विचार आरहे थे, उस समय यदि उस युवा सर-
दारकी सूरतकी ओर कोई देखता, तो उसे स्पष्ट ही मालूम
होजाता कि, उसके मनमें भी कोई न कोई अत्यन्त क्षोभ उत्पन्न
करनेवाले विचार आरहे हैं। बाबाजी भी सूरत पहचाननेमें
कुछ कम चतुर नहीं थे; किस समय किसकी चेष्टापर कौनसे
मनोविकार, किस किस प्रकार, अपना प्रभाव डाल रहे हैं, सो
वे तुरन्त ताड़ जाते थे; पर सरदारसाहबकी चेष्टापर उस
समय काफी प्रकाश ही नहीं पड़ रहा था। उनका चेहरा
उस समय यदि पूरा पूरा उजेलेमें होता, तो हमारे, बाबाजी
तुरन्त ही ताड़ जाते कि, जिस प्रकार उनके मनमें उस समय
कोई न कोई विलक्षण विचार आरहे थे, उसी प्रकार सरदार-
साहबके मनमें भी आरहे थे। अस्तु; सरदारसाहबने बाबाजीसे
उपर्युक्त प्रश्न किये; परन्तु बाबाजीकी ओरसे जब उन
प्रश्नोंका शीघ्रतापूर्वक कोई उत्तर न मिला, तब फिर वे एकदम
कहते हैं, "बाबाजी, क्या कहा आपने ? आपका एक साथी
एकाएक कहीं ग़ायब होगया ? कौन ? वही साथी जो पहले
दिन हमारे महलके सामने आकर हमारी ओर एकटक देख रहा
था ? कौन ? वही ? वह कब चला गया ? कहां चला गया ?
आप बतलाते क्यों नहीं ?"

अभीतक तो कुछ नहीं; पर अब अचानक हमारे और हमारे

साथीके विषयमें सरदार साहबके मनमें इतनी चिन्ता क्यों उत्पन्न हुई? बाबाजी कुछ सोच नहीं सके। परन्तु, हां, इतना तो उन्हें स्पष्ट दिखाई दिया कि, सरदारसाहब अब इस विषयमें जाननेके लिए बहुत ही आतुर होरहे हैं; और शायद यह आतुरता हमारे लिए कुछ काम भी कर जाय—शायद नानासाहबके विषयमें इनके मनमें कुछ अच्छे भाव हों; और उनसे शायद हम अपने कार्यमें कुछ लाभ भी उठा सकें। इस-लिए—अपना गुप्त कार्य तो, जहांतक होसके, इनको मालूम नहीं होने दें; और ऊपर ऊपर, जो कुछ ये जानना चाहते हैं, सो बतलाकर इनके मनकी बात निकाल लें—बस, यही सोचकर बाबाजी सरदारसाहबसे एकदम कहते हैं, "सरदार साहब, क्या बतलावें—ऐसी कोई न कोई बात हुई है अवश्य। हम ग़रीब वैरागी भिक्षाके अर्थ इधर-उधर घूम रहे थे। देखा, कि शहर बहुत बड़ा है, चार दिन यहीं रह जाँय; पर इतनेमें न जाने, आपहीकी तरह हमारे वेशके विषयमें, किसीको शंका हुई, अथवा न जाने और कोई कारण हुआ—हमारे साथीको कोई न कोई धोखा देकर पकड़ अवश्य लेगया है, क्योंकि अपनी ओरसे वह हमें छोड़कर कहीं जा नहीं सकता था—न आजतक कभी गया; और न आगे ही उसके इस प्रकार जानेकी कोई सम्भावना स्वप्नमें भी होसकती है।"

सरदारसाहब यह सुनकर कुछ देरके लिए बिलकुल चुप होगये। इसके बाद बाबाजीसे उन्होंने फिर एकबार उस

साथीके विषयमें—कैसे चला गया, कब चला गया, इत्यादि प्रश्न किये। पर जब उन्हें यह मालूम हुआ कि, आधीरातके क़रीब वह गया—इसके सिवाय स्वयं बाबाजीको ही इस विषयमें और कुछ नहीं ज्ञात है—तब उन्होंने एक लम्बीसी सांस छोड़कर बाबाजीसे इतना ही कहा कि, अब आप आज जाइये, दूसरे दिन फिर आइयेगा। बाबाजी वहांसे उठकर चले आये।

दूसरे दिन बाबाजी फिर गये। तीसरे दिन भी गये। पर सरदारसाहबसे भेंट नहीं हुई। और न शहरमें ही नानासाहबके विषयमें उनको कुछ पता चला। हां, उस दिन रातके समय नानासाहबकी चिट्ठी अवश्य उनके पास आपहुँची।

सैंतालीसवां परिच्छेद

तानाजीके मनकी दशा।

जिस महलके अन्दर नानासाहबको उन दुष्टोंने क़ैद करके डाल रखा था, उसी महलके अन्दरसे, आधीरातके लगभग, एक मनुष्य इधर-उधर, अपने आसपास, देखता हुआ बाहर निकला। चार क़दम आगे चलता, फिर पीछे मुड़कर देखता, और यह शंका होनेपर कि, उसके पीछे कोई आता तो नहीं है, फिर जहांका तहां ठहर जाता। अपने महलसे चलकर बहुत दूरतक उस मनुष्यकी यही हालत रही। इसके बाद फिर हज़ारों

मोड़ और गली-कूचे लांघकर—क्योंकि ऐसा जान पड़ता था कि, सीधे रास्तेसे जानेका उसे साहस ही न होता था—शहरकी सीमा पार की; और क्षणभर इधर-उधर देखकर अबकी बार उसने जो सपाटा भरा, सो एकदम उस हवेलीके पास ही आ-पहुँचा कि, जहां ये हमारे वैरागी लोग उतरे हुए थे। हवेलीके अन्दरसे कोई आहट उस समय उसको नहीं मिली। इसलिए क्षणभरके लिए उसे यह भी शंका हुई कि, न जाने यह मकान वही है, कि जिसे उन्होंने बतलाया था, अथवा यह कोई दूसरा ही मकान है; ख़ैर, उसने उक्त बातका निश्चय करनेके लिए दो-चार बार उस मकानके चारों ओर चक्कर लगाकर कुछ आहट ली; पर कोई भी आहट उसके कानोंमें नहीं आई। अन्तमें कुछ सोच-समझकर उसने उस मकानका दरवाजा ज़रा ज़ोरसे खटखटाया, जिसे सुनकर एक बाबाजी बाहर निकले। कौन है? क्या बात है? क्यों आये हो? इत्यादि बातें पूछी गईं। उत्तर मिला कि, हमको जो बातें बतलानी हैं, वे यहां बाहरसे नहीं बतलाई जासकतीं। आप मुझे भीतर आने दें। कुछ बहुत महत्वकी बातें आपको बतलानी हैं। आपमेंसे कोई एक व्यक्ति यहांसे ग़ायब होगया है, उसीका अस्तित्व बतलानेके लिए मेरा यहां आना हुआ है, सो सुन लीजिए; और उसने आपके लिए एक पत्र भी दिया है, उसे ले लीजिए।

बोलनेवालेकी आवाज़ किसी पुरुषकीसी नहीं जान पड़ती थी। इसके सिवाय उसकी सूरत इत्यादि भी बिलकुल स्त्रीकी-

सी थी। उसे देखते ही बाबाजी मन ही मन बड़े चकराये। यह और कौनसी बला आगई? आधीरातके समय, यह स्त्री हमारे लिए, यहां क्यों आई? नानासाहबका इसको क्या पता? आधीरातके समयमें ही उनको भी कोई धोखा देकर लेगया था, उसी प्रकार हमारी भी गठरी-मुठरी बनाकर लेजानेका तो किसीने विचार नहीं किया? क्या ताज्जुब है कि, नानासाहब-की ही भांति हमारी भी दशा करनेके लिए किसीने इस स्त्रीको भेजा हो?

ऐसे विचार उनके मनमें आये; और वे एकदम उस स्त्रीसे बोले, "देवी, तुझको जो कुछ कहना हो, सो यहीं कह दे। हम-लोग एक बार अच्छी तरह फल पाचुके हैं। तू कहती है कि, चिट्ठी लाई हूं, सो कहां है? ला, यहीं देदे। मैं भीतर लेजाकर अपने साथियोंको दिखलाये आता हूं; लेकिन तू घरके अन्दर क़दम मत रख।" यह सुनकर बेचारी स्त्री बहुत ही अचम्भित हुई। उसे स्वप्नमें भी यह ख़याल न था कि, हम जिस कामके लिए आई हैं, उसके लिए हमसे कोई ऐसा बर्ताव करेगा। परन्तु वही बर्ताव उसके आगे आया, अतएव उसे बड़ा खेद हुआ। तथापि उसने उस खेदको शब्दोंद्वारा प्रकट नहीं किया। हां, उसने वह चिट्ठी, जो अपने पास छिपाकर रखी थी, निकाली; और उस वैरागीके हाथमें देदी; और आप वहीं खड़ी रही। हां, ज़बानी उसने इतना कहा कि, जिस महलमें उनको क़ैद कर रखा गया है, उस महलका पता इत्यादि

यदि आपको जानना है, तो वह यहां बाहर बतलाया नहीं जा-सकता। आप मेरा विश्वास नहीं करते, यह भी एक बड़े आश्चर्यकी बात है। इस आधीरातके समयमें, कितने ही ख़तरों-का विचार न करते हुए, मैं यहां आई हूं। इसके सिवाय, मैं एक स्त्री हूं, फिर भी मुझे भीतर आने देनेका आपको साहस नहीं होता; इससे अधिक और आश्चर्यकी बात क्या होसकती है! उसने सब कुछ कहा, पर बाबाजी उसकी बात सुननेको वहां खड़े ही नहीं हुए। चिट्ठी हाथमें आते ही एकदम वे भीतर चले गये; और जाकर अपने साथियोंको सब हाल बतलाया, तथा चिट्ठी उनके हाथमें देदी। चिट्ठीको लेकर उन्होंने पढ़ा; और बहुत जल्द उस स्त्रीको भीतर बुला लानेके लिए कहा। यह स्त्री कौन थी? पाठकोंने अवश्य ही अनुमान कर लिया होगा। फ़तिमाने नानासाहबसे प्रतिज्ञा की थी कि, वह उनकी चिट्ठी, जहां वे बतलावेंगे, पहुँचा देगी; और तदनुसार वह इस समय उनकी चिट्ठी लेकर उन वैरागियोंकी मठीमें आई थी। अस्तु। फ़तिमा भीतर पहुँची; और उन लोगोंने नानासाहबके विषयमें उससे प्रश्न करने शुरू किये। फ़तिमाको इस विषयमें जितना कुछ मालूम था, सब उसने उन्हें बतलाया। परन्तु बहुतसी बातें स्वयं उसको ही नहीं मालूम थीं; और कुछ ऐसी भी थीं, कि जो उसे मालूम थीं, पर उस समय वह उन्हें इतनी शीघ्रता-पूर्वक बतला नहीं सकती थी। अस्तु। नानासाहबको वहांसे छुड़ानेकी क्या युक्ति की जावे, इस विषयमें भी बहुत कुछ बात-

चीत हुई; परन्तु फ़तिमाने उनको यह आश्वासन दिया कि, इसका सारा भार मैं अपने ऊपर लेती हूं; और नानासाहबको बड़ी युक्तिसे छुड़ाकर मैं आपके सिपुर्द करूंगी। इसके सिवाय नानासाहबकी मित्रमंडलीको उस समय और कर्त्तव्य ही क्या था? अतएव वे सब चुप होरहे। फ़तिमाने फिर उनको यह भी विश्वास दिलाया कि, "मैं बार बार आकर आप लोगोंको उनका समाचार देती रहूंगी। आप अब उनके विषयमें कोई चिन्ता न करें।" इसके बाद उसके जानेका समय होगया; और वह वहांसे चल दी। मठीसे बाहर अभी वह कुछ ही क़दम गई होगी कि, उसे ऐसा जान पड़ा, जैसे कोई उसके पीछे पीछे आता हो। जब यह ठिठक जाती, तब वह भी ठिठक जाता; और जब यह चलने लगती, तब वह भी चलने लगता। बस, ऐसा ही क्रम चल रहा था। इसी प्रकार अन्ततक उस मनुष्यने फ़तिमाका पीछा नहीं छोड़ा। जब वह उस महलके पीछेकी खिड़कीसे भीतर चली गई, तब वह मनुष्य भी वहींसे ग़ायब होगया।

इधर बाबाजी बेचारे बैठे हुए उन सारी बातोंपर विचार कर रहे थे। जिस सरदारके महलमें, तहख़ानेमें, लेजाकर नानासाहबको दुष्टोंने क़ैद कर रखा था, उस सरदारके साथ नानासाहबके पिताकी बड़ी मित्रता थी। यही नहीं, बल्कि बादशाहके नीच मंत्रियोंने जब नानासाहबके पिताका घोर अपमान करनेकी सलाह दी, तब इसी सरदारकी सचाईके कारण बादशाहको

वैसा करनेका साहस नहीं हुआ; और अब उसी सरदारने नानासाहबको, इस प्रकार, अचानक धोखेसे क़ैद करवाकर कालकोठरीमें डाल दिया, इसमें उसका उद्देश्य क्या है ? उसने उनके पिताके साथ जो स्नेह दिखलाया, वह सब क्या बिलकुल बनावटी ही था ? हो सकता है; क्योंकि मुसलमान लोग—अपने बापके भी नहीं होते—बापसे भी मीठी मीठी बातें करके उसका भी ग़ला काटनेमें आगा-पीछा नहीं सोचेंगे। लोगोंसे मीठी मीठी बातें करके उन्हींके द्वारा उनके बापका भी गला कटवा लेंगे। इनसे मैत्री करे, तो हृदयसे कभी न करे। इनकी मीठी मीठी बातोंपर विश्वास रखे, सो बिलकुल मूर्ख ! इस प्रकारके विविध विचार बाबाजीके मनमें आये; और उनका चित्त बहुत ही अशान्त होगया। हम इस शहरमें क्यों आये; और यह कहांकी आफ़त आगई ! अबतक तो हमको यहांका सारा काम ख़तम करके चल देना चाहिए था, पर सो-तो कुछ हुआ नहीं; और उलटे हमारा ही एक आदमी, कि जिसको दरबारका भी विशेष ज्ञान था, इनके चंगुलमें फँसकर क़ैदमें जापड़ा !

बस, इसी प्रकारके विचार करते करते बाबाजीको जब सुबह होगया, तब, अब उनके मनमें स्वाभाविक ही ये विचार आने लगे कि, देखें, आज हमको जो यह नवीन जानकारी प्राप्त हुई है, उससे भी कुछ लाभ उठा सकते हैं, अथवा यों ही हाथ बांधे बैठा रहना पड़ेगा। और अन्तको हाथ बांधे ही बैठा

रहना पड़ेगा, ऐसा ही उनको जान भी पड़ा। अस्तु।
प्रति दिनके अनुसार प्रातःकालकी क्रियाओंसे निपटकर, कंठी-
माला और तिलक धारण करके, वे लोग बाहर निकले।
आज स्वाभाविक वे उसी ओर चले कि, जहांपर नानासाहबको
उस महलके तहख़ानेमें क़ैद कर रखा गया था। वास्तवमें इस
प्रकार उस ओर उनका जाना एक प्रकारसे ख़तरेकी ही
बात थी। परन्तु एक बार उस महलको चारों ओरसे
देख लेना उनको बहुत ही आवश्यक जान पड़ा। इसमें उनका
मुख्य उद्देश्य यही था कि, रातको जो स्त्री नानासाहबका पत्र
लेकर उनके पास आई थी, वह स्त्री शायद वहां फिर उनको
कहीं दिखाई देजाय; और वह यदि वहां कहीं मिल जाय, तो
उससे फिर अपने पास आनेको कहकर और भी कुछ जानकारी,
जो उससे प्राप्त होसके, प्राप्त कर लीजाय। यही इच्छा
करके वे उस महलकी ओर गये। उस महलका निरीक्षण
करनेके बाद फिर वे उस मराठे सरदारके महलकी ओर चल
दिये, जोकि वहांसे बिलकुल पास ही था। क्योंकि आज दो-
तीन दिनसे उस सरदारसे भी उनकी भेंट नहीं हुई थी।
उसके महलकी ओर जाते समय तानाजीके मनमें फिर
एक बहुत ही विचित्र विचार आया। उन्होंने सोचा कि,
नानासाहबको ऐसी दशामें डालनेमें, शायद प्रत्यक्ष अथवा
अप्रत्यक्ष रीतिसे इस सरदारका भी कुछ हाथ अवश्य ही है।
क्योंकि रणदुल्लाख़ाका इस सरदारपर बहुत प्रेम है; और

इसकी उन्नति वह सब प्रकारसे चाहता है। यह बात अबतक कई बार हमारे कानोंमें आचुकी है। और यह बात यदि वास्तवमें सत्य है, तो रणदुल्लाख़ांका यह भी उद्देश्य होसकता है कि, नानासाहब, जिनकोकि वह इस सरदारकी उन्नतिमें बाधक समझा होगा, इसके मार्गसे कांटेकी तरह अलगकर दिये जायँ; और उनके पिताको इसी प्रकार दुविधामें रखकर सुलतानगढ़का क़िला इसी सरदारके हवाले कर दिया जाय। रणदुल्लाख़ांका ऐसा उद्देश्य जब तानाजीके ध्यानमें आया, तब उनको बहुत ही क्रोध आया; और उनके शरीरमें एक प्रकारका जोशसा आने लगा। ज्यों ज्यों उन्होंने इस बातपर विचार किया, त्यों त्यों उनको अपनी वह शंका और भी सम्भवनीय जान पड़ी, उनको उसपर एक प्रकारका विश्वासहीसा होने लगा। तीन दिन पहले जब वे उक्त सरदारके पास गये थे, तब उसने नानासाहबके विषयमें बड़ी सहानुभूति दिखलाई थी। वह सहानुभूति अब तानाजीको बिलकुल बनावटी जान पड़ने लगी। उन्होंने सोचा कि, उसके बाद फिर उक्तसरदारने दूसरे दिन हमको बुलाया भी था; पर जब हम गये, तब वह हमसे मिला नहीं। फिर उसके बाद भी लगातार हम दो बार गये, परन्तु वह नहीं मिला। अवश्य ही इसमें कोई गुप्त भेद है। इस बातको जहांतक उन्होंने सोचा, उनको यही विश्वास होता गया कि, हमारी उपर्युक्त शंका बिलकुल सच है; और रणदुल्लाख़ां नानासाहबके पिताको यों ही फुसलाता रहेगा, तथा सुलतानगढ़की

क़िलेदारी अवश्य ही इस युवा मराठे सरदारको देगा। उन्होंने सोचा कि, जिस दिन नानासाहब उस सरदारके महलके सामने खड़े होकर उसकी ओर बहुत देरतक बराबर देखते रहे थे, उसी दिन उसने उनको पूरा पूरा पहचान लिया होगा; और फिर उसी दिन रणदुल्लाख़ांको इसकी ख़बर देकर उसके द्वारा, अथवा, किसीसे भी कुछ न बतलाते हुए, स्वयं ही धोखेसे नानासाहबको क़ैद करवाकर उस कालकोठरीमें बन्द करवा दिया होगा। इसमें अवश्य ही इस सरदारका यह उद्देश्य होना चाहिए कि, जिससे नानासाहब किसी प्रकार भी उसकी उन्नतिके बाधक न हों। इतना विचार करनेके बाद तानाजी कुछ थम गये; और फिर कुछ देर बाद स्वयं ही एकदम कहते हैं, "कोई परवा नहीं। बच्चाजी, सुलतानगढ़पर तुम एक बार जाओ तो सही; और वहां अपना अधिकार चलाओ; फिर देखो, तुम्हारी कैसी कचाई निकालते हैं! जिस दग़ाबाज़ीसे नानासाहबको क़ैद करके तुमने कालकोठरीमें डलवाया है, वैसी दग़ाबाज़ी करनेकी हमको कोई आवश्यकता ही नहीं। हम तो तुमको, दिनदहाड़े धावा करके, सेनाके देखते देखते, क़ैद कर लेंगे; और फिर नानासाहबके इस प्रकार क़ैद करनेका मज़ा चखावेंगे!" इस प्रकार तानाजी अपने मनोराज्यके आवेशमें जल्दी जल्दी क़दम उठाते हुए चले जारहे थे। बीजापुरके राजनैतिक हालचाल और वहांकी राजनैतिक कार्यवाहियोंका अब उन्हें बहुत कुछ ज्ञान होचुका था। साथ ही उनको यह भी मालूम

होचुका था कि, कहांपर किसका कितना प्रभाव है। अतएव अब उन्होंने सोचा कि, इस विषयमें अब अधिक और कुछ करनेकी आवश्यकता ही नहीं है—अब तो नानासाहबको ही, जिस प्रकारसे बन सके, मुक्त करके अपनी अगली कार्यवाहीमें लगना चाहिए। नानासाहबको इस प्रकार अमुक व्यक्तिने अमुक जगह बन्द कर रखा है, यह बात यहां किसीसे प्रगट करनेकी भी आवश्यकता नहीं है; क्योंकि यहां अन्धेरनगरीमें कौन किसकी सुनता है! इसके सिवाय नानासाहबपर स्वयं बादशाह और उनके दुष्ट मन्त्रियोंका कोप भी बहुत है। ऐसी दशामें यदि यह बात किसीको मालूम होजायगी कि, इस इस प्रकार नानासाहब हमारे हाथमें आगये हैं; और अमुक जगह उनको क़ैद कर रखा गया है, तो बहुत भारी अनर्थ होजानेकी सम्भावना है। इसलिए तानाजीने सोचा कि, जिस स्त्रीने सहायता करके उनको छुड़ानेका वचन दिया है, उसीपर अब विश्वास रखना चाहिए; और इसके सिवाय और हम कुछ नहीं कर सकते; और न करना इष्ट ही है। यदि कुछ करेंगे भी तो हमारी सारी कारस्तानी ही प्रकट होजायगी; और फिर सारा व्यूह मिट्टीमें मिल जायगा। तानाजीको सबसे बुरी यही बात लग रही थी कि, उनके आगे कोई काम नहीं था; और इस समय चुप बैठनेके अतिरिक्त उनके लिए और कोई चारा ही नहीं था। कोई न कोई प्रयत्न उनको चाहिए था, फिर उसमें सफलता हो, चाहे निष्फलता। इसकी उन्हें परवाह नहीं थी।

परन्तु अब तो सिवाय मक्खियां मारते हुए बैठनेके उन्हें और कोई उद्योग ही नहीं रहा। तानाजी एक बहुत ही पुरुषार्थी और कट्टर दीर्घ-उद्योगी पुरुष थे। अतएव, अब उनको यह बात बहुत ही लज्जाजनक मालूम हुई कि, उनको चुप बैठनेके अतिरिक्त और कोई काम नहीं; और सो भी उस दशामें, जबकि उनका एक प्रतिष्ठित मित्र इस प्रकार धोखेमें पड़कर दुष्ट लोगोंके पंजेमें फँस गया! पर बेचारे करते क्या? अतएव अब वे इस बातकी प्रतीक्षा करने लगे कि, कब एक बार फिर फ़तिमासे भेंट हो; और कब उससे हमें और कुछ वृत्तान्त मालूम हो। इधर नानासाहबसे जो व्यक्ति पहले दिन एकान्तमें मिला था; और वह भूतोंकी हवेली उनके सिपुर्द कर गया था, उसका फिर नामतक भी सुनाई नहीं दिया। आशा थी कि, आज नहीं, तो कल वह मिलेगा ही; और फिर उससे यह भी मालूम कर लेंगे कि, इस सम्पूर्ण कारस्तानीमें उसका कहांतक भाग है; परन्तु जब इतने दिनतक उसके कहीं दर्शन ही न हुए; तब तानाजी उसकी ओरसे भी बिलकुल निराश होगये। बस, इसी प्रकारकी डांवाडोल हालतमें जबकि हमारे बाबाजी पड़े हुए थे, तब एक दिन रातके समय किसीने आकर उनकी उस मठीके दरवाज़ेको ज़ोर ज़ोरसे खटखटाना शुरू किया। उस समय उस मठीके अन्दर तानाजीकी ही जागनेकी बारी थी। दरवाजेका खटखटाना सुनकर तुरन्त ही वे बाहर आये; और देखते क्या हैं कि, एक कालाकलूटा आदमी उनके सामने

खड़ा है। उसे देखते ही अचानक उनके मनमें आया कि, हो न हो, यह वही आदमी है, जोकि पहले दिन नानासाहबसे इसी मकानमें मिला था। तानाजीको देखते ही उस कालेकलूटे आदमीने तुरन्त ही उनसे कहा, "आपके वे दूसरे साथी कहां हैं ?" यह प्रश्न उसने इतनी आतुरताके साथ और स्वाभाविक-रूपसे किया कि, तानाजीके सारे संशय, जो उस समयतक उनके मनमें थे, बिलकुल डिग गये। अभीतक उनका ऐसा ख़याल था कि, नानासाहबको पकड़ लेजानेमें इस मनुष्यका भी पूरा पूरा भाग होगा; पर अब उनका यह ख़याल कुछ डांवा-डोल होगया। परन्तु फिर भी उन्होंने उसके उपर्युक्त प्रश्नपर तुरन्त ही कहा, "वाह! दग़ाबाज़ी करके हमारे साथीको तुम पांच-सात आदमियोंने मिलकर कहीं छिपा रखा है, उसको नाना प्रकारका कष्ट देरहे हो; और आज यहां आकर इस प्रकार सभ्यतापूर्वक प्रश्न करते हो? ग़म खाओ, तुम्हारा ही रास्ता देख रहे थे। बतलाओ, बतलाओ, हमारे साथीको कहां लेजाकर तुमने डाल दिया है? पहले दिन उससे पहचान निकालकर बड़ी बड़ी विश्वासकी बातें कीं; फिर हमको यह हवेली देनेका बहाना करके यहांसे चले गये; और कह गये थे कि, समय समयपर तुमसे मिलते रहेंगे; और आज फिर ये बातें पूछने आये हो? तुमको शरम नहीं मालूम होती? बत-लाओ, बतलाओ, कहां लेजाकर उसे रखा है? नहीं तो तुमको अभी मैं ख़तम किये देता हूं।"

उपर्युक्त बातें सुनकर वह आदमी बिलकुल चकितसा हो-गया। बहुत देरतक तो वह एक अक्षर भी नहीं बोला। इसके बाद फिर एक बार दरवाजेके सामने चक्कर लगाकर वह ताना-जीके सामने आकर खड़ा हुआ; और उनके कंधेपर अपना दाहिना हाथ रखकर उनकी आंखोंके सामने एकटक देखते हुए उनसे कहता है, "आपकी इस धमकीकी मैं कुछ भी परवाह नहीं करता; परन्तु हां, आपने अपने साथीके विषयमें जो समाचार बतलाया, उसे सुनकर मुझे अवश्य ही खेद हुआ है। आप कहते क्या हैं? क्या कोई दग़ाबाज़ी करके उसको पकड़ लेगया? कहां पकड़ लेगया? कब पकड़ लेगया? कैसे आपको मालूम हुआ? मैं तो पहले ही जानता था कि, ऐसा कुछ न कुछ होगा; और इसीकारण उससे मिलकर पहलेपहल मैंने उसको होशियार भी कर दिया था। हां, इस बीचमें मैं आ नहीं सका। मैं तुरन्त ही आकर उससे मिल नहीं सका, इसीका यह फल है। बतलाइये, उसको कब और कौन पकड़ लेगया? इसका सारा वृत्तान्त यदि आपको मालूम हो, तो मुझे बतलावें। मालूम होनेपर भी यदि आप न बतलाना चाहें, तो भी कोई परवाह नहीं। बीजापुरमें अब यह बात मुझसे छिपी नहीं रह सकती। आपको यदि मालूम हो; और आप मुझे बतला देवें, तो मेरा समय, और परिश्रम भी, बच जायगा। आप मुझपर अविश्वास न करें। आपकी इस दशामें, इस बीजापुरके शहरमें, यदि कोई पक्का पक्का आपके विश्वासका

पात्र है; और जिसपर कि आप सर्वथा विश्वास कर सकते हैं, तो ऐसा एक मैं ही हूं—इस बातका आप विश्वास रखें। आपका साथी यदि सचमुच ही कालके पंजेमें न फँस गया होगा, अभीतक यदि वह किसी मनुष्यके ही पंजेमें होगा, तो दो अथवा तीन दिनके अन्दर मैं उसको लाकर आपके सामने खड़ा करूंगा। मेरा समय और श्रम यदि आप बचाना चाहते हों, तो उसके पकड़े जानेका पूरा पूरा वृत्तान्त आप मुझे बतला दें, कुछ भी छिपा न रखें। इस समय यदि आपने कुछ भी छिपा रखा, तो सम्भव है कि, आप सबको इसके लिए पीछेसे पछताना भी पड़े!"

उपर्युक्त सम्पूर्ण शब्द उस मनुष्यने इतनी सहानुभूतिके साथ उच्चारण किये कि, तानाजीको वे मिथ्या तो नहीं जान पड़े; परन्तु फिर भी उन्होंने सोचा कि, न जाने कौन किस दाँव-पेंचमें रहता है, सम्भव है कि, इस मनुष्यकी यह सारी सहानुभूति बनावटी ही हो, इसलिए सावधान रहना सदैव अच्छा है। यह सोचकर तानाजीने कुछ भी अपने हृदयका पता उसे नहीं चलने दिया। वह भी, यह कहकर कि, कोई हानि नहीं, वहांसे तुरन्त चल दिया। हां, चलते समय इतना उसने तानाजीको सचेत अवश्य कर दिया कि, तीन दिन अब आप यहांसे कहीं न जावें।

अड़तालीसवां परिच्छेद ।

काला मनुष्य ।

वह मनुष्य जब चला गया, तब तानाजीके मनमें यह विचार आया कि, हमने कहीं अपने सच्चे हितैषीके चित्तको तो नहीं दुखाया। यह विचार उनके मनमें आया; और बस, इसी-पर वे फिर विचार करने लगे। उसने हमसे कहा है कि, तीन दिनतक आप यहांसे कहीं न जावें—इसका क्या अर्थ है? क्या तीन दिनके अन्दर वह नानासाहबको छुड़ा लावेगा? अथवा इस बीचमें वह यह समाचार लाकर हमको बतलावेगा कि, उनको कहांपर और किसने पकड़ रखा है? कुछ समझमें नहीं आता! हां, उसने हमसे यह भी कहा कि, "आपको यदि नानासाहबके सम्बन्धमें कुछ ज्ञात हो, तो बतलाइये; और आप यदि यह बतला देंगे, तो हमारा काम सरल होजायगा।" पर उसने यह क्यों पूछा? इससे उसका क्या तात्पर्य है? ताना-जीकी कुछ समझमें न आया। और वे इसी उधेड़बुनमें पड़े रहे। इधर वह काला-कलूटा आदमी उस भूतोंकी हवेलीसे निकलकर फिर अपने घरमें आया; और कुछ देरतक बैठा हुआ विचार करता रहा। इसके बाद उसने अपने एक विश्वासपात्र नौकरको बुलाकर धीरेसे उसके कानमें कुछ कहा। उस नौकरने भी अपने मालिककी बात सुनकर उसपर थोड़ी

देर विचार किया; और फिर उससे बोला, "सैयदुल्लाख़ांका यह कार्य नहीं है। इससे तो..." आगे उसके मालिकने उसे बोलने नहीं दिया; और डपटकर कहा, "तू अभीका अभी यहांसे जा; और जो कुछ मैंने बतलाया, उसका पता लगा आ। इस विषयमें मुझसे बहस करनेकी ज़रूरत नहीं।" बेचारा गुनगुनाता हुआ वहांसे चल दिया। नौकर जब वहांसे चला गया, तब वह कालाकलूटा आदमी बहुत देरतक मन ही मन कुछ विचार करता रहा। बादको फिर वह अपनी जगहसे उठा; और उसी मकानमें इधरसे उधर चक्कर लगाने लगा। चक्कर लगाते समय भी उसका एक मिनट भी विचारोंसे खाली नहीं था। उस समय बहुत ही शीघ्रतापूर्वक उसके मनमें विचार आरहे थे; और उन विचारोंके साथ ही साथ, क्षणक्षणपर, उसकी चेष्टामें भी भिन्न भिन्न प्रकारके परिवर्तन दिखाई देरहे थे। बीच बीचमें उसके मुखसे कुछ न कुछ उद्गार भी निकलते जा-रहे थे। और वे उद्गार भी एक प्रकारसे विचित्र ही थे। उस अधमाधमका इस विषयमें कोई भी सम्बन्ध न होगा, यह बात बिलकुल ठीक है; क्योंकि यदि ऐसा होता, तो हमको कभीका मालूम होगया होता। आज बहुत दिनोंसे, रातदिन, हम उसकी प्रत्येक छोटीसे छोटी बातपर भी नज़र रख रहे हैं। बाहरकी तो बात ही क्या—स्वयं उसके घरमें, उसके अन्तःपुरमें, जबकि वह अपनी प्रेमपात्रियोंके सहवास-सुखमें निमग्न रहता है, उस समयमें भी, जो जो बातें हुआ करती हैं, सब हमें पूरी पूरी मालूम होती

रहती है। किस समय उसने दाहिनी ओरका हाथ बाईं ओर किया; और कितनी बार उसने दाहिनी ओरसे बाईं ओरको करवट ली। यहांतक बातें उसकी जब हमसे छिपी नहीं हैं, तब इतना बड़ा षड्यन्त्र, कि एक व्यक्तिको किसी एक जगहसे बिलकुल उठाकर, न जाने कहांका कहां लेजाकर डाल दिया जाय; और इसका हमको अणुमात्र भी पता न लगने दिया जाय, यह कभी सम्भव नहीं है। यह काम अवश्य ही उसकी ओरसे नहीं हुआ। तब फिर यह किसकी कारस्तानी है? नाना-साहबको इस प्रकार मार्गसे हटा देनेमें किसका क्या उद्देश्य सिद्ध होगा? बस, इतना विचार मन ही मन करनेके बाद वह फिर कुछ देरके लिए बिलकुल स्तब्ध होगया। सम्पूर्ण बीजापुरमें जितने बड़े बड़े राजनैतिक सरदार और अमीर-उमराव थे, सबकी सूरतें, और सबकी राजनैतिक कार्यवाहियां, एकके बाद एक, वह अपनी नज़रोंके सामनेसे गुज़ारने लगा। बादको फिर अन्तमें एकदम ताली बजाकर अपने ही आप कहता है, "हां, मैं भी क्या ही मूर्ख हूं! जो बात अबतक कभीकी मेरे ध्यानमें आजानी चाहिए थी, सो अभीतक ध्यानमें नहीं आई। यह बात तो शीशेमें देखनेकी तरह बिलकुल स्पष्ट ही दीख रही है। रणदुल्लाखांके अतिरिक्त यह काम और किसीका हो ही नहीं सकता। रणदुल्लाखांके लिए ऐसा करनेको उपयुक्त कारण मौजूद है। परन्तु वह कारण क्या सच होगा? आजतक जैसा-कि हम समझते थे, वैसा क्या वह नहीं है? शायद न हो।

पर ये यवन, बड़े बेईमान, अधमाधम हैं। इनका रत्तीभर भी, रत्तीभर क्या—बाल बराबर भी विश्वास करना मानो अपने ही हाथसे अपना गला काट लेना है। इनका विश्वास कभी किसीको न करना चाहिए। आज दो महीने होगये। वहांसे छूट जानेके लिए वह बेचारी क्या क्या प्रयत्न कर रही है, सो मैं प्रत्यक्ष देख ही रहा हूं। परन्तु यह अधमाधम किसी प्रकार भी अपनी नज़रोंके सामनेसे उस बेचारीको जाने नहीं देता। ठीक है, अपने मार्गकी यह बड़ी भारी अड़चन दूर करनेके लिए वह क्या नहीं करेगा? उस अड़चनको दूर करनेके लिए उसे मौक़ा भी आप ही आप मिल गया। जिस व्यक्तिको वह चाहता था, अनायास ही उसके पंजेमें आफँसा। ऐसी दशामें वह मौक़ा क्यों चूकेगा?—यह तो ठीक, पर उसको क़ैद करके इतने समयतक गुप्त क्यों रखे हुए है? बादशाहके सामने खड़ा करके अबतक उसका निपटारा ही क्यों न करा दिया?"

यह अन्तिम प्रश्न अभी उसके मनमें आया ही था कि, उसे यह उत्तर भी सूझ गया कि, "हां, ठीक है! उसके बापको उसने कितना भारी आधार दिखा रखा है? उसके मनमें अपना कितना विश्वास उत्पन्न कर रखा है? आज ही यदि वह नाना-साहबको बादशाहके सामने लेजाकर खड़ा कर दे; और उसे सज़ा दिलावे, तो आजतक उसने अप्पासाहबको जो विश्वास दिला रखा है, उसका क्या होगा? और इसके सिवाय दूसरा जो उसका कार्य होनेवाला है, सो भी शायद उस हालतमें

न होसके। बस, यही बात सच है। नानासाहबको अपने मार्गसे दूर करनेके लिए इसीने यह कोई न कोई षड्यन्त्र रचकर उसको क़ैद कर रखा है। इसमें कोई भी सन्देह नहीं। तो फिर अब यही कहना चाहिए कि, हमारे लिए नज़र रखने और लड़नेके लिए एक और दूसरा शत्रु तैयार होगया। अच्छा, कोई परवाह नहीं। मैं सबको समझ लूंगा। सिवाय इसके, अब मुझे इन लोगोंका ज्ञान भी इतना होगया है कि, चाहे ऐसे हज़ार शत्रु उत्पन्न होजायँ, मैं सबसे टक्कर लेनेको तैयार हूं। यही नहीं, बल्कि जिस जगह उसको क़ैद कर रखा है, उस जगह अबतक यदि वह जीवित है, तो मैं तीन दिनके अन्दर ही उसे छुड़ाकर उसके मित्रोंको सौंप दूंगा।"

इस प्रकार नाना भांतिके विचार, एकके बाद एक, उसके मनमें आरहे थे। और अन्तमें जो विचार उसके मनमें आये, वे मानो उसके मनमें बिलकुल घरसे कर गये। ये विचार अब पूरे किस प्रकार किये जाँय? नानासाहब कहां और किस अवस्थामें है, इसका पता लगानेके लिए क्या क्या किया जाय? इत्यादि बातें अब उसके मनमें आने लगीं। इतनेमें वह अपने उस विश्वासपात्र नौकरके वापस आनेकी प्रतीक्षा करने लगा। कुछ ही समय बाद उसका वह नौकर वापस आया; और उसने आकर उसके कानमें कुछ कहा, जिसे सुनकर वह भी तुरन्त ही उससे कहता है, "ठीक है, तूने पहले ही कहा था, सोई ठीक है। उस दुष्टका यद्यपि सम्पूर्ण दुष्ट-कार्योंमें हाथ है,

पर इसमें कोई हाथ नहीं है। जिसको हम बहुत बड़ा सभ्य और सदाचारी समझते थे, उसीका यह सारा काम है, इसमें सन्देह नहीं। कोई परवाह नहीं; तू और मैं, दोनों जबतक इस पृथ्वीपर जीवित हैं, तबतक ऐसे लोगोंके ऐसे नीच कृत्य हमारी नज़रोंसे दूर रहें, यह कदापि सम्भव नहीं। अच्छा, अब तू जा; और अपनी सदैवकी नीतिसे काम लेकर इस बातका पूरा पूरा भेद लेआ कि, रणदुल्लाख़ांने उसे कहां रखा है; और कैसे रखा है। मुझे यह बात अभी मालूम नहीं है कि, वह कहां है; और यह क्या बात है; पर मैंने प्रतिज्ञा कर ली है कि, तीन दिनके अन्दर उसे छुड़ा लूंगा। इसलिए अपनी प्रतिज्ञाके अनुकूल ही सब कार्य होना चाहिए। तू जा। यह तो बिलकुल निश्चय है कि, यह कार्य बिलकुल गुप्त रूपसे किया गया है। इसलिए दरवानों इत्यादिसे जाकर गपशप मारनेसे इसका पता नहीं चलेगा। रणदुल्लाख़ांका अत्यन्त विश्वासपात्र एक मनुष्य अहमद है। इस अहमदके समान नीच और अपने मालिककी चापलूसी करनेवाला अन्य और कोई दूसरा नौकर उसके पास नहीं है। पर अहमद काहेको किसीकी परवाह करता है; और काम तो यह उसीके हाथका जान पड़ता है, और किसीके हाथका यह काम है ही नहीं। जो हो, अहमदसे कोई समाचार मिलनेकी आशा नहीं। पर हां, कोई न कोई दूसरा मनुष्य भी उसमें शामिल अवश्य होना चाहिए; क्योंकि अकेले आदमीसे इतना बड़ा काम हो नहीं

रहती हैं। किस समय उसने दाहिनी ओरका हाथ बाईं ओर किया;और कितनी बार उसने दाहिनी ओरसे बाईं ओरको करवट ली। यहांतक बातें उसकी जब हमसे छिपी नहीं हैं, तब इतना बड़ा षड्यन्त्र, कि एक व्यक्तिको किसी एक जगहसे बिलकुल उठाकर, न जाने कहांका कहां लेजाकर डाल दिया जाय; और इसका हमको अणुमात्र भी पता न लगने दिया जाय, यह कभी सम्भव नहीं है। यह काम अवश्य ही उसकी ओरसे नहीं हुआ। तब फिर यह किसकी कारस्तानी है? नाना-साहबको इस प्रकार मार्गसे हटा देनेमें किसका क्या उद्देश्य सिद्ध होगा? बस, इतना विचार मन ही मन करनेके बाद वह फिर कुछ देरके लिए बिलकुल स्तब्ध होगया। सम्पूर्ण बीजापुरमें जितने बड़े बड़े राजनैतिक सरदार और अमीर-उमराव थे, सबकी सूरतें, और सबकी राजनैतिक कार्यवाहियां, एकके बाद एक, वह अपनी नज़रोंके सामनेसे गुज़ारने लगा। बादको फिर अन्तमें एकदम ताली बजाकर अपने ही आप कहता है, "हां, मैं भी क्या ही मूर्ख हूं! जो बात अबतक कभीकी मेरे ध्यानमें आजानी चाहिए थी, सो अभीतक ध्यानमें नहीं आई। यह बात तो शीशेमें देखनेकी तरह बिलकुल स्पष्ट ही दीख रही है। रणदुल्लाख़ांके अतिरिक्त यह काम और किसीका हो ही नहीं सकता। रणदुल्लाख़ांके लिए ऐसा करनेको उपयुक्त कारण मौजूद है। परन्तु वह कारण क्या सच होगा? आजतक जैसा-कि हम समझते थे, वैसा क्या वह नहीं है? शायद न हो।

पर ये यवन, बड़े बेईमान, अधमाधम हैं। इनका रत्तीभर भी, रत्तीभर क्या—बाल बराबर भी विश्वास करना मानो अपने ही हाथसे अपना गला काट लेना है। इनका विश्वास कभी किसीको न करना चाहिए। आज दो महीने होगये। वहांसे छूट जानेके लिए वह बेचारी क्या क्या प्रयत्न कर रही है, सो मैं प्रत्यक्ष देख ही रहा हूं। परन्तु यह अधमाधम किसी प्रकार भी अपनी नज़रोंके सामनेसे उस बेचारीको जाने नहीं देता। ठीक है, अपने मार्गकी यह बड़ी भारी अड़चन दूर करनेके लिए वह क्या नहीं करेगा? उस अड़चनको दूर करनेके लिए उसे मौक़ा भी आप ही आप मिल गया। जिस व्यक्तिको वह चाहता था, अनायास ही उसके पंजेमें आफँसा। ऐसी दशामें वह मौक़ा क्यों चूकेगा?—यह तो ठीक, पर उसको क़ैद करके इतने समयतक गुप्त क्यों रखे हुए है? बादशाहके सामने खड़ा करके अबतक उसका निपटारा ही क्यों न करा दिया?"

यह अन्तिम प्रश्न अभी उसके मनमें आया ही था कि, उसे यह उत्तर भी सूझ गया कि, "हां, ठीक है! उसके बापको उसने कितना भारी आधार दिखा रखा है? उसके मनमें अपना कितना विश्वास उत्पन्न कर रखा है? आज ही यदि वह नाना-साहबको बादशाहके सामने लेजाकर खड़ा कर दे; और उसे सज़ा दिलावे, तो आजतक उसने अप्पासाहबको जो विश्वास दिला रखा है, उसका क्या होगा? और इसके सिवाय दूसरा जो उसका कार्य होनेवाला है, सो भी शायद उस हालतमें

न होसके। बस, यही बात सच है। नानासाहबको अपने मार्गसे दूर करनेके लिए इसीने यह कोई न कोई षड्यन्त्र रचकर उसको क़ैद कर रखा है। इसमें कोई भी सन्देह नहीं। तो फिर अब यही कहना चाहिए कि, हमारे लिए नज़र रखने और लड़नेके लिए एक और दूसरा शत्रु तैयार होगया। अच्छा, कोई परवाह नहीं। मैं सबको समझ लूंगा। सिवाय इसके, अब मुझे इन लोगोंका ज्ञान भी इतना होगया है कि, चाहे ऐसे हज़ार शत्रु उत्पन्न होजायँ, मैं सबसे टक्कर लेनेको तैयार हूं। यही नहीं, बल्कि जिस जगह उसको क़ैद कर रखा है, उस जगह अबतक यदि वह जीवित है, तो मैं तीन दिनके अन्दर ही उसे छुड़ाकर उसके मित्रोंको सौंप दूंगा।"

इस प्रकार नाना भांतिके विचार, एकके बाद एक, उसके मनमें आरहे थे। और अन्तमें जो विचार उसके मनमें आये, वे मानो उसके मनमें बिलकुल घरसे कर गये। ये विचार अब पूरे किस प्रकार किये जाँय? नानासाहब कहां और किस अवस्थामें है, इसका पता लगानेके लिए क्या क्या किया जाय? इत्यादि बातें अब उसके मनमें आने लगीं। इतनेमें वह अपने उस विश्वासपात्र नौकरके वापस आनेकी प्रतीक्षा करने लगी। कुछ ही समय बाद उसका वह नौकर वापस आया; और उसने आकर उसके कानमें कुछ कहा, जिसे सुनकर वह भी तुरन्त ही उससे कहता है, "ठीक है, तूने पहले ही कहा था, सोई ठीक है। उस दुष्टका यद्यपि सम्पूर्ण दुष्ट-कार्योंमें हाथ है,

पर इसमें कोई हाथ नहीं है। जिसको हम बहुत बड़ा सभ्य और सदाचारी समझते थे, उसीका यह सारा काम है, इसमें सन्देह नहीं। कोई परवाह नहीं; तू और मैं, दोनों जबतक इस पृथ्वीपर जीवित हैं, तबतक ऐसे लोगोंके ऐसे नीच कृत्य हमारी नज़रोंसे दूर रहें, यह कदापि सम्भव नहीं। अच्छा, अब तू जा; और अपनी सदैवकी नीतिसे काम लेकर इस बातका पूरा पूरा भेद लेआ कि, रणदुल्लाख़ांने उसे कहां रखा है; और कैसे रखा है। मुझे यह बात अभी मालूम नहीं है कि, वह कहां है; और यह क्या बात है; पर मैंने प्रतिज्ञा कर ली है कि, तीन दिनके अन्दर उसे छुड़ा लूंगा। इसलिए अपनी प्रतिज्ञाके अनुकूल ही सब कार्य होना चाहिए। तू जा। यह तो बिलकुल निश्चय है कि, यह कार्य बिलकुल गुप्त रूपसे किया गया है। इसलिए दरवानों इत्यादिसे जाकर गपशप मारनेसे इसका पता नहीं चलेगा। रणदुल्लाख़ांका अत्यन्त विश्वासपात्र एक मनुष्य अहमद है। इस अहमदके समान नीच और अपने मालिककी चापलूसी करनेवाला अन्य और कोई दूसरा नौकर उसके पास नहीं है। पर अहमद काहेको किसीकी परवाह करता है; और काम तो यह उसीके हाथका जान पड़ता है, और किसीके हाथका यह काम है ही नहीं। जो हो, अहमदसे कोई समाचार मिलनेकी आशा नहीं। पर हां, कोई न कोई दूसरा मनुष्य भी उसमें शामिल अवश्य होना चाहिए; क्योंकि अकेले आदमीसे इतना बड़ा काम हो नहीं

सकता। और मेरा तो यहांतक अनुमान होता है कि, इसमें किसी न किसी स्त्रीकी सहायता अवश्य होनी चाहिए। सो वह स्त्री कौन है, इसका पता लगा। उसीसे यदि कुछ अनुसन्धान लग सके, तो लगा; क्योंकि ऐसा ही अनुसन्धान इस समय हमारे काम आसकता है।"

बस, इतना ही कहकर वह फिर अपने मन ही मन कुछ सोचने लगा। कुछ देर बाद फिर एकदम वह अपने ही आप गुनगुनाता है, "अहमद! अहमद! अहमद एक पक्का बदमाश, लुच्चा और पाजी आदमी है। वह किसीकी सुन नहीं सकता। पर अहमद किसके जालमें है, सो मालूम होना चाहिए। उसके बिना यह शिकार हमारे हाथ नहीं लग सकता, इसलिए उसको पकड़ना चाहिए!" उसने अपनी ओरसे बहुत कुछ सिरपच्ची की; पर कोई विचार ठीक ठीक जमा नहीं। इसके बाद फिर ऐसा जान पड़ा कि, जैसे कोई अत्यन्त आशा उत्पन्न करनेवाला विचार उसके मनमें एकदम चमक उठा हो; और उसके चमकनेपर फिर वह आप ही आप हँसकर कहता है, "हां हां ठीक है। आजतक हमने इस बातकी ओर ध्यान नहीं दिया, यह कितनी भारी भूल हुई! अरे, हमको ज़रूर उन लोगोंके उन प्रयत्नोंमें सहायता करनी चाहिए थी, जोकि उनके द्वारा अभीतक वहांसे उसे छुड़ानेके लिए होते रहे। परन्तु हमने इस विषयमें अबतक कुछ भी नहीं किया, यह कितना बड़ा हमारा दोष हुआ! हमने यदि इस विषयमें कुछ किया होता, तो

उनकी ओरसे हमारे कितने उपकार माने जाते। अथवा, निराधार—और दुष्टके हाथमें फँसे हुए—प्राणीको सहायता करनेका श्रेय हमको प्राप्त हुआ होता। पर हमने व्यर्थ खोदिया। और यह भी नहीं कि, इतने दिनतक यह बात हमको मालूम न हुई हो। उनके विषयमें सब बातें हमको पूरी पूरी मालूम होती रही हैं; और यहांसे छूटनेके लिए उनके साथ ही लगातार जो प्रयत्न होता रहा है, सो भी हमें मालूम होता रहा है—ऐसा नहीं, कि न मालूम होता रहा हो—फिर भी हमने उनकी कोई सहायता नहीं की, यह कितनी बड़ी भूल हमारे हाथसे हुई! ऐसी भूल न होनी चाहिए थी। हमने अपने मनमें निश्चय किया था कि, इन दुष्ट यवनोंके हाथसे अनाथों और निराश्रितोंको छुड़ानेका कार्य हम बराबर जारी रखेंगे। परन्तु उस प्राणीको हम बिलकुल ही भूल गये; और अपनी ही धुनमें मस्त रहे। अच्छा, कोई हानि नहीं; जो बात होगई, सो होगई। अब आगे अवश्य ही हमको उनके कार्यमें सहायता करनी चाहिए। अब दो दिन हम उधर ही ध्यान दें। उधरसे भी इस काममें—हमको अवश्य मदद मिलेगी। सच पूछो, तो यह एक बड़ा ही विचित्र मौक़ा आगया है!" इस प्रकार सारा विचार करनेके बाद फिर. उसने इस बातका विचार शुरू किया कि, अब आगे किस मार्गसे अपने इस कार्यभागमें प्रवेश किया जाय।

उंचासवां परिच्छेद।

रणदुल्लाख़ां।

उस काले महाशयको भलीभांति मालूम था कि, जिस कार्यके करनेका उसने बीड़ा उठाया था, वह कार्य कोई छोटा-मोटा कार्य नहीं था। परन्तु उसने निश्चय कर लिया था कि, दीन-दुखियों और अनाथोंको मुसल्लोंके पंजेसे छुड़ाना उसका एकमात्र व्रत होगा; और अपने शत्रुका ख़ून करना, जोकि उसके मनका एक भारी उद्देश्य था,उसके साथ ही साथ उपर्युक्त व्रतका वह सदैव पूरा पूरा पालन करता रहेगा। अतएव ऐसा कोई भी कार्य जबकि उसके सामने आजाता, उसमें हाथ डालनेमें कभी भी वह पीछे नहीं हट सकता था; और जिस कार्यमें वह एक बार हाथ डाल देता था, उसको पूरा करनेमें वह तन,मन, वचनसे लग जाता था। कोई भी प्रयत्न उसके लिए फिर वह उठा नहीं रखता था। इसलिए अब वह दो बातोंके विचारमें लगा—एक तो यह कि, जिन "अनाथ प्राणियों" को रणदुल्लाख़ांके पंजेसे छुड़ानेका उसने निश्चय किया था, उन प्राणियोंका इस समय क्या हालचाल है; और उनकी यदि वह सहायता कर सकता है, तो किस प्रकारकी और कैसे कर सकता है; और दूसरी बात यह कि, रणदुल्लाख़ांने यदि नाना साहबको कहीं न कहीं क़ैद कर रखा है—अथवा समझ लो, कि

लार ही डाला हो—तो उसका हालचाल क्या है; और वह कैसे उसे मालूम हो। बस, इन्हीं दो बातोंके विचारमें वह लगा। परन्तु अब हम उसे छोड़कर स्वयं रणदुल्लाख़ांकी ही ओर क्यों न आवें; क्योंकि उसका भी तो हालहवाल कई दिनोंसे पाठकोंको नहीं मिला है।

हमको नीचा दिखानेके लिए सैयदुल्लाख़ां रात-दिन प्रयत्न कर रहा है। मौक़ा लगनेपर हमारी निन्दा करने अथवा हमारे विषयमें बादशाहका मन ख़राब करने, इत्यादिमें भी वह चूकनेवाला नहीं; और न चूकता है—ये बातें रणदुल्लाख़ांको मालूम थीं, पर जबतक रणदुल्लाख़ां बादशाहके साथ सचाईका बर्ताव करता है; और जबतक बादशाहका यह विश्वास बना है कि, रणदुल्लाख़ां राज्यका एक दृढ़ आधारस्तम्भ है, तबतक बादशाह सैयदुल्लाख़ांकी एक भी नहीं सुन सकता—इस बातका भी रणदुल्लाख़ांको पक्का विश्वास था; और इसीकारण वह सैयदुल्लाख़ांको कोई चीज़ नहीं समझता था। दिनपर दिन सैयदुल्लाख़ांका प्रभाव बादशाहपर अधिकाधिक बढ़ता जा-रहा है, यह मुरारपन्त और रणदुल्लाख़ां दोनोंको मालूम था। परन्तु साथ ही साथ यह विश्वास भी उनको अबतक बना हुआ था कि, सैयदुल्लाख़ांके कहनेसे बादशाह कोई ऐसा अविचारका कार्य नहीं कर सकता। अतएव रंगराव अप्पाको जिस दिनसे रणदुल्लाख़ां लाया था, उसी दिनसे और अबतक, उसे यह विश्वास था कि, आज नहीं तो कल उनको अवश्य हम सुल-

तानगढ़का क़िलेदार फिरसे नियत कर सकेंगे। पाठकोंको मालूम ही होगा कि,रणदुल्लाख़ां अप्पासाहबको बड़ी इज़्ज़त और प्रतिष्ठाके साथ रखता था; और उसने अपने आश्रममें ही उनको स्थान भी देरखा था, परन्तु इस बातकी चिन्ता उसे रातदिन सता रही थी कि; देखो, आज कितने दिन होगये; परन्तु हम अपने कहनेके अनुसार कुछ भी कर नहीं सके। अप्पासाहबको अबतक वापस भेज देना बहुत आवश्यक था; क्योंकि उधर शहाजीके लड़केका उपद्रव दिनपर दिन बढ़ रहा है; और सुल-तानगढ़के समान भारी क़िला फिर भी लापरवाहीमें पड़ा हुआ है, यह बात कुछ ठीक नहीं है। जिस समय हमारा वह काला महाशय रणदुल्लाख़ांके विषयमें उपर्युक्त रीतिसे विचार कर रहा था, उसी समय स्वयं रणदुल्लाख़ां इस विचारमें निमग्न था कि, अप्पासाहबको जो वचन हमने दिया है, उसे किस प्रकार पूरा करें; और किस युक्तिसे फिर उनको क़िलेपर नियोजित करें। एक-दो वार तो उसके मनमें यह भी आया कि, बाद-शाहसे भी इस विषयमें कुछ न पूछें; और मुरारपन्तकी ही सलाहसे उनको क़िलेपर भेज दें। जिस दिन यह विचार उसके मनमें आया था, उसी दिन रंगराव अप्पाने भी सुलतानगढ़का समाचार अपने हलकारेके द्वारा मंगवाकर रणदुल्लाख़ांको वह पत्र दिखलाया था। उसमें स्पष्ट लिखा था कि, इधर बड़ा भारी उपद्रव मच रहा है। हां, सुलतानगढ़के इर्दगिर्द दस कोसतक तो यद्यपि अभी डाके नहीं पड़े हैं; पर बाक़ी और सब जगह

लूटमार जारी है; और गाँव उजड़े जारहे हैं। चार-पांच गांवोंके आदमी तो अपने अपने गांवोंको छोड़कर सुलतानगढ़के आसपास चार-पांच कोसके बीचमें ही आकर रहे हैं। बस, इसी प्रकारका वृत्तान्त उस चिट्ठीमें लिखा था। अप्पासाहबने जब यह वृत्तान्त रणदुल्लाख़ांको पढ़कर सुनाया, उस समय रणदुल्लाख़ांको भलीभांति मालूम होगया कि, अप्पासाहबको उपर्युक्त बातोंपर कितना क्रोध और खेद मालूम होरहा है। फिर रणदुल्लाख़ांको इस बातपर भी बहुत दुःख हुआ कि, देखो, ऐसे स्वामिभक्त वृद्ध पुरुषको व्यर्थके लिए इतना कष्ट दिया जारहा है। अन्तमें उस वृद्ध महाशयने यह भी जतलाया कि, "मुझे कमसे कम कुछ दिनके लिए तो अवश्य ही आप लोग क़िलेपर भेजनेका प्रबन्ध करें। मैं वहां पहुँचकर इस सारी बग़ावतका दमन करूंगा; और फिर चाहे मैं यहां भी आजाऊं, तो भी कोई विशेष हानि नहीं। परन्तु उन लुटेरोंकी तो एक बार अच्छी तरह ख़बर लेलूंगा। मेरा कमबख़्त अभागा लड़का भी उन्हींमें जामिला है, वह यदि मिल जायगा, तो उसे भी सूलीपर चढ़ाऊंगा, अथवा अपने हाथसे ही उसका सिर काट-कर यहां भेज दूंगा, इस विषयमें आप कोई सन्देह न करें।"

बुड्ढा कितने हृदयसे ये सब बातें कह रहा था, सो रण-दुल्लाख़ांको भलीभांति मालूम होगया; और उसने उसको धैर्य भी दिलाया। परन्तु यह बात उसके ध्यानमें नहीं आई कि, किस उपायसे मैं इसको क़िलेपर भेजकर अपने वचनोंको पूरा

करूं। बादशाहकी मर्ज़ी इस समय उसके पक्षमें नहीं है, यह रणदुल्लाख़ां जानता था। क्योंकि उसने बादशाहके सामने एक-दो बार इस विषयमें बात निकाली थी; पर कोई ठीक ठीक उत्तर नहीं मिला था—इतना ही क्यों? बल्कि एक बार तो बाद्-शाहने यहांतक कहा कि, "उस बुड्ढे के विषयमें तुमको इतनी चिन्ता क्यों है? देखा जायगा, जब हमारी इच्छा होगी!" यह कहकर बादशाहने सैयदुल्लाख़ांकी ओर भी कुछ अर्थपूर्ण दृष्टिसे देखा; और इस प्रकार जब रणदुल्लाख़ांने प्रत्यक्ष ही बादशाहका व्यवहार देख लिया, तब वह बड़े चक्करमें पड़ा कि, यह मामला क्या है; और इसको किस प्रकार सुलझावें। बस, इसी बातका विचार करनेमें रणदुल्लाख़ां उस समय लगा हुआ था; और साथ ही साथ कुछ अन्य विचार भी उसके मनमें आरहे थे कि, जिनको सोच सोचकर वह लम्बी लम्बी सांसें छोड़ रहा था। इतनेमें उसे ऐसा मालूम हुआ कि, कोई झांक रहा है, तत्काल ही उसने पूछा, "कौन है?" उत्तर मिला, "ग़रीबपरवर, मैं आपका ग़ुलाम, अहमद हूं।" इसपर रणदुल्लाख़ांने उससे फिर पूछा, "क्यों आया? क्या काम है?" अहमद रूमालसे अपने हाथ बांधकर कुछ आगे आया; और कहता है, "ग़रीब-परवर, चार दिन हुए, मैंने एक बहुत भारी काम किया है; जिसे सुनकर हुज़ूर बहुत ही प्रसन्न होंगे। जो काम मैंने किया है, वह हुज़ूरके भी कानोंमें डाल दूं, इसीका मौक़ा देख रहा था। तबसे बराबर रातदिन हुज़ूरके आसपास चक्कर लगाता

रहा था, पर कोई अच्छासा मौक़ा ही न मिला। एक-दो बार मौक़ा भी मिला, पर मुँहसे आवाज़ ही न निकली। न जाने आप क्या कहेंगे, इसी विचारमें रहा। ख़ता माफ़ हो, सरकार!"

अवश्य ही, अहमद क्या कहता है; और उसने ऐसा कौनसा काम किया है, इत्यादि कुछ भी रणदुल्लाख़ांकी समझमें न आया। तब अहमद ही फिर बड़ी चापलूसीकी आवाज़में, और एक विचित्र प्रकारकी सूरत बनाकर, बार बार रूमालसे हाथोंको लपेटते हुए कहता है—"हज़ूर, आपके चरणोंपर मेरी बड़ी भारी भक्ति है; और उसीने वह काम मुझे सुझाया। क्या आपका दिल मैं नहीं पहचानता? मैं यह अच्छी तरह जानता हूं कि, जबतक आपके रास्तेमें एक रुकावट बनी हुई है, तबतक आप इच्छा रहते हुए भी कुछ कर नहीं सकेंगे। और इसीलिए, मौक़ा मिलते ही, मैंने सब बन्दोवस्त कर लिया। आपकी इजा-ज़त मिलनेका भी रास्ता नहीं देखा। अब आप स्वयं ही उसका निपटारा करें। बस, फिर उसकी वस्तु लेनेमें पाप भी न लगेगा। मैं जानता हूं कि, आप कितने पापभीरु हैं; पर सरकार, जब स्वयं ही आप अपने हाथसे एक बार उसका फ़ैसला कर देंगे, तब फिर······"

रणदुल्लाख़ां कुछ भी नहीं समझ सका; और यह उसके चेहरेसे स्पष्ट दिखाई देरहा था। इसने कौनसा काम किया? फ़ैसला किसका किया जाय? वस्तु किसकी हड़पकर

लीजाय ? इत्यादि सभी बातें, रणदुल्लाखांके लिए, बिलकुल अन्धकारमें ही होनेके सदृश, अदृश्य थीं। पहले तो रणदुल्लाखांने यही समझा कि, होगी कोई मामूलीसी बात; और जिसको यह इतना बढ़ाकर कह रहा है; पर उसकी अन्तकी बातोंसे उसने समझ लिया कि, नहीं, यह कोई मामूली बात नहीं है, किन्तु अवश्य ही कोई महत्वकी बात है; और इसीलिए वह एकदम अहमदसे बोला, "बतला न, जो कुछ बात हो साफ साफ ? इस:प्रकार आगा-पीछा क्यों करता है ? इसमें घबड़ानेकी कौनसी बात है ? जो कुछ कहना हो, साफ साफ कह। बतला, कौनसा काम कर आया ? फ़ैसला किसका करना है ? और वस्तु किसकी लूटनी है ? तुझको कौनसा काम, किसने बतलाया था ?"

"ग़रीबपरवर, मैं आपका ग़ुलाम बन्दा हूं। क्या मेरे आंखें नहीं हैं ? मालिकके मनमें रात-दिन कौनसी बात बस रही है; और क्या करनेसे उसको आराम मिलेगा, सो क्या मैं जानता नहीं हूं ? सच्चे नौकरका तो सारा ध्यान इसी एक बातकी तरफ़ रहता है कि, मेरे मालिककी इच्छा इस समय क्या है; और उसके न कहते हुए ही मैं किस प्रकार उसको कर डालूं......"

"बस, बस ! रहने दे, अब ये तेरी बातें होचुकीं !" रणदुल्लाख़ां बिलकुल त्रस्त होकर कहता है, "अब असली बात जो तू बतलाने आया है, सो बतला। अहमद, मैंने तुझे आज-

तक कितनी वार जताया है कि, तू आवश्यकतासे अधिक बोलता है; और जिस काममें पड़नेकी तुझे कोई आवश्यकता नहीं, उस काममें तू पड़ा करता है। यह तेरे लिए अच्छा नहीं है। पर तेरी आदत नहीं जाती। आज तू कहता है कि, मैंने यह काम किया है, पर वह काम भी यदि ऐसा ही हुआ, तो याद रखना, तुझे दण्ड दिये विना मैं कभी नहीं रहूंगा। तू बहुत लुच्चा आदमी है। बतला, क्या बात कहता है?"

"सरकार, आप ही जब ऐसा कहने लगेंगे, तब फिर हम गुलामोंको कौन पूछेगा? मैंने तो अपनी समझमें बहुत ही भारी काम किया है; और ऐसा भारी कि, उसके लिए आपसे इनाम ही......"

रणदुल्लाखांको अब बिलकुल ही धीरज नहीं रहा; और वह एकदम बहुत क्रुद्ध होकर अहमदके बिलकुल पास चला गया; और उसपर हाथ उठाकर बोला, "बतला, बतला, साफ साफ जो कुछ कहना हो, नहीं तो अभी लगाता हूं। नमकहराम कहींका! इतनी देरसे लुच्चपन कर रहा है!"

"नमकहराम!" अहमद तुरन्त ही कहता है—"मैं यदि नमकहराम हूं, तो फिर इस संसारमें नमकहलाल कौन होगा? जहांपनाह, आप जिस वस्तुके लिए रातदिन इतने व्याकुल हो-रहे हैं, उसी वस्तुके पहले स्वामीको इस बन्देने आपके तावेमें लाकर रख दिया है। उसको मैं अबतक कभीका जहन्नुमको भेज देनेवाला था; पर मैंने समझा कि, शायद हुजूर ही अपने हाथसे उसका निपटारा करना चाहते हों।"

"वस्तुके लिए मैं व्याकुल होरहा हूं—मैं ?" रणदुल्लाखां बहुत ही विचित्र आवाज़से और एक विचित्र प्रकारकी चेष्टा बनाकर कहता है—"कौनसी वस्तुके लिए ? कौन उसका पहला स्वामी ? अहमद, इस समय तो मुझे ऐसा ही मालूम होरहा है कि, तेरा ही निपटारा मैं कर दूं। तू पागल तो नहीं होगया है ? बीच बीचमें तुझको ऐसी ही सनक आजाया करती है! तेरी अक़्ल कहां गई ? क्या तू समझता है कि, बापदादेसे जो तेरे घरके लोग मेरे यहां नौकरी करते आये हैं, उससे तुझको मेरी हँसी-दिल्लगी करनेका भी अधिकार प्राप्त होगया है ? क्या तू मेरे यहांका कोई विदूषक होना चाहता है ? बावला, किसकी वस्तु प्राप्त करनेके लिए मैं व्याकुल होरहा हूं ? कौन उसका पहला स्वामी है ? ऐ हरामख़ोर, याद रख, किसके लिए तू क्या कह रहा है !"

अहमद एक बिलकुल निर्लज्ज आदमी था। वह तुरन्त ही कहता है, "सरकार, हम नौकर लोग, आंखे रहते हुए भी अंनधोंकासा व्यवहार करते हैं, इससे आप हमको अन्धा ही समझ लें। हमसे आप चाहे जितना छिपावें, फिर भी कोई बात हमसे छिप नहीं सकती। बाहरकी बातोंको तो रहने ही दीजिए—बिलकुल भीतरकी बातें, फिर चाहे वे आपके हृदयकी ही क्यों न हों, वे भी हमसे छिपाई नहीं जासकतीं। फिर उसमें भी मेरे समान नौकरको—जोकि बिलकुल छुटपनसे ही नौकर है—अपने मालिकके हृदयकी यदि सब बातें मालूम

होजाँय, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है ? आप इसी बातपर पीछे मुझसे नाराज़ हुए थे; और उस समय मैं चुप होगया था। पर इससे आप यह न समझें, कि मैं उस बातको भूल गया, अथवा आपकी चेष्टासे मैंने सब बातें ताड़ नहीं लीं। आप चाहे जो कहें; पर सरकार, यह अहमद आपका छुटपनका नौकर है, इसे तो आपके मनकी बात करनी है, फिर उसमें चाहे प्राण भले ही चले जायँ। आप समझते हैं कि, आप जो दिनपर दिन क्षीण होरहे हैं, उसका कारण मैं जानता नहीं ? आपके मनमें उसके प्रति प्रेम उत्पन्न होचुका है; पर आप समझते हैं कि, वह दूसरेकी वस्तु है; और उसपर जबतक आपका अधिकार न होजाय, तबतक उसपर प्रेम करना आप उचित नहीं समझते; और इसीकारण इतने दिनोंसे इस मामलेको रोक रखा है, ये सब बातें क्या मुझे दिखाई नहीं देतीं ? सरकार, ऐसी बातें चाहे आप स्वयं मुझे न बतलावें, पर वे मुझसे छिप कैसे सकती हैं ? हां, उनके विषयमें बात मैं भले ही न निकालूं; परन्तु, मैं हृदयसे उनको थोड़े ही हटा सकता हूं ? रात-दिन वे बातें मेरे हृदयमें बनी रहती हैं; और मैं बराबर यही सोचता रहता हूं कि, किस प्रकार आपकी तबीयतको आराम मिले; मैं कौनसा काम करूं कि, जिससे वह आराम आपको विशेष रूपसे मिले। आप उस रातको तम्बूमें यद्यपि मुझसे इतने नाराज़ हुए, फिर भी मैंने अपने मनमें समझ लिया कि, सरकारका प्रेम यदि उनपर नहीं है, तो फिर सरकार यह क्यों चाहते हैं कि, वे यहांसे

न जावें, उनके यहां बैठना लोगोंके ध्यानमें न आवे; और उनकी सच्ची पोशाक लोगोंको यही मालूम होती रहे। इन बातोंके विषयमें सरकारकी जो आतुरता दिखाई दी, उसीसे मैं सब भेद समझ गया—और मैं ही क्या? घरके प्रत्येक नौकरको हुज़ूरकी वर्तमान अवस्थापर काफी सन्देह है। हां, इतना अवश्य है कि, मैं रात-दिन इसके विषयमें विचार करता रहता हूं; और सोचता रहता हूं कि, क्या करनेसे आपके मनके योग्य बात होगी; पर अन्य लोगोंको इस प्रकारका कोई भी ख़याल नहीं। बस, यही उनमें और मुझमें भेद है।"

अहमद इस प्रकार बराबर बोलता ही रहा; पर ऐसा जान पड़ा कि, रणदुल्लाख़ांका ध्यान उसकी ओर बिलकुल ही नहीं था; क्योंकि यदि उसका ध्यान होता, तो उसने उसकी बोलती कभीकी बन्द कर दी होती। उसका ध्यान वास्तवमें किसी दूसरी ही ओर था; और ऐसा जान पड़ता था कि, वह बिलकुल एकाग्रचित्तसे किसी बातका विचार कर रहा है। सच पूछिये, तो अहमदका उपर्युक्त बोलना उसके विचारके लिए एक प्रकारसे सहायक ही होगया। जहां वह बन्द हुआ, रणदुल्लाख़ां मानो होशमें आया; और फिर एकदम उससे बोला, "अहमद, तू क्या कहना चाहता है? तूने कौनसा काम किया है? तेरी सचाईके विषयमें कभी मुझे कोई शंका नहीं हुई। पर तू मेरी सभी बातोंमें दस्तंदाज़ी करता है; और व्यर्थके लिए बहुत बोलता है, इसीलिए मैं तुझपर नाराज़ होता हूं। बतला, तू

क्या कहने आया है? जो कुछ कहना हो, साफ़ साफ़ कह।"

अहमदने जब यह देखा कि, हमारा मालिक अब हमसे सौम्यताके साथ बोलने लगा, तब उसकी सूरतपर सन्तोषकी छाया दिखाई दी; और तुरन्त ही वह बोला, "सरकार, काम और कौनसा है? यही कि, जिस सुन्दरीपर आपका प्रेम है, उस सुन्दरीके पहले स्वामीको पकड़कर मैंने बन्द कर रखा है।"

"उस सुन्दरीका पहला स्वामी? कौन? कौन? वह तुझे कैसे मिला? बदमाश कहींका! तू क्या कह रहा है, कुछ समझता भी है?"

"जी हुज़ूर—हां, मैं उसीको पकड़ लाया हूं—उसीको!"

"किसको? किसको? कहां? कैसे पकड़ लाया?" रणदुल्लाखांने अत्यन्त क्रोधके साथ उससे बड़े कर्कश स्वरसे डांटकर कहा।

"जहांपनाह, यहीं, बीजापुरमें वैरागीके भेषमें घूम रहा था। आपके उस महलके सामने खड़े होकर उस सुन्दरीकी ओर देख रहा था। मैं उसको पहचान गया; और धोखा देकर उसको पकड़ लाया। ग़रीब-परवर, मैंने तो आपके लिए अपनी जान जोखोंमें डाली; और आप मुझपर इतना गुस्सा कर रहे हैं—अब मैं क्या कहूं?"

"चुप, चुप। अधिक मत बोल! तूने उसे यहां बीजापुरमें वैरागीके भेषमें देखा? वह तो वहां राजा शहाजीके लड़केके

गुट्टमें मिलकर बग़ावत कर रहा है; और तू कहता है कि, मैंने यहां देखा—यह सम्भव भी है? पाजी कहींका। तू पक्का पागल होगया है! इसमें कुछ भी सन्देह नहीं। जा, पागल कहींका। यहांसे चला जा।"

अहमद अब अपने मालिककी मर्ज़ी पहचान गया; और उसका यह अन्तिम कथन सुनकर ज़ोरसे हँसते हुए बोला—"सरकार, वह यहां कैसे आया, सो तो मैं कह नहीं सकता; परन्तु हां, उस महलके सामने खड़े होकर ऊपरकी ओर निहारते हुए मैंने उसे कई बार देखा था। इससे मैंने जब समझ लिया कि,यह आपके मार्गमें कंटकस्वरूप अवश्य होगा;और इसको दूर किये बिना आपको सुख नहीं होगा, तब मैंने उसके साथ दग़ा करके उसको पकड़ लिया; और महलमें लाकर आपके तहख़ानेमें क़ैद कर रखा है। उसको क़ैद करनेमें मुझको न जा क्या क्या कार्यवाहियां करनी पड़ीं, पर अब आप उसका चाहे जो करें।"

"नानासाहब बीजापुरमें आया कैसे!" इस बातपर रणदुल्लाख़ांको विश्वास नहीं होरहा था। जिस आदमीको पकड़नेके लिए बादशाहके ख़रीते छूटे हैं, जिसके कारण उसके पितापर इतना कोप हुआ है, वह मनुष्य बीजापुरमें आप ही आप आकर इस प्रकार कैसे घूमेगा? रणदुल्लाख़ांकी कुछ समझमें न आया। परन्तु अहमदने जब बार बार वही बात कही, तब उसके मनमें भी शंका उत्पन्न हुई; और वह

ही मन विचार करने लगा। शायद उसको पता लग गया हो; और इसकारण वह खोज करनेको ही वैरागीके भेषमें आया हो। यह बात कुछ असम्भव नहीं है। रणदुल्लाखांके मनमें पहले यह शंका भी आई थी कि, शायद अहमदके पहचाननेमें ही धोखा होगया हो; पर जब उसने यह सोचा कि, अहमदने उसे कई बार देखा है; और वह उसको अच्छी तरह पहचानता है, तब उक्त शंका उसके मनसे जाती रही; परन्तु अब वह इस चक्करमें पड़ा कि, वह तो सासवड़की ओर था, वहांसे यहां कैसे आगया? अन्तमें कुछ उसकी समझमें नहीं आया; और न अहमदसे ही वह यह कह सका कि, "चल, दिखला, कहां तूने उसे रखा है।" रणदुल्लाखां बड़े विचारमें पड़ा। परन्तु कुछ देर बाद वह अपने स्थानसे उठा; और इधरसे उधर चक्कर लगाने लगा। उसका चित्त अस्वस्थ होगया। अब वह क्या करे, सो कुछ भी उसे नहीं सूझा। उसके चित्तमें बराबर घनघोर युद्ध होरहा था। एक बार चित्तमें आता कि, उसको जाकर देखना चाहिए, दूसरी बार आता कि, कोई ज़रूरत नहीं, उसको ऐसा ही पड़ा रहने दो। इस प्रकार उसके चित्तकी व्याकुलता बढ़ती ही गई।

पचासवां परिच्छेद ।

अहमदकी कारस्तानी ।

आजतक कभी भी जो विचार उसके मनमें नहीं आये थे, वही विचार आ आकर आज उसके मनको अशान्त करने लगे। क्या करें? हमारे पंजेमें वह आगया है, यह यदि सच है, तो हम अब उसको क्या करें? रणदुल्लाख़ांके मनकी दशा वास्तवमें वैसी ही थी, जैसीकि अहमदने पहचानी थी। नानासाहब कभी न कभी हमारे रास्तेमें अवश्य आवेगा; और वर्त्तमान दशा बहुत दिनतक ठहर नहीं सकती। हम दिनपर दिन अधिकाधिक अपनेको फँसा रहे हैं, इससे छूटना, अपना मन साफ़ रखना, बहुत ही कठिन काम है। हमारा चित्त उस एक बातसे कितना अस्वस्थ होगया था, इसकी हमको अबतक कल्पना भी न थी। अब रणदुल्लाख़ांको स्पष्ट दिखाई देने लगा। ज्यों ज्यों वह अधिक विचार करने लगा, त्यों त्यों उसको स्पष्ट मालूम होने लगा कि, उसका चित्त उसके हाथमें नहीं है। उसने सोचा कि, यही दशा यदि और कुछ दिन हम अपने चित्तकी बनी रखेंगे, तो न जाने आगे उसकी क्या दशा होगी; और क्या नहीं। अब हम करें क्या? एक बार वह हमारे पंजेमें तो आगया। अब हम उसका चाहे जो कर सकते हैं। अपने हाथसे उसका फ़ैसला करना चाहें, तो यह भी सम्भव है; और यदि

बादशाहके सामने लेजाकर उपस्थित करना हो, तो यह भी कोई मुश्किल बात नहीं है। पर ऐसा करना कितनी अधमताकी बात होगी! आजतककी हमारे मनकी शुद्धता कहां गई? आज ये विचार हमारे मनमें क्योंकर आने लगे? हमारे मनकी आज यह क्या दशा होरही है? क्या शैतानने इसके ऊपर अपना आधिपत्य जमाया? अरे शैतान! तू किस समय किसका नाश करेगा, कुछ कहा नहीं जासकता। इस प्रकारके अनेक विचार और उद्गार उसके मनमें आने लगे; और कभी कभी बाहर भी निकलने लगे। वह अत्यन्त उद्विग्न होगया। उसे कुछ दिखाई ही न देने लगा। सुविचार और कुविचार, दोनोंका तुमुल युद्ध शुरू होगया। यह इच्छा उसको हृदयसे थी कि, कोई बुरा काम उसके हाथसे न होने पावे। परन्तु आज इतने दिनसे चूंकि वह कुछ भी स्थिर नहीं कर सका था, बिलकुल प्रलोभनमें पड़ गया था; और उस प्रलोभनके पाशको, उसके पहले ही आवेगमें, जितने ज़ोरसे हटा देना चाहिए था, उतने ज़ोरसे चूंकि नहीं हटाया था; इसीकारण उसके मनकी आज यह दशा होरही थी। और इसीलिए अब स्वयं उसके ध्यानमें आया कि, वास्तवमें इस दशासे निकलकर अबतक हमको कभीका निश्चिन्त होजाना चाहिए था; परन्तु हमने ऐसा नहीं किया; और इसीकारण आज हमारे हृदयमें ऐसी दुर्बलता आगई है। परन्तु क्या करे? हृदयको सबल बनावे, सो उसके हाथसे हो नहीं सकता था। अच्छा, कुछ दिन इसी प्रकार जाने दें,

अहमद्ने जैसा उसे क़ैद कर रखा है, वैसा ही और कुछ दिनतक रगड़ने दें, हम उससे मिलें ही नहीं; और दो दिन विचार करें, शायद ऐसा ही मनमें आजावे कि, छोड़ो, इस प्रलोभनको (और ऐसा ही इष्ट भी है); और यदि ऐसा मनमें आगया; और हम एक बार उस सुखसे हाथ धो बैठे, तो वह सुन्दरी जिसकी है, उसके हाथमें चली जायगी; और फिर जो अभीतक हम उससे कमसे कम वार्तालापका ही आनन्द उठाते हैं, सो भी हमारे हाथका जायगा। पर क्यों? इतनी जल्दी करनेकी क्या ज़रूरत है? अच्छा काम करना तो हमारे हाथमें है, चाहे जब कर सकते हैं। जब इच्छा होगी, तभी उसको छोड़ देंगे; और दोनोंका मिलन कराकर फिर अपनी सहायतासे गुप्त रूपसे उनको यहांसे भेज देंगे। यह तो अपने हाथकी बात है! चाहे जब कर सकते हैं! पर एक बार जहां ऐसा होगया कि, फिर उस मधुर भाषण, अथवा उस पवित्र दर्शनका लाभ हमको नहीं रहेगा!

बेचारा रणदुल्लाख़ां! अच्छा काम क्या! चाहे जब कर लेंगे! इच्छा होगी तभी कर लेंगे! ऐसा उसका विचार था—यह उसका कितना भ्रम था! अच्छा काम, चाहे जब कर लेना, यदि सम्भव होता, तो न जाने आज संसारकी कौनसी दशा होती! अरे, अच्छा काम करने जाते हैं, तब भी तो नहीं होता, फिर चाहे जब कर लेना कहां सम्भव है? क्या करे बेचारा—एक प्रलोभनमें फँस गया था; और उस प्रलोभनके जालसे छूट-

कर अपना असली शुद्ध चरित्र फिरसे भलीभांति चमकानेके लिए जिस मनोबलकी आवश्यकता थी, वह मनोबल उस समय उसमें नहीं था; और इसीकारण बेचारा और भी उसमें अधिकाधिक फँसता जाता था। जैसे कोई मनुष्य, जहां ख़ूब कीचड़ है, ऐसी जगहमें जब एक बार फँस जाता है, तब फिर और भी अधिकाधिक फँसता ही जाता है—बस, ऐसा ही हाल रणदुल्लाखांका हुआ। पहलेपहल उसे उस लोभपाशसे बाहर निकलना जितना सहज जान पड़ा था, उतना सहज वह नहीं है—यह अब उसके ध्यानमें आया। न सिर्फ ध्यानमें ही आया; बल्कि इसका उसे अनुभव भी हुआ। इस समय उसके समान उदारचरित्र मनुष्यके लिए यही उचित था कि, चुपकेसे नानासाहबको वह वैसा ही छोड़ देता; और उसने ऐसा ही किया भी होता; परन्तु—'परन्तु' ही बड़ा भारी बाधक था—उसके सुविचारपर, कमसे कम उस समय तो अवश्य ही शैतानने अपना आधिपत्य जमा लिया था। वह शैतान उसके नौकरके रूपमें आकर उसके सामने खड़ा हुआ था, तथा अपने राज्यमें आनेके लिए उसे प्रलोभन दिखा रहा था! बस, इसीकारण अन्तमें उसने यही निश्चित किया कि, कमसे कम आजके दिन तो अवश्य ही नानासाहबको यहीं पड़ा सड़ने दो, फिर देखा जायगा। इस प्रकार कुछ न कुछ निश्चय करके उसने अपने उस अशान्त मनको क्षणिक और काल्पनिक शान्ति प्रदान की। अस्तु।

अहमदने अपने मालिकका यह सब विचार देखकर तुरन्त ताड़ लिया कि, उसका मन, जैसा हम कहते हैं, उसी ओर झुकेगा। अतएव उसने सोचा कि, अब हम अपने मालिकको न बतलाते हुए ही उसका फ़ैसला क्यों न कर डालें। अहमदके मनमें इस विचारका आना था कि, फिर और कुछ उसे सूझने ही न लगा। आजतक तो वह यह समझता था कि, हमारे मालिकके मनमें चाहे कोई बात हो भी; परन्तु चूंकि वह एक शुद्धचरित्र व्यक्ति है, अतएव यदि हम कोई ऐसा-वैसा काम करेंगे, तो उसे अच्छा नहीं लगेगा—इतना ही क्यों—मौक़ा आजानेपर वह ऐसे कामके लिए हमारा सिरतक काट लेगा; परन्तु आज जो उसने अपने मालिककी हालत देखी, उससे तो उसने यही समझा कि, यदि नानासाहबको हमने इससे पहले ही मार डाला होता, तो भी कोई हानि नहीं थी। हां, पहले-पहल, उसके बधका समाचार सुनकर शायद उसे कुछ बुरा भी मालूम हुआ होता; पर फिर अन्तमें उसको सन्तोष ही हो-जाता। क्योंकि नानासाहब उसके मार्गका एक बड़ा भारी कांटा है; और वह कांटा इस प्रकार यदि आप ही आप दूर हो-जाता, तो उसको सन्तोष होना स्वाभाविक ही था। बस, अपने इसी विचारके अनुसार कार्य करनेका अहमदने अब निश्चय किया। उसने सोचा कि, अब इस कार्यमें विलम्ब बिलकुल ही नहीं लगाना चाहिए; और आज, जिस प्रकार उसको सिर्फ पकड़ लानेभरकी ख़बर आकर सुनाई है, उसी प्रकार चार

दिन बाद यदि दूसरी ख़बर आकर हम सुनावेंगे, तो पहलेपहल तो सुन करके हमारा मालिक चाहे कुछ क्रुद्ध भले ही हो; पर अन्तमें उसके मनको सन्तोष ही होगा। अस्तु। यही पक्का विचार करके उपर्युक्त रीतिसे उसने अपना निश्चय स्थिर किया। परन्तु इस सम्बन्धकी कोई भी बात जब अहमदको करनी होती थी, तब फ़तिमाकी सलाह लेना उसके लिए आवश्यक होता था। क्योंकि जिस जगह नानासाहब क़ैद थे, वह जगह फ़तिमाके ही चार्जमें थी; यही नहीं, बल्कि यह कहनेमें भी कोई अतिशयोक्ति न होगी कि, स्वयं नानासाहब भी उसीके तावेमें थे। इसलिए स्वाभाविक ही अहमद फ़तिमाके यहां यह बतलानेको गया कि, आज मालिकसे उसकी क्या क्या बातें हुईं; और अन्तमें उसने क्या करना विचारा है। अहमद अब इस आनन्दमें था कि, देखो, मालिक हमारे पंजेमें किस प्रकार फँसा; और इसलिए फ़तिमासे वह सब समाचार बतलानेको वह एक प्रकारसे बड़ा आतुर होरहा था। अतएव बहुत जल्द फ़तिमासे जाकर मिला, उसको अपने मनकी सब बातें बतलाईं, प्रेम प्रकट किया; और अन्तमें इस बातका एक बहुत ही सुन्दर चित्र खींचकर उसके अन्तश्चक्षुओंके सामने रखा कि, यदि हम इस कामको सुचारु रूपसे पूरा कर लेंगे, तो हमारा मालिक हमसे कितना प्रसन्न होगा। परन्तु फ़तिमाका चित्त उस समय ठिकाने नहीं था। उसके मनमें नाना प्रकारके विचार चक्कर मार रहे थे। उस दुष्टपर तो उस समय उसे इतना क्रोध आया कि, यदि उसके

शरीरमें वह शक्ति होती, तो उसने उसके टुकड़े ही टुकड़े कर डाले होते। परन्तु कोई कारण और भी था कि, जिससे नानासाहबको इतनी जल्दी वहांसे छोड़ देना उसे अभीष्ट नहीं था। परन्तु उस दुष्टके पंजेसे छुड़ानेके लिए फ़तिमाके सामने और कोई मार्ग भी नहीं था—सिवाय इसके कि, वह गुप्त रूपसे नानासाहबको वहांसे छोड़ दे। इसलिए अब वह करे तो क्या करे? वह बड़ी कठिनाईमें पड़ी। उसका हृदय दुःखसे बिलकुल व्याकुल होगया। उसको कोई उपाय ही न सूझने लगा। उसने सोचा कि, रात होनेतक—आधीरात होनेतक—तो इस दुष्टको किसी न किसी प्रकार रोक रखना सम्भव है; परन्तु आधीरातके पहले—यह कसाई उसकी कोठरीमें जाकर अपना क्रूर कर्म न करने पावे; और—मैं किसी न किसी प्रकार नानासाहबको वहाँसे हटा दूं; पर इसके लिए उपाय कौनसा करूं? कहां ले जाकर रखूं? अथवा उसको उसके साथियोंके पास ही जाने दूं? पर, ऐसा न करनेके लिए फ़तिमाके सामने कोई कारण था; अतएव अब वह करे क्या? उसका व्याकुल हृदय इन्हीं सब विचारोंमें बिलकुल निमग्न होरहा था। अहमद उसके पास खड़ा है; और अब कोई न कोई उत्तर उसे देना चाहिए, इस बातको मानो वह भूल ही गई थी। उसका सन्ताप अभी शान्त नहीं हुआ था। उसके मनमें अभी ऐसी शान्ति नहीं आई थी कि, जिससे वह अहमदको भुलावेमें डालकर अपने अभीष्टको सिद्ध करनेकी युक्ति निकाल सकती।

परन्तु इतनेमें अहमदने बीचहीमें कोई दुष्टताकी बात कही कि, जिससे वह एकदम चमककर उसके ऊपर दौड़ी ; और कहती है, "क्यों ? तुमको शरम नहीं आती ? अपना मतलब निकालनेके लिए, अपने स्वामीकी नीच इच्छाको तृप्त करनेके लिए, तुम ऐसा नीच कर्म करनेवाले हो ! बेचारे निःशस्त्र मनुष्यके रक्तसे अपने हाथ अशुद्ध करनेवाले हो ? जाओ, इस समय, अहमद, मुझसे कुछ भी मत बोलो । उसके हाथमें हथियार होता, तो तुम्हारे समान दस आदमियोंकी उसने ख़बर ली होती । जाओ, अभी मैं हुज़ूरके पास जाकर तुम्हारी सारी कार्यवाही बतलाये देती हूं; और तुम्हारी........."

अहमद भी कुछ कम धृष्ट नहीं था । वह कहता है, "वाह ! वाह ! मेरी जान फ़तिमा ! तुम तो बिलकुल बिजलीकी तरह चमकी ! तुमको हमने अपना विचार बतला दिया, इसीसे ऐसा कहती हो ?"

वास्तवमें फ़तिमाकी ही सहायतासे अहमदने वह सारा काम किया था ; और यद्यपि फ़तिमा उसकी कुछ बहुत परवाह नहीं करती थी ; इतना ही क्यों ? बल्कि हृदयसे उसका तिरस्कार करती थी ; परन्तु फिर भी अहमद उसपर अत्यन्त प्रसन्न रहता था—यहांतक कि, उसके लिए वह चाहे जो कर सकता था—अपनी जानतक जोखिममें डाल सकता था ; और सदैव उसका ऐसा विश्वास था कि, हम चाहे जो काम करें; फ़तिमा हमारे अनुकूल ही रहेगी । उसके ऐसे विश्वासका कारण क्या था, सो फ़तिमाको ही मालूम !

अपने स्वामीके रंगमहलसे निकलकर अहमदने, जैसाकि हमने ऊपर बतलाया, अपना विचार निश्चित किया; और उस विचारको बतलाकर फ़तिमाकी सहायता मांगनेके लिए उसने उससे मुलाक़ात की, फ़तिमाने उसका उक्त विचार सुनकर उसको बहुत फटकारा, यह ऊपर हमने बतलाया। उस समय तो अहमद वहांसे चला गया; परन्तु उसका यह विश्वास अभी बना हुआ था कि, फ़तिमा इस समय यद्यपि उसके अनुकूल नहीं है; परन्तु फिर भी समझानेसे वह उसके पक्षमें आजायगी; और आज ही रातको वह अपना क्रूर विचार पूर्ण कर सकेगा। बस,अपने इसी विश्वासके अनुसार उसने अपना निश्चय क़ायम रखा। रात हुई; और अहमद फ़तिमाको तलाश करने लगा, पर फ़तिमा है कहां? उसका पता नहीं। उसने बहुत कुछ तलाश किया; पर फ़तिमाका कहीं ठिकाना नहीं। और नाना साहबकी कोठरीकी कुंजी तो फ़तिमाके ही पास थी, अब वह क्या करे? बेचारा बड़ा व्याकुल हुआ। कहीं हमारे मालिकका ही मन न बदल जाय। कल शायद उसके मनमें और ही कोई विचार आजाय, इसलिए उसका विचार बदलने न पावे; और हम यह काम कर लें, तभी ठीक! अहमदने सोचा कि, आज यद्यपि मालिकको यह अच्छा नहीं लगेगा; पर अन्तमें उसे अच्छा ही लगेगा और वह हमपर खुश होगा; इसलिए मालिककी प्रसन्नताका यह कार्य जितनी जल्दी हम कर लें, उतना ही अच्छा। बस,यही सोचकर वह बिलकुल उतावलासा होरहा था। परन्तु

फ़तिमाके न होनेके कारण उसकी उतावली कुछ काम नहीं कर सकती थी। अतएव फ़तिमाको ढूंढ़नेके लिए उसने सब प्रयत्न कर डाले, पर बेकार! उस रातको उसका पता ही न चला। अन्तमें बेचारा बिलकुल हताश होकर चुप बैठ रहा। परन्तु दूसरे दिन प्रातःकाल ही वह फ़तिमासे मिला; और कहा, "आज रातको हम लोग उसे इस संसारसे विदा कर दें। तुम इस काममें मुझे सहायता दो; और वह सहायता इतनी ही कि, जिस प्रकार उसको हम लोग लाये, उसी प्रकार उसकी लाश हम लोग चुपकेसे महलके बाहर लेजासकें। इतना प्रवन्ध तुम करदो; और बाक़ीका मैं देख लूंगा।" ये भयङ्कर शब्द, यह भयङ्कर विचार, सुनते ही फ़तिमाके शरीरके रोंगटे खड़े हो-गये। यहांतक कि उसके मुँहसे एक शब्द भी न निकलने लगा। परन्तु अन्तमें उसने यही कहा कि, "मैं इस बातमें तुमको मदद नहीं देसकती।" फिर भी अहमद उससे ढिठाई करके बोला, "जान पड़ता है, फ़तिमा, तुमको मालूम नहीं है। पर सरकारके मनमें अब यही बात है कि, यह कार्य होजाय, तो अच्छा। आजतक उनका व्यवहार शुद्ध था। इतने दिन उस ख़ूबसूरत मराठे सरदारको आश्रयमें रखकर (ये शब्द अहमदने ज़ोरसे हँसते हँसते कहे) उसके साथ उन्होंने कोई भी आक्षेपयोग्य व्यवहार नहीं किया। बिलकुल अदबके साथ ही वर्ताव किया; और यही देखकर मैं समझता था कि, हमारे सरकारका मन चाहे उसके प्रेममें फँसा हो, पर कोई

बुरी वासना नहीं। किन्तु आज मेरा यह भ्रम बिलकुल दूर होगया। वास्तवमें उनका भाव यही है कि, वह सरदार (फिर ज़ोरसे हँसकर) उनको मिल जाय, तो अच्छा। ऐसा यदि न होता, तो नानासाहबको दो दिनतक पड़ा रखकर सड़ाते रहना उनको कभी पसन्द न आता। फ़तिमा, तुम सब समझती हो! अपनेहीसे समझ लो—तुम्हारे मोहमें मैं पड़ गया, अब उससे छूटना कितना कठिन है! मेरी हालत देखो। आजतक सरकारका मन गोलमालमें पड़ा था; और इसीकारण उनके हाथसे कोई अशुद्ध बर्ताव नहीं हुआ; पर, फ़तिमा, अब वह हालत नहीं रही। अवश्य ही, पहलेपहल जब उन्होंने यह सुना कि, नानासाहबको हमलोग पकड़ लाये, तब वे कुछ क्रुद्धसे हुए; पर शीघ्र ही उनको सन्तोष भी हो गया। ऐसा ही अब भी होगा। यही नहीं, बल्कि मुझे विश्वास है कि, अन्तमें वे मुझपर बहुत प्रसन्न भी होंगे।" अहमद जिस समय यह सब बातें कह रहा था, फ़तिमा अपने किसी दूसरे ही विचारमें थी। अहमदकी बातोंकी ओर उसका ध्यान भी नहीं था। वह उस समय इसी विचारमें थी कि, अहमदको बहका-कर इस मौक़ेपर मैं कैसे पार पाऊँ; और इसीकारण अहमदका उपर्युक्त कथन यद्यपि ख़तम होनेपर आया—नहीं, नहीं, ख़तम भी होचुका—फिर भी यह बात उसके ध्यानमें नहीं आई! जब वह बिलकुल ही थम गया, तब कहीं वह अपने भानमें आई। उसे क्या करना होगा, सो अब वह निश्चित कर चुकी थी। अत-

एव वह एकदम अहमदसे कहती है, "अहमद, यह तुम्हारा विचार अभीतक मेरे मनमें नहीं आया। परन्तु तुम्हारे समान होशियार कोई नहीं, इसलिए मैं अपना भय अब एक ओर रखती हूं। किन्तु अहमद, ध्यानमें रखो, आधीरात बीत जानेके पहले इधर फटकनातक नहीं। आधीरात होते ही यहां आजाओ। मैं उस दिनकी तरह तुम्हारा रास्ता देखती रहूंगी। और फिर······फिर······फिर जो तुम्हारी मर्ज़ी हो, सो करना। मैं उस समय वहां न रहूंगी। हां, तुम्हारा काम जब होजाय, तब मुझे बुलाना। मैं आकर दरवाजा लगा लूंगी।" फ़तिमाकी अनुकूलता प्राप्त होते ही अहमद अत्यन्त आनन्दित हुआ। अब सब काम ठीकसे होजायगा, यह उसको विश्वास होगया। हमारा यह काम जब मालिक सुनेगा, तब अन्तमें हमपर बड़ा प्रसन्न होगा, इस बातका विश्वास उसे था ही; और इसी विश्वासमें—अब आधीरात कब हो और कब नहीं, इस बातकी प्रतीक्षा करते हुए, वह अपने कामको चला गया।

इधर फ़तिमा उस दिन, दिनभर अस्वस्थ रही। अन्तःपुरमें उसकी मालकिनतकने पूछा, "फ़तिमा, आज तेरी यह दशा क्यों है?" उसकी अस्वस्थता उसकी चेष्टासे ही दिखाई देरही थी। उसने अपने मनमें जो विचार स्थिर किया था, उसीके विषयमें बार बार उसे आशंका होरही थी कि, देखना चाहिए, मेरा यह विचार कहांतक सिद्ध होता है; और कहांतक

नहीं। बीचमें उसके मनमें एक और भी विचार आया। कई बार उसने सोचा कि, न हो, यह अहमदका क्रूर विचार अपने मालिकके ही कानोंमें डाल दूं—वह प्रायः इस कामको नहीं होने देगा। वह अपने मालिकको अत्यन्त ही शुद्ध मनका व्यक्ति समझती थी; परन्तु साथ ही साथ यह भी उसे मालूम था कि, इस एक विषयमें उसका व्यवहार यद्यपि अबतक बिलकुल शुद्ध है; तथापि मन शुद्ध नहीं है। इसलिए उसने सोचा कि, शायद मैंने कह दिया; पर न जाने उसका क्या परिणाम हो। अतएव अन्तमें उसने अपना पहला ही विचार निश्चित रखा। इस दिन फ़तिमा तीसरे पहरसे ही न जाने कहां चली गई। अन्तःपुरमें कई बार उसका काम लगा; पर उसका पता ही न था। आठ घड़ी रात जानेपर कहीं जाकर वह लौटी। मालकिन उसपर बहुत ख़फ़ा हुई, पर कोई न कोई बहाना बतलाकर उसने उसे समझा लिया। महलमें जब चारों ओर सब लोग सोगये, तब लगभग-ग्यारह बजेके क़रीब पीछेका दरवाजा खोलकर उसने किसीको अन्दर लेलिया। आधीरातके बाद, कुछ समयमें, अहमद भी उससे मिला। इसके बाद वे दोनों उसी तहख़ानेकी ओर गये, जहां नानासाहब क़ैद थे। उनके पीछे पीछे एक और व्यक्तिकी छाया थी।

इक्यावनवां परिच्छेद ।
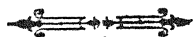
नानासाहबका छुटकारा ।

नानासाहब अपनी कोठरीमें, किसी रतौंधी आनेवाले मनुष्यकी तरह, बैठे थे। जिस दिनसे वे उस कोठरीमें आये, उस दिनसे नींदका तो उन्हें नामनिशान भी न था ; और मन इतना अशान्त होरहा था कि, रातदिन उसमें हज़ारों प्रकारके विचार आते रहते थे। कोई भी विचार घड़ी-आध घड़ीके लिए भी ठहरता नहीं था। उनके मनमें कौन कौनसे विचार आरहे थे; और कौन कौनसे नहीं, इसका विशेष वर्णन देनेकी यहां आवश्यकता नहीं। आजतकका वृत्तान्त यदि पाठकोंने ध्यानपूर्वक अपने मनमें रख लिया होगा, तो वे नानासाहबके सम्पूर्ण विचारोंको, स्वयं ही, अपने मनमें, बहुत अच्छी तरहसे, चित्रित कर लेंगे। किसी कारणसे भी यदि द्वार ज़रा भी खटकता, तो वे यही समझ लेते कि, अब देखना चाहिए, कौनसा मौक़ा हमारे ऊपर आता है; और इस विचारसे वे, बिलकुल चौकन्ने होकर, आनेवाले संकटका मुक़ाबिला करनेके लिए, बिलकुल तैयार होकर, बैठ जाते थे। इधर आज बिलकुल आधीरातका समय था; और दरवाजा एकदम खटका, अतएव तुरन्त ही कुछ आश्चर्य और कुछ भय, इन्हीं दोनों विकारोंसे उनका मन व्याप्त होगया। शायद, फ़तिमाको हमपर दया आई हो; और

अपने कहनेके अनुसार अब हमें वह छुड़ानेके लिए आरही हो, यह एक बार उनके मनमें आया; पर दूसरे ही क्षणमें उनके मनमें यह भी आया कि, शायद वही व्यक्ति हमारा अपमान करनेके लिए, अथवा शायद हमारा ख़ून ही करनेके लिए आरहा हो कि, जिसने हमको धोखा देकर यहां क़ैद कर रखा है। यह दूसरा विचार मनमें आते ही नानासाहब एकदम, आकुलताके साथ, उठकर खड़े होगये। इतनेमें दरवाजा खुला; और नंगी तलवार लिये हुए, फ़तिमाके साथ, अहमद भीतर प्रविष्ट हुआ।

अहमद अपने हाथमें एक छोटीसी लालटेन लिये हुए था, उसको नानासाहबके मुखके सामने ऊपर उठाकर, मानो वह अपनी बलिको एक बार निरखकर देखना चाहता है, और फिर नानासाहबको सम्बोधन करके कहता है, "अबे निर्बलहृदय मूर्ख! उठ। जिस दिनसे मैंने तुझे यहां लाकर डाला, उस दिनसे किसी दिन मैं तेरा समाचार लेनेके लिए नहीं आसका; पर आज तेरी पूरी पूरी ख़बर लूंगा। मालिकका हुक्म अब मुझे मिल चुका है। इतने दिन तुझको व्यर्थके लिए, कीड़ेकी तरह सड़ता हुआ, यहां छोड़ रखा था। अरे कायर बेवकूफ़! तुझको शरम भी नहीं आती! तेरी औरत तुझे छोड़कर, तेरा घर-द्वार छोड़कर, उसके पास रहती है, अब क्या वह तुझको ज़िन्दा ही छोड़ देगा!"

ये अन्तिम शब्द सुनते ही नानासाहबकी चेष्टा विलक्षण ही दिखाई देने लगी। उनकी आंखें अन्धी होगईं, कान बहरे हो-

गये, हाथ-पैरोंकी शक्ति गलित होगई। हम हैं कहां? यह हो क्या रहा है? हमसे बात कौन कर रहा है? इत्यादि किसी बातका भी उनको ज्ञान नहीं रहा। क्षणभरके लिए सारा संसार उनको शून्यसा भासने लगा। धीरे धीरे उनकी गर्दन लचती गई; और ठुड्डी हृदयमें आकर लगी; और इसके कुछ देर बाद फिर ऐसा जान पड़ा कि, मानो उनके मनमें किसी विचारका संचारसा होरहा है। अहमद अवश्य ही उनकी ओर देख देखकर आनन्दित होरहा था। वह मानो मन ही मन यह सोच रहा था कि, जिस बलिका हम वध करना चाहते हैं, उसको बार बार अपमानित करके पहले इसका कौतुक देख लेना चाहिए। उसने पहले ही सोच लिया था कि, इसके हाथमें हथियार इत्यादि कुछ है ही नहीं; और हम इस प्रकार जब अपमानजनक बातें कहेंगे, तब अवश्य ही इससे इसका हृदय और भी बुरी तरहसे घायल होजायगा; और इस प्रकार जब यह बिलकुल व्यथित होकर व्याकुल होजायगा, तब फिर हम अपना क्रूर कार्य सहजहीमें कर सकेंगे; और इसकी ओरसे कोई प्रतिबन्ध भी नहीं होसकेगा। बस, यही सोचकर मानो अहमद उनकी ओर विस्मित नेत्रोंसे देख रहा था। परन्तु कुछ देर बाद उसे ऐसा जान पड़ा कि, मानो उसने जो शब्द अभी कहे थे, उन्होंने अपना पूरा पूरा काम नहीं किया; और इसीलिए वह फिर कुछ आगे बढ़कर कहता है, "अरे नादान, मैं तो छुटपनसे ही तेरी ऐसी प्रसिद्धि सुना करता था कि, मुसलमा-

नोंका यत्किंचित् भी अपमान तुझसे सहन नहीं होता। मुसलमानोंके हाथसे राज्य छीननेके लिए ही तू उस पूनेवाले लुटेरेके गोलमें जामिला है। और स्वयं तेरी औरत आज कितने दिनसे मेरे मालिकके पास रह रही है। अब तेरा वह क्रोध, वह सन्ताप, कहां चला गया? चूड़ियां पहनकर बैठ रहता, तो आज मेरे समान व्यक्तिको तुझे पकड़ लानेकी भी आवश्यकता न रहती।"

अहमद ज्यों ज्यों इस प्रकारके कटुवचन कहने लगा, त्यों त्यों नानासाहबकी अवस्था और भी अधिक भयंकर होने लगी। पहलेकी हतवीर्यता वह न जाने कहां चली गई; और अब वे एकदम सन्तप्त होकर अहमदसे कहते हैं, "अरे हरामख़ोर, ज़बान सम्हालकर बोल। मैं निःशस्त्र हूं। तुम सात-आठ आदमी मिलकर दग़ाबाज़ीसे मुझे पकड़ लाये हो; और निःशस्त्र करके इस जगह रखा है, इसीपर मत भूलो। तूने अभी जो कुछ कहा, सो चाहे जिस उद्देश्यसे कहा हो; किन्तु इससे मुझपर तेरे अनन्त उपकार हुए हैं। मेरा शत्रु कौन है, मेरे सारे सुखका सत्यानाश करनेवाला कौन है, सो मुझे पूरा पूरा मालूम होचुका। ठीक है, अब आज या तो तू ही इस जगह मेरा बध कर, अथवा मैं ही तेरी लाश गिराकर, उसपर पैर रखकर, बाहर निकलूंगा; और उस तेरे दुष्ट, हरामख़ोर, बेईमान मालिककी पूरी पूरी ख़बर लूंगा! तूने कहा, वैसा ही सन्देह मुझे भी हुआ था, पर अब उसका पूरा पूरा निर्णय होगया।"

इतना कहकर नानासाहब एकदम अहमदके ऊपर दौड़

पड़े। अहमदके हाथमें नंगी तलवार थी ही, उसे एकदम उठाकर उसने आगेकी ओर बढ़ाया; और तिरस्कारपूर्वक हँसता हुआ बोला, "वाह वा! वाह वा! मर्दानगीकी बातें मारनी तो तुझे ख़ूब आती हैं। मेरी लाशपर पैर रखकर जाना तो तेरे लिए असम्भव ही है—हां, तेरी लाश उठाकर मुझे कहीं न कहीं अवश्य गाड़नी पड़ेगी; और उसका सारा प्रबन्ध भी मैं कर आया हूं। अरे नादान, मैं यहां आया हूं, सो अब तेरी लाश गिराये बिना थोड़े ही जानेवाला हूं?"

हम निःशस्त्र हैं; और इसके हाथमें तलवार है; इसलिए हमको यदि अपना उद्देश्य सिद्ध करना है, तो जो कुछ करना हो, विचार करके ही करना चाहिए! यह विचार क्षणमात्रके लिए नानासाहबके मनमें आया; और वे कुछ पीछे हट गये। परन्तु क्रोधके मारे उनका चित्त और नेत्र अबतक बिलकुल अन्धे होरहे थे। अब इस पशुकी अपमानजनक बातें सुननेसे और कोई लाभ नहीं। जो कुछ होना हो, सो शीघ्र ही होजाना चाहिए। जिस बातके विषयमें बीजापुर आनेके बाद हमको भय हुआ था, उस बातका निर्णय इसकी बातोंसे होगया। अब हमारे हाथमें सिर्फ इतना ही रह गया कि, हम अपने पिता, स्वयं अपने; और अपनी प्रिय पत्नीके अपमानका बदला निकालें। इसके सिवाय और कुछ नहीं। ऐसी दशामें यदि हम यहीं मर जायँ, तो भी कोई हानि नहीं; और न मरते हुए यदि इसकी लाश गिराकर यहांसे निकल जायं, तो भी अच्छा ही है!

उपर्युक्त विचार यहां लिखनेमें जितना समय लग गया, उसका शतांश समय भी उनके मनमें उक्त विचारोंके आनेमें नहीं लगा होगा। उनके नेत्र बिलकुल लाल होगये; और प्राण देनेको वे बिलकुल तैयार होगये। अहमद इस अभिमानमें आकर, कि उसके हाथमें नंगी तलवार है, अभी और भी नाना-साहबको चिढ़ानेका विचार कर ही रहा था, कि इतनेमें नाना साहब एकदम जाकर उसकी कमरमें लिपट गये। उनके शरीरमें न जाने कहांका जोश आगया! अहमद उनके उस झपाटेको सहनेके लिए तैयार न था। परन्तु उसके होते ही, उससे पूर्ण-तया निकल जानेके लिए; और एकबारगी नानासाहबको ख़तम कर देनेके हेतुसे, उसने अपना वह हाथ वार करनेके लिए ऊपर उठाया कि, जिसमें तलवार पकड़े हुए था; पर चमत्कार क्या हुआ कि, उसका वह हाथ किसी प्रकार भी नीचे न आने लगा। हां, वह स्वयं अवश्य ही, नानासाहबके उस झपाटेके साथ ही, धड़ामसे नीचे आगिरा। उसका हाथ किसीने ऊपर ही ऊपर पकड़ लिया। यह काम फ़तिमाका नहीं था, इसका उसे विश्वास था; क्योंकि जिस हाथने उसका हाथ पकड़ा था, वह हाथ ऐसा-वैसा नहीं था; किन्तु जैसे कोई फ़ौलादी पंजा मज़बूतीसे कस देवे, वैसी ही उसकी पकड़ थी। अस्तु। नानासाहब तो उसे ज़मीनमें रगड़ रहे थे; और उधर दूसरा हाथ उसके हाथसे तलवार छीन रहा था। अहमदको इस बातके देखनेका भी अवकाश न मिला कि, वह हाथ किसका है; और इधर उस

फ़ौलादी हाथने, बड़ी सफ़ाईके साथ, उसके हाथसे तलवार निकाल ली। उधर नानासाहब उसको चित करके उसकी छातीपर चढ़ बैठे। अब दशा बदल गई। अभीतक तो वह यह सोच रहा था कि, हम चाहे जो करेंगे, नानासाहबको हम चाहे जिस प्रकार मार लेंगे, इसलिए पहले ऐसी ऐसी बातें कहो कि, जिससे इसके चित्तको दुःख हो; और इस प्रकार इसकी विडम्बना करके, उसका कौतुक देखकर, तब हम इसका बध करें—हमारा प्रतिबन्ध करनेवाला यहां कोई है ही नहीं, इस बातका उसे विश्वास था; परन्तु अब सब मामला बिलकुल उलट गया। अहमदने सोचा कि, अब हमारे प्राण इसके हाथमें हैं, इससे यदि छुटकारा पाना है, तो इससे चिरियां-विनती करके इसके हाथ-पैर पड़ना चाहिए। इसके सिवाय छुटकारा नहीं। आख़िर वह था तो अर्दलीका सिपाही ही। युद्धकी कला उसमें कहांसे आती? हां, बड़े सरदारके पास रहता था, इसलिए एक प्रकारकी ऐंठ उसमें थी। और उसीके बलपर उसे विश्वास था कि, हमने जिस व्यक्तिको पकड़कर काल-कोठरीमें डाल रखा है, उसको जहन्नुमरसीद करनेमें हमको कोई बहुत परिश्रम नहीं पड़ेगा। परन्तु मौक़ा आनेके पहले विश्वास कर लेना निराली बात है। मौक़ा आजानेपर—और ऐसा मौक़ा आजानेपर कि, जब सब मामला ही उलट पड़ा—उस अर्दलीके सिपाहीमें बहादुरी कहां रह सकती थी? अहमद तुरन्त ही पिड़ी बोल गया। पहले वह यही देखने लगा कि, हमारे साथ फ़तिमा आई थी,

सो यहां कहीं खड़ी है अथवा नहीं। परन्तु फ़तिमाकी मूर्ति तो उसे वहां कहीं दिखाई नहीं दी—हां, उसकी जगह एक काला-कलूटा आदमी अवश्य उसे खड़ा हुआ दिखाई पड़ा कि, जिसके हाथमें उसकी लालटेन और उसकी तलवार भी थी। उस व्यक्तिको देखते ही अहमद समझ गया कि, फ़तिमाने हमें अच्छा धोखा दिया। परन्तु हमारी तलवार और लालटेन लिये हुए जो मनुष्य हमारी तरफ अत्यन्त क्रूरतापूर्वक देख रहा है, वह मनुष्य कौन है, सो कुछ अहमदके ध्यानमें न आया। इसके सिवाय नानासाहबने उसके विचारको वह अवकाश भी नहीं दिया कि, वह विचार करके उस मनुष्यको पहचान पाता। उसकी छातीपर अपना घुटना और गर्दनमें हाथ लगाकर नानासाहबने कहा, "बतला अब। अभीतक जो जो कुछ बतला रहा था, सब अच्छी तरह बतला। नहीं तो जैसे कुत्तेको मारते हैं, उसी प्रकार अभी तुझे मारे डालता हूं।" इसके बाद उन्होंने फिर कहा—"अपने मालिकके विषयमें जो जो कुछ तूने बतलाया, सब सच है न? तूने बतलाया, वहींतक उसने हमारी विडम्बना की है न?"

इस प्रकार नानासाहब उससे बार बार प्रश्न कर रहे थे; पर कौन बतलाता है; और कौन सुनता है! न उसको उत्तर देनेका अवकाश, न नानासाहबको उसके सुननेका अवकाश। नानासाहब एकके बाद एक प्रश्न उससे कर रहे थे; और प्रत्येक प्रश्नके साथ उसका गला भी और ज़ोर ज़ोरसे दबाते

ज़ाते थे। बेचारा बहुत घबड़ाया। क्या उत्तर दे, क्या कहे, उसे कुछ न सूझा; और सूझा भी हो, तो गला उसका इस समय इतने ज़ोरसे दब रहा था कि, बेचारा एकाक्षरी उत्तर भी देना चाहता, तो भी नहीं देसकता था। उसने कुछ बोलनेका प्रयत्न अवश्य किया; और इसकारण उसका कण्ठ कुछ घर-घराया भी। नानासाहबने समझा कि यह 'हां, हां' करके उत्तर देरहा है, अतएव उन्हें और भी जोश आया; और पहलेसे भी अधिक उनके हाथोंने अहमदका गला दबाया। इतनेमें उस महाशयके मुखसे, जोकि वह लालटेन और तलवार लिये खड़ा था, ये वचन निकले—"अवश्य, अवश्य। इसने जो कुछ पहले कहा, उसमें कोई विशेष मिथ्या बात नहीं है। इसके बेईमान मालिकका ऐसा ही प्रयत्न जारी है।" परन्तु उसके इन वचनों-का पूर्वार्द्ध ही नानासाहबके कानोंमें पड़ा। उत्तरार्द्ध सुननेकी उन्हें आवश्यकता ही नहीं मालूम हुई। इसके बाद उन्होंने अह-मदके मुक्के लगाकर कहा, "बच्चा अर्दली, तेरे प्राण लेकर मैं अपने हाथ अपवित्र नहीं करूंगा। जा, तुझको ऐसा ही छोड़ देता हूं। परन्तु हां, मैं यहांसे निकल जाऊं, और तू मेरे पीछे आ न सके, इस हेतुसे तुझको बेहोश किये देता हूं। ऐसे नीच मालिककी ऐसी नीच चाकरी बजानेवाले अर्दलीको इतना ही दण्ड काफी है।" इतना कहकर उन्होंने उसकी छातीमें फिरसे दो-तीन मुक्के लगाये; और उसको अचेत तथा बेहोश कर दिया। इसके बाद वे वहांसे निकल जानेके लिए दरवाजेमें आते हैं, तो

सामने स्वयं रणदुल्लाख़ां खड़ा है कि, जिससे बदला निकालनेके लिए अभी क्षणभर पहले उन्होंने निश्चय किया था!

पिछले एक परिच्छेदमें हमने बतलाया था; और पाठकोंको याद होगा कि, रणदुल्लाख़ांका चित्त जब उस एक विकारके वश होकर अशान्त हुआ, तब उसने उसे क्षणिक शान्ति प्रदान की। परन्तु वह सचमुच केवल क्षणिक ही थी। रणदुल्लाख़ांका मन वास्तवमें बहुत सच्चा था; और जिस विकारने उस समय उसे पछाड़ रखा था, वह यदि इतना ज़बरदस्त न होता; और अहमदने यदि अपनी मोहक अर्थात् घातक वाणीसे उसके मनको उस विकारकी ग़ुलामीमें और भी अधिक न डाल दिया होता, तो रणदुल्लाख़ां ज्यों ही यह सुनता कि, नानासाहब उसके महलमें लाकर क़ैद कर रखे गये हैं (और सो भी उसके ही अर्दलीद्वारा, एक नीच उद्देश्यसे) त्यों ही वह स्वयं उनके पास जाकर उनको छुड़ा देता। परन्तु वास्तवमें रणदुल्लाख़ांके मनकी सच्ची दशा उस समय क्या थी, सो पाठकोंको हमने बतला दी थी। परन्तु उसकी वही दशा बहुत देरतक स्थिर नहीं रही। उसने कुछ सोच-समझकर क्षणभरके लिए, जैसाकि हमने पीछे बतलाया, अपने मनको शान्ति प्रदान की थी। परन्तु उस क्षणके व्यतीत होते ही फिर उसका मन उसे सताने लगा। मनमें आनेवाले सम्पूर्ण विचारोंको, जहांतक होसका, दूर हटानेका उसने प्रयत्न किया; और इसी प्रयत्नमें धीरे धीरे सन्ध्या भी होगई। जो सुविचार उसके मनमें आ आकर

बराबर उसके मनको टोंच रहा था, उस सुविचारको, जहांतक उससे होसकता था, वह दूर ही दूर हटा रहा था। उस रातको उसे नींद नहीं आई। क्षण क्षणपर मानो वह विवेककी विडम्बना ही करता रहा। परन्तु चूंकि स्वभावसे वह सदाचारी था, अतएव अन्तमें उसे स्पष्ट दिखाई दिया कि, यह हमारे हाथसे एक बड़ा भारी पाप होरहा है; और इतना समय व्यतीत होजानेपर भी, दूसरे दिन, उसका मन सद्भावोंकी ओर झुका। उसने सोचा कि, नानासाहब अब चूंकि हमारे पंजेमें आ ही गया है, अतएव अब उसके पास जाकर दोचार अच्छी अच्छी बातें करें; और राज्यके विरुद्ध चूंकि उसका मन ख़राब होरहा है, इसलिए एक बार फिर उसे उचित मार्गपर लानेका प्रयत्न करें। उसकी स्त्रीको उसके हाथमें सौंप दें; और उसको यह भी बतलाकर सन्तोष दिलावें कि, उसकी स्त्री कितनी सुयोग्य है। इसके सिवाय उसके पितासे उसकी फिर सलाह करा दें; और बादशाहके विषयमें उसके मनमें फिरसे आदर-भाव उत्पन्न करके उसको कोई मनसबदारी दिला दें। इतना यदि हम कर लेवें, तो सचमुच ही हमारे हाथसे यह एक बड़ा भारी सत्कार्य होजायगा; और इधर स्वामिभक्तिका भी कर्तव्य पालन होगा। यदि सच पूछा जाय, तो अहमदने जिस समय आकर हमें वह समाचार बतलाया था, उसी समय हमें उसके पास जाना चाहिए था; परन्तु ऐसा हमसे नहीं होसका; क्योंकि हम एक बड़े भारी मोहपाशमें पड़ गये थे। देखो, अब-

तककी अपनी सारी पवित्रता हमने ख़राब कर ली; और इतना समय व्यर्थके लिए पापविचारोंमें विताया। इस प्रकारके विचार अब रणदुल्लाखांके मनपर अपना प्रभाव जमाने लगे। यही नहीं, बल्कि यह सोच सोचकर कि, ऐसे ही विचार जब पहले हमारे मनमें आरहे थे, तब हम उन विचारोंका निरादर करते रहे, वह मन ही मन पश्चात्ताप भी करने लगा। अहमद इस समय कहां होगा? उसको बुला लानेके लिए उसने अपने एक नौकरको भेजा। पर अहमदका कहीं पता ही न चला। हमारी सम्मति सहजहीमें मिल जायगी, यह सोचकर उसने, हमसे बिना पूछे ही, कोई घोर कृत्य तो नहीं कर डाला? नानासाहबके प्राण तो उसने नहीं लेलिये? यह भयंकर विचार अब उसके सिरमें आप ही आप आकर खड़ा होगया, जिससे उसकी चित्तवृत्ति अत्यन्त ही विक्षुब्ध होगयी। देखो, हम सद्बुद्धिके वश नहीं हुए, इसलिए हमारे हाथसे जो सत्कार्य और स्वामिभक्तिका कार्य होनेवाला था, वह एक दिन और आगेके लिए बढ़ गया। और सम्भव है, इसी एक दिनके आगे बढ़ जानेसे कहीं हमारे ऊपर उक्त घातक प्रसंग आगया हो! नानासाहबके समान शूर पुरुषकी हत्याका पाप कहीं हमारे सिर न आजावे! अहमद ऐसा करनेमें भी नहीं चूकेगा। वह हमको प्रसन्न करनेके लिए सब कुछ कर सकता है; और इसका ज्ञान भी उसे पूरा पूरा था। इस प्रकारके विचार ज्यों ज्यों रणदुल्लाखांके मनमें आने लगे, त्यों त्यों उसकी यह भावना और भी दृढ़ होती गई कि,

सचमुच ही अहमदने ऐसा कोई न कोई घातक कर्म किया होगा; और उसका पाप हमारे सिर आवेगा। देखो, एक ही दिन सद्बुद्धिका निरादर करनेसे ऐसा भयंकर प्रसंग आ उपस्थित हुआ! आह! बेचारा रणदुल्लाख़ां! चौबीस घंटे उसने सद्बुद्धिकी अवहेलना की, इससे वह घातक कर्म तो यद्यपि नहीं हुआ कि, जिसका उसे भय होरहा था; परन्तु उसे स्वप्नमें भी नहीं मालूम था कि, दूसरा, लगभग उतना ही, घातक कर्म अवश्य वहां होचुका होगा।

अहमदको ढूंढ़नेके लिए उसने, एकके बाद एक, कई आदमी भेजे; पर अहमदका कहीं पता नहीं चला। एक वार अहमदको अपने मालिकका सन्देशा मालूम भी हुआ; पर इस भयसे कि, यदि हम सामने गये तो, शायद फिर उसकी बुद्धि पलट न जाय, वह उसके आगे नहीं गया। शाम होगई, अहमदका पता नहीं। रात होगई, अहमद कहीं दिखाईतक नहीं दिया। रणदुल्लाख़ांको उसपर बहुत क्रोध आया। परन्तु क्रोधसे थोड़े ही काम चलता था? आवश्यकता तो अहमदकी थी। उसने बहुत कुछ तलाश कराया। रात भी बहुत होगई। इतनेमें एक नौकरने आकर बतलाया कि, अहमद और फ़तिमा अमुक ओरके तहख़ानेकी तरफ गये हैं। रणदुल्लाख़ां तत्काल उठा; और उसी तहख़ानेकी ओर चला। दरवाजेके पास आता है कि, इतनेमें, जैसाकि ऊपर बतलाया, नानासाहबका और उसका सामना होगया। रणदुल्लाख़ांकी ओर नानासाहबकी

नज़र गई। उस समय नानासाहबके मनमें कैसे कैसे विचारोंका स्फोट हुआ होगा, इसको पाठकगण स्वयं कल्पना करें। अहमदको आटेकी तरह गूंधकर अभी वे उठे ही थे; और दरवाजेके बाहर क़दम रखते ही उनके सामने वह दुश्मन आता है, जिसके विषयमें अभी उन्हें मालूम हुआ था, कि उसीने उनके सारे सुखोंका सत्यानाश किया; और जिससे बदला लेनेके लिए, क्रुद्ध होकर, उन्होंने अभी हालहीमें वह प्रतिज्ञा की थी कि, जिसके शब्दोंकी प्रतिध्वनि अबतक उनके हृदयमें गूंज रही थी। ऐसा दुश्मन जब सामने आगया, तब फिर क्या कहना है? "एक वार दो टुकड़े"—यही विचार एकदम पहले उनके मनमें आया; और उन्होंने अहमदसे छीनी हुई तलवार, जोकि उनके उस दूसरे सहायकके हाथमें थी, लेनेके लिए हाथ बढ़ाया। पर उनका वह सहायक अभी नानासाहबके समान क्रोधसे बिलकुल सन्तप्त नहीं था। उसके मनकी दशा अभी शान्तिपूर्वक विचार करनेयोग्य थी। इसलिए उसने तलवार नानासाहबको छीनने नहीं दी। इतना ही नहीं, बल्कि उसने उन्हें कुछ पीछे हटाकर कहा, "ठहर जाओ, यह स्थान और यह समय उपयुक्त नहीं।" इधर रणदुल्लाख़ांको यह सब हाल देखकर कैसा मालूम हुआ होगा, पाठक इसकी कल्पना करें। नानासाहबको जीवित देखते ही उसके मनकी एक बड़ी भारी चिन्ता दूर होगई। अभीतक उसको यह भय था कि, हमारे ही घरमें, हमारे नौकरके हाथसे, नानासाहबका बध होरहा है; और इस बधका पाप

हमारे ही मत्थे आता है—अब उसका वह भय दूर होगया; पर इस बातका उसे बड़ा अचम्भा हुआ कि, नानासाहब इस प्रकार कैसे छूटे जारहे हैं! अतएव अब यह विचार एकदम उसके मनमें आया कि, आगे बढ़कर नानासाहबसे वह दो-चार अच्छी अच्छी बातें करे; और उनको दरबारमें चलनेके लिए कहे। बस, इसी विचारसे उसने नानासाहबको सम्बोधन करके—उनको पुकारकर—सुन्दर सुन्दर शब्दोंसे बोलना प्रारम्भ किया।

इधर नानासाहबका चित्त पहलेहीसे विलक्षण विक्षुब्ध हो-रहा था; और रणदुल्लाख़ांके विषयमें उनका मन अत्यन्त दूषित होरहा था। उनका ख़याल होचुका था कि, रणदुल्लाख़ां हमारा एक कट्टर दुश्मन है। इसीने हमारे पिताको इतने दिनतक नाना प्रकारके प्रलोभन देकर अन्तमें उनको क़िलेसे हटा दिया; और हमारी प्रि—(आगेके शब्द उनसे मनमें भी उच्चारण नहीं किये गये), हमारा सम्पूर्ण सुख, हमारे सम्पूर्ण सुखकी आशातक, इसीने नष्ट कर दी। वही अधमा-धम अब हमारे सामने आकर, बड़े प्रेमसे मीठी मीठी बातें कर रहा है! यह हाल देखते ही नानासाहबका पित्त इतना भड़का कि जितना भड़कना सम्भव था; और वे आगे-पीछेका कुछ भी विचार न करते हुए रणदुल्लाख़ांसे बोले, "ऐ शैतान, तू अब चुपकेसे मुझे जाने दे, तेरी सारी कारस्तानी मुझे मालूम होगई; और तेरे इस नौकरने ही मुझे बतलाई। यदि चुपकेसे

जाने देगा, तो ही मैं और तू, दोनों कुछ दिन और जीवित रह सकेंगे। तेरे पंजेमें—तेरे घरमें—मैं इस समय पड़ गया हूं, इस समय यदि मैं तेरे ऊपर आक्रमण करूंगा, तो सारे घरमें शोरगुल मच जायगा; और तेरे सब आदमी यहां जमा हो-जायँगे, तथा मुझे व्यर्थके लिए बहुत कष्ट देंगे। मैं अकेला हूं, इसलिए यदि तेरे शरीरमें कुछ भी भलमनसाहत हो, तेरे बापकी यदि कुछ भी भलमनसाहत तेरे शरीरमें आई हो, तो तू इस समय मुझे जाने दे। अबतक तूने मेरी इतनी विडम्बना की है, कि तेरा मुख देखनेके साथ ही तेरे रक्तसे मुझे स्नान कर लेना चाहिए। किन्तु—किन्तु यह मौक़ा नहीं है। मराठोंकी स्त्रियों-को तुम लोगोंने एक प्रकारसे अपना खिलौना ही बना रखा है, पर याद रख—इस बार तुझसे किसका सामना हुआ है, तूने किस भयंकर सर्पकी पूँछपर पैर रखा है—इसका विचार कर। कभी न कभी समरांगणमें मेरा सामना कर; और फिर, ऐ दुष्ट, देख ले कि, किस प्रकार मैं तेरी इस मानखंडनाका परिशोध, तेरे रक्तकी छींटोंको उड़ाकर, करता हूं!"

ये शब्द कहते हुए नानासाहबका सारा शरीर क्रोधसे थर थर कांप रहा था। जिस सहायक पुरुषने अबतक उनकी सहायता की थी, वही इस समय भी, उनके मन और शरीरको सहारा देकर, उनको निकाल लेजानेका प्रयत्न कर रहा था। परन्तु—यह सारा मामला क्या है—रणदुल्लाख़ांके कुछ ध्यानमें न आया। वह बिलकुल चकित होकर बराबर स्तब्ध खड़ा था।

इतनेमें फिर वह नानासाहबसे कहता है, "क्या? मैंने—मैंने तेरे सुखका सत्यानाश किया? तेरी मानखंडनाकी? तेरे बापको धोखा देकर यहां लाया? तू कहता क्या है? अरे बाबा, मैं यदि उसको इस प्रकार लाया होता, तो न जाने आज दिन उसकी क्या दशा हुई होती। तुझको कुछ कल्पना भी है? मैंने तेरे सुखका नाश किया? किसने तेरे मनमें यह बात भर दी?........"

अन्तिम शब्द कहते हुए उसकी ज़बान कुछ लड़खड़ाई; और नानासाहबका शरीर एक दम जल उठा। इसकारण उनके मुँहसे एक शब्द भी न निकलने लगा। हां, होंठ थर थर कांप रहे थे। इतनेमें उनकी सहायता करनेवाले पुरुषने आगे बढ़कर रणदुल्लाख़ांसे कहा, "रणदुल्लाख़ां, तेरी ज़बानतक—चूंकि तेरा मन तुझे टोंच रहा है—यह बात कहते हुए लड़-खड़ा रही है। यदि तेरे अन्दर अब भी कुछ आदमियत हो, तो इसको इस समय तू चुपके जाने दे। जिस प्रकार तेरी एक दुष्टताके कारण यह अपने सुखसे हाथ धो बैठा है, उसी प्रकार मैं भी एक दूसरे दुष्टकी नीचताके कारण अपने सुखसे वंचित होगया हूं। कभी न कभी मौक़ा आयगा, और हम दोनों ही अपने शत्रुओंकी गर्दनें उड़ाकर उनका बदला चुकायेंगे।" उस पुरुषने और अधिक कुछ नहीं कहा। हां, उसने अपने हाथकी तलवार अवश्य ही मानो कुछ ऊपरकी ओर उठाई। रणदुल्लाख़ां ज़रा आश्चर्यचकित होकर उसकी ओर देखता है,

इतनेमें उसके पीछेकी ओरसे एक अत्यन्त मंजुल, परन्तु आर्त-स्वर कानोंमें आता है, जिसे सुनते ही वह अपनी गर्दन पीछेकी ओरको मोड़कर देखता है, तो एक दिव्य परी, अपनी दासीके हाथका सहारा लिये, खड़ी हुई है! जो मंजुल और आर्त-स्वर अभी सुनाई दिया था, उसको उसने पहचान लिया था; और अब—जबकि वह पीछे मुड़कर देखता है, तो वही—उसकी बहन मेहरजान, फ़तिमाके हाथका सहारा लिये, पीछे खड़ी है! उसको देखते ही स्वाभाविक ही रणदुल्लाख़ांके मुखसे—"कौन? मेहरजान? तू यहां कैसे?"—यह प्रश्न निकला। इधर उसके मुखसे भी, यही देखकर कि, मेरा भाई यहां खड़ा है, उपर्युक्त मंजुल और आर्तस्वर निकला था। यह मामला क्या है? रणदुल्लाख़ां आश्चर्यमें है, इतनेमें इधर नानासाहब और उनका वह सहायक, दोनों, उस परीकी ओर एक एक नेत्रकटाक्ष फेंक कर, चलते बने। आधीरात उलट गई थी। ऐसे समयमें हमारी बहन, अपना अन्तःपुर छोड़कर, यहां क्यों आई? रणदुल्लाख़ांके आश्चर्यका ठिकाना न रहा। फ़तिमा उस सुन्दरीके साथ ही थी। वह भी क्या उत्तर दे, सो कुछ उसे सुझाई न दिया। उसे स्वप्नमें भी ख़याल न था कि, रणदुल्लाख़ां इस समय वहां मौजूद होगा; परन्तु आकर देखती है, तो वहां सचमुच ही वह खड़ा हुआ है! अब क्या कहा जाय? हम क्यों आईं? इस प्रश्नका उत्तर क्या दिया जायगा, सो कुछ उन्होंने सोच तो रखा ही नहीं था; क्योंकि उनको क्या मालूम कि, रणदुल्लाख़ां वहां

आकर खड़ा है! इधर रणदुल्लाख़ांकी चेष्टा कुछ बहुत ही चमत्कृतसी दिखाई दी। वास्तवमें रणदुल्लाख़ां मेहरजानको बहुत प्यार करता था। स्वप्नमें भी वह कभी उससे नाराज़ नहीं हुआ था; और न ऐसी कोई घटना ही उसे स्मरण थी कि, जब वह उसपर नाराज़ हुआ हो। परन्तु आज,जब उसने इतनी रातको उसे वहां आया हुआ देखा, तब उसे बहुत ही विचित्रतासी मालूम हुई। उसके मनमें कुछ विलक्षण शंका आई; और अपने मस्तकमें सिकुड़े डालकर वह एकदम उससे कहता है, "मेहरजान, तू इतनी रातको यहां क्यों आई? इसका उत्तर नहीं दिया?" बस,इतना ही कहकर सापेक्ष चेष्टासे वह उसकी ओर देखने लगा। फ़तिमाके हाथपर मेहरजानका अधिकाधिक भार पड़ने लगा। मेहरजान अधिकाधिक भारी भासने लगी। फ़तिमा उसकी ओर देखती है, तो उसकी चेष्टा भी कुछ विलक्षण ही होरही थी। इतनेमें ऐसा मालूम हुआ कि, वह अब बेहोश होकर गिरना ही चाहती है; और फ़तिमाके शरीरपर उसका बोझ भी विशेष बढ़ने लगा, अतएव वह अपने दूसरे हाथकी लालटेन भी नीचे रख नहीं सकी कि, इतनेमें मेहरजान सचमुच ही बेहोश होकर गिर पड़ी! वह बेहोश होकर क्यों गिरी? वास्तवमें रणदुल्लाख़ांको देखते ही वह ऐसी कुछ घबड़ा गई कि, जिसके कारण उसकी ऐसी दशा हुई। अस्तु। उसकी यह हालत देखते ही रणदुल्लाख़ांका क्रोध—जोकि पहले ही कुछ बहुत अधिक न था—अब बिलकुल ही जाता रहा; और शीघ्रता-

पूर्वक दौड़कर उसने मेहरजानको सम्हाल लिया। मेहरजानका इस प्रकार वेहोश होजाना फ़तिमाके लिए उस समय एक प्रकारसे हितकारक ही हुआ। रणदुल्लाख़ांको देखकर उसकी चित्तवृत्ति घवड़ा गई थी, परन्तु अब उसको सम्हालनेके लिए उसे मौक़ा मिल गया। उसे तसल्ली होगई कि, अब रणदुल्लाख़ां जब इसके विषयमें कुछ पूछेगा, तो मैं इसको सुन्दर उत्तर देसकूंगी। इसके वाद मेहरजानको वहांसे लेचलनेके लिए रणदुल्लाख़ांकी सहायता करने लगी। थोड़ी ही देरमें अन्य नौकरचाकरोंको भी रणदुल्लाख़ांने बुलाया; और एक-दो दासियोंकी सहायतासे मेहरजानको उठाकर उसके रंगमहलमें पहुँचाया। कुछ देरमें, थोड़े-बहुत उपचार करनेपर, मेहरजान होशमें आई; परन्तु उसी समयसे उसके शरीरमें बुख़ार होआया।

फिर भी अन्य अनेक बातोंके साथ ही साथ, मेहरजानका उतनी रातको वहां जाना भी रणदुल्लाख़ांके लिए शोचका एक कारण बना रहा। उसने फ़तिमाको एक ओर लेजाकर इसका रहस्य जानना चाहा। फ़तिमा भी अब उत्तर देनेको तैयार थी; क्योंकि उसको विश्वास ही था कि, आज नहीं तो कल हमारा मालिक हमसे इस विषयमें अवश्य ही पूछेगा। रणदुल्लाख़ांने ज्यों ही उससे पूछा, वह बहुत ही दीनताके साथ एकदम हाथ जोड़कर बोली, "सरकार, ग़रीब दासीको माफ़ किया जाय, तो सब कुछ बतला दूंगी। हुज़ूर, अहमदने, न जाने क्या क्या मुझसे कहकर, मेरी सहायतासे, उस मराठेको क़ैद करके यहां

रखा। वह मुझसे कहता था कि,सरकारका ही ऐसा हुक्म है। फिर उसने मुझसे कहा कि, कल रातको सरकारने उसे मार डालनेका भी हुक्म दिया है। उस मनुष्यका ख़ून इस प्रकार हमारे हाथसे हो;और ऐसी जगहमें—यह मुझे उचित नहीं दिखाई दिया। आपने उसे हुक्म दिया होगा, यह भी मुझे सच नहीं जान पड़ा। अतएव सोचा कि, कोई न कोई उपाय करके इसको बचाना चाहिए। पहले मैं आपके ही पास आती, परन्तु सोचा कि, शायद आपने हुक्म दिया हो, इसलिए आपके पास जानेसे कोई लाभ न होगा। यह सोचकर पहले अहमदको ही बहुत समझाया-बुझाया; पर जब देखा कि, वह नहीं मानता, तब मनमें आया कि, बीबीसाहबाके पास जाकर उनके द्वारा अहमदसे कहलाऊं, शायद कुछ लाभ होजाय; और फिर उनसे आपको भी सब समाचार दिलवाऊं। बीबीसाहबाने मेरी प्रार्थना तुरन्त ही स्वीकार कर ली; और फिर, जैसाकि आपने देखा, इसीकारण वे रातको वहां गईं।"

फ़तिमाने इस प्रकार रणदुल्लाख़ांसे कहा; पर क्या उसे यह सब सच जान पड़ा?

रणदुल्लाख़ांकी चेष्टासे तो ऐसा कुछ दिखाई नहीं दिया; परन्तु फ़तिमासे फिर उसने कुछ कहा नहीं।

इधर नानासाहब इत्यादि सब लोगोंने मिलकर आगे क्या किया, इसका वृत्तान्त अगले परिच्छेदमें बतलावेंगे।

बावनवां परिच्छेद ।

नानासाहबकी याचना ।

जैसाकि पिछले परिच्छेदमें बतलाया, नानासाहब और उनका वह सहायक, ये दोनों ही, रणदुल्लाख़ांको कड़े कड़े उत्तर देकर उतनी रातको वहांसे निकल पड़े । स्वाभाविक ही उनका पहला विचार यही हुआ कि, पहले अपने साथियोंसे जाकर मिलें । इधर उस काले-कलूटे आदमीने तानाजीसे कह दिया था कि, तुम लोग तीन दिनतक इस मकानको मत छोड़ना । इसपर तानाजीने बहुत कुछ विचार किया; परन्तु अन्तमें मकानको नहीं छोड़ा । हां, दो दिनतक उन्होंने ऊपर ऊपर अवश्य ऐसा दिखलाया कि, जैसे वे उस मकानसे कहीं चले गये हों । क्योंकि तानाजीके मनमें यह शंका होगई थी कि, शायद नानासाहबको यही बादमाश यहांसे लेगया हो; और उसी प्रकार कहीं हमको भी धोखा देकर न क़ैद कर लेजावे । उन्होंने सोचा कि, इसपर पूरा पूरा विश्वास रखना ठीक न होगा । शायद यह धोखा दे बैठे; और यदि इसने धोखा दिया, तो बीजापुरमें जिस कारणसे हम आये हैं, सो कारण तो एक ओर रहेगा; और व्यर्थके लिए हम चक्करमें पड़ेंगे, तथा जिनके हाथमें न जाते हुए हमको सब वृत्तान्त जान लेना है, उन्हींके हाथमें जापड़ेंगे । बीजापुरकी राजनैतिक

जानकारी जितनी हमको चाहिए थी, उतनी एक प्रकारसे हम-को प्राप्त हो ही चुकी है। अपने प्रान्तमें रहते समय जिस बात-का हमको इतना भय मालूम होरहा था, सो अब मालूम होने-का कोई कारण नहीं। बादशाह एक पूर्ण विलासी व्यक्ति है; और विशेषतः एक स्त्रीके हाथमें है; और उस स्त्रीको प्राप्त करा देनेमें जिस व्यक्तिकी दग़ाबाज़ी उसके लिए उपयुक्त हुई है, उसी व्यक्तिका बादशाहपर प्रभाव है। यह नहीं कि, मुरारपन्त और रणदुल्लाख़ांकी योग्यता बादशाहके ध्यानमें न हो; परन्तु इस समय तो विशेषतया सैयदुल्लाख़ांकी ही तूती बोलती है। आज कितने ही दिन होगये, रणदुल्लाख़ां रंगराव अप्पाके समान स्वामिभक्त नौकरको अभयवचन देकर अपने साथ लेआया है—इस उद्देश्यसे कि, बादशाहके कानमें यह बात डाल दे कि, वास्तवमें वह कितना सच्चा स्वामिभक्त पुरुष है; और उसकी क़िलेदारी उसे फिरसे वापस दिला दे; परन्तु बादशाहको, इतने दिन होगये, घड़ीभरको भी अवकाश नहीं मिला कि, निश्चिन्त होकर उसकी बात सुन ले। वास्तवमें यह काम तो इस समय केवल सैयदुल्लाख़ांके हाथमें है। ऐसी दशामें, जैसा-कि शिवबाने सोचा है, यदि सचमुच ही कोई क़िला हस्तगत कर लिया जायगा, तो यहां उसकी कोई सुनवाई भी न होगी; क्योंकि पूरा अन्धेरखाता है। अबतक जो कुछ वृत्तान्त हमको मिल चुका है, और गुप्तरूपसे दरबारकी दशाका जो दृश्य हमको देखनेको मिला है, उससे अधिक और कोई भीतर

तथ्य नहीं जान पड़ता। नानासाहबपर यदि यह अरिष्ट न आया होता, तो शायद और भी कुछ अधिक जानकारी प्राप्त करनेका प्रयत्न हम लोगोंने किया होता। पर अब और अधिक जानकारीकी आवश्यकता ही क्या ? आज नानासाहब यदि इस अरिष्टमें न पड़ गये होते, तो शायद इससे पहले भी हम लोगोंने यहांसे चलनेकी तैयारी कर दी होती; परन्तु एक बिलकुल अपरिचित व्यक्तिपर विश्वास करनेसे ही हमपर ऐसा विलक्षण अवसर आगया ! ऐसी दशामें तानाजीको यही भय हुआ कि, कहीं ऐसा न हो, जो उस व्यक्तिके चक्करमें पड़कर हम सभी नष्ट होजायँ; और पहले दिन तो उनको यह भय बहुत ही सताता रहा। उन्होंने सोचा कि, शायद वह हमारे पास आवे; और मीठी मीठी बातें बनाकर हम सबको फुसला-कर क़ैद कर लेजाय; और बादशाहके सामने उपस्थित कर दे। इसी भयसे दो दिनतक उन्होंने ऊपर ऊपरसे मानों उस स्थान-को छोड़ दिया था; परन्तु इस बातका पता रखनेके लिए, कि वह आदमी अथवा उसकी ओरसे कोई दूसरा आदमी तो वहां नहीं आता, बारी बारीसे वे लोग उस मकानके आसपास चक्कर लगाते रहते थे। तीसरे दिन अवश्य ही उनको कुछ धीरज आया। अब उनको ऐसा विश्वास होने लगा कि, हो न हो, यह आदमी हमारे कल्याणहीके लिए प्रयत्न करता होगा; हमारे लिए सचमुच ही इसका हृदय आकुल रहता होगा। नहीं तो इतनी सहानुभूतिके साथ आकर हमसे यह क्यों बात-

चीत करता? परन्तु हम सब लोगोंका परिचय इसे कहांसे प्राप्त होगया? इस बातका उन्हें बार बार आश्चर्य होता था। इसके अतिरिक्त, यह है कौन? इस विषयमें भी वे बहुत कुछ तर्क-वितर्क किया करते थे। हां, इस विषयमें किसीको भी शंका न थी, कि वह चाहे जो कोई हो; पर है कोई बड़ा ही चतुर कार्यकर्त्ता। इस बीचमें ऐसे भी कुछ छोटे-मोटे कारण उपस्थित हुए थे कि, जिनसे तानाजी इत्यादिको यह मालूम होने लगा था कि, इस व्यक्तिको बीजापुरके सब बड़े बड़े सरदारोंकी पूरी पूरी जानकारी होनी चाहिए; यही नहीं, बल्कि बीजापुरकी सारी राजनैतिक कार्यवाहियों अथवा महलोंके अन्दरकी कार्यवाहियोंका भी उसे सूक्ष्म तौरपर ज्ञान होना चाहिए। अस्तु। तीसरा दिन प्रायः बीतनेपर आया। शामका वक्त होगया। लगभग एक पहर रात भी व्यतीत होचुकी। अबतक उस काले महाशयका कुछ भी समाचार नहीं। यह देखकर तानाजीका चित्त कुछ अशान्तसा दिखाई दिया। वे यदि अपने प्रान्तमें होते, अथवा बीजापुरमें ही आये हुए उन्हें अधिक दिन बीते होते, तो उन्होंने ऐसे-वैसे संकटोंकी कोई भी परवा न की होती। कालके जबड़ेसे भी वे अपने मित्रको छुड़ा लाये होते। परन्तु उनके समान चतुर कार्यकर्त्ता और धैर्यशाली पुरुषको भी, नानासाहबके इस प्रकार ग़ायब होजानेसे, एक प्रकारकी निराशासी होगई थी; और इसीकारण उनको, केवल अपने ही उद्योगपर भरोसा न रखते हुए, उस महाशयके वचनोंपर भी

भरोसा रखना पड़ा। नानासाहबकी परवा न करते हुए—उनको वहीं, वैसा ही, छोड़कर—वापस जाना तानाजीके समान व्यक्तिके लिए बिलकुल असम्भव था। ऐसी बात उनके मनमें भी नहीं आई; और यदि कदाचित् वैसा विचार कभी उनके मनमें आया भी होता, तो यह सोचकर कि, शिवबा और स्वामी महाराज क्या कहेंगे, उन्होंने उस विचारको न जाने कहांका कहां दबा दिया होता। अस्तु।

जैसाकि हमने ऊपर बतलाया, तानाजी बिलकुल निराश होनेपर आगये। उस काले महाशयके बतलाये हुए तीन दिन बीतनेपर आये। अब उसकी प्रतीक्षा करनेसे कोई लाभ नहीं। जैसे नानासाहबको पहलेपहल वह वचन देगया था; और फिर उन वचनोंका वह पालन नहीं कर सका—कह गया था कि, तुमसे रोज़ मिला करूंगा; पर फिर कई दिनतक उसके दर्शन ही नहीं हुए—वैसा ही इस दफ़ा भी होगा, इस विषयमें अब उनके मनमें कोई भी शंका नहीं रह गई। अब हमको दूसरे दिन क्या करना चाहिये? नानासाहबको कहां ढूँढ़ना चाहिए? कैसे ढूँढ़ना चाहिए? और वे जीवित यदि मिल जायँ—अथवा फिर उनका कहीं पता लग जाय—तो फिर उनको लेकर बीजापुरसे प्रयाण कैसे करना चाहिए? इस सम्बन्धके विचार अब उनके मनमें आने लगे। क्या करते बेचारे! उनके साथके लोगोंमें अब कोई वैसा था ही नहीं कि, जो अपनी जिम्मेदारीको उतना समझता, अतएव उन लोगोंको कोई विशेष

वैसी चिन्ता भी नहीं थी। इसके सिवाय बेचारे दो-तीन दिनसे नाना प्रकारके कार्योंमें लगे रहनेके कारण शिथिल भी होगये थे, अतएव जब पहर-डेढ़ पहर रात चली गई; और उस काले महाशयके आनेकी कोई विशेष आशा भी न रही, तब उन लोगोंको निद्राने सताया; और वे बेचारे वहीं अपने अपने शरीर लचाकर सोगये। अकेले तानाजी, उपर्युक्त रीतिसे अनेक विचार करते हुए, व्याकुल होकर इधरसे उधर चक्कर लगा रहे थे। उनका भी मन, जैसाकि हमने ऊपर बतलाया, एक प्रकारसे निराशहीसा होरहा था। परन्तु आशा, यह एक बड़ी विलक्षण वस्तु है। वह मानो अत्यन्त सूक्ष्म ध्वनिसे तानाजीको बार बार सूचित कर रही थी कि, ज़रा धीरज धरो—शायद तुम्हारा इच्छित कार्य होजावे। और वे, मानो अस्पष्ट, मन्द तथा क्षीणसी उस आशाकी ध्वनिमें लुब्ध होकर ही, जहां कहीं आसपास कुछ भी आहट मिलती चौकन्ने होकर बाहर निकल पड़ते; और इधर-उधर दृष्टि फिराकर यह देखने लगते कि, कौन—हमारे मित्र आते हैं, अथवा कोई शत्रु आते हैं! इसी दशामें धीरे धीरे आधीरात लौट गई। पूरे तीन दिन निकल गये, अब प्रतीक्षासे कोई लाभ नहीं, यह उन्होंने पूरे तौरपर समझ लिया। वह आशाकी ध्वनि, जो पहले ही क्षीण और अस्पष्ट थी, अब और भी अधिक क्षीण और अस्पष्ट होचली। • किंबहुना, यह कहनेमें भी अतिशयोक्ति न होगी कि, वह अधिकाधिक क्षीण और अस्पष्ट होनेवाली आशाकी ध्वनि

अब बिलकुल नष्टप्राय होचली। अतएव तानाजी भी अब इस विचारमें लगे कि, अपने साथियोंकी तरह, अब हम भी निद्रा-सुखका अनुभव करनेके लिए अपने शरीरको धरित्री माताकी गोदमें देवें। अब वे अपने इसी विचारके अनुसार कार्य करने-वाले थे कि, दूरसे उन्हें किसीके आनेकीसी आहट सचमुच ही सुनाई दी। उन्होंने सोचा कि, अबतक हमको सिर्फ आहट आनेका भासमात्र होता था, पर अब यह केवल भास ही मात्र नहीं है, किन्तु सचमुच ही किसीके आनेकी आहट है; और, अतएव, वे बाहर निकल आये। बाहर आकर उन्होंने नाना प्रकारसे कान लगाकर बहुत कुछ प्रयत्न किया कि, देखें वह दूरकी आहट स्पष्ट रूपसे सुनाई देती है,अथवा नहीं। इतने-में वह आहट और भी पास पास आने लगी। अब हमें तैयार होजाना चाहिए, किसकी आहट है; और किसकी नहीं; नाना साहबको छुड़ा लानेवाला वह काला महाशय ही आरहा है, अथवा और कोई;वह नानासाहब की ही भांति दग़ाबाज़ी करके हमको पकड़नेके लिए आरहा है; यह भी असम्भव नहीं है! आहट और भी नज़दीक नज़दीक, क्षण क्षणपर, आरही है; और वह बहुत आदमियोंकी भी नहीं है—एक हो दो आदमी दिखाई पड़ते हैं—ऐसा ज्यों ज्यों तानाजीको मालूम होने लगा, त्यों त्यों उनकी वह स्तिमित आशा स्वाभाविक ही फिर जागृत होने लगी; और बहुत जल्द वह पूर्ण भी होगई—नानासाहब और वह काला महाशय, दोनों एकदम उनके सामने आकर

खड़े होगये। क्षणमात्र तानाजीको यही संशय हुआ कि, हम जाग रहे हैं, अथवा स्वप्नमें हैं। फिर दोनों हाथ आगे बढ़ाकर उन्होंने उन दोनों ही व्यक्तियोंके हाथ बड़े प्रेमसे पकड़े। उस काले महाशयपर फिर उनकी इतनी श्रद्धा हो-गई कि, वे उसके उपकारोंका बदला चुकानेके विषयमें सोचते ही हुए रह गये। किन शब्दोंके साथ वे उस व्यक्तिके आगे अपनी कृतज्ञता प्रकट करें, यह उनको सूझ नहीं पड़ा। फिर घड़ी-दो घड़ी वे लोग आपसकी बातें करते रहे। नानासाहबने अत्यन्त क्रोधमें आकर अपना सारा वृत्तान्त बतलाया।

रणदुल्लाख़ांके विषयमें उनके अन्दर इतना क्रोध दिखाई दिया कि, जितना कभी भी उनमें नहीं देखा गया था। पाठकों-को याद होगा कि, कई परिच्छेदोंके पहले श्यामाने सूर्याजीकी स्त्रीको, देशमुखके महलोंमें आग लगनेके बाद, एक जंगलमें पहुँचाया था। वहां वटवृक्षके नीचे एक झोपड़ीमें एक वृद्ध महाशय और एक युवा पुरुष, दोनों रहते थे। वहां एक दिन बातों ही बातों उस युवाने कोई घोर प्रतिज्ञा की थी। उस:प्रतिज्ञाके करते समय उस युवाके अन्दर जितना क्रोध और आवेश दिखाई दिया था, वैसा ही क्रोध और आवेश आज नानासाहबके अन्दर भी दिखाई दिया। उस युवा पुरुषको किससे क्या कष्ट पहुँचा था; और किसने किस प्रकार उसकी प्रतिष्ठा भंग की थी, सो तो जो कुछ हो; पर नानासाहबको रणदुल्लाख़ांसे जो जो कष्ट पहुँचा; और जिस प्रकार उनके

गौरवमें उसके कारण धक्का लगा—कमसे कम, जितना कुछ नानासाहबको इस विषयमें अधिकसे अधिक ख़याल होगया था, सो सब पाठकोंको, चाहे बिलकुल स्पष्ट रूपमें न हो, पर तो भी अधिकांश रूपमें मालूम होचुका है। नानासाहब और तानाजी जब एक साथ हुए, तब नानासाहबका हृदय मानो बिलकुल ही खुल गया; और वे उनसे बोले, "तानाजी राव, मैंने आजदिन अपनेको शिवबाके बिलकुल अधीन कर दिया है—कमसे कम सुलतानगढ़का क़िला जबतक उनके हाथमें नहीं चला जाता, तबतक तो मैं सर्वथैव उन्हींका हूं। पर इस दुष्ट रणदुल्लाख़ांने, इन बेईमान नमकहराम दग़ाबाज़ यवनोंने, मेरे सारे सुखपर पानी फेर दिया है, मेरे वंशको बदनाम कर दिया है। ऐसी दशामें मेरे लिए इनका पूरा पूरा बदला चुकाना भी अत्यन्त आवश्यक होगया है। मैंने यदि इसका बदला न चुकाया, तो मैं बड़ा कुलांगार, अभागा और मराठोंके नामपर कलङ्क लगानेवाला एक नामर्द आदमी कहलाऊंगा—बस, बीजापुरमें एक ही दिन तुम मुझे और रहने दो, फिर मैं तुम्हारे साथ चलूंगा—जो कुछ कार्य करना हो, सो मैं फिर तुम लोगोंके साथ चलकर करूंगा। और फिर मैं अपनी इच्छाके अनुसार बदला लेनेके लिए—उस व्यक्तिके टुकड़े टुकड़े कर डालनेके लिए कि, जिसने मेरे सुखके बिलकुल टुकड़े टुकड़े कर डाले हैं—वापस आजाऊंगा। फिर मुझे और कोई काम नहीं रहेगा। मेरे मस्तिष्कमें और कोई विचार ही नहीं।

एक दिन इस समय मैं यहां इसलिए रहूंगा कि, जिससे ये सब बातें मैं अपने पिताके कानोंमें डाल दूं। उनसे मुझे एक बार यह कह लेना है कि, बालकी रगड़से गला काट डालनेवाले कसाईके पंजेमें तुम पड़ गये हो; और अपने कुलको लगाये हुए कलङ्कसे कलङ्कित रोटीका कौर तुम्हारे गलेसे उतर रहा है— इस प्रकार उनकी आंखोंमें अञ्जन डालनेका फिर एक बार प्रयत्न कर लूं, तब मुझे यहांसे जाना उचित होगा। वे अपना सारा विश्वास इसी धूर्त दग़ाबाज़पर रखे हुए हैं। उनके समान स्वामिभक्त पुरुष इस सम्पूर्ण भारतबर्षके मुसलमानी राज्यमें भी नहीं मिलेगा। परन्तु उनकी इस स्वामिभक्तकी, इन दुष्टोंकी नज़रोंमें, क्या क़ीमत है? जो कुछ होना हो, सो हो, चाहे जो संकट आवे, चाहे बादशाहके ही हाथमें देदेनेका वे बिचार करें, पर इस दग़ाबाज़ने जो कुछ किया है, वह जबतक मैं उनके कान-में न डाल लूं, अपने कुलके इस कलङ्कका परिमार्जन करनेके लिए जबतक मैं उनको चेतावनी न देलूं, तबतक बीजापुरसे बाहर क़दम रखना मुझसे हो नहीं सकता।"

इतना कहकर नानासाहबने फिर अपने उस सहायक पुरुष-की ओर ध्यान दिया; और कुछ नम्रताके साथ उससे कहते हैं, "महाशय, आपने भी कुछ दिन पहले मुझसे इसी प्रकारकी कुछ बातें की थीं। आपको भी किसी न किसी दुष्टने इसी प्रकारसे बहुत कष्टित किया है। आपका और मेरा अब बिलकुल जोड़ा मिल गया। आप अपने दुश्मनका और मैं अपने दुश्मनका

—दोनों साथ ही साथ बदला चुकावें। आजतक आपने, जिस तरहसे मुझे सहायता दी है, उसी प्रकार आगे भी दें। आज मैं सिर्फ आपसे इतनी ही सहायता मांगता हूं कि, आप गुप्त रूपसे मेरे पिताकी मुलाक़ात मुझसे करा दें। एक बार उनके सामने मैं पहुँच जाऊं, फिर जो कुछ होगा, देख लिया जायगा।"

वह महाशय नानासाहबकी ओर देखकर कुछ हँसा। परन्तु हां, उसके उस हास्यमें भी खेदकी झलक कुछ मौजूद थी। तानाजी इन बातोंका कुछ भी ठीक ठीक अर्थ समझ न सके।

तिरपनवां परिच्छेद

पिता-पुत्रकी मुलाक़ात।

समान शील और समान व्यसन, ये दो बातें जिस जगह होती हैं, उसी जगह परस्पर प्रेम उत्पन्न होता है; और उनमें सख्य होजाता है। यही साधारण तौरपर अनुभव भी है। बस, इसी अनुभवके अनुसार नानासाहबमें और उस काले महाशयमें सख्य था। जिस प्रकार नानासाहबका ख़याल था कि, हमारे कुलमें कलङ्क लगा; और रणदुल्लाख़ांने वह कलङ्क लगाया—यहीं नहीं, बल्कि अब उस कलङ्कका परिमार्जन उसके रक्तपातके विना हो नहीं सकता, बस, इसी प्रकार, किसी

कारणविशेषसे उस काले महाशयको भी यह मालूम होता था कि, हमारी प्रतिष्ठा भङ्ग हुई है ; और हमारे कुलको कलङ्क लगा है ; और उस प्रतिष्ठाभंग तथा कलङ्कका परिमार्जन होनेके लिए, अपने दुश्मनके रक्तका सिंचन करनेके अतिरिक्त और कोई उपाय ही नहीं है। नानासाहबके समान बड़े घरानेके पुरुषपर हमारे ही समान ऐसा विकट प्रसङ्ग आया—कमसे कम नानासाहबको ख़याल हुआ कि, आया है—इसपर उस महाशयको खेद हुआ। वैसा प्रसङ्ग नानासाहबपर आया ; और अतएव हमारी और उनकी अब एक ही अवस्था होगई, यह देखकर उसको किंचित् समदुःखसमाधान भी हुआ। परन्तु वह समदुःखस्थिति बहुत देर नहीं ठहर सकी; क्योंकि नाना साहबकी और उसकी दशामें, तथा उसके और नानासाहबके शत्रुमें कितना अन्तर था, सो उसे भलीभांति मालूम था। पर मानो यही समझकर कि, यह समय और कुछ कहनेका नहीं है, उसने अभीतक अपने चेहरेपर खेदयुक्त हास्यकी ही झलक क़ायम रखी थी। इस प्रकारकी झलकसे जब किसी मनुष्यकी सूरत व्याप्त होती है, तब साधारणतया उस मनुष्यसे कुछ कहने, अथवा कोई बात पूछनेका साहस नहीं होता है। पूर्णतया खिन्नताका भाव यदि किसी मनुष्यके चेहरेपर दिखाई देता है, तब सभीकी इच्छा होती है कि, लाओ, भाई, इससे पूछें कि, क्या हुआ है, क्या बात है; और यदि होसके, तो कुछ समाधानके वचन कहकर इसका परितोष भी करें। परन्तु जब

इस प्रकारकी दुविधाकी स्थिति होती है, तब सिर्फ इतना ही मोहभर उत्पन्न होता है कि, केवल उदासीनतासे हम भी बीच बीचमें उसकी सूरतकी ओर देखते रहें। मुँहसे एक अक्षर भी बोलनेका साहस नहीं होता। नानासाहबका कथन समाप्त होते समय उस महाशयकी हँसी भी कुछ इसी प्रकारकी थी। अतएव स्वाभाविक ही नानासाहब उससे कुछ नहीं कह सके। क्या कहें, सो कुछ उनकी समझहीमें न आया। वे सिर्फ उसकी ओर देखतेभर रहे। नानासाहब चाहते थे कि, कुछ इससे कहें; पर वह महाशय बहुत देरतक कुछ बोला ही नहीं। कुछ देर बाद धीरेसे ही कहता है, "नानासाहब, आज-तक मेरा आपका क्या परिचय है; और वह कैसा है, सो आपको मालूम है। इसलिए अब मैं और भी यदि कुछ परिचयकी बातें आपको बतलाऊं, तो आपको आश्चर्य नहीं होना चाहिए। संयोगवश यदि कभी इस बातकी नौबत आगई कि, मुझे अपना पूरा पूरा परिचय आपको देना ही पड़ा, तो फिर आपको मालूम होगा कि, मेरे विषयमें कोई आश्चर्य करनेकी आपको आवश्य-कता नहीं। अस्तु। अभी इस बातको जाने दें; पर नाना-साहब, आपके इन मित्रोंके सामने ही मैं अभी दो-चार बातें आपसे कहूंगा। उनको आप सुन लेंगे, तो अच्छा होगा। आप अपने पितासे भलीभांति परिचित हैं ही, पर फिर भी मैं आपसे कहता हूं कि, जो कुछ आपका ख़याल है, वह चाहे बिल-कुल हृदय खोलकर आप उनके सामने प्रकट कर दें, फिर भी

उनके चित्तमें कोई परिवर्तन नहीं होगा। रणदुल्लाखांसे उनका बहुत स्नेह है। उन दोनोंमें आपसके हितकी बहुतसी बातें हुआ करती हैं। आप उनसे उसके विरुद्ध कुछ भी कहें, वे सब नहीं समझेंगे। यही क्यों? बल्कि आपको देखते ही शायद वे नाराज़ होकर आपको क़ैद भी कर लेंगे; और आप चूंकि राजद्रोही हैं, इसलिए दूसरे ही दिन आपको बादशाहके सामने भी उपस्थित करेंगे। अप्पासाहबके समान कठोर,दृढ़-भाषी,दृढ़प्रतिज्ञ और दृढ़ विचारवाला मनुष्य सम्पूर्ण महाराष्ट्रमें एक भी नहीं मिलेगा। उनको सिर्फ़ अपने राजाकी नौकरी, एक ईमानदारीके साथ, करनाभर मालूम है; और इसके सामने दयामाया, पुत्रप्रेम इत्यादि बातोंसे उनका कोई सम्बन्ध नहीं। यह सब आपको अच्छी तरह मालूम है, यह नहीं कि मालूम न हो, फिर आप इस झगड़ेमें व्यर्थके लिए क्यों पड़ते हैं? अब, आप लोगोंको, बीजापुर दरबारका जो वृत्तान्त मालूम होना था; और जितने वृत्तान्तकी आपको आवश्यकता थी, सो सब मालूम होचुका; और यदि न मालूम होचुका हो, तो मैं बतला दूं—अतएव अब आपको इस जगह,आवश्यकतासे अधिक एक क्षणभर भी न रहना चाहिए; क्योंकि अब यहां रहनेसे आपको कोई लाभ न होगा—हां, आप लोग उधर जो कुछ काम करनेवाले हैं, उसमें विलम्ब अवश्य होजायगा। इस-लिए अब आप यहांसे जाइये;क्योंकि आप यदि अब अपने पितासे मुलाक़ात करनेके झगड़ेमें पड़ेंगे, तो सम्भव है कि, आपके

ऊपर और भी कोई संकट आजाय। कोई ताज्जुब नहीं है। मैं इस विषयमें बहुत ही शङ्कित हूं। हां, इसमें सन्देह नहीं कि, आपके पिता यदि आपके पक्षमें आजायं, तो बहुत उत्तम हो; पर इस बातकी मुझे तो कोई आशा नहीं है। आपकी यह आशा ऐसी ही है कि, जैसे कोई बालू की भीत खड़ी करना चाहता हो। मैं तो यहांतक कहता हूं कि, स्वयं बादशाहको अपने पक्षमें मिलाना आपके लिए उतना असम्भव नहीं है, जितना अपने पिताको मिलाना............"

नानासाहब चुपकेसे ये सब बातें सुन रहे थे; और इन बातोंकी सत्यताके विषयमें भी उनको कोई सन्देह नहीं था; परन्तु तरुणाईकी उमंग ही कुछ निराली होती है। इस अवस्थामें आशा और उमङ्गके सामने तथ्य बातकी ओर मनुष्यका ध्यान बहुत ही कम जाता है। वही हालत नानासाहबकी थी। उनको इस बातकी पूर्ण आशा थी कि, अपने पिताके पास जाकर यदि एक बार हम अपना यह सब वृत्तान्त बतलावेंगे; और अपने कुलकी प्रतिष्ठामें जो बट्टा लग चुका है, उसके विषयमें उनको विश्वास दिलावेंगे, तो अवश्य ही उनकी चित्त-वृत्ति बदल जायगी; और फिर वे, जितनी दृढ़ताके साथ आज राजभक्तिमें लवलीन हैं, उससे कहीं अधिक दृढ़ताके साथ उसके विरुद्ध-पक्षमें कार्य करेंगे। अपने कुलकी प्रतिष्ठाके समान महत्वकी उनको और कोई बात नहीं मालूम होगी। यह विश्वास उनके चित्तमें बड़ी दृढ़ताके साथ बैठा हुआ था, अतएव दूसरे लोगोंके कथनका

उनपर कोई भी प्रभाव न पड़ा; और उन्होंने अपना आग्रह क़ायम रखा। यहांतक कि, उन्होंने बार बार यही कहा, "अच्छा, अब एक बार मेरी और उनकी मुलाक़ात तो होजाने दीजिए, फिर जो कुछ होगा, सो देखा जायगा। हां, अन्य लोगोंको सावधान रहना चाहिए। मेरे लौटनेकी विशेष आशा न रखनी चाहिए; और यदि कुछ आशा रखें भी, तो जहां मेरे विषयमें कोई ऐसी-वैसी बात सुनें कि,सबको यहांसे चल देना चाहिए।" इस प्रकार जब देखा गया कि नाना-साहब अपने आग्रहपर दृढ़ हैं, अब और कोई उपाय नहीं है; तब यही निश्चय हुआ कि, अच्छा, एक बार इनके पितासे इनकी मुलाक़ात अवश्य करा दी जाय; और तदनुसार उस काले महाशयने उनको यह वचन दिया कि, अच्छा, मैं बहुत जल्द इसका प्रबन्ध करता हूं। यह वचन देते हुए उस महाशयकी स्मृति मानों और किसी ओर लगी हुई थी। क्या उसपर भी कभी ऐसा मौक़ा आया था? उसके पिता,जबकि पहले उसके प्रति-कूल थे, तब क्या उसने भी अपनी बातोंसे उनके मनको बदलने-का कभी प्रयत्न किया था? अथवा,उसने अपनी ओरसे ख़ूब प्रयत्न किया, फिर भी उससे कोई लाभ न हुआ; और अन्तमें अपने ही पैरोंपर खड़े रहकर उसे अपने प्रयत्नमें लगना पड़ा—ऐसा क्या कोई मौक़ा उसके ऊपर आया था? जो हो, कुछ देरतक वह महाशय विचारमग्नसा अवश्य दिखाई दिया। इसके बाद तुरन्त ही फिर वह कहता है, "भाई, आप ऐसा कहते हैं सही,

पर यह कोई अच्छी बात नहीं, इसमें ख़तरा है।" यह कहकर फिर उसने कुछ देरके लिए वहांसे चले जानेकी आज्ञा ली। नानासाहवका विचार अटल था। चाहे जो हो जाय, पिता-जीसे मिलकर एक बार ये सब बातें उनके कानमें तो अवश्य ही डाल देनी चाहिए, बहुत सम्भव है कि, उनका मन फिरंट होजाय; और यदि न हुआ, तो मेरा रास्ता साफ़ है। उस महाशयके चले जानेपर नानासाहब बहुत देरतक बिलकुल चुप रहे, किसीसे कुछ नहीं बोले; और न उनसे कोई बोला! ऐसा जान पड़ा कि, सभी बीती हुई और आगे आनेवाली बातोंपर विचार कर रहे हैं। घड़ी-दो घड़ी इसी अवस्थामें व्यतीत हुईं। इतनेमें वह काला महाशय फिर आ उपस्थित हुआ; और नानासाहबसे बोला, "आप यदि अपने पितासे भेंट करना चाहते हैं, तो मैं इतना प्रबन्ध कर दूंगा कि, आज रातको, जिस समय उनके पास कोई नहीं होगा, आप उनकी कोठरीतक पहुँच जायगे। इसके बाद फिर आप चाहे जो करें। परन्तु उनकी और आपकी भेंट निश्चित होजानेके पहले एक बार मैं और आपसे कह देना चाहता हूं कि, आपका यह कार्य आपके लिए लाभदायक नहीं होसकता; हां, बाधक अवश्य होसकता है।"

"होने दीजिए; बाधक हो, चाहे साधक हो, यह तो नहीं होगा कि, प्रतिष्ठाभंगकी यह बात उनके कानोंमें भी नहीं पड़ी? एक बार उनको मालूम होजाय, फिर वे ध्यान दें, चाहे न दें,

यह उनकी खुशी। अब बतलाइये, किस समय आप ऐसा मौक़ा मेरे लिए ला देंगे? बीजापुरमें आकर यदि आपकी सहायता हमें न मिली होती, तो सचमुच ही न जाने अबतक हमारी क्या हालत हुई होती। आपके हमपर अनन्त उपकार हुए हैं। उन्हींमें यह एक और भी होने दीजिए। इन उपकारोंसे उऋण होनेका सुअवसर मिला, तो......"

परन्तु उस महाशयने आगे उन्हें बोलने ही नहीं दिया; और यह कहकर तुरन्त ही वहांसे चल दिया कि, "अच्छा, आज पहरभर रात जानेपर आप यहां तैयार रहें। मैंने आपके पिताके मकानपर निगरानी रखनेके लिए अपना आदमी भेज दिया है। इसके सिवाय इस बातकी जानकारी प्राप्त करनेका भी प्रबन्ध कर लिया है कि, किस समय रणदुल्लाख़ांके वहां आने अथवा उनके रणदुल्लाख़ांके पास जानेकी सम्भावना नहीं रहती। पहरभर रात जानेके क़रीब न तो उनके पास कोई आता है; और न वे किसीके पास जाते हैं; और वही समय आपके लिए अच्छा है। उस समय मैं वहां आपको लेजाकर अच्छी तरह पहुँचा दूंगा; आगे वहां जो कुछ आपको करना हो, जो कुछ कहना-सुनना हो, सो कह-सुनकर यदि आप लौटेंगे, तो मैं यहां भी आपको पहुँचा दूंगा।" इतना कहकर वह महाशय वहांसे एकदम चल दिया। नानासाहबको भी उसके इस प्रबन्धपर एक प्रकारसे सन्तोष ही हुआ। अतएव अब वे इस विचारमें लगे कि, अपने पिताजीसे आज हम क्या क्या बातें करें; और उनके

साथ कैसा कैसा व्यवहार करें। बीती हुई घटनाओंको किस प्रकार उनके सामने रखें कि, जिससे शीघ्रतापूर्वक उनके मनपर अभीष्ट प्रभाव पड़े। बस, इसी विषयके विचार उनके दिमाग़में आने लगे। कई बातें ऐसी भी उनको कहनी थीं, जिनके कहनेके लिए उनको शब्द ही सुझाई नहीं देते थे। इसके बाद जब यह विचार उनके मनमें आया कि, हमारे कुलमें दाग़ लग चुका; और अब इसका वृत्तान्त भी हमको पिताजीको बतलाना पड़ेगा, तब उनको बहुत ही दुःख हुआ। उनके शरीरके रोएं खड़े हो-गये। जिस कार्यके करनेका उन्होंने विचार किया था; और जिस कार्यको किये बिना बीजापुरसे नहीं जायेंगे—ऐसा उन्होंने निश्चय किया था—उसी कार्यके करनेका मौक़ा अब पास पास आने लगा; और अब उनको एक प्रकारकी शंका भी सताने लगी कि, देखें, इस कार्यमें हमारा धैर्य अन्ततक हमारा साथ देता है, अथवा नहीं। बस, इसी शंकाके मारे अब वे अशान्त-से होकर पागलकी भांति उसी घरमें इधर-उधर घूमने लगे। सारे दिन जो कुछ व्यवहार उन्होंने किये, अथवा यों कहिये कि, उनको करने पड़े, वे सब इतनी विमनस्कताके साथ उनके हाथसे हुए, जैसे कोई बिलकुल संज्ञाहीन कठपुतलीकी तरह किसी दूसरेहीके तंत्रसे नाच रहा हो। उनका मन उनके एक भी कार्यमें नहीं था, किन्तु वह सम्पूर्णतया उसी अत्यन्त दुःखद विचारमें लगा हुआ था। अन्तमें संध्याका समय आकर उपस्थित हुआ, तब तो उनकी अशान्तिका ठिकाना

ही न रहा। उनकी चेष्टा कुछ बहुत ही विचित्रसी दिखाई देने लगी। जैसे कोई मदान्ध मनुष्य हो; और अपने आरक्त नेत्रोंसे चारों ओर देख रहा हो, पर किसी ओर भी उसकी दृष्टि पूरी पूरी न लगती हो; और मन नानाप्रकारके विचारोंमें फँसा हो! बस, यही हाल नानासाहबका उस समय होरहा था। वे अपने आरक्त और मन्द नेत्रोंसे चारों ओर देख रहे थे; परन्तु उनका सारा चित्त इसी ओर लगा हुआ था कि, अब आगे हम कैसा करेंगे; और हमको वहां लेजानेवाला वह महाशय कब यहां आवेगा। परन्तु कुछ देर बाद वह उनको लेजानेवाला महाशय भी वहां आपहुँचा। वह अपने साथ ऐसे वस्त्र भी लेता आया था कि, जो एक मराठेके लिए शोभा देनेयोग्य थे। वे वस्त्र उसने नानासाहबको पहननेके लिए देदिये। इस प्रकारके वस्त्रोंके बिना अप्पासाहबसे मुलाक़ात नहीं होसकती थी। उनसे भेंट होनेकी सम्भावना तभी थी, जबकि उनके पास यह सन्देशा जाता कि, कोई मराठा सरदार अत्यन्त आवश्यक कार्य-वश आपसे मिलने आया है। इसके सिवाय वैरागी अथवा अन्य किसी बनावटी भेषसे वहां काम थोड़े ही चल सकता था? अस्तु। नानासाहबने वे वस्त्र धारण किये; और अपनी कुलदेवी भगवतीका नाम लेकर अपने पितासे मिलने चले। कुछ समयमें ही वे निर्विघ्न रूपसे अप्पासाहबके महलमें पहुँच गये; और सीधे अप्पासाहबतक उनकी ख़बर भी पहुँच गई, तथा अप्पासाहबकी बैठकमें वे लेजाये गये। वास्तवमें सदर

दरवाजेकी बैठकमें ही आकर अप्पासाहबको उनसे मिलना चाहिए था; परन्तु संयोगवश उस दिन ऐसा नहीं हुआ; और यह एक प्रकारसे नानासाहबके लिए अच्छा ही हुआ, क्योंकि नानासाहबको जो कुछ बातचीत करनी थी, वह बिलकुल एकान्तकी थी। अस्तु। अप्पासाहबको पहलेपहल इस बातका कोई अनुमान ही न होसका कि, यह कौन मराठा सरदार है; और किसलिए इतनी रातको आया है। इसलिए उन्होंने नानासाहबकी सूरतकी ओर ज़रा ग़ौरसे देखा। उनकी दृष्टि बुढ़ापेके कारण अब कुछ मन्द होने लगी थी; परन्तु फिर भी उस सरदारकी सूरत उनके ध्यानमें आगई—कमसे कम उनको इस बातकी दृढ़ शंका होगई कि, यह अमुक व्यक्ति ही है। उसे देखते ही तुरन्त उनकी चेष्टा बदल गई; और मन एक प्रकारकी विलक्षण गड़बड़ीमें पड़ गया। अतएव वे एकदम उससे पूछते हैं, "तुम कौन हो? इतनी रातको मुझसे यहां क्या बात-चीत करने आये हो?"

"मैं आपका पुत्र नाना, आपके पास कुछ बातचीत करने..."

"मेरा पुत्र? मेरा पुत्र मर गया! उसका और मेरा अब कोई सम्बन्ध नहीं। मेरे मुखमें कालिख लगाकर वह चला गया; और उसी दिनसे मेरे लिए वह मर गया। वह यदि चतुर हो, तो मुझे अपना मुख न दिखावे—और बातचीत करनेका तो नाम ही न ले। जा, जबतक मेरे मनमें कोई दूसरा विचार

नहीं आवे, तबतक तू यहांसे चला जा। तेरा कृष्णमुख मेरी आंखोंके सामने नहीं चाहिए। अभी जा, नहीं तो इसी क्षण तुझे क़ैद करके बादशाहके सामने पेश कर दूंगा। कौन है रे उधर ?...”

उपर्युक्त भाषण धीरे धीरे, परन्तु अन्तमें क्रमशः ज़ोर ज़ोरसे हुआ; फिर “कौन है रे उधर !” ये शब्द बहुत ही ज़ोरसे और घड़घड़ाती हुई आवाज़से निकले। फिर भी नानासाहब अणुमात्र भी नहीं डगमगाये। वे बिलकुल शान्त रहे;और धीरेसे ही बोले, “आप ऐसा कहेंगे—कहेंगे नहीं, बलिक करनेको तैयार होंगे, सो मुझे पहलेहीसे मालूम था। यह सब जानबूझकर भी मैं यहां आया हूं, इसीसे सोच लीजिए कि,किसी न किसी विशेष कारण-वश मैं आया हूं। पिताजी,स्वामिभक्ति कीजिए; पर वहीं, जहां स्वामी सेवककी कुछ परवा करे। अरे ये दुष्ट स्वामी आपका मनमाना अपमान करते हैं, आपके साथ चाहे जैसा नीचतापूर्ण व्यवहार करते हैं, आपको मनुष्य समझकर भी ये व्यवहार करते हैं, अथवा नहीं—इसकी शंका है; और आप फिर भी स्वामिभक्ति, स्वामिभक्तिका गीत गाते हैं। बतलाइये, आपने कभी आजतक, विचारोंमें, कार्यों में, अथवा स्वप्नमें भी कभी स्वामिद्रोह किया था ? फिर आपकी दशा ऐसी क्यों है ?”

“ऐसी दशा ? ऐसी दशा क्यों है ? तू पूछता है ? बेशरम, बेहया, तुझको लज्जा नहीं मालूम होती, जो मुझसे यह प्रश्न पूछने आया है ? जा, जा। जबतक पुत्रप्रेमका पाश मेरे हृदयमें

शेष है, तबतक तू यहांसे चला जा, नहीं तो व्यर्थमें मारा जायगा। मैं—मैं अपने हाथसे भी तेरा बध कर डालनेमें आगा-पीछा नहीं देखूंगा। इसलिए चला जा यहांसे! पूछता है कि, यह दशा क्यों है? यह दशा इसीलिए है कि, जो तेरे समान कुलांगारको मैंने अपने यहां जन्म दिया! तू अपने मनमें समझता होगा कि, तेरे यहां आनेसे मैं पुत्रमोहके जालमें पड़कर अपने कर्तव्यको भूल जाऊंगा; पर यह बात तू क्षणभरके लिए भी अपने मनमें मत ला। हां, अबतक तुझको मैं यहां खड़ा होने देरहा हूं, तेरी मुसकें बांधकर तुझे हुज़ूरके क़दमोंके पास भेज नहीं दिया, तेरा सिर अपने हाथोंसे काटकर बादशाहको अर्पण नहीं किया, इतना ही मैं अपने कर्तव्यसे भूल रहा हूं—सो बस हो! अब तू जा, यहांसे चला जा!"

"जाता हूं, जाता हूं पिताजी, आप यदि अपनी दृष्टिके सामने नहीं खड़ा होने देना चाहते, तो जाता हूं! पर अन्तमें एक बार—जबतक फिर आपको अच्छी तरह जागृत न कर दूं, तबतक यहांसे टल नहीं सकता। जिसको आप अपना दोस्त समझते हैं, जिसने आपकी समझमें आपकी इतनी इज़्ज़त-प्रतिष्ठा रखी है, वही आपका कट्टर शत्रु है। उसीने आपकी कीर्त्तिपर, आपकी प्रतिष्ठापर डाकेज़नी की है। उसने आपके कुलमें, आपके वंशमें आग लगाई है—सो क्यों, आप जानते हैं? आह! देखो, आपके—आपके (दांतोंसे होंठ चबाकर) घर-द्वारका, कुटुम्बका, सत्यानाश उसीने किया! और क्या क्या

बातें वह करेगा, इसकी आपको कल्पना भी नहीं है। उसने क्या क्या विश्वासघात किये हैं,क्या क्या दग़ाबाज़ियां कर रहा है—इसकी क्या आपको कुछ भी कल्पना है? अहो, उसने इतना हरामीका काम किया है, कि उसका रक्तपात किये बिना आपको अन्नतक ग्रहण न करना चाहिए। परन्तु फिर भी आप उसीकी महमानीमें पड़े हुए हैं। आप उसको देवता समझते हैं। किन्तु मैंने तो घोर प्रतिज्ञा कर ली है कि, जिस दिन इन हाथोंको उसके रक्तसे रंगूंगा, उसी दिन फिर अपने…"

"चल, निकल! निकल अभागा! अब एक क्षणभर भी मेरी दृष्टिके सामने खड़ा मत हो। जो मेरे दोस्त हैं, वही तेरे दुश्मन हैं; और जो मेरे दुश्मन हैं, वही तेरे दोस्त हैं, इसमें सन्देह नहीं।"

नानासाहबका क्रोध, द्वेष और खेद उनके हृदयमें न समाया। उनको खुल्लमखुल्ला, जो कुछ कहना था, सो सब उन्होंने कह डाला; और अन्तमें एक रामबाण बात थी, सो भी उन्होंने ख़ूब ज़ोरदार शब्दोंमें कही,जिसे सुनते ही अप्पासाहबकी चेष्टा एकदम बदल गई; परन्तु फिर भी उन्होंने तुरन्त ही कहा, "नहीं, असम्भव! असम्भव! रणदुल्लाख़ां ऐसी नीचता कभी नहीं करेगा!"

"और किया हो तो?" नानासाहबने दांतोंसे होंठ चबाकर अत्यन्त क्रुद्ध होकर पूछा।

अप्पासाहब इसपर कुछ कहनेहीवाले थे कि,इतनेमें—"नहीं,

कभी नहीं किया! इसके लिए चाहे जैसा विश्वास करा देनेको वह तैयार है"— ये एक दूसरे ही व्यक्तिके शब्द कानोंमें पड़े।

चौवनवां परिच्छेद।

रणदुल्लाखां स्पष्ट बतलाता है।

उक्त शब्द किसके मुँहके हैं, नानासाहबने सिर्फ आवाज़से ही पहचान लिया; और उनका शरीर एकदम नीचेसे ऊपरतक जल उठा। अबतकका उनका आवेश खेदयुक्त था। उसमें पिताके आदर और प्रेमका भाव मिला हुआ था। परन्तु अब, जो क्रोध—और उस क्रोधसे होनेवाला आवेश—उनके अन्दर बढ़ा, वह बिलकुल विशुद्ध था; और ऐसा जान पड़ा कि, उसके वश होकर न जाने वे क्या कर डालेंगे। उनकी आंखें बिलकुल सुर्ख होगईं; और ऐसा जान पड़ा कि, उपर्युक्त शब्द उनके कानोंमें खौलते हुए तेलकी ही भांति प्रविष्ट हुए। उन्होंने एक बार पीछे मुड़कर देखा, तो वे शब्द सचमुच ही उसी व्यक्तिके थे, जिसके-कि उन्होंने समझे थे। उस व्यक्तिको देखते ही उनके क्रोधकी सीमा न रही। क्षणभर उनके मुखसे एक शब्दतक न निकला। हां, उनके होंठ अवश्य ही थर थर कांपते रहे। इसके बाद वे कुछ शान्तसे हुए; और फिर उस व्यक्तिकी ओर देख-

कर बोले, "अरे दुश्मन, यह समय तेरे रक्त गिरानेका नहीं है; और न यह स्थान ही है। तूने जो कुछ कहा, वह अक्षरशः झूठ है; और यह तुझे पूरे तौरपर मालूम है। अब मैं यदि तेरा यह मुख देखता रहूंगा, तो मेरा क्रोध क्षणभर भी मेरे वशमें न रहेगा। इस समय भी तू छूटा हो जारहा है, इसके लिए तू ख़ुदाके नामपर ख़ुशी मना। पर फिर मेरे बीचमें मत आना।

वह व्यक्ति कौन था? रणदुल्लाख़ां! नानासाहबका उपर्युक्त कथन सुनकर वह कुछ कहनेहीवाला था कि, इतनेमें नानासाहब अपने पिताकी ओर मुड़कर कहते हैं, "अच्छा पिताजी, अबतक मुझको जो कुछ कहना-सुनना था, सो मैंने कहा-सुना, पर आपको अभी इन बेईमान लोगोंका ही विश्वास अधिक है। अच्छी बात है। मैं जाता हूं। इसको अब सम्हलकर रहना चाहिए। इसके रक्तसे मेरे हाथ जबतक स्नान नहीं करेंगे, तबतक मैं सूतकमें रहूंगा—हँसूगा नहीं।" अन्तिम शब्द अभी उनके मुखसे पूरे पूरे निकले भी नहीं थे, कि वे वहांसे चल दिये। जो कुछ हुआ, सोई अच्छा हुआ। क्योंकि उस समय उनका क्रोध यहांतक अनिवार्य होगया था, कि एक पांच मिनटके अन्दर ही पचास बार उनके मनमें आया होगा कि, अब जो कुछ करना-धरना है, यहीं एकदम करके एक बार अपनी वैरतृष्णाको शान्त कर लें। इधर रणदुल्लाख़ांने भी सोचा कि, इसको रोककर जो कुछ हमको कहना है, एक बार कह दें; पर नानासाहबका उपर्युक्त भाषण और उनका वहांसे प्रयाण, ये

दोनों बातें इतनी शीघ्रतापूर्वक हुईं कि, रणदुल्लाख़ांको विचार करने और बोलनेका अवसर ही नहीं मिला। अप्पासाहब तो बिलकुल चुपही बैठे रहे। हां,इतना अवश्य जान पड़ा कि,उन सब बातोंको देखकर वे कुछ चकितसे होरहे हैं। ऐसा जान पड़ा कि, नानासाहबके चले जानेके दस-पांच मिनट बादतक जैसे कोई बात उनकी समझमें ही न आई हो। नानासाहबके चले जानेपर कुछ देरतक रणदुल्लाख़ां और वे, दोनों ही बिलकुल चुप रहे। कोई किसीसे कुछ नहीं बोला। सिर्फ, आपसमें एक दूसरेकी ओर देखतेभर रहे। रणदुल्लाख़ां इतनी रातको उनके पास आया था, ऐसी दशामें उनको उससे कहना चाहिए था कि, "आइये बैठिये"; और साथ ही इस बातकी भी पूछ-तांछ करनी चाहिए थी कि, "कहिये, इस समय क्यों आये?" पर अप्पासाहबको मानो किसी बातका भान ही नहीं रहा। बहुत देर बाद मानो वे होशमें आयेसे दिखाई दिये; और इतनेमें रणदुल्लाख़ां भी उनसे कहता है, "मैं आज, इस समय, घरसे चलकर यहां आया,इसका एक विशेष कारण है। वास्तवमें मुझसे एक अपराध होगया है, और उस अपराधको आपके सम्मुख बतलाकर आपसे क्षमा मांगनेके लिए मैं आया हूं। 'अपराध होगया है, यह कहनेकी अपेक्षा यही कहना विशेष उपयुक्त होगा कि, 'अपराध हुआ होता।' क्योंकि जो होगया, वह तो अपराध है; और 'जो हुआ होता,' वह अपराधके देखते हुए कुछ भी नहीं है—जो हो, बीचमें यह एक विलक्षण

ही मामला उपस्थित होगया। अस्तु। अब इस बातका मुझे कुछ भी ख़याल नहीं है, कि उस अपराधको यदि मैं साफ़ तौरसे आपके सामने बतला दूंगा, तो आप मुझे क्या समझेंगे, अपने लड़केकी ही तरह मुझसे भी द्वेष करने लगेंगे, या और कुछ करेंगे—आप जो कुछ भी करें—पर यह अपराध मुझसे हुआ अवश्य है; और वह मेरे व्रतके बिलकुल विरुद्ध हुआ है, पर जितना कुछ हुआ है, उससे अधिक कुछ भी नहीं हुआ है। ईश्वरने मुझे समयपर ही जागृत कर दिया; और इसके लिए मैं उसके जितने भी उपकार मानूं, थोड़े हैं! सम्भव है कि, मैंने एक बार आपके सम्मुख अपना अपराध स्वीकार किया; और आप मुझसे द्वेष करने लगें—उस दशामें फिर आप शायद मेरा मुखतक देखना उचित न समझेंगे—फिर भाषण करना तो दूरकी बात है; और इसी विचारसे मैं एक आनन्द-समाचार आपको पहले ही सुना दूं, जोकि मुझे अभी हालहीमें मालूम हुआ है। आप इतने दिनसे यहां हैं; और अब आपका यहां रहना सफल हुआ—दरबारमें इस बातका प्रस्ताव निश्चित होगया है कि, अब आपको फिर अपने क़िलेपर भेजनेका हुक्म निकाल दिया जाय। अब एक ही दो दिनमें वह हुक्म आपके हाथमें आजायगा; और सुलतानगढ़का सारा अधिकार फिर आपको मिल जायगा। इसके सिवाय, यह भी मालूम हुआ है कि, आपके क़िलेकी तरफ़ उपद्रव विशेष रूपसे बढ़ रहा है, अतएव उसको दमन करनेके लिए आपको दो सौ अश्वारोही

और भी मिलेंगे, तथा यह भी इजाज़त मिलेगी कि, पदातिक सेना आप चाहे जितनी और रख सकते हैं। "अप्पासाहब, यह सब ठीक ही हुआ; क्योंकि आपकी स्वामिभक्ति ही ऐसी है। आज नहीं,तो कल आपकी सचाई हुज़ूर-दरबारके ध्यानमें आती ही; और आपकी इज्ज़त और प्रतिष्ठा फिर भी वैसी ही होती। मैं तो सिर्फ एक निमित्तमात्र हुआ! मैं ही नहीं, मुरारपन्त भी आपके लिए बड़ी कोशिश करते रहे। सबके प्रयत्नोंका फल मिला। पर मेरे हाथसे जो अपराध होगया है, वह अवश्य ही......"

रणदुल्लाख़ां बीचमें कुछ लड़खड़ाया। उसके मुँहसे शब्द ही न निकलने लगा। अप्पासाहब उत्सुकतापूर्वक उसकी ओर देखने लगे। यह सब वह क्या कह रहा है, सो कुछ उनकी समझमें न आया। रणदुल्लाख़ांकी आजकी बातचीतमें और पहलेकी बातचीतमें उन्हें बहुत अन्तरसा दिखाई दिया। क्योंकि आजतक वह अप्पासाहबसे बहुत ही अदब और अपनत्वके साथ बातचीत किया करता था; और आजके उसके भाषणमें भी यद्यपि अदबकी मात्रा कुछ कम न थी; फिर भी अपनत्व उतना नहीं था। इसके सिवाय यह भी दिखाई दिया कि, जैसे पश्चात्तापके साथ कोई बातचीत कर रहा हो। यह बात क्या है, सो कुछ भी अप्पासाहबके ध्यानमें न आया। हमारे बेटेने जो भयंकर बात बतलाई, उसमें तो कोई सचाईका अंश नहीं? हमारे लड़केके मुखसे तो सब मालूम ही होचुका—शायद यही

समझकर यह अधम प्राणी इस बातका प्रयत्न करता हो कि, सब बातें साफ़ साफ़ बतलाकर; और पहले किलेदारी वापस मिलनेका समाचार सुनाकर, इनका मन अपने साथमें लेलें; और फिर, निर्लज्जतापूर्वक, इनके मनको उस दुष्कार्यके अनुकूल करा लेनेका यत्न करें! यह विचार क्षणमात्रके लिए अप्पासाहबके मनमें आया; और उनकी चेष्टा कुछ बहुत ही विचित्रसी होगई। क्रोधकी छाया उसपर दिखाई देने लगी। परन्तु इतनेमें रणदुल्लाखांके पहलेके ये शब्द—"नहीं, कभी नहीं किया! इसके लिए चाहे जैसा विश्वास करा देनेको वह तैयार है"—उनको स्मरण होआये; और उसका अबतकका सदाचार भी उनके ध्यानमें आया। उसके हाथसे इतनी नीचता होगी—सो भी हमारे कुलके साथ, जिसकोकि वह इतना चाहता है—यह बात अप्पासाहबकी समझमें नहीं आई। अच्छा, तो फिर यह इतनी गूढ़तासे क्यों बात कर रहा है? बार बार कहता है कि, अपराध हुआ—अपराध हुआ होता—यह क्या बात है? क्षमा किस बातकी मांगता है? अप्पासाहब कुछ भी स्थिर न कर सके। हां, स्थिर करनेमें कष्ट उनको अवश्य हुआ। बहुत देरतक वे उसी उत्सुक अवस्थामें चुप बैठे रहे; और रणदुल्लाखांके चेहरेकी ओर, जिसेकि वह लज्जाके कारण नीचे किये हुए था, देखते रहे; पर अन्तमें उनसे न रहा गया; और वे बोले, "ख़ांसाहब, आपके हाथसे मेरा अपराध क्या होगा? और मैं एक मामूली आदमी उस अपराधके लिए आपको क्षमा

क्या करूंगा ? आपके कृपाछत्रके नीचे मैं यहां आया, स्वामीकी दृष्टि वक्र होनेपर भी आपने मुझे आश्रय दिया। आदर करके आप लाये; और इसीलिए मैं यहां आया। नहीं तो अन्ततक न जाने कहां देशविदेश घूमता होता, अथवा क़िलेकी किसी काल-कोठरीमें दिन काटता होता। आप, 'क्षमा करो, क्षमा करो,' बार बार कहते हैं, यह मुझको अच्छा नहीं लगता। ऐसा अप-राध आपके हाथसे क्या होसकता है ?"

अप्पासाहबका अन्तःकरण यही कहता था कि, यदि इसका कुछ अपराध होगा भी, तो वही होगा, जो नाना क्रोधके साथ बतला गया है; और सचमुच यदि वही अपराध होगा, तो क्षमा करना तो एक ओर रहा, इसका कलेजा इसी क्षण चूसना होगा। जो हो। परन्तु अप्पासाहबने अपना अभिप्राय कुछ भी बाहर प्रकट नहीं होने दिया।

रणदुल्लाख़ांने अप्पासाहबके मुखसे उपर्युक्त भाषण सुना; और कुछ देरतक बिलकुल चुप रहा। उसने अपनी गर्दन नीची कर ली; और ऐसा जान पड़ा कि, जैसे उसे अपने किसी किये हुए कर्मके विषयमें पश्चात्ताप होरहा हो। इसके सिवाय, यह भी दिखाई दिया कि, उसकी जिह्वापर बार बार शब्द आते थे, पर उसे कहनेका साहस ही न होता था। हमारे पाठकोंको कुछ देरके लिए शायद यह विसंगत मालूम होगा कि, अप्पासाहबके समान एक मामूली क़िलेदारके आगे, बीजापुर राज्यका एक बड़ा भारी प्रभावशाली सरदार, रणदुल्लाख़ां, गर्दन नीची किये

हुए अपने अपराधके लिए क्षमा मांगे—यह कैसे सम्भव है; पर वास्तवमें रणदुल्लाखां एक बहुत ही सच्चा और न्यायप्रिय पुरुष था, अतएव उसको अपने कुछ कार्योंके विषयमें खेद होरहा था; और इसीकारण, यह सोचकर, कि जो बात हमसे होगई है, उसको, जहांतक होसके, सुधारनेका प्रयत्न किया जाय, वह इस समय उपर्युक्त रीतिसे क्षमा मांगनेके लिए गर्दन नीची किये हुए बैठा था। अन्तमें उसने समझा कि, अब कह डालनेमें ही भलाई है, अतएव वह बहुत धीरेसे, शान्त और गद्गदस्वरके साथ, अप्पासाहबसे कहता है:—

अप्पासाहब, मैं आपको सारा वृत्तान्त बतलाता हूं, उसे सुन लीजिए। परन्तु उसको बतलाते समय बीचमें यदि आपके मनमें कोई सन्देह हो, तो क्षणभरके लिए उसे दूर ही रखें। आपको यदि क्रोध आवे, तो क्षणभरके लिए उसे मनहीमें रखें। मेरे कहते समय आपके मनमें अनेक सन्देह आवेंगे—आपको क्रोध भी आवेगा, क्योंकि मेरा अपराध ही वैसा है; परन्तु जब-तक मेरा कथन समाप्त न होजाय, जबतक मैं यह न कह दूं कि, 'अब समाप्त हुआ,' तबतक आप बराबर सुनते रहें; और फिर जो कोई सन्देह आपके मनमें आवें, उनका ख़ुलासा कर लें, इस बीचमें आप अपने क्रोधको सम्हाले रहें, बस, यही मेरा कहना है। मैं आपके लिए आपके लड़केके समान हूं; और, यद्यपि मैं यह स्पष्ट देख रहा हूं कि, आपने, उसके स्वामिद्रोहके भयंकर अपराधपर, उसको भी क्षमा नहीं किया है, फिर भी मैं

आपके सामने, अपनेको आपके लड़केके समान ही बतलाकर, क्षमा मांग रहा हूं; यह भी एक विचित्रता ही है। क्योंकि मेरा अपराध ही ऐसा है कि, जैसे ऊपर ऊपरसे मित्रता दिखलाकर भीतरसे विश्वासघातसा किया गया हो—अथवा कमसे कम विश्वासघात करनेका उद्देश्यसा रखा गया हो। यह सब मैं भलीभांति जानता हूं, फिर भी कहनेका साहस करता हूं। अप्पासाहब, आप समझते ही हैं कि, हम जितने मुसलमान हैं, सभी एक प्रकारसे बदमाश हैं; और आपके इस ख़यालको, मेरे उस व्यवहारसे, एक प्रकारकी पुष्टिहीसी मिलेगी; पर...पर..."

आगे रणदुल्लाख़ांके मुखसे शब्द न निकलने लगा। उसका कण्ठ बिलकुल गद्गदसा होगया। उसका गद्गदस्वर सुनकर अप्पासाहबका भी कुछ विचित्र हाल होगया। रणदुल्लाख़ांकी वह दशा देखकर वे मानो अचम्भितसे रह गये। कुछ कहनेकी उनको इच्छा हुई; पर एक अक्षर भी बोल नहीं सके।

इतनेमें, क्षणमात्र स्तब्ध रहकर, रणदुल्लाख़ां फिर कहता है, "मैं वह वृत्तान्त आपको बतलाता हूं; पर, पहले इसके, आपसे यह प्रार्थना है कि, उसका एक अक्षर भी मिथ्या न समझें। मैं अब जो कुछ बतलाऊंगा, सो अन्ततक अक्षरशः सत्य ही बतलाऊंगा..."

इतना कहकर वह फिर ठहर गया। और कुछ देर बाद, मानो सब बातोंको अच्छी तरह सोच-समझकर, वह फिर कहता है, "हुज़ूरने सैयदुल्लाख़ांको आपके यहां भेजनेका विचार

त्यागकर फिर मुझको वहां जानेका हुक्म दिया। मैं मंज़िल-दरमंज़िल तै करते हुए सुलतानगढ़से कुछ दूर उस गोटेश्वरके मन्दिरके पास जाउतरा। वहीं एक मराठा युवक और उसके साथ एक स्त्री भी उतरी थी। उस युवकके सौन्दर्यके विषयमें मेरे नौकरोंने मुझसे बहुत प्रशंसा की। इतनेमें मेरी भी इच्छा हुई कि, उसे देखना चाहिए। इसके बाद जबकि वह उस स्त्रीके साथ वहांसे जाने लगा, तब मैंने उससे आग्रह किया कि, आप मुझसे मिले बिना यहांसे मत जाइये। उसने मेरी नहीं सुनी, तब मैंने प्रत्यक्ष रूपसे तो नहीं; किन्तु अप्रत्यक्ष रूपसे उसके साथ एक प्रकारकी कठोरता ही दिखलाई। अपने नौकरको चार-पांच बार उसके पास भेजा; और उसको मिलनेके लिए बुलाया। उसको देखते ही उसके सौन्दर्यपर मैं इतना मोहित हुआ; और फिर मेरी यही इच्छा हुई कि, क्षणभरको भी मैं इसको अपने पाससे अलग न करूं। यह सोचकर मैंने यह निश्चय किया कि, अब जहांतक होसकेगा, मैं इसको अपने पाससे अलग नहीं होने दूंगा। अतएव मैंने उससे बार बार कहा कि, "आप मेरे साथ बीजापुर चलें, मैं दरबारमें लेचलकर बादशाहसे आपकी मुलाक़ात कराऊंगा; और आपको एक बड़ीसी सरदारी दिलाऊंगा।" उसने उत्तरमें यही कहा कि, मेरे साथमें स्त्री है, मैं एक मामूली आदमी हूं, मुझे सरदार इत्यादि होनेकी बिलकुल इच्छा नहीं, जिस दशामें मैं हूं, वही मेरे लिए अच्छी है। इस प्रकार अनेक बातें करके उसने यही जतलाया

कि, सरदारीकी उसको बिलकुल ज़रूरत नहीं है; परन्तु मैं उसकी मोहनी मूरत और उसके मधुर भाषणपर इतना मुग्ध हुआ कि, बार बार उससे यही कहा कि, "आपको चाहे इच्छा हो, चाहे न हो; परन्तु मेरे साथ तो आपको चलना ही होगा; और जो ऊंचा पद मैं आपको दिलाऊंगा, उसे स्वीकार करना ही होगा।" वह इस बातपर बिलकुल राज़ी नहीं था; पर मैंने निश्चय कर लिया कि, इसको मैं अब छोड़ूंगा नहीं। इसके बाद फिर वह ज्यों ज्यों 'नहीं नहीं' कहने लगा, त्यों त्यों मेरा उपर्युक्त निश्चय और भी दृढ़ होने लगा। उसने जितनी कुछ अपनी कठिनाइयां मुझसे बतलाईं, सब मैंने अपनी तरफ़से दूर कर दीं। अन्तमें उसको मेरे साथ चलनेके लिए राज़ी ही होना पड़ा। मेरी इच्छा नहीं होती थी कि, क्षणभर भी वह मेरे पाससे कहीं अलग हो; और इसीकारण मैंने उसे अपनी स्त्रीको भी भेज आनेकी इजाज़त नहीं दी। मुझको एक प्रकार-का शौक ही लग गया कि, उसको मैं अपने पाससे कहीं जाने न दूं; और उसकी सत्संगति जितनी प्राप्त कर सकूं, उतनी प्राप्त करता रहूं। उस मन्दिरके पाससे अपनी छावनी उठाकर मैं फिर आपके क़िलेपर आया। वहां उसने मुझसे यही याचना की कि, बीजापुर लौटते समय मैं आपकी उससे मुलाक़ात न होने दूं। इस बातके लिए उसने मुझे कई कारण भी बत-लाये, जोकि मुझे बिलकुल उचित जान पड़े; और मैंने उसे एक मुक़ाम आगे ही बीजापुरको भेज दिया। परन्तु इस

ख़यालसे कि, कहीं वह मुझे धोखा देकर चला न जावे, मैंने उसको बड़े बन्दोबस्तके साथ बीजापुर भेजा था।"

इतना कहकर रणदुल्लाख़ां कुछ देरके लिए बिलकुल चुप होगया, मानो उसे यही न सूझने लगा कि, अब आगे वह क्या कहे। कुछ देरतक वह चुप बैठा हुआ कुछ सोचतासा रहा। इधर अप्पासाहब उसकी बातें चुपचाप बैठे सुन रहे थे। परन्तु यह बात उनके ध्यानमें नहीं आरही थी कि, रणदुल्लाख़ां ये सब क्या बातें उनसे कह रहा है; और क्यों कह रहा है। वह ख़ूबसूरत मराठा युवक कौन था? इसको वह उस मन्दिरमें कैसे मिल गया? और यह उसपर इतना प्रसन्न होकर ज़बरदस्ती उसको सरदारी क्यों देने लगा? इत्यादि बातोंमेंसे कोई भी बात बुड्ढे के ध्यानमें नहीं आई। और सबसे आश्चर्यकी बात तो अप्पासाहबको यही जान पड़ी कि, यह हमसे क्षमा किस बातकी मांगनेवाला है? अभीतक इसने जितनी बातें बतलाई हैं, उनसे तो इसका कोई अपराध प्रकट नहीं हुआ, फिर क्षमा किस बातकी? कुछ भी उनकी समझमें नहीं आया; और वे पागलकी तरह उसकी ओर देखते हुए बैठे रहे।

अब रणदुल्लाख़ांने मानो अपने विचारोंको फिरसे सुव्यवस्थित स्वरूप देलिया, अथवा यों कहिये कि, जितने अवकाशकी उसे आवश्यकता थी, उतना उसे मिल चुका। अतएव, इसके बाद वह फिर कहता है, "अप्पासाहब, उस समय मैं एक प्रकारसे उतावला होरहा था कि, कब मैं आपके साथ एक बार

बीजापुर पहुँचूं; और उस आगे गये हुए मराठा युवकसे मिलूं! क्षण क्षणपर मुझे यही मालूम होता कि, मैं एक बड़े भारी मोहपाशमें फँस गया हूं—और बराबर उसमें अधिकाधिक अपनेको फँसाता ही जारहा हूं— न जाने इसका परिणाम क्या होगा? यह कुछ अच्छी बात नहीं है। परन्तु फिर ज्यों ही उस मराठे युवकके सहवासका लोभ हृदयमें आने लगता, त्यों ही फिर मेरा वह सारा विचार दूर भाग जाता। अन्तमें बीजापुरमें आकर मैंने उसको अपने ही महलके पास एक महलमें रखा; और वह कहीं मुझे धोखा देकर भाग न जावे, इस विचारसे उसपर पहरा भी रख दिया। अब मैं इस बातके लिए सदैव ही उत्सुक रहने लगा कि, उस युवकके सहवासका लाभ जहांतक मुझको मिल सके, मैं उसे प्राप्त करता रहूं— कमसे कम उसके दर्शन ही नित्य करता रहूं। मुझको अवश्य ऐसी उत्सुकता थी, पर उसे इस विषयमें कोई उत्सुकता न थी। यही नहीं, बल्कि, जहांतक उससे होसका, वह मुझसे दूर ही दूर भागता रहा; और अबतक भी उसका ऐसा ही प्रयत्न रहता है। वह रात-दिन बड़ी ही सावधानीसे रहता है। मैंने उसके हितकी इच्छा रखकर बहुत प्रयत्न किया कि, वह मुझसे प्रेम करे; पर वह मेरे प्रति सिर्फ आदरभाव रखता है; और जब जब मैं मिलता हूं, वह यही मुझसे कहता है कि, "अब मुझे जाने दीजिये, अब मुझे अपने देशको जाने दीजिये।" इसके सिवाय और कोई बात ही नहीं। परसोंतक यही दशा रही। किन्तु परसों

मेरी आंखें खुलीं। मेरे ध्यानमें आगया कि, इतने दिनतक जो मैं इस मोहजालमें पड़ा रहा, यह मेरी बड़ी भारी मूर्खता हुई। मुझमें पूरा पूरा आत्मसंयम नहीं; और इसकारण—अभीष्ट-सिद्धि तो अलग रही—उस युवकके लिए और मेरे लिए यह एक बहुत बड़ा बुरा मौक़ा आगया। बस, तभीसे मेरा हृदय अत्यन्त उद्विग्न होरहा है, मेरे मनको अत्यन्त पश्चात्ताप होरहा है; और उसी पश्चात्तापके वश होकर मैं आपके पास अपने अपराधके लिए क्षमा मांगने आया हूं।"

इतना कहकर रणदुल्लाख़ां फिर चुप होगया। अप्पासाहब-अत्यन्त आश्चर्यके साथ उसकी ओर देखने लगे। कोई बात उनकी समझहीमें न आई। रणदुल्लाख़ांने जो वृत्तान्त बतलाया, उसमें अपराध कहां है? और अपराध भी हमारे साथ! हमारे साथ इसमें कौनसा अपराध? अप्पासाहबके कुछ ध्यानमें नहीं आया। अतएव कुछ देर वे इस बातकी प्रतीक्षामें रहे कि, रणदुल्लाख़ां शायद और कुछ कहे; पर जब उन्होंने देखा कि, रणदुल्लाख़ां अब और आगे कुछ नहीं कहता, तब वे उससे कहते हैं, "ख़ांसाहब, आपका यह कूटक कुछ मेरी समझमें नहीं आया।" रणदुल्लाख़ां चुप ही रहा; पर फिर कुछ देर बाद कहता है, "हां, कूटक तो है ही; परन्तु इस कूटकको खोलनेवाला शब्द अब मैं कहूंगा—आप उसको सुनकर चकित न होइयेगा; और न क्रोधके वश होइ-येगा। मैं आगे जो कुछ कहूं, उसे अन्ततक सुन लीजिए; और फिर जो कुछ निश्चय करना हो, सो कीजिए—इस बातका

मुझे वचन दीजिए, तब आगे मैं कुछ कहूं। अब आगे जो वाक्य मैं कहूंगा, उसे सुनकर आप चमत्कृत होंगे, मेरे ऊपर क्रुद्ध होंगे, मुझे विश्वासघातक कहेंगे; और मैं अंशतः वैसा हूं भी। पर पहलेपहल मैं जितना विश्वासघातक मालूम होऊंगा, उतना सचमुच ही मैं नहीं हूं; और इस बातका विश्वास आपको मेरा सम्पूर्ण भाषण सुनकर ही होगा। हां, पहलेपहल क्रोध अवश्य आवेगा; परन्तु आप उसके वश न होंगे, अन्ततक मेरा कथन सुन लेंगे, इस बातका मुझे वचन दें, तब मैं कहूं।"

अप्पासाहब यह सब सुनकर बड़े गोलमालमें पड़े। पर अन्तमें एकदम कहते हैं—"अच्छा वचन! दिया वचन!!"

रणदुल्लाख़ां कुछ देर चुप रहा; और फिर एकदम धीरेसे कहता है:—

"अप्पासाहब, वह युवक मराठा पुरुष—और कोई नहीं—आपकी पतिव्रता पुत्रवधू है।"

पचपनवां परिच्छेद ।

आगे क्या हुआ ?

रणदुल्लाख़ांके उपर्युक्त शब्द सुनते ही अप्पासाहबकी क्या अवस्था हुई होगी, पाठकगण इसकी कल्पना करें। प्रथमतः उनको अत्यन्त क्रोध आया। फिर तुरन्त ही मानो उनको यह शंका हुई कि, हम यह सब स्वप्नमें सुन रहे हैं, अथवा जागृतावस्थामें; और इस शंकासे वे पागलकी तरह इधर-उधर देखने लगे। परन्तु जब उन्हें यह भान हुआ कि, नहीं, हम स्वप्नमें नहीं हैं—यह सब हमारी जागृतावस्थाकी ही बात है; और सच है—तब उन्हें फिर बड़ा क्रोध आया; और रणदुल्लाख़ाकी ओर वे अत्यन्त क्रुद्ध दृष्टिसे देखने लगे। उस क्रोधके कारण, ऐसा जान पड़ा, मानो उस समय उनके शरीरमें हाथ-पैर उठानेतककी शक्ति नहीं रह गई।

रणदुल्लाख़ां पहले ही जानता था कि,हमारी बातोंको सुनकर अप्पासाहबकी ऐसी दशा अवश्य होगी। उसने यह भी सोच लिया था कि,उस दशामें हमारा कुछ देरतक चुप ही बैठना उचित होगा। उस समय हम कुछ नहीं बोलेंगे; और उनके क्रोधके उफानको कम होने देंगे। यही नहीं, बल्कि उस क्रोधके आवेगमें यदि वे कुछ देरतक कुछ कहेंगे भी, तो भी शान्तिपूर्वक सुन लेंगे; और ऐसा ही करना हमारे लिये उचित होगा—

इस प्रकारका सारा विचार उसने अपने मनमें कर लिया था। उसने भलीभांति सोच लिया था कि, जो अपराध हमसे हुआ है, उसे साफ़ साफ़ बतलाकर क्षमा मांगना ही इस समय हमारा कर्तव्य है; और ऐसा करनेमें ही हमारा सच्चा पुरुषार्थ है। वह अन्य लोगोंके समान न था। अतएव, उचित समय बीत जानेपर, यह सोचकर, कि अब फिर यदि हम आगे बोलने लगेंगे, तो कोई हानि नहीं, वह आगे कहता है:—

"अप्पासाहब, मैं यह पहले ही जानता था कि, मेरे इन शब्दोंके उच्चारण करते ही आप क्रोधसे बिलकुल लाल हो-जायँगे। यही नहीं, बल्कि मैंने तो यहांतक समझा था कि, आप कदाचित् मुझे मारनेतक दौड़ेंगे। और आप यदि इस क्रोधके वश होकर मुझे मारने भी दौड़ते, तो भी मैं आपके विरुद्ध हाथ न उठाता; और न कुछ बोलता ही। आप चाहे जो दण्ड देते, मैं चुपकेसे उसे सह लेता। मृत्युदण्ड दिया होता; और अब भी देवें, तो मुझे स्वीकार है। किन्तु इस बातको मनमें मत लाइये कि, जो बात यह होगई, उसमें उस साध्वी-का कोई भी सम्बन्ध है, अथवा उसके शुद्ध नाम और उसके विशुद्ध व्रतमें कलंक लगनेयोग्य कोई कार्य हुआ है। वह मेरे लिये माताके समान पूज्या है…"

रणदुल्लाखांके मुखसे धीरे धीरे ये शब्द बाहर निकल रहे थे; और उनके साथ ही अप्पासाहबका क्रोध भी क्रमशः कम होता जारहा था; और अन्तके शब्दोंसे तो, ऐसा जान पड़ा

कि, उनका क्रोध बिलकुल ही विलीन होगया। परन्तु फिर भी उन्होंने अपना सिर ऊपर नहीं उठाया; क्योंकि उस समय यह बात उनके मनमें चुभ रही थी कि, हमारे लड़केने रण-दुल्लाख़ांके दुष्कार्यके विषयमें जो कुछ कहा था, सो यद्यपि पूरा पूरा प्रत्यक्ष घटित नहीं हुआ, तथापि उसके घटित होनेकी सम्भावना अवश्य थी। उनसे किसीने कह दिया था—अथवा कहला दिया था कि, तुम्हारी पुत्रवधू अपने मायके चली गई है; परन्तु यह बात उनसे किसने कही, सो उन्हें उस समय याद नहीं आरहा था। उन्होंने बहुत कुछ प्रयत्न किया, पर फिर भी याद नहीं आया। बीचमें बोलनेकी इच्छा होरही थी, पर बोल नहीं सके।

रणदुल्लाख़ां वैसा ही कुछ देर थमकर फिर आगे कहता है। "मेरा असली उद्देश्य बुरा था, यह बिलकुल सच है। मैं मोहपाशमें पड़ गया था। आपकी पुत्रवधूको जब यह मालूम हुआ कि, कल आप क़ैद किये जायँगे; और आपको क़ैद करनेके लिये सैयदुल्लाख़ां आवेगा, तब उन्हें बहुत भय मालूम हुआ; और वे नानासाहबके वस्त्र पहनकर अपनी दासीके साथ रात ही रात निकल पड़ी। परन्तु पुरुषका भेष धारण करनेसे शक्ति थोड़े ही आजाती है! उस गोटेश्वरके मन्दिरतक जैसे-तैसे करके आईं; और फिर मेरी छावनीमें पकड़ी गईं। पहले ही पहल देखकर मैंने उनका भेष पहचान लिया, पर यह बात प्रकट नहीं होने दी। हां, यह मुझे नहीं मालूम था कि, इससे आपका कोई

सम्बन्ध है। यह बात आगे चलकर मालूम हुई, जबकि मैं अधिकांश रूपसे मोहपाशमें फँस चुका था। उसमें फिर हमारे नौकरने और भी वृद्धि कर दी। उसने तुरन्त ही ताड़ लिया कि, मैं मोहमें पड़ गया। और मेरे मनमें न रहते हुए भी—उस मोहपाशसे छूटनेके लिए मेरे प्रयत्न करते रहनेपर भी—उसने मेरे आसपास मोहका जाल और भी विशेष रूपसे फैलाया। किसीने नहीं जान पाया—हां, मेरी बहनने मुझसे कहा कि, तुम ऐसे पागलपनमें मत पड़ो; और अप्पासाहबसे सब हाल बतलाकर क्षमा मांगो। परन्तु मैंने उसकी भी नहीं सुनी। मोह-जालको तोड़नेका मुझे साहस ही न हुआ। अन्तमें यहांतक नौबत आई कि, नानासाहब न जाने यहां किस कामको और कैसे आये, मेरे नौकरको उनके आनेकी ख़बर लग गई; और उसने बदमाशी करके उनको पकड़कर मेरे महलके तहख़ानेमें बन्द कर दिया। मुझको मालूम भी नहीं होने दिया। उसका इरादा बहुत भयंकर था। और—और मैं भी उसके जालमें फँसकर देखी-अनदेखी कर रहा था। किन्तु मेरी बहनने मुझे चेतावनी दी कि, यह बात अच्छी नहीं। उसने मुझे बड़े अच्छे मौक़ेपर चेतावनी दी; और मैं तुरन्त ही नानासाहबको छुड़ानेके लिए गया। इतनेमें किसी तरहसे वे छूट भी चुके थे। उस समय मेरा विचार हुआ कि, यही सब बातें, जो अभी मैंने आपको बतलाईं, उनको बतलाकर क्षमा मांगूं; पर मेरा यह विचार पूरा नहीं होसका। उनका मन मेरे विषयमें—और

अत्यन्त दुःखकी बात यह है कि, मेरे कारण अपनी पतिव्रता पत्नीके विषयमें भी—कलुषित होगया। उन्होंने क्षणभर भी मेरी बात नहीं सुनी; और मुझे मार डालनेतककी प्रतिज्ञा की। मेरे तहख़ानेसे छूटकर जब वे जाने लगे, तब मैंने उनको रोककर बहुत कुछ कहना चाहा; पर वे मेरी बात सुननेको क्षणभर भी खड़े नहीं हुए। उसके बाद, फिर आज अभी आपके यहां उनकी मुलाक़ात हुई; परन्तु यहां भी वे कड़ककर चले गये। अपने विषयमें मुझे कुछ भी ख़याल नहीं है; किन्तु इस बातका दुःख है कि, मेरे कारण उस साध्वीको कष्ट होगा। वह निष्कलंक है। वह अत्यन्त शुद्ध है। उसके समान पतिव्रता और कोई स्त्री शायद ही मिले। उसको कष्ट न मिलना चाहिए। मुझे चाहे जो दण्ड मिले, सहनेको तैयार हूं—कुछ भी नहीं बोलूंगा…"

रणदुल्लाख़ां फिर ठहर गया। उसका कंठ इतना गद्गद होगया कि, आगे कुछ कह ही न सका। उसे सचमुच ही अपने कृतकर्मोंपर क्लेश होरहा था। आख़िर मनुष्य ही तो है, सम्भव है कभी उसका मन उसके वशमें न रहे; परन्तु अन्तमें यदि वह फ़िसल न जाय, तो उसका उतना दोष नहीं। रणदुल्लाख़ां प्रथमतः मोहपाशमें फँस गया था; और दिन दिन फँसता ही जारहा था; परन्तु अन्तमें वह चेत गया—अथवा अन्य किसीने उसे चेता दिया। बुरा इतना ही हुआ, जो नानासाहबका चित्त अपनी पत्नीके विषयमें कलुषित होगया। और

सो भी उस, दशामें जबकि उस बेचारीका कुछ भी दोष न हो! अब नानासाहबका मन कैसे ठीक रास्तेपर आवे? बस, इसी एक विचारसे रणदुल्लाख़ां दुःखित होरहा था।

अप्पासाहबने रणदुल्लाख़ांका सम्पूर्ण कथन सुन लिया; और बहुत देरतक बिलकुल विचारहीमें मग्न रहे, जैसे उन्हें सूझता ही न हो कि, क्या कहें? परन्तु अन्तमें फिर वे रण-दुल्लाख़ांसे बोले, "अच्छा, अब वह कहां है?"

जिस महलमें मैंने रखा था, उसीमें अब भी वे हैं। महलके अन्दर यद्यपि उनको पूरी स्वतंत्रता थी, परन्तु इस विचारसे कि, वे कहीं चली न जावें, मैंने, उनको न मालूम होते हुए, उनपर निगरानी रख दी थी। फिर भी मैंने आजतक कभी भी उनके साथ कोई भी आक्षेपयोग्य भाषण अथवा व्यवहार नहीं किया। यही नहीं, बल्कि उनको यह भी नहीं मालूम होने दिया कि, मैंने उनका भेष पहचान लिया है। मेरा सारा प्रयत्न इसी हेतुसे था कि, उनके सत्संगसे जो आनन्द मुझे होरहा था, उससे मैं कहीं वंचित न होजाऊं। अब आप उनको अपने पास बुला लें। कलसे मैंने उनपरसे निगरानी भी उठा ली है। आपसे बार बार मेरी प्रार्थना यही है कि, आप मेरे इन वचनोंपर विश्वास रखें; और उनका पूर्वहीकी भांति आदर करें। एक बार नहीं, हज़ार बार मैं यही कहूंगा कि, वे मेरे लिए माताके सदृश वन्दनीया हैं। मैं मुसलमान हूं, इसी एक बातपर न जाइये—हम मुसलमानोंमें नीति और सदाचार नहीं है, ऐसा न समझिये।

रणदुल्लाख़ां और भी कुछ बोलनेवाला था कि, इतनेमें अप्पासाहब एकदम बोल उठे, "ख़ांसाहब, यह कभी नहीं हो-सकता कि, मैं आपके वचनोंपर विश्वास न करूं ; पर इसमें सन्देह नहीं कि, यह काम आपके हाथसे अच्छा नहीं हुआ ; बल्कि बहुत ही बुरा हुआ। अस्तु। अब मैं इस विषयमें आपसे कुछ न कहूंगा। आप उसे माताके तुल्य समझते हैं, इसीमें सब आगया। बस, मैं पहलेहीके समान उसका आदर करूंगा, सो कहनेकी आवश्यकता ही नहीं। उसके हाथसे कोई अमंगल-कार्य होगा, यह मेरे स्वप्नमें भी नहीं आसकता ; और न कभी आया। मुझे यदि यह मालूम होता, कि वह ऐसे संकटमें है, तो मैंने अपने प्राण देकर भी उसका छुटकारा किया होता। किन्तु मुझसे ऐसा कह दिया गया था कि, वह अपने बापके घर चली गयी। बस, इसी ख़यालसे मैं चुप बैठा रहा; और कोई सन्देह मुझे हो ही नहीं सकता था। अस्तु। कोई हानि नहीं, आपको अपने कार्यपर पश्चात्ताप हुआ ही है, अतएव अब विशेष कहना मुनासिब नहीं।"

अप्पासाहब इतना कहकर चुप होरहे ; और रणदुल्लाख़ां भी चुप ही रहा। आगे वह क्या कहे, सो कुछ उसके ख़यालहीमें न आता था। फिर कुछ सोच-समझकर कहता है— "अप्पासाहब, आपका कलही यहांसे छुटकारा होचुका है। कह नहीं सकते, क्या कारण हुआ—हुज़ूरने मुझसे आप ही आप पूछा कि, सुलतानगढ़के क़िलेदारका क्या हाल है? मैंने उनसे

कहा कि, सब ठीक है। यह सुनकर आज्ञा हुई कि, परसों उनको मुलाक़ातके लिए लेआओ। उनको हुक्म दिया जायगा कि, वे फिर पहलेहीकी भांति क़िलेपर जाकर अपने कामको सम्हालें।" इसके सिवाय अश्वारोही सैन्य बढ़ानेका हुक्म भी होनेवाला है, सो सब मैं आपको पहले ही बतला चुका हूं। आपकी 'ग्रहदशा' अब ठीक होगई। हां, आप जा ही रहे हैं, इसलिए एक प्रार्थना आपसे और करनी है। मेरी बहन, जिसकोकि मैं इतना प्यार करता हूं, दिन दिन अधिकाधिक क्षीण होती जाती है; और सुलतानगढ़पर जाकर रहनेकी उसकी रातदिन इच्छा होरही है। आप वहां अभीतक थे ही नहीं, इसकारण मैं वहां उसके रहनेका प्रबन्ध नहीं कर सका। अब आप जानेवाले हैं; और आपके साथ ही आपकी पुत्रवधू भी जायंगी। ऐसी दशामें मैं अपनी बहनको भी, उसकी दासीके साथ, वहां आपके साथ भेज देनेमें कोई हानि नहीं समझता। आप उसे अपनी लड़कीकी तरह रखेंगे, इसमें मुझे तिलमात्र भी शङ्का नहीं। उसकी इच्छाके अनुसार किया जायगा, तभी शायद वह और भी कुछ दिन जीवित रह सके, अन्यथा, क्या होगा क्या नहीं, कुछ कहा नहीं जासकता। आप उसे ले-जाइये; और वहां उसका प्रबन्ध रखिये। मैं बीच बीचमें आता रहूंगा। लगातार तो मैं रह नहीं सकूंगा—और रह भी सकूं; पर वैसी मेरी इच्छा नहीं है। फ़ातिमा उसके साथ रहेगी। इसके सिवाय और भी नौकर-चाकर दूंगा। मेरा रहना नहीं होसकेगा।"

यह अन्तिम वाक्य कहते समय रणदुल्लाख़ांका अन्तःकरण बहुत ही विकलसा दिखाई दिया।

अप्पासाहबने उसका कथन सुनकर पूछा कि, आपकी बहनको क्या होगया है? परन्तु रणदुल्लाख़ांने इसका कोई ठीक ठीक उत्तर नहीं दिया। इसके कुछ देर बाद वह वहांसे चला गया।

रणदुल्लाख़ांके वहांसे चले जानेपर अप्पासाहबकी कुछ बड़ी ही विलक्षण दशा होगई। बीजापुरमें जबसे वे आये थे, ऐसा विचित्र दिन उन्हें एक भी नहीं बीता था। इतने दिन उनको प्रायः इसी बातकी चिन्तामें बीते थे कि, अब क्या होगा, कैसा होगा, रणदुल्लाख़ांके भरोसे हमें कितने दिन और काटने होंगे, इत्यादि। नानासाहब उनके एकलौते बेटे थे, परन्तु वे खुल्लमखुल्ला जाकर बाग़ियोंके गोलमें शामिल होगये थे। बस, तभीसे अप्पासाहबने इस बातका प्रण कर लिया था कि, अब उसका कभी नामतक नहीं लेंगे। पर आप जानते ही हैं कि, हृदयका मोह कितना ज़बरदस्त होता है, अतएव अप्पासाहबने यद्यपि मुंहसे तो नानासाहबका नाम कभी नहीं लिया, तथापि मनसे हज़ारों बार लिया होगा। वे प्रायः सोचते रहते कि, देखो, हमारा लड़का राजद्रोही बनकर बादशाहके सामने नमकहराम हुआ, हमारी कुछ भी परवा न करते हुए शहाजीके लड़केके उपद्रवोंमें जाकर शामिल होगया। यह बात कुछ अच्छी नहीं हुई। अब भी यदि वह लौट आवे; और हमारे

पैरोंपर माथा रखकर क्षमा मांगे, तो रणदुल्लाखांके समान सरदारकी सिफारिशसे उसको बादशाहके सामने माफ़ी दिला दी जावे ; और कोई ऊंचा पद भी उसे दिला दिया जावे। ऐसा विचार उनके मनमें, एक बार नहीं, कई बार आया। किन्तु वह विचार उन्होंने शब्दोंद्वारा कभी किसीसे प्रकट नहीं किया। यही नहीं, बल्कि उनके व्यवहारमें भी कोई ऐसी बात कभी नहीं देखी गई कि, जिससे उनका उपर्युक्त विचार प्रकट होता हो। उनके नौकर-चाकर यदि कभी उनके सामने नानासाहबका नाम लेदेते, तो मानों उनकी आफ़त ही आजाती। ऐसी दशामें उस दिन जब उनका वह 'मृतवत्' पुत्र अचानक रातको उनके सामने आ खड़ा हुआ, तब उसे देखकर उनके मनमें क्षणमात्रके लिए—अथवा यों कहिये, क्षणलक्षांशमात्रके लिए—आशाके किरणकी एक छोटीसी झलक दिखाई दी। उन्होंने सोचा कि, कहीं यह अपने अपराधकी क्षमा मांगने ही तो नहीं आया? परन्तु ज्यों ही नानासाहबके मुखसे उन्होंने वे वचन सुने,त्यों ही मानों उनके आशांकुरपर बिजलीसी गिर पड़ी ; और फिर कृत्रिम निश्चिन्तता लाकर उन्होंने अपने पुत्रके साथ किस प्रकारकी बातचीत की, सो पाठकोंको पिछले एक परिच्छेदमें मालूम ही होचुका है। इस बातका उन्हें स्वप्नमें भी ख़याल नहीं था कि, उनका पुत्र बीजापुरमें इस प्रकारसे आकर रहेगा। परन्तु वह विचित्र बात भी, जो उनके ख़यालसे बिलकुल बाहरकी थी, होगई। यही नहीं, बल्कि उनका लड़का उनके सामने

आकर उनसे लड़-झगड़कर चला गया। अभी लड़केके द्वारा भयंकर बातें सुने उन्हें बहुत विलम्ब भी नहीं हुआ था कि, इतनेमें रणदुल्लाख़ांने आकर एक विचित्र ही घटनाका वृत्तान्त बतलाया; और अन्तमें उनको क़िलेदारी वापस देने और अपनी बहनको भी उनके साथ सुलतानगढ़ भेजनेकी बात निकाली। उस रातको ऐसी कुछ विलक्षण बातें, एकके बाद एक, होती चली गईं कि, वह बुड्ढा बहुत देरतक मानो इसी भ्रांतिमें पड़ा रहा कि, वह जाग रहा है अथवा स्वप्नमें है। बार बार वह उस रातकी उन्हीं बातोंका स्मरण करता रहा; और इस प्रकार उसे सुबह भी होगया।

दूसरे दिन सचमुच ही बादशाहके यहांसे अप्पासाहबका बुलावा आया; और बादशाहसे उनकी मुलाक़ात हुई। उनकी बड़ी इच्छा थी कि, बादशाह हमारे लड़केके विषयमें बात न निकालें, पर यह इच्छा उनकी सफल नहीं हुई। बादशाहने उनके लड़केकी बात निकाली ही। उसने कहा कि, आप अपने लड़केके मोहमें आकर नमकहराम न बन जावें। वह यदि आपके हाथमें आजाय, तो उसे समझानेका प्रयत्न करें, अथवा दरबारको ख़बर देकर उसको यहां भेज दें। बादशाहका यह कथन सुनकर मानो अप्पासाहबके ऊपर वज्रसा गिर पड़ा। उन्होंने सोचा कि, देखो, लड़का कल रातको हमारे सामने आया; और हमने उसको वैसा ही जाने दिया, यह हमने अपनी राजभक्तिके प्रतिकूल व्यवहार किया। इसपर उन्हें

सचमुच ही बड़ा दुःख हुआ ; और फिर यह सोचकर, कि अब चाहे जो हो, बादशाहके सामने भी एक बार इस बातका ज़िक्र कर ही देना चाहिए, वे अपनी जिह्वापर "हुज़ूर" यह शब्द लाकर कुछ कहने लगे; पर उनके मुखसे वह शब्द भी पूरा पूरा निकलने न पाया था कि, रणदुल्लाख़ां, जो वहां पास ही था, ताड़ गया; और बीचहीमें बोल उठा कि, "हां, हां, हुज़ूर, ऐसा करनेमें तो ये कभी नहीं चूकेंगे।" यह कहकर उसने बात बदल दी ; और वह मौक़ा टाल दिया। बादशाहकी तरफ़से जो हुक्म मिलने थे, अप्पासाहबको मिल गये; और उन्हें पहलेसे कुछ अधिक ही अधिकार प्राप्त हुए, तथा इस प्रकार वे वहांसे बिदा हुए।

परन्तु दो दिनमें इधर क्या कौतुक हुआ, सो देखिये। रणदुल्लाख़ांको जब अपने कार्यपर पश्चात्ताप हुआ, तब उसने एक दिन अपने मराठे सरदार, अर्थात् अप्पासाहबकी पुत्रवधू-परसे अपना वह प्रतिबन्ध, जो उसने अभीतक उसपर रखा था, कुछ कम कर दिया। यह मौक़ा देखकर उसी रातको—जिस रातको रणदुल्लाख़ां अप्पासाहबके पास अपना अपराध स्वीकार करने गया था—वह मराठा सरदार और उसके साथकी वह स्त्री, दोनों एकदम ग़ायब होगये। दूसरे दिन प्रातःकाल ही यह समाचार रणदुल्लाख़ांको मिलना चाहिए था; पर चूंकि अब उसने उस ओरसे अपना ध्यान हटा लिया था; और इधर उसे दरबारमें भी जानेकी जल्दी थी, तथा इस बातकी

उसे कोई शंका भी कभी न हुई थी कि, ऐसा कुछ होगा, अतएव वह उस ओरसे बिल्कुल निश्चिन्तसा था। इधर अप्पासाहबकी बादशाहसे मुलाक़ात होजानेके बाद वे दोनों ही वापस आये ; और रणदुल्लाख़ां इस विचारमें था कि, अब इन सब लोगोंको यहांसे रवाना करना चाहिए। इतनेमें उसे उपर्युक्त समाचार मिला; और वह बड़े चक्करमें पड़ गया। उस समय उसके मनकी जो दशा हुई, उसका वर्णन करना कठिन है। उसने बहुत कुछ ढूँढ़-खोज की, आदमी दौड़ाये ; पर कोई लाभ न हुआ। मराठा सरदार भग गया, कहीं उसका पता न लगा। इधर रणदुल्लाख़ां अप्पासाहबसे कह चुका था कि, अब आप अनी पुत्रवधूको लेजाइये; और अब उसे यह कहनेकी नौबत आनेवाली है कि, वह न जाने कहां चली गई। अतएव उसने सोचा कि, अब हम अप्पासाहबको जब यह समाचार बतलावेंगे, तब न जाने वे क्या ख़याल करें। हमारी बातोंका वे विश्वास करें या न करें! शायद वे यही सोचें कि, कोई न कोई युक्ति करके इसने, बादशाहसे हमारी मुलाक़ात करवाकर, हमको यहांसे टाल देनेका ही यह प्रबन्ध किया है ; और हमारी पुत्रवधूके विषयमें इसका वही नीच उद्देश्य बना हुआ है; सिर्फ़ हमको बीचमें बाधक समझकर ही इसने ऐसा किया है। अप्पासाहबके मनमें ऐसा विचार आना सम्भव है ; और उसमें उनकी कोई दोष भी नहीं। अब इस विचारको मैं उनके हृदयसे दूर कैसे करूंगा ? बस, इसी प्रकारके अनेक तर्क-

वितर्क रणदुल्लाख़ांके मनमें उठने लगे ; और उसकी चित्त-वृत्ति बड़े गड़बड़में पड़ी ।

छप्पनवां परिच्छेद ।

वापस जाते हैं ।

नानासाहब जिस समय बीजापुरमें अपने पितासे मिलने उनके घर गये थे, उस समय उनको बड़ी आशा थी कि, दुष्ट रणदुल्लाख़ांने हमारे कुलमें जो कलंक लगाया है, उसके परि-मार्जित करनेकी अपनी प्रतिज्ञा जब हम पिताजीको बतलावेंगे, तब अवश्य ही उनको भारी क्रोध आवेगा; और वे हमारे पक्षमें आमिलेंगे। इससे सुलतानगढ़का क़िला बहुत जल्द हमारे हाथमें आजायगा। और जब सुलतानगढ़के समान सुदृढ़ और भारी क़िला हमारे हाथमें एक बार आजायगा, तब उसके बाद और भी अनेक क़िले क्रमशः, एकके बाद एक, राजा शिवाजी हस्तगत कर सकेंगे,तथा अपने उद्देश्यके अनुसार मराठा-राज्यकी नींव वे चारों ओर जमा लेंगे। परन्तु यह उनकी आशा सफल नहीं हुई। हमारे कुलमें इन दुष्ट मुसल्लोंने बड़ा भयङ्कर बट्टा लगाया। अब, उनका रक्तपात करके इसका परिशोध करनेके लिए हमारे अतिरिक्त और कोई भी नहीं। यह नाना-साहबने भलीभांति समझ लिया, किन्तु इससे वे निराश नहीं हुए, वरन् उनकी भयङ्कर दृढ़तामें और भी अधिक विशेषता

अागई। अभीतक शायद कभी कभी उनके मनमें अपनी प्रतिज्ञाके विषयमें कुछ शंका भी होजाती हो; परन्तु अब वह चट्टानकी तरह अटल होगई। अपने पिताके घरमें जिस समय नानासाहबने रणदुल्लाख़ांको देखा था, उसी समय उनके मनमें आया था कि, बस, अब यहीं अपने बैरका परिशोध करके अपनी प्रतिज्ञाका परिपालन करें, पर उस समय उन्होंने समझा कि, यह मौक़ा नहीं है; और न यह स्थान ही उपयुक्त है; और इतना विचार करनेहीभरको उस समय उनके मनमें स्थिरता भी थी। परन्तु जब वे वहांसे लौटे, उस समय उनका हृदय इतना अस्वस्थ और विक्षुब्ध हुआ कि, रणदुल्लाख़ांके अतिरिक्त और उन्हें कुछ सूझ ही न पड़ने लगा; और उसके किये हुए भयङ्कर अपराधके अतिरिक्त उनकी निगाहमें और कुछ रहा ही नहीं। उनकी इच्छा यह हुई कि, अब यहीं रह जावें। अब सुलतानगढ़, अथवा राजा शिवाजीके पास जानेकी आवश्यकता ही नहीं। यदि हमको अपनी प्रतिज्ञा पूरी करनी है; और सो भी जल्दी—तो इसके लिए सबसे उत्तम मार्ग यही है कि, रणदुल्लाख़ां जहां है, वहीं रहकर हम गुप्त रूपसे उसकी घातमें रहें; और फिर मौक़ा लगते ही उसका कामतमाम करें। बस, इसके सिवाय और कोई मार्ग नहीं है। अब लौट जाकर हम क्या करेंगे? इससे तो यही अच्छा है कि, हम उसकी छायापर नज़र रखकर बिलकुल उसकी छाया ही बन जावें। ऐसा ही करनेसे हमारा कार्य सिद्ध होनेकी सम्भावना है। बस, इन्हीं विचारोंमें निमग्न

होते हुए नानासाहब अपने पिताके घरसे निकलकर अपने उस काले-कलूटे सहायकके साथ चले जारहे थे। मार्गमें वे उस महाशयसे एक चकार शब्द भी नहीं बोले। बोलते क्या ? अपने विचारोंसे उन्हें फ़ुरसत ही न थी। जबतक वे अपने साथियोंमें नहीं जामिले, तबतक दूसरा कुछ उन्हें सूझा ही नहीं। उनका मन इतना उदासीन और खिन्न होरहा था कि, वे इधर-उधर कहीं देखतेतक न थे। अपने साथियोंके पास जापहुँचे, तब भी यही जान पड़ा कि, मुँहसे बोलनेकी उनमें शक्ति ही नहीं रही है। इतनी देरतक क्रोध, बैर-परिशोध, इत्यादि विकारोंके आते रहनेसे उनकी दशा ऐसी कुछ विलक्षण होगई थी कि, कुछ पूछिये नहीं। ऐसा जान पड़ता था कि, कहीं ये पागल न हो-जायँ। नानासाहब जब वहां लौटकर आये, तभी उनके साथियोंने उनकी उस विलक्षण चेष्टाको देखकर ताड़ लिया कि, जिस आशासे ये गये थे, उससे कोई फल नहीं निकला। इसलिए उन्होंने सोचा कि, जितनी जल्दी यहांसे चल सकें, चल देना चाहिए; और चूंकि उनका असबाब इत्यादि वहींपर था, अतएव अत्यन्त शीघ्रतापूर्वक कूच कर देनेका उन्होंने निश्चय किया। नानासाहबने अपना यह निश्चय प्रगट किया कि, हम बीजापुरमें ही रहकर अपने शत्रुसे बदला लेंगे। परन्तु अन्य लोगोंने उनकी बात नहीं सुनी; और कहा कि, बीजापुरमें इस समय तुम्हारा रहना ठीक नहीं होगा। यदि तुमको बदला ही लेना है; और चाहते हो, कि उसमें तुमको पूरी पूरी सफलता प्राप्त हो, तो

उसका पहला उपाय यही है कि, हम लोग बीजापुरसे एकदम चले जावें। तुम उसके मुँहपर कह चुके हो कि, हम तुम्हारा ख़ून करके बदला लेंगे, अतएव वह सावधान रहेगा; और इधर हम जब उसके पीछे पीछे छायाकी तरह रहेंगे, तब मुमकिन है कि, उसको पता लग जावे; और वह पकड़ लेवे। ऐसी दशामें उत्तम मार्ग यही है कि, हम बीजापुर छोड़कर एकदम चले जायँ, जिससे उसको यह मालूम होजाय कि, हम अब यहांपर नहीं हैं। और इससे वह कुछ दिनके लिए गाफ़िल होजायगा, तथा उसे यह ख़याल होने लगेगा कि, तुम्हारी वह प्रतिज्ञा और तुम्हारी वे बातें बिलकुल व्यर्थ थीं; और तब तुम एकदम यहां-पर आजाओ; और अपने कार्यमें लगो। बस, इसी तरीक़ेसे तुम अपने कार्यको ठीक ठीक सिद्ध कर सकोगे। इसके सिवाय अभी कुछ दिनतक तुमको उधर काम भी है। तुमने सुलतानगढ़के हस्तगत करनेमें सहायता देनेका वचन दिया है। कौन कह सकता है कि, सुलतानगढ़के हस्तगत करते समय ही तुम्हारी इच्छा तृप्त न होजायगी? इस प्रकारकी बातचीत हुई; और नानासाहबके उस अज्ञात साथीकी भी यही सलाह पड़ी कि, सचमुच ही उत्तम मार्ग यही है; और इसी मार्गसे आपका काम सिद्ध होगा। अपने शत्रुको कुछ दिनतक गाफ़िल रखना आव-श्यक है। इसके विना आपका उद्देश्य सिद्ध नहीं होसकता। उस साथीने अपनी निजकी स्थिति तथा अनुभवका भी कुछ अधिक दिग्दर्शन कराया; और नानासाहबके चित्तमें यह बात

जमा दी कि, वास्तवमें यही मार्ग ठीक है। नानासाहबको यह पहले ही मालूम होचुका था कि, हमारा यह साथी भी हमारी ही तरह किसी भयंकर अपमानका बदला लेनेके लिए प्रयत्न कर रहा है; और उस साथीने उनको अपना यह उद्देश्य बतला ही रखा था। अतएव उसके कथनका नानासाहबपर काफी प्रभाव पड़ा। फिर आज उसने और भी स्पष्टरूपसे बतलाया कि, हमने भी अपने अपमानके अनन्तर इसी प्रकार कुछ दिन अज्ञातवासमें रहकर समय बिताया है; और फिर उसके बाद अब अपना कार्य सिद्ध करने आये हैं। उसका युक्तिवाद नानासाहबकी समझमें पूरा पूरा आगया; और उस समय वह बात उनकी समझमें आगई, सो अच्छा ही हुआ। अब उन लोगोंको वहांसे चल देनेमें क्षणभरका भी विलम्ब लगानेकी आवश्यकता नहीं थी। इसके सिवाय एकदम एक साथ ही सब लोगोंका शहरसे जाना भी ख़तरेसे ख़ाली नहीं था। इसलिए सावधानीपूर्वक उन्होंने यह निश्चित किया कि, सब लोग एक साथ न चलकर अलग अलग चलें; और यहांसे सात कोसके अन्तरपर अमुक गाँवमें जाकर मिल जावें। बस, इसी विचारके अनुसार बहुत जल्द चारों आदमी शहरकी चार सीमाओंसे बाहर निकलकर चल दिये। नानासाहबके साथ उनका वह दूसरा साथी भी था। अतएव उन्होंने उससे आग्रह किया कि, आप भी अब हमारे ही साथ चलें, पर उसने ऐसा करनेसे इन्कार किया। कुछ दूरतक वह नानासाहबके साथ साथ इसी प्रकार-

की बातचीत करता हुआ गया, फिर उसके वापस आनेका सभय आगया। तब वह नानासाहबसे बोला, "नानासाहब, मेरी प्रतिज्ञा है कि, इतने दिनके अन्दर मैं अपने शत्रु के प्राण लेलूंगा। उन दिनोंमेंसे अधिकांश दिन तो अब पूरे होने आये हैं, मेरी प्रतिज्ञाके अनुसार यदि इतने दिनमें यह कार्य मेरे हाथसे न होसका, तो······" आगे उसने कुछ भी नहीं कहा—जान पड़ा कि, वह कह ही नहीं सकता है। कुछ समय व्यतीत हुआ, फिर जब वह बिलकुल जाने ही लगा, तब फिर एक बार नानासाहबकी ओर देखकर कहता है, "नानासाहब, एक बातके विषयमें मैं सोच रहा था कि, बतलाऊं या न बतलाऊं; पर अब बतलाये ही देता हूं। आपकी स्त्रीको रणदुल्लाख़ांने जिस जगह रोक रखा था, वहां अब वह नहीं है। उसको वहांसे छुड़ानेके लिए मैं प्रयत्न कर रहा था; पर पता लगानेपर मालूम हुआ कि, वह वहांसे चली गई। वह चाहे अपने मनसे चली गई हो, अथवा······किन्तु आप अब जाइये। आप उसकी कोई चिन्ता न करें। वह बड़ी पतिव्रता है, इसका मुझे पूर्ण विश्वास है। परन्तु हां, उस······मैं अब जाता हूं। मेरी और आपकी फिर कभी भेंट होजायगी, तो अच्छी बात है। अपनी अपनी प्रतिज्ञाओंके विषयमें बातचीत करेंगे, प्रतिज्ञाएं यदि पूरी होजायँगी, तो हर्ष मनावेंगे, अन्यथा दोनों एक ही जगह मिलकर अपने प्राणोंकी एकदम आहुति देदेंगे। आप और मैं, दोनों बिलकुल एक समान अवस्थामें हैं······"

आगे वह कुछ नहीं बोला—इतना ही क्यों ? बल्कि नाना-साहबको उसपर और कुछ उत्तर देनेके लिए भी मौक़ा न रख-कर वह उनसे यह बतलाने लगा कि, अब आप अमुक अमुक मार्गसे इस तरह जावें; और अमुक अमुक रास्तेसे इस तरह अपने साथियोंसे जामिलें। बस, इतना बतलाकर वह वहांसे तुरन्त ही चल दिया। यह सब उसने इतनी जल्दी किया कि, नानासाहबको और कुछ कहनेके लिए उसने क्षणभरका भी अवकाश न दिया। उसका कथन समाप्त होनेपर इधर नानासा-हब कुछ सोचकर बोलनेके लिए अपना मुँह खोलते हैं;और उधर वह न जाने कहांका कहां पहुँच गया; और नानासाहब पागल-की तरह इधर-उधर देखते ही रह गये। अन्तमें जब उन्होंने समझ लिया कि, वह निकल गया, अब कहीं दिखाई ही नहीं देता, तब यह सोचकर कि, अब अगले कार्यकी ओर ध्यान देकर हमको चलना चाहिए, उन्होंने अपना रास्ता पकड़ा।

बेचारे नानासाहब! जबसे उन्होंने घर-द्वार छोड़ा, न जाने कितने प्रकारके संकटकारक अनुभव उन्हें प्राप्त हुए! अब मार्गमें चलते चलते स्वाभाविक ही, फिर भी, उनके मनमें हज़ारों प्रकारके विचार आने-जाने लगे। उनमें एक विचार यह भी था—देखो, जिस समय हम घर छोड़कर निकले, उसी समय यदि अपनी प्रिय पत्नीको भी साथ लेलिया होता, तो बड़ा अच्छा हुआ होता। इस विचारके साथ ही साथ फिर यह भी उनके मनमें आया कि, देखो, ऐसी दशामें, हम ही इन सब

बातोंके कारण हुए। इतनेमें उस अपने साथीके ये शब्द उनके ध्यानमें आये—"वह चाहे अपने मनसे चली गई हो, अथवा…" इन शब्दोंके याद आते ही फिर वे अपने आप ही पूछने लगे—"अथवा—अथवा—अथवा क्या?—अथवा क्या?" इस प्रश्नका जो उत्तर उनके मनमें आया, उससे तो उनको और भी अधिक क्रोध तथा खेद उत्पन्न हुआ। पर चूंकि उस समय वे अकेले ही थे अतएव भीतर ही भीतर उनको अपने उस क्रोध और खेदको दाब रखना पड़ा, फिर भी—"अथवा क्या?" "अथवा? अथवा क्या?" ये शब्द बराबर उनके मनमें आते ही रहे। उन्होंने बहुत प्रयत्न किया कि, वे शब्द और उनसे निकलनेवाला उत्तर उनके मनमें न आवे, पर वे विचार रुके नहीं—वे तो आते ही रहे; और उनके साथ ही साथ अन्य भी कुछ विचित्र विचार उनके मनमें आने लगे। देखो तो,हमारे देशवासियोंकी दशा कितनी शोचनीय, कितनी भयंकर होरही है! दूसरे दूसरे देशोंके विधर्मी लोग हमपर चढ़ाइयां करके आवें; और हमको पदाक्रान्त करके हमारी छातीपर सवार हों, चाहे जिस तरहसे हमारा अपमान करें, हमारे धनजनका सत्यानाश करें, हमपर नाना प्रकारके अत्याचार करें; और हम इसका कुछ भी प्रतिकार न कर सकें—हा! यह कितनी लज्जा और निर्बलताकी बात है! हम प्रतिकार करनेकी बात मनमें लाते हैं, तो हमसे कहा जाता है कि, अभी अवसर नहीं आया है, ज़रा मौक़ा देखकर काम करना चाहिए, इत्यादि—परन्तु ये

जब चाहें, तब हमारे क़िले लेलेवें, हमारे अधिकार छीन लें, हमारा जातीय अपमान करें; और—और-वौर कुछ नहीं, अब राजा शिवाजीने जो विचार किया है, वही सबसे ठीक है। उसको सोलह आने पूरा करनेमें जितनी कुछ मदद हमसे हो-सके, करनी चाहिये; और जिस तरहसे होसके, उनके प्रयत्नोंको सफलता प्राप्त करानी चाहिए—बस, यही हमारा निश्चय है! हमने उनको जो कुछ वचन दिया है, वह पूरा करना है, सुलतान-गढ़का क़िला उनको प्राप्त करा ही देना चाहिये; और वहां जबतक उनका प्रबन्ध पूरा पूरा न जम जावे, तबतक उनको सब कुछ सहायता देनी चाहिए; और फिर लौटकर, इस शहरमें आकर, अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करनेका कार्य करना चाहिए। बस, इसके सिवाय और कोई बात ही नहीं...”

इस प्रकारके विचार उनके मनमें आरहे थे कि, इतनेमें पूर्व दिशा प्रकाशित दिखाई देने लगी; और स्वाभाविक हो, एक ओरके खेतमें, एक वृक्षके नीचे, बैठे हुए दो मनुष्योंकी ओर उनकी दृष्टि गई......उनके हृदयमें कुछ विलक्षण धक्का लगा; और वे आंखें फाड़ फाड़कर देखने लगे।

सत्तावनवां परिच्छेद ।

विलक्षण प्रसंग ।

वृक्षके नीचे वैठे हुए मनुष्य ज्यों ही नानासाहबकी नज़रमें पड़े, त्यों ही उनके अन्तःकरणमें एक प्रकारका धक्कासा लगा। धक्का लगनेका कारण क्या था? पाठकोंको मालूम ही होगया होगा। इसके सिवाय, वे मनुष्य कौन थे, सो भी पाठकोंने ताड़ लिया होगा। प्रसंग बहुत ही विलक्षण आगया था। रणदुल्लाखांका प्रतिवन्ध ज्यों ही कुछ कम होगया, त्यों ही नानासाहबकी पत्नी, जो अभीतक मराठे सरदारके भेषमें थी, मौक़ा पाकर वहांसे निकल पड़ी; और वही इस समय यहां अपनी दासीके साथ उस वृक्षके नीचे बैठी थी। वे दोनों मानो किसीके आनेकी प्रतीक्षासी कर रही थीं। नानासाहबकी पत्नी अभीतक अपने कृत्रिम भेषमें ही थी। सुबह होगया, और हम बैठी हुई जिसकी प्रतीक्षा कर रही हैं, उसका अभी, दूरतक भी, कहीं पता नहीं है। इसी विचारसे उन दोनोंकी चेष्टा बहुत ही चिन्तातुर दिखाई देरही थी। नानासाहब जिस ओरसे आरहे थे, उसी ओर नानासाहबकी पत्नीका ध्यान था। नानासाहब जबकि दूरसे आरहे थे, उनकी चेष्टा इत्यादि उस-को स्पष्टतया दिखाई नहीं दी। परन्तु यह शंका उसे तुरन्त ही होगई कि, हो न हो, ये नानासाहब ही आरहे हैं। इतनेमें

नानासाहब नज़दीक आगये; और उनकी चेष्टा भी स्पष्ट दिखाई देने लगी, तब स्वाभाविक ही कुछ मुस्कुराती हुई वह खड़ी होगई। उसके उठनेकी वह आतुरता देखकर उसकी दासीको कुछ आश्चर्य हुआ; और वह इधर-उधर देखने लगी। उसका ध्यान अवश्य ही उस ओर न था। परन्तु जब नाना-साहब पास ही आगये, तब उसने भी अपने मालिकको देख-कर पहचाना; और दोनों, कभी एक दूसरेकी ओर, और कभी नानासाहबकी ओर, देखने लगीं। उनको पुकारना उनकी पत्नीके लिए तो सम्भव नहीं था; परन्तु दासीको भी उनके पास जाकर उनसे कुछ कहनेकी नहीं सूझी। वह प्रसंग बहुत ही विचित्र था। पति वैरागीके भेषमें खड़ा था; और पत्नी पुरुषके भेषमें, उसको देखकर लजाती हुई, खड़ी थी! नानासाहबके मनमें कितने प्रकारके :विचार आरहे थे; और उनके हृदयकी क्या दशा होरही थी, इसकी कल्पना भी पाठकोंको होना कठिन है। जिस हमारी पत्नीको मुसलमान पकड़ लेगया; और अपने आश्रयमें रखा; अर्थात् जिसने इस प्रकार हमारी प्रतिष्ठा और कुलमें बट्टा लगाया, वही हमारे सामने खड़ी हुई हमारी ओर देख रही है; और हमारी भी दृष्टि उसकी ओर चली गई—अब, प्राचीनकालके राजपूतोंकी भांति हम इसका बध करके आगे बढ़ें, अथवा इसकी ओर न देखते हुए, ऐसे ही, आगे चले जावें? यह प्रश्न उनके मनमें उपस्थित हुआ; और उनका मन बहुत ही चल-विचल हुआ। यह बात तो

त्रिकालमें भी उनके मनमें नहीं आसकती थी कि, वह अपनी तरफ़से भ्रष्ट होगी; परन्तु भ्रष्टता, भ्रष्टता ही है—फिर चाहे वह अपनी तरफ़से हो, अथवा किसीके अत्याचारसे हो। उसके कारण कुलका जो कलंक लगना था, सो लग चुका। अब उसका परिशोध करनेको दो ही मार्ग हैं—एक, जिसके कारण कलंक लगा, उस मनुष्यको; और दूसरा, जिसने लगाया, उस मनुष्यको, दोनोंको करठस्नान कराकर अपने हाथ उस रक्तसे नहलाये जायँ। अस्तु। जिसने वह कलंक लगाया था, उसके बधकी तो वे प्रतिज्ञा कर ही चुके थे; और जहांतक शीघ्र होसकता था, उस प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेका उन्होंने निश्चय भी कर लिया था; पर अब इस दूसरे व्यक्तिका—जो सामने खड़ा हुआ है—क्या किया जाय? इस विषयका कोई भी विचार अभीतक उनके मनमें नहीं आया था—और अब वही विचार आकर सामने उपस्थित होगया! उस समय एक बार तो उनके मनमें यही आया कि, पत्नीबधसे अपने हाथ अपवित्र न करें; परन्तु फिर उन्होंने सोचा कि, जिसने पतिके नामको सर्वथैव बट्टा लगाया, उसको शीघ्र ही इस लोकसे मुक्त कर देनेमें ही उसका, और हमारा भी, कल्याण है। प्राचीनकालके राजपूत वीर जब युद्धपर जाने लगते थे, तब अपनी पटरानियों और बहू-बेटियोंको पहले ही स्वर्गलोकके लिए रवाना कर देते थे, कि जिससे उनके बाद उनके कुटुम्बकी विडम्बना न हो। ऐसा ही यदि हमने भी किया होता, तो हमको आज अपने

कुटुम्बकी यह विडम्बना आंखोंसे देखनेकी नौबत ही न आती।
पर वैसा उस समय हमसे नहीं होसका, तो फिर इसी समय
वैसा करनेमें हमें क्यों चूकना चाहिए? एक बार तो यह उनके
मनमें आता, पर दूसरी बार वही मन उनसे कहता कि, स्त्रीके
बधके लिये—जिसपर हमारा एक बार प्रेमसर्वस्व रह चुका है,
उसके बधके लिए—उद्युक्त होना सर्वथा अनुचित है। इस प्रकार
उनके चित्तकी वृत्ति हिंडोलेकी तरह होरही थी। हां,इस बातको
सोचकर उन्हें कुछ सन्तोषसा हुआ कि, अच्छा हुआ, जो इस
रास्तेसे हम अकेले ही आये, हमारे साथी इधरसे नहीं आये।
बहुत देरतक तो नानासाहब वैसे ही चुप खड़े रहे, जैसे कोई
नवीन यात्री रास्ता मालूम न होते हुए, किसी चौराहेपर आ-
जाय; और फिर वहां अचानक खड़ा होकर यह सोचने लगे
कि, अब किस रास्तेसे जाऊं; और किस रास्तेसे न जाऊं—
बस, यही हाल नानासाहबका हुआ। देखी-अनदेखी करते
हुए आगे जा नहीं सकते थे; और यदि कहें कि, स्त्रीका बध
कर डालें, तो वैसा करनेको मन तैयार नहीं होता था; और
यदि वैसा नहीं करते, तो मानो एक प्रकारसे जान-बूझकर
अपने कुलमें लगे हुए कलंकके स्मारकको छोड़ रहे हैं! ये सारे
विचार लिखनेमें तो हमको समय लग गया; पर नानासाहबके
मनमें आते इनको देर नहीं लगी। फिर भी वे वैसे ही खड़े रहे।
कुछ भी करनेके लिये उन्होंने क़दम आगे नहीं बढ़ाया। पहलेहीकी
भांति क्रोध; और तिरस्कारयुक्त नेत्रोंसे वे अपनी पत्नीकी ओर

देखते रहे। किसी ओर भी उनसे क़दम आगे नहीं बढ़ाया गया। इधर, यह कहनेकी आवश्यकता ही नहीं कि, उनकी पत्नी और उसकी उस दासीकी भी चित्तवृत्ति कुछ विलक्षणहीसी होरही थी। दोनोंहीने नानासाहबको उसी भेषमें बीजापुरमें घूमते हुए देखा था। जिस दिन नानासाहबने उस मराठे सरदारको देखा था; और उनके चित्तको भ्रांति हुई थी, उसी दिन उस मराठे सरदारने भी उनको देखा था; और उसके मनमें आया था कि, इनसे भेंट करके अपना सच्चा सच्चा स्वरूप प्रकट कर दें; पर उस समय वह रणदुल्लाख़ांकी निगरानीमें था; अतएव वह कुछ भी कर नहीं सका। हां, यदि चार-छै दिनका अवकाश मिलता, तो शायद कुछ कर भी सकता; पर इस बीचमें जो घटनाएं और दुर्घटनाएं हुईं, सभी बड़ी विचित्र हुईं। वे घटनाएं यदि घटित न हुई होतीं, तो उस मराठे सरदारको अपना स्वरूप प्रकट करनेका मौक़ा मिल जाता; और सब बातें ठीक ठीक हुई होतीं। अस्तु, जो कुछ हुआ होता, उसका विचार करनेकी अपेक्षा, अब आगे क्या हुआ, उसीके विषयमें लिखना अच्छा होगा।

बीचमें क्या क्या घटनाएं हुईं, इसका कुछ भी वृत्तान्त चूंकि मराठा सरदारको मालूम हुआ ही न था, अतएव स्वाभाविक ही उसके मनमें आया कि, ये बाबाजी हमारी ओर जो इतनी क्रुद्ध दृष्टिसे देख रहे हैं, इसका रहस्य क्या है? अवश्य ही सरदारके मनमें उस समय यही आया, कि हम अपना सच्चा

स्वरूप इनसे कुछ समयतक छिपाये रहें; और इस प्रकार क्षण-भर इनसे विनोद करें। यह सोचकर उसने अपनी दासीसे कहा कि, जा, तू आगे बढ़कर, बाबाजीको यहां बुला ला।

दासीको भी कौतूहल हुआ;और वह बाबाजीके पास आकर हँसकर कहने लगी, "बाबाजी,आपको हमारे मालिक, जो वृक्ष-के नीचे बैठे हैं, बुला रहे हैं।"

परन्तु इतना ही वाक्य कहते हुए वह ऐसी घबड़ाई कि, उसके मुंहसे बोल ही न निकलने लगा! इतनेमें बाबाजीकी आंख और भी अधिक सुर्ख़ होगईं। वे इस प्रकार उसकी ओर ज़ोरसे देखने लगे कि, वह बिलकुल ही घबड़ा गई; और उसकी पहलेकी वह चेष्टा एवं वह विनोदपूर्ण स्वर न जाने कहां चला गया! उसने समझा कि, हमको इन्होंने पहचान लिया। उस बेचारीके ध्यानमें इतना भी न आया कि, भेष तो हमारी स्वामिनीने बदला है—हमने कहां बदला है! ऐसी दशामें बाबाजी, अर्थात् नानासाहब, यदि हमको पहचान गये, तो इसमें आश्चर्य ही क्या? अस्तु। घबड़ाते घबड़ाते अब वह यही सोचने लगी कि, व्यर्थके लिए हम इस फन्देमें पड़ीं; और आगे आईं! बेचारी लड़खड़ाती हुई ज़बानसे कहती है, "बाईसाहबा हैं, लेकिन वे हँसी……"

आगे बेचारी कुछ कह ही न सकी। कहती क्या? उसने समझा कि, हमने नानासाहबसे अपनेको छिपाया; और न सिर्फ़ छिपाया ही, बल्कि उनसे हम हँसी भी करने लगीं, इसीकारण

नानासाहब इतने क्रुद्ध होरहे हैं। अस्तु। ज्यों ही उसके मुंहसे ये शब्द निकले कि, "बाईसाहबा हैं, लेकिन वे हँसी"; और फिर उसका बोलना बन्द हुआ,त्यों ही नानासाहबने कहा, 'चल' चल। यहांसे जा। तू और तेरी बाईसाहबा, दोनों मेरी आंखोंके सामनेसे टल जाओ! मेरा सारा सत्यनाश कर दिया—अब भी तुमको सन्तोष नहीं हुआ? जा, जा। मेरे सामने खड़ी रहेगी, तो मेरा सारा विवेक न जाने कहां चला जायगा;और अभी उसको और तुझे जानसे मार डाले बिना न रहूंगा। एक बार चले जानेपर, फिर भी तुम अपना काला मुँह दिखलानेको मेरे सामने आईं—इससे तो तुम बिलकुल नरकलोकमें ही चली गई होतीं, तो अच्छा होता!"

बाबाजी बहुत ही जल्दी जल्दी बोल रहे थे; और क्रोधके मारे उनका सारा शरीर थर-थर कांप रहा था। परन्तु अपने उसी क्रोधके आवेशमें उन्होंने जितने शब्द उच्चारण किये; और फिर उन्हीं शब्दोंमेंसे जितने शब्द उस दासीको, अपनी उस अवस्थामें, सुनाई दिये,उनसे उसका गया हुआ धैर्य मानो फिरसे वापस आगया। यदि किसी दासीको अपनी स्वामिनीके विषयमें अभिमान था, यदि उसके पातिव्रत्य, उसके सौजन्य, उसके चातुर्यके विषयमें किसीको अत्यन्त गर्व था, तो सचमुच उसी दासीको था। अपनी स्वामिनीके विषयमें; और विशेषतया उसके धैर्यके विषयमें, उस दासीको अत्यन्त गर्व था। उसकी स्वामिनीने केवल अपनी इज़्ज़त बचानेके लिए ही, अपने पातिव्रत्यकी रक्षा

करनेके लिए ही, इतने संकटोंका सामना किया था। हमारी स्वामिनीको मालूम था कि, दुष्ट सैयदुल्लाखांकी उसपर नज़र है; और वही क़िलेपर आनेवाला है। ऐसी दशामें वह कुछ न कुछ उपद्रव किये बिना न रहेगा; हमारे श्वसुरजीको क़ैद करनेके बाद, उनके देखते देखते, हमारी बेइज़्ज़ती किये बिना वह चांडाल न मानेगा, उस दशामें फिर हम अपनी रक्षा न कर सकेंगी, यह उसको पूरा विश्वास था; और यही सब सोच-समझ कर उसने भेष बदलकर, हमको साथ लेकर अपने मायकेका रास्ता लिया था; पर बीचमें रणदुल्लाखांके द्वारा ही, जिसकाकि कुछ भय भी नहीं था, यह विचित्र विघ्न उपस्थित हुआ; परन्तु उससे भी निभकर उसने अपनी रक्षा की। इतना होनेपर भी जब उस दासीने देखा कि, नानासाहब उलटे और इसीको कटु वचन कह रहे हैं; और उस सतीको अपने कुलमें कलंक लगानेवाला बता रहे हैं, तब उसकी पहलेकी घबड़ाहट न जाने कहां चली गई; और उसको यह और ही कुछ मामला दिखाई दिया। अतएव वह एकदम नानासाहबसे बोली, "मालिकसाहब, मालिकसाहब, आपके नामको बट्टा लगाया? बट्टा? किसने? बाईसाहबाने? आप कहते क्या हैं? और यही समझकर आप बैरागी होगये हैं? क्या बात है? आपने यह क्या समझ रखा है? कौन आपके कानमें ऐसा कह गया?" क्षणभर पहले जिसके मुंहसे शब्द नहीं निकलता था, वही अब इस प्रकार फटकारकर बोलने लगी! उस समय मानो उसका वह भाव ही बदल

गया, वह दूसरी स्त्री बन गई। नानासाहबने समझा कि, अपनी मालकिनका पक्ष लेकर ही यह कुछ न कुछ बक रही है। अतएव वे उसे डाँटकर कहते हैं, "बस! चुप रह! क्या तू समझती है कि, मुझे मालूम नहीं हुआ? मुझे सब, एक एक अक्षर मालूम होगया है। अब ऐसी बातें करनेसे कोई लाभ नहीं है—मेरे क्रोधको मत बढ़ा। मराठोंकी स्त्रियां—उसमें भी मेरी, मेरी स्त्री (यह शब्द बड़े संकटके साथ उनके मुखसे निकला) भ्रष्ट होनेतक अपने प्राण रखेगी; और अपना वह काला मुख दिखानेको मेरे सामने आवेगी—ऐसा मुझे स्वप्नमें भी ख़याल न था। चल, चल। अब रास्तेसे लोग आने जाने-लगे। मेरा रास्ता छोड़। सचमुच ही, जैसा तू कहती है, वैसी ही यदि हमारे कुलकी परवा है, तो अभी की अभी चिता जलाकर, उसमें कूद पड़ना चाहिए। जा, राजपूतोंका रक्त यदि सचमुच ही उसके शरीरमें है, और तू भी यदि उसकी सच्ची दासी है, तो अभीकी अभी उसे उस जंगलमें लेजाकर, चाहे जिस तरहसे, उसका वह काला मुख नष्ट कर दे। फिर इस संसारमें मुझे उसके दर्शन न होने दे। मैंने ही, ख़ुद मैंने, अभी यह कार्य किया होता; पर अब इस भेषमें यदि मैं वह करूंगा, तो उससे बड़ा जो कार्य मुझे करना है, सो रह जायगा। जा, उससे कह दे कि, तू अभीकी अभी जाकर यदि प्राण-त्याग करेगी, तो ही मैं समझूंगा कि, तुझमें कुछ सत्व है। अन्यथा, खुशीसे, जहां अभीतक थी, वहीं जाकर रह। जिस दिन उसके रक्तसे नहाऊंगा, उसी दिन

तुझे भी नरकमें भेजूंगा, परन्तु हां, अब तुम आगे मेरे मार्गमें मत आओ।"

इतना कहकर नानासाहब वहांसे चल दिये—चल क्या दिये? जाने लगे! परन्तु इतनेहीमें न जाने क्या विचार उनके मनमें आया कि, एकदम वे वहांसे घूम पड़े; और उस दासीको, जोकि बिलकुल आश्चर्यचकित होकर स्तब्ध खड़ी थी, वहीं छोड़कर शीघ्रतापूर्वक अपनी उस पुरुष-भेषधारिणी स्त्रीकी ओर गये जो कि, उस वृक्षके नीचे उन दोनोंकी ओर देखती हुई यह जाननेकी उत्सुकतामें खड़ी थी कि, इतने ज़ोर ज़ोरसे ये दोनों क्रोधमें आकर क्या बातचीत कर रहे हैं। नानासाहब उसके पास गये; और अपने क्रोधको ख़ूब सम्हालकर, अत्यन्त धीर और प्रशान्त शब्दोंमें उससे बोले, "तू अपने स्वाभाविक भेषमें मेरे सामने नहीं आई; यह बहुत अच्छा हुआ। उस भेषमें तू अब मेरे लिए मर चुकी; और मैं भी तेरे लिए मर चुका। तूने मेरा कुल भ्रष्ट किया। नाममें बट्टा लगाया। मेरी सारी महत्वाकांक्षाओंको बिलकुल विध्वंस कर दिया। इसके लिए तुझे जानसे मार डालना चाहिए। पर मैं वैसा नहीं करूंगा। हां, अब तू अपना यह काला मुख कभी मुझे मत दिखला। इतनी ही मुझपर दया कर।"

उस बेचारीको नानासाहबके इस कथनका कुछ भी अर्थ समझ नहीं पड़ा। अत्यन्त भयभीत चेष्टासे वह उनकी ओर देखतीभर रही। परन्तु जब उसने देखा कि, अब ये जा ही रहे

हैं, तब "क्यों ?" बस, इतना ही एक प्रश्न उसके मुखसे बाहर निकला। इस प्रश्नके कानमें पड़ते ही नानासाहब एकदम फिर उसकी ओर मुड़कर कहते हैं, "क्यों! 'क्यों' पूछती है! मेरे मुखसे फिर वही कहलाना चाहती है?—क्यों! अच्छा सुन! इसलिए, कि तेरा मुख काला होगया; और उसकी कालिख मेरे मुखमें भी लगी!"

"मेरा मुंख काला होगया! और उसकी कालिख आपके मुखमें भी लगी? ऐसा यदि होता, तो मैं आपको ज़िन्दा दिखाई न देती।"

"ऐसा ही यदि होता, तो फिर और मुझे क्या चाहिए था? फिर मेरे हृदयको जो ये हज़ारों वेदनाएं हो रही हैं, वे क्यों होतीं? तुझे मार डालनेके लिए मेरे हाथ क्यों तड़फड़ाते? अब, या तो प्राण दे, नहीं तो मेरे सामने मत आ।"

इतना कहकर वे चुप होगये। पुरुष-भेषमें थर थर कांपने-वाली उनकी वह स्त्री उनके सामने ही खड़ी थी। इतनेमें उसकी वह दासी भी वहीं आगई। उसने अपनी मालकिनको फिर आगे नहीं बोलने दिया; और स्वयंही आगे होकर नानासाहबसे कहती है, "ठीक है, अब अधिक बातचीत करनेका यहां मौक़ा नहीं है; और न आप सुनेंगे। अब हम जाती हैं; और जिस दिन—आप जैसाकि कहते हैं—वैसी कालिख बाईसाहबाके मुखमें नहीं—ऐसा आपका विश्वास होजायगा, उसी दिन वे आपके सामने फिर आवेंगी, अन्यथा वे चिता जलाकर उसमें

भस्म होगई', ऐसा आप समझ लीजिएगा!" दासीका वह आविर्भाव देखकर नानासाहबके मनपर कुछ विचित्र ही प्रभाव पड़ा। और वे कुछ कहनेवाले भी थे; पर इतनेमें ऐसा मालूम हुआ, मानो कुछ लोग यह देखनेके लिए, कि बाबाजीके साथ इन लोगोंका क्या झगड़ा होरहा है, उधरकी ओर आरहे हैं। वे आवें और कुछ बातचीत सुनें, यह किसीको भी इष्ट न था। इधर बाबाजीको भी वहां खड़ा रहना; और बोलना बिलकुल दुस्सहसा होरहा था, अतएव वे जानेके लिए आतुर होरहे थे। और इतनेमें वे चल भी दिये।

मराठा सरदार, अत्यन्त खिन्न होकर, बहुत देरतक जहांका तहां ही खड़ा रहा। उसके साथकी वह स्त्री उसको बराबर सान्त्वना देरही थी। सरदारकी आंखोंसे आंसू बह रहे थे, पर यह जानकर कि, पुरुष-भेषको शोभा देनेवाली यह चीज़ नहीं है, वह उनको पोंछ रहा था। कुछ ही समयमें उन दोनोंको भी वहांसे चल देना पड़ा।

अट्ठावनवां परिच्छेद ।
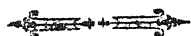
स्वामीजी और राजासाहब ।

क्रोधके आवेगमें नानासाहब वहांसे चल दिये; और बहुत जल्द अपने साथियोंमें आमिले। जबतक वे अपने साथियोंमें पहुँच नहीं गये, तबतक अनेक प्रकारके विचार मार्गमें उनके मनमें आते रहे। कुछ समय पहले वे अपनी स्त्रीसे मिल ही चुके थे। उस समय जो बातचीत हुई थी, वही बार बार उनके मनमें आरही थी। रणदुल्लाख़ांसे उनकी दो बार भेंट हुई थी। उस समय उसने भी उनकी स्त्रीकी निष्कलंकता और अपनी निर्दोषिताके विषयमें एक-दो उद्गार निकाले थे। उन उद्गारोंकी ओर भी उनका इस समय ध्यान गया। फिर अपनी दासीके, अत्यन्त त्रस्तस्वरमें कहे हुए, ये शब्द कि—"जिस दिन, आप जैसा कहते हैं—वैसी कालिख बाईसाहबाके मुखमें नहीं—ऐसा आपको विश्वास हो जायगा, उसी दिन वे आपके सामने आवेंगी, अन्यथा वे चिता जलाकर उसीमें भस्म होगईं, ऐसा आप समझ लीजिएगा:!" और इन शब्दोंके साथ ही साथ उसके उस आविर्भावका ख़याल भी उनके मनमें आया। इन सब बातोंके मनमें आनेके कारण उनके मनकी अवस्था कुछ बहुत ही गोलमाल दिखाई दी। अब वे अपने ही विचारको निश्चित समझें, अथवा उपर्युक्त बातोंसे जो शंका उत्पन्न होती है, उस

शंकाहीपर विचार करें, इत्यादि कुछ भी वे स्थिर नहीं कर सके। पत्नीविषयक उनका प्रेम तो अब बिलकुल विपरीत हो ही चुका था। अतएव अब उनको इसी बातपर बड़ा क्रोध आया कि, यह जीवित ही कैसे रही? इसको तो अबतक मर जाना चाहिए था। चाहे अन्य ही भेषमें क्यों न हो; पर हमारे शत्रुके अधिकारमें, उसके आश्रयमें, और ऐसी दशामें जबकि उसकी पापवासना जागृत थी, यह जीवित रही—यही इससे बड़ा भारी अपराध हुआ। जबकि इसने अपनी इज़्ज़तकी अपेक्षा अपने प्राणोंका मूल्य अधिक समझा, तब यह भ्रष्ट तो हो ही चुकी—न प्रत्यक्ष रूपसे भ्रष्ट हुई हो, पर अप्रत्यक्ष रूपसे तो इसके भ्रष्ट होनेमें कोई सन्देह नहीं। यह उनका विचार बिलकुल दृढ़ होगया। उन्होंने सोचा कि,इसने यदि आत्म-हत्या कर ली होती, तभी यह कहा जासकता था कि, इसने मराठा-वंशकी स्त्रीके उपयुक्त कार्य किया। अस्तु। अब अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार सब बातें हमें करनी ही पड़ेंगी। इसके अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं। इस प्रकार सोचते हुए, अत्यन्त व्यग्रचित्तसे, नानासाहब अपने नियत स्थानपर पहुँचकर अपने साथियोंसे जामिले।

मंज़िल-दरमंज़िल तै करते हुए वे लोग पूनेके पासवाले अपने उसी सदैवके जंगलसे एक मंज़िलके अन्तरपर आपहुँचे। वहांसे उन्होंने अपने आनेका समाचार भेजनेके लिए अपनेहीमेंसे एक आदमीको तैयार किया। उन्होंने सोचा कि, हम सब

लोगोंको एक साथ ही एकदम वहां न जापहुँचना चाहिए; किन्तु पहले हममेंसे एक आदमी अकेला वहां जावे; और वहांका सब हाल-हवाल लेआवे ; और तब जैसा विचार हो, वैसा किया जाय। एकदम ही वहां पहुँच जानेसे न जाने क्या हो। हमारे बाद वहां क्या हुआ; और क्या नहीं हुआ—किसको मालूम ? इसके सिवाय वे दिन भी ऐसे ही थे कि, किसी गाँवकी आज जो दशा है, वही कल भी रहेगी, इस बातका कोई निश्चय नहीं था। उन्होंने सोचा कि, बीजापुरसे यद्यपि हम लोग अपने ख़यालसे बिलकुल गुप्त रूपसे ही आये हैं—फिर भी कौन कह सकता है कि, हमारे पीछे पीछे कोई न आया हो ? सम्भव है, हमारे पीछे पीछे कोई आया हो; और गुप्तरूपसे हमारी सब बातोंपर उसकी नज़र भी हो ! तानाजीका यद्यपि यह बिलकुल विश्वास था कि, बीजापुरमें ऐसा एक भी चतुर मनुष्य नहीं है, जिसको इतनी बड़ी बादशाहतका कुछ भी ख़याल हो; और न हमारी और राजा शिवाजीकी ही कुछ परवा करनेवाला कोई आदमी वहां दिखाई दिया। सभीका यह ख़याल है कि, इन बलवाइयोंके उपद्रवोंमें कोई विशेष तत्व नहीं है, इनको तो जब चाहेंगे, तभी बातकी बातमें दमन कर लेंगे। इसकारण हमपर किसीकी नज़र हो नहीं सकती; और बात तो यह है कि, यदि बीचमें नानासाहबपर वह मौक़ा न आगया होता, तो हमको इस बातकी कोई शंका भी न होती कि, हमपर किसीकी दृष्टि भी होसकती है। ये सब बातें थीं; फिर

भी तानाजी एक बहुत ही नीतिज्ञ और सुदक्ष पुरुष थे। उनका सदैव ही यह विचार रहता था कि, सब बातोंको आगे-पीछे सोचकर तब कोई निश्चय करना चाहिए; और जहां एक बार निश्चय होचुका, फिर तुरन्त आगे क़दम बढ़ाकर जो कुछ करना हो, बेखटके कर डालना चाहिए। राजा शिवाजीके वे पूरे पट्टशिष्य थे। चकमा देनेमें भी बड़े चतुर थे—अतएव, किसी कारणके न होनेपर भी, उन्होंने एक मंज़िल इधर ही रहने और अपने आनेकी ख़बर पहले ही भेज देनेका निश्चय किया। उन्होंने बीजापुरमें रहकर—नानासाहबके विषयमें इतनी गड़बड़ी होते रहनेपर भी—क्या क्या कार्य किये, अथवा कौन कौनसी ख़बरें प्राप्त कीं, इत्यादि बातोंका हाल किसीको भी मालूम न था। यहांतक कि, उनके साथके लोगोंको भी उनकी अनेक बातोंका कुछ भी पता न था।

अस्तु। अभी हमको इस बातके विचार करनेकी आवश्यकता नहीं कि, तानाजीराव वहांसे क्या क्या समाचार लाये और क्या क्या नहीं लाये। इस समय तो वास्तवमें उन्होंने अपनी दूरदर्शिता दिखलाकर अपने साथियोंमेंसे एक आदमीको उधरका समाचार लानेके लिए रवाना कर दिया; और आप सब लोग अपने असली मुक़ामसे एक मंज़िल पीछे ही रह गये। इसके बाद, जब वह आदमी चला गया, तो आप भी स्वयं चुप नहीं बैठे रहे, किन्तु आसपासके गाँवोंमें जाकर उधरका सब हालचाल लेनेके लिए दौड़धूप करने लगे। इससे उन्हें दादोजी

कोंडदेव और राजा शिवाजीके झगड़ेका वृत्तान्त मालूम हुआ। इसके सिवाय किसीने यह भी बतलाया कि, उस झगड़ेके कारण राजा शिवाजी न जाने किधर चले गये। ख़बरें, चाहे कोई अपनी समझसे, कितनी ही गुप्त रखे; पर उनके पंख कैसे निकल आते हैं, और वे किस प्रकार इधर-उधर उड़ने लगती हैं, सो ईश्वर ही जाने! दादोजी कोंडदेव राजा शिवाजीसे नाराज़ हुए थे; और इससे राजा साहब कहीं रूठकर चले गये, यह ख़बर बातकी बातमें फैल गई; और फिर उसमें भी वृद्धि ही होती गई। राजासाहब किधर गये, पहले तो इसी विषयमें लोगोंके तर्क-वितर्क होते रहे; फिर उन लोगोंने अपने अपने अनुमानोंको निश्चित स्वरूप देना भी शुरू किया। जिसकी जो इच्छा हुई, उधर ही वह राजा शिवाजीको लेजाने लगा। कोई कहता, बादशाहके यहांसे उनका बुलावा आया था, सो वे बीजापुर चले गये; कोई कहता, नहीं, वे लूटपाट करके रुपया और हथियार जमा करने गये हैं; और किसी किसीने तो यहां-तक अनुमान बांधा कि, उनको, वह हनुमानमन्दिरका वैरागी ही कहीं फुसलाकर लेगया। इस प्रकारकी ये अनेक ख़बरें जब हमारे तानाजीरावके कानोंमें आईं, तब स्वाभाविक ही उनको कुछ चिन्तासी मालूम हुई। उन्होंने उन सभी गप्पोंपर विश्वास किया, सो नहीं, पर हां, इतना उन्हें अवश्य निश्चय होगया कि, हमारे जानेके बाद राजासाहबके चित्तको क्षुभित करनेवाली कोई न कोई घटनाएं अवश्य हुई हैं। परन्तु उन्होंने

यह भी सुना था कि, राजासाहब घर छोड़कर कहीं भाग गये हैं, अथवा वे अमुक ही एक स्थानको निश्चित रूपसे गये हैं, सो ऐसी बातोंपर उन्हें कोई भी विश्वास नहीं हुआ। फिर भी इससे इतना उन्हें अनुमान अवश्य हुआ कि, राजासाहब, जान पड़ता है, आजकल यहां मौजूद नहीं हैं। अतएव अब वे इस विचारमें पड़े कि, राजासाहब यदि आजकल यहां न हुए, तो फिर कैसा करना होगा? परन्तु फिर उन्होंने सोचा कि, यदि राजासाहब न होंगे, तो स्वामीजी तो अवश्य ही होंगे; और स्वामीजी एक प्रकारसे राजासाहबके समान ही हैं। बस, इसी प्रकार सोचते हुए मानो वे मन ही मन सब खबरोंकी संगति-सी लगाते रहे कि, जो उन्होंने उस बीचमें इधर-उधरसे प्राप्त की थीं।

उनका एक आदमी एक मंज़िल आगे गया ही था। अतएव उन्होंने सोचा था कि, उसके वहां पहुँचनेतक जितना समय लगेगा, उतना समय हम यहां विश्राम लेनेमें व्यतीत करेंगे। तदनुसार विश्राम करनेके बाद तानाजी, नानासाहबको साथ लेकर, अपनी उस नियमित जगहके लिए चले। परन्तु तीन चतुर्थांश रास्ता भी अभी वे चल नहीं पाये थे कि, इतनेमें वह आदमी उनको सामनेसे आता हुआ दिखाई दिया। उसको देखते ही, स्वाभाविक ही, तानाजीको आश्चर्य हुआ; क्योंकि उस आदमीको फिर वापस आनेका कोई संकेत नहीं दिया गया था। उसके आते ही तानाजीने उसकी ओर पृच्छापूर्ण दृष्टिसे

अवलोकन किया। इसपर उसने कहा कि, "राजासाहब यहां नहीं हैं; और न स्वामीजी ही हैं। कब कहां गये, इसका कुछ पता नहीं लगता।" इसके बाद फिर उसने कहा कि, "मेरी उस झोपड़ीके पास सिर्फ मेरा भाई बैठा था; और पहरेदार सब जगह जैसेके तैसे अपना काम कर रहे हैं। मैंने सबसे पूछा कि, स्वामीजी कहां गये, पर किसीको मालूम ही नहीं। इसके बाद फिर मैंने राजासाहबको पूछा, तो उनके विषयमें भी यही ख़बर लगी कि, वे वहां नहीं हैं।" बस, इतना ही समाचार आकर उसने बतलाया। तानाजी क्षणमात्र सचिंत ही रहे। हमारी तरफसे कोई ख़बर नहीं आई थी, इसलिए राजासाहब बीजापुर तो नहीं चले गये? यह संशय उनको उपस्थित हुआ; साथ ही यह प्रश्न भी उनके मनमें आया कि, मान लो, वे बीजापुर ही चले गये, तो अब हमको क्या करना चाहिए? तानाजीको यह विश्वास था कि, राजासाहब हमारे बाद बीजापुर अवश्य आपहुँचेंगे। वे कभी चूक नहीं सकते। पर स्वामीजी भी स्थानपर नहीं हैं, यह क्या बात है? मुख्य स्थानपर किसी न किसी एकको तो रहना ही चाहिए, सो दोमेंसे एक भी नहीं, यह क्या मामला है? तानाजी बड़े चक्करमें पड़े, परन्तु तुरन्त ही इस बातके सोचनेमें लग गये कि, ऐसी दशामें अब आगे क्या करना चाहिए। वे जो कुछ समाचार बीजापुरसे लाये थे, वे ऐसे थे कि, उनको सुनकर राजासाहबको बड़ा आनन्द हुआ होता; और वे तुरन्त ही कोई न

कोई कार्यवाही आगे करनेको तैयार होगये होते। इधर नाना-साहबके मनमें था कि, राजा शिवाजी, जहांतक शीघ्र होसके, हमको सुलतानगढ़पर चढ़ाई करनेकी आज्ञा देवें, तो बहुत अच्छा हो। क्योंकि वर्तमान अराजक-अवस्थामें सुलतानगढ़का क़िला बातकी बातमें हस्तगत किया जासकेगा। राजासाहब यदि यहां होते, तो इस उपयुक्त समयका तुरन्त ही पूर्ण लाभ उठाया जासकता था; पर वे यहां मौजूद ही नहीं हैं, यह बड़े दुर्भाग्यकी बात है। नानासाहबको पहले ही इस बातका बड़ा उत्साह था कि, प्रथमारम्भमें ही हमारे हाथसे राजा शिवाजी-को ऐसी कुछ मदद होनी चाहिए; और उसके लिए यह अवसर भी अच्छा आगया था; पर क्या कहें, राजासाहब हैं ही नहीं। इसके सिवाय एक बात और भी थी। वह यह कि, यहांका यह काम करनेके बाद नानासाहबको बीजापुर भी शीघ्र ही जाना था; क्योंकि वहां जो जो घटनाएं हुईं; और उसके साथ जो जो प्रतिज्ञाएं नानासाहबने कीं, उन सबको उन्हें वहां जाकर पूरा करना था। परन्तु जब उन्होंने सुना कि, न राजासाहब ही यहां हैं; और न स्वामीजी ही, तब उन्हें बड़ी निराशा हुई; और वे बड़े उदासीनसे दिखाई दिये।

हां, तानाजीराव अवश्य ही निराश नहीं हुए। उनका मस्तिष्क बराबर काम कर रहा था। राजासाहब और स्वामीजी, दोनों एक साथ ही कहां चले गये? शायद किसी गुप्त मंत्रणामें हों; क्योंकि कहीं जानेका तो यह मौक़ा था नहीं।

परन्तु इस समय मंत्रणा भी क्या करते होंगे ? कोई अनपेक्षित संकट तो नहीं आगया कि, जिसके कारण दो-चार दिनके लिए उन्हें अज्ञातवास स्वीकार करना पड़ा हो ? ऐसी ही कुछ सम्भावना जान पड़ती है। तानाजीको यह मालूम ही था कि, हम लोगोंको कारणवश कई कई दिनतक भुँहारेके अन्दर देवी-जीके मन्दिरमें रहना पड़ा है; और ऐसे मौक़ोंपर बाहरके लोगोंको इस विषयमें ज़रा भी ख़बर नहीं रह सकती। इस-लिए उन्होंने सोचा कि, शायद ऐसा ही कुछ मामला हो—स्वामीजी और राजासाहब, दोनों ही शायद भवानी माताके मन्दिरमें अज्ञातरूपसे रहते हों। लेकिन फिर उन्होंने सोचा कि, यदि ऐसा होता, तो हमारे इस आदमीको तो अवश्य मालूम होजाना चाहिए था; क्योंकि यह हमारे पक्के विश्वासका आदमी है। अतएव, सब सोच समझकर तानाजीने यही निश्चय किया कि, राजासाहब और स्वामीजी सचमुच ही आजकल यहां नहीं हैं, अवश्य ही वे कहीं बाहर गये हैं।

परन्तु, अब हम इनको तो यहीं विचार करनेके लिए छोड़ दें; और इधर राजासाहबके यहां—इन लोगोंके बीजापुर चले जानेके बादका—हालचाल देखें। पाठकोंको याद होगा कि, पिछले एक परिच्छेदमें, जब राजा शिवाजीको नानासाहबके बीजापुरमें अचानक ग़ायब होजानेका समाचार मिला था, तब अत्यन्त चिन्ताक्रान्त होकर उन्होंने स्वामीजीके आगे यह हठ पकड़ा था कि, हम भी बीजापुर अवश्य जायँगे; और वहां जाकर

देखेंगे कि, हमारे साथी वहां किस संकटमें पड़ गये हैं। उस समय स्वामीजीने उनको बीजापुर जानेसे मना किया था। उसके आगे फिर उनका क्या हालचाल रहा, सो अब देखना चाहिए। वास्तवमें राजा शिवाजीका पहलेहीसे यह व्रत था कि, संकट-के समय हम अपने साथियोंको छोड़ेंगे नहीं। अतएव जब तानाजी इत्यादि लोगोंका बीजापुरसे फिर बहुत दिनतक कोई समाचार नहीं आया, तब उन्होंने स्वाभाविक ही यह हठ पकड़ा कि, हम वहां स्वयं जाकर देखेंगे कि, हमारे साथियोंका क्या हाल है; और यदि उनपर कोई ऐसा ही भयंकर संकट आया होगा, तो उसको दूर करनेका उद्योग करेंगे; और इस प्रकार उनके भय और दुःखमें हम भी कुछ भाग लेंगे। सत्रह या अठारह वर्षकी अल्हड़ अवस्थामें इस प्रकारकी ज़िद होना एक स्वाभाविक बात है! जिन लोगोंसे हमको कुछ कार्य करा लेना है, उनको या तो हमें उनके संकटसे छुड़ाना चाहिए, अथवा कमसे कम यही बात उनके अनुभवमें ला देनी चाहिए कि, हम भी उनके दुःखमें शरीक हैं। निस्सन्देह ये विचार उदारतापूर्ण हैं; पर कार्यकौशलपूर्ण नहीं। जो हो; पर ऐसे विचार कितने ही नवयुवकोंके हृदयमें उस उम्रमें आते अवश्य रहते हैं! सो शिवाजीके समान उत्साही नवयुवकके मनमें भी उनका आना एक स्वाभाविक बात थी; परन्तु स्वामीजी उनके साथ एक अत्यन्त गम्भीर, विचारशील और कार्य-नीति-कुशल व्यक्ति थे। अतएव उनको स्पष्ट ही जान पड़ा कि, ऐसे समयमें

राजासाहबको अकेले बीजापुर जाने देना मानो अपने गुरुवर्य (श्रीसमर्थ रामदास स्वामी) की सम्पूर्ण मंत्रणाका भंग करना ही है। इसलिए उन्होंने सोचा कि, इस समय राजासाहबकी चित्तवृत्तिको उपदेशके द्वारा, अथवा अन्य चाहे जिस उपायसे, ठीक रास्तेपर अवश्य ही लाना चाहिए। उनको राजकौशल और कार्य-कौशलकी शिक्षा देनी चाहिए। राज्यकार्यका बन्धान और सन्धान करनेके लिए प्रत्येक अवसरपर अपनी जानको ख़तरेमें डालनेसे कोई लाभ न होगा। यही नहीं, बल्कि अनेक कार्य ऐसे होते हैं कि, जिनको हम स्वयं कर सकते हैं; परन्तु फिर भी वे, मौक़ा देखकर, दूसरोंहीसे कराने पड़ते है। इससे लोगोंमें विश्वास और प्रेमकी वृद्धि भी होती है। हां, इसमें सन्देह नहीं कि, यदि उनपर कोई भयंकर संकट आजाय, तो उनकी रक्षा अवश्य करनी चाहिए; पर इसके लिए स्वयं अपनी जानको ही ख़तरेमें डालनेकी आवश्यकता नहीं। युद्धमें सेनाध्यक्ष यदि प्रत्येक सैनिकके लिए दौड़कर उसकी रक्षा करने लगे, तो उसके द्वारा कोई कार्य ही नहीं होसकता। हां, जो अपनी जानपर खेलकर लड़े; और लड़ाईमें टिके, उसको उत्साह अवश्य दिलाना चाहिए; और अपना व्यवहार इतना उदारतापूर्ण रखना चाहिए, जिससे प्रत्येक सैनिकके मनमें यह पूर्ण विश्वास होजाय कि, हम किसी बड़े उद्देश्यके लिए अपनी जान देरहे हैं; और हमारे बाद हमारे बालबच्चोंका पालन करनेमें हमारा स्वामी कभी कोई बात उठा नहीं रखेगा। इसके

सिवाय सैनिकोंके मनमें यह विश्वास भी रहे, तो कोई हानि नहीं कि, जब कोई ऐसा ही भयंकर मौक़ा हमारे ऊपर आजायगा, तब हमारा मालिक हमारे लिए प्राण भी देनेको तैयार रहेगा। बस, इस प्रकारके भाव यदि सहायकों और नौकरोंके मनमें रहेंगे, तो सब काम हो-जायगा। अस्तु। इस तरहकी अनेक बातें स्वामीजीने शिवा-जीको समझाईं; पर उनके चित्तका विषाद और बीजापुर जानेका उनका आग्रह दूर नहीं हुआ। इसलिए, अब स्वामी-जीने सोचा कि, इस प्रकार काम नहीं चलेगा; किन्तु इसके लिए किसी ऐसे उपायकी योजना करनी चाहिए कि, जिससे इसका चित्त ही उस ओरसे हटकर किसी दूसरी ओर लग जाय। अत-एव स्वामीजीने उसके लिए यह योजना की :—

राजा शिवाजीने अबतक समर्थ श्रीरामदास स्वामीके विषयमें अनेक बातें अनेक बार सुन रखी थीं; और अपने मनमें यह निश्चय कर रखा था कि, उक्त समर्थ स्वामी ही हमारे गुरु हैं! इधर श्रीधर स्वामीसे जबसे उनकी प्रत्यक्ष भेंट हुई थी, तबसे तो उनके मनमें इस बातकी उत्सुकता और भी अधिक बढ़ गई थी कि, जिस प्रकार होसके, श्रीरामदास स्वामीसे मिल-कर उनकी गुरुदीक्षा लें, अथवा कमसे कम उनके एक बार दर्शन ही होजायँ। इसकारण प्रायः उनका मन सज्जनगढ़ अथवा परलीकी ओर ही लगा रहता था; क्योंकि समर्थ उसी तरफ जंगलों और पहाड़ोंमें रहते थे। शिवाजीकी बड़ी इच्छा

थी कि, एक बार समर्थके दर्शन होजायँ; और हम उनके चरणोंपर मस्तक रखें। इसके लिए उन्होंने एक बार प्रयत्न भी किया; पर सफल नहीं हुआ। क्योंकि जब कभी वे उस ओर समर्थके दर्शनोंको जाते, तभी उनको चारों ओर यही ख़बर लगती कि, "अभी अभी समर्थ यहांसे कहीं चले गये।" मतलब यह कि, समर्थ कभी एक जगह नहीं रहते थे। उन घने जंगलों और पहाड़ोंमें बराबर विचरण किया करते थे; और कभी यदि कुछ समयके लिए एक जगह रहते भी, तो गुफाओंके अन्दर, जहां मनुष्यको उनका पता पाना अत्यन्त दुर्घट था। बस, इसीकारण कई बार प्रयत्न करनेपर भी शिवाजीको उनके दर्शन नहीं हुए; और उनको ख़ाली हाथ लौटना पड़ा। समर्थ श्रीरामदास स्वामीकी प्रसिद्धि उस समयतक विशेष नहीं हुई थी; पर उनका उद्देश्य अवश्य ही यह था कि, किसी न किसी क्षत्रिय वीरके हाथसे मराठा-राज्यकी स्थापना कराई जाय; और गौ-ब्राह्मणोंको इस समय जो कष्ट मिल रहा है, उससे उनका छुटकारा कराया जाय, अतएव वे इस बातकी प्रतीक्षामें थे कि, क्या कोई ऐसा क्षत्रिय वीर उत्पन्न होसकता है; और यदि शायद कहीं उत्पन्न होगया हो, तो उसको इन विचारोंपर लाया जाय; और इसीलिए उन्होंने सारे महाराष्ट्रमें अपने शिष्य-सम्प्रदायको गुप्त रूपसे फैलानेका उद्योग प्रारम्भ कर दिया था। ऊपर ऊपरसे तो श्रीसमर्थ एक मामूली वैरागीकी तरह विक्षिप्त और अनजानसे दिखाई देते थे; पर उनके भीतरी

उद्देश्य क्या थे, सो उनके ख़ास ख़ास शिष्योंको ही मालूम था। वे ख़ास ख़ास शिष्य भी सदैव उनके पास नहीं रहते थे। एक पट्टशिष्य कल्याण स्वामीको छोड़कर और बाक़ी सब, उन्हींके जोड़के, शिष्य सारे महाराष्ट्रभरमें फैले हुए थे। उनका यह काम था कि, जगह जगह हनुमानजीकी उपासनाका प्रचार करें, मार्केकी जगहोंपर उस शक्तिदेव—बजरङ्ग बली—के मन्दिर स्थापित करें, वहींपर अखाड़े खोलकर उनमें शारीरिक शक्ति बढ़ाई जाय; और कथा-कीर्तनके द्वारा लोगोंके अन्दर धार्मिक और नैतिक भाव भरे जायँ। जो लोग वहां जमा हुआ करें, उनपर पूरा पूरा ध्यान रखा जाय; और उनमेंसे जो लोग अपने सम्प्रदायमें आनेयोग्य हों, उनको मिला लिया जाय। श्रीसमर्थका वह सम्प्रदाय केवलमात्र परमेश्वर-भक्ति; रामभक्ति अथवा हनुमानभक्तिका ही न था; बल्कि साथ ही साथ उसका और भी कोई गहरा उद्देश्य था। (आजकल भी महाराष्ट्रमें वह सम्प्रदाय है; पर ऊपरका आवरणमात्र रह गया है, भीतर पोला है। जैसे किसी दानेमेंसे अनाजका असली अंश निकल जावे और छिलकाभर रह जावे) वह गहरा उद्देश्य यही था कि, सम्पूर्ण महाराष्ट्रमें एकता स्थापित की जावे; और मुसलमानोंके द्वारा आज जो गौ-ब्राह्मण सताये जारहे हैं, उनका दुःख किसी वीर क्षत्रियके द्वारा, किसी महाराष्ट्र-वीरके द्वारा, दूर कराया जाय।" श्रीधर स्वामीके समान संन्यासी इसी उद्देश्यसे श्रीसमर्थके विचारोंका

बीज चारों ओर बोरहे थे। इस प्रकार कार्य करते हुए राजा शिवाजी श्रीधर स्वामीके दृष्टिपथमें आये; और उन्होंने समझ लिया कि, समर्थके उद्देश्यके अनुसार यदि महाराष्ट्रमें किसीके हाथसे स्वराज्य-संस्थापना होसकती है, तो वह यही व्यक्ति है। और बस, अपनी एक ख़ास नीतिसे उन्होंने शिवाजीको पकड़ा; और धीरे धीरे उन्होंने उनको अपने पन्थमें खींचकर उपदेश करना प्रारम्भ किया। राजा शिवाजीकी मनोवृत्ति बालापनसे ही इस विचारकी ओर कुछ कुछ झुकी हुई थी, अतएव श्रीधर स्वामीका उपदेश उनपर पूरा पूरा काम कर गया; और श्रीधर स्वामीकी वाणीमें वह गुण भी था कि, उनके उपदेशका प्रभाव तुरन्त ही होता था। राजा शिवाजीको मुग़लोंकी सेवासे स्वाभाविक ही घृणा थी। यही नहीं; बल्कि उनका यह सदैवका ही भाव था कि, ये विदेशी लोग चोर हैं, जो हमारे घरमें घुसकर हमारी छातीपर मूंग दल रहे हैं। इसलिए इनको जबतक भगा न दिया जाय अथवा जबतक हम स्वयं उनकी छातीपर सवार न होजायँ, तबतक एक क्षण भी हमको आनन्दमें न रहना चाहिए। इसकारण श्रीधर स्वामीके विचार उनके अन्दर ऐसे अंकुरित होउठे, जैसे किसी उत्तम कमाई हुई भूमिमें बोये हुए उत्तम बीज अंकुरित होउठें। बीज जब एक बार इस प्रकार अंकुरित होउठे, तब उनको वैसी ही फलसिद्धिकी भी आशा होने लगी; और यह बात पाठकोंको अबतकके कथानकसे मालूम ही होगई होगी।

अस्तु। राजा शिवाजीका गृहशिक्षण दादोजी कोंडदेवके हाथमें था ; और वे अपने तौरपर उक्त शिक्षा उनको देते ही रहते थे ; पर राजासाहबका ध्यान उक्त शिक्षाकी ओर विशेष रूपसे कभी भी नहीं था। पहलेसे ही उनकी चित्तवृत्ति कुछ दूसरी थी ; और वह उसी शिक्षाकी ओर थी कि,जो स्वामीजीसे इस समय उनको प्राप्त होरही थी। वे कुछ अपने लँगोटिये साथियोंको जमा करते, उनको लेकर किसी ओर उपद्रव मचानेको निकल जाया करते, यवनोंसे हार्दिक द्वेष करते; और कुछ न कुछ अपना 'स्व'-भाव दिखलाते! दादोजीका सारा उपदेश केवल व्यावहारिक दृष्टिका था। उनका तात्पर्य यही था कि, शिवाजी अपनी जागीरको सम्हालें, बादशाहकी सेवा करके पिताने जो नाम पाया है, उसको न सिर्फ़ क़ायम रखनेका ही, बल्कि उसी प्रणालीपर चलकर उसको और कुछ बढ़ानेका भी प्रयत्न करें। ऐसा कोई उपद्रव न करें, जिससे पिताको कष्ट हो ; और उनपर तथा अपने ऊपर भी, बादशाहका कोप हो। परन्तु ऐसा उपदेश शिवाजीके समान उच्छृंखल वृत्तिवाले और स्वाभिमानी युवकको पसन्द कैसे आसकता था? अतएव सदैव ही उनका यह ख़याल रहता था कि, उक्त उपदेश इस कानसे सुन लेने और उस कानसे निकाल देनेके ही योग्य है। इसके सिवाय, जब कभी शिवाजीके मुखसे यवनोंके लिए कोई घृणासूचक वचन निकलते, तब दादोजी कहते, "भैया, ऐसा कहनेसे क्या काम निकलेगा? हमारे

हाथसे उनका पराजय कैसे होसकता है?" इसी प्रकारके और भी कुछ उद्गार दादोजीके मुखसे कभी कभी निकलते थे; अतएव उन उद्गारोंका भाव शिवाजी यही लेते थे कि, चूंकि, मुसल्मानोंका पराजय किसीके हाथसे हो नहीं सकता; और इसीकारण दादोजी कहते हैं कि, ऐसे झगड़ेमें मत पड़ो; लेकिन अगर किसीसे वैसा होसके, तो उनका पराजय करनेमें कोई हानि नहीं—करे, तो अच्छा ही है। यही आशय दादोजीके उक्त वचनोंसे शिवाजी निकालते थे—कमसे कम अपने व्यवहारमें वे अपने गुरुदेवके उपर्युक्त आशयको ही चरितार्थ करनेका प्रयत्न करते थे। जो हो। श्रीधर स्वामीका उपदेश उनके बिलकुल अनुकूल था।

उनसठवां परिच्छेद।

समर्थकी ओर जाते हुए।

किसी वस्तुके प्राप्त होनेकी हमको अत्यंत अभिलाषा है;और वह वस्तु हमको प्राप्त नहीं होरही है, परन्तु उसका महत्व फिर भी दिनपर दिन हमारी दृष्टिमें बढ़ता ही जारहा है, अब ऐसी दशामें उस वस्तुके प्राप्त करनेकी हमको कितनी उत्सुकता होगी, सो सभीको मालूम होसकती है। बस, राजासाहबकी भी उस समय ऐसी ही कुछ अवस्था होरही थी। श्रीसमर्थ

रामदास स्वामीकी धर्मनिष्ठा, उनके पुण्यप्रताप और उनकी निस्पृहताके विषयमें उन्होंने अनेक बार अनेक बातें सुन रखी थीं; इसके बाद जब उनके एक शिष्य, श्रीधर स्वामीके साथ वे इतने दिन रहे, तब तो श्रीसमर्थके गुण उनके सामने और भी प्रत्यक्ष रूपसे प्रकट होगये। फिर उन्होंने अपने उस मुख्य सद्गुरुसे मिलनेके लिए कई बार प्रयत्न भी किया; पर उनको सफलता प्राप्त नहीं हुई। श्रीधर स्वामी श्रीसमर्थके रचे हुए मराठी श्लोक और उनकी ओवियां (एक छन्द विशेष) उनको प्रायः सुनाया करते थे। उनमें भरा हुआ गम्भीर भाव और स्वधर्माभिमान जब शिवाजीके मनमें आता, तब वे बिलकुल तल्लीन होजाया करते थे; और श्रीसमर्थके दर्शनोंकी उत्सुकता उनके हृदयमें और भी विशेष रूपसे प्रदीप्त होजाया करती थी। ऐसी दशामें, श्रीधर स्वामीने जब देखा कि, राजा शिवाजी अपने साथियोंकी चिन्तामें बीजापुर जानेके लिए व्यग्र होरहे हैं, तब उन्होंने श्रीसमर्थकी ही तरफ एक बार होआनेकी चर्चा छेड़ी। इधर शिवाजी बहुत दिनोंसे स्वामीजीसे स्वयं ही आग्रह कर रहे थे कि, एक बार किसी प्रकार श्रीसमर्थके दर्शन हमको करा दीजिए। उस समय स्वामीजी यही कह दिया करते थे कि, श्रीसमर्थके दर्शन रिक्तहस्तसे करना तुम्हारे लिए उचित न होगा। उनको रुपये-पैसेकी तो कुछ भी आवश्यकता नहीं; किन्तु कोई प्रान्त अथवा क़िला हस्तगत करके, वही उनको गुरु-दक्षिणाके तौरपर अर्पण करना चाहिए। ऐसा

जब तुम करोगे, तभी उनके दर्शनोंकी सार्थकता होगी। इस-लिए जबतक तुम ऐसा न कर लो, तबतक उनके दर्शनका प्रयत्न करनेसे कोई तात्पर्य नहीं। यह बात राजासाहबके मनमें गड़ गई थी ; परन्तु अबतक कोई क़िला अथवा प्रान्त यवनोंके हाथसे हरण करनेयोग्य कोई तैयारी उनके पास नहीं थी। इतने दिन बीत गये; और श्रीसमर्थके दर्शन शिवाजीको नहीं होसके। इधर श्रीधर स्वामीने सोचा कि, इस समय शिवबाका बीजापुर जाना ठीक नहीं है; और यह बीजापुर जानेके लिए बिलकुल तैयार है। ऐसी दशामें उन्होंने यही विचार किया कि, अब इसकी चित्त-वृत्तिको किसी दूसरी ओर—और सो भी किसी ऐसे व्यक्तिकी ओर कि, जिसका आकर्षण इसपर विशेष हो—खींचना चाहिए। ऐसा किये बिना बीजापुर जानेकी इसकी धुन नहीं छूटेगी। बस, यही सोचकर उन्होंने राजासाहबके सामने यह बात निकाली कि, चलो, इस समय समर्थके दर्शन, यदि होसकें तो करा लावें—इस समय उनके दर्शन होनेकी कुछ सम्भावना है। शिवाजीने जब यह सुना कि, इस समय श्रीसमर्थके दर्शन होनेकी सम्भावना है—कमसे कम उनके निवाससे पवित्र होनेवाली रमणीय भूमिके दर्शन होनेकी सम्भावना है—तब उनको भी बहुत आनन्द हुआ। उस समय राजासाहबके मनमें एक प्रकारका यह आशांकुर भी उत्पन्न हुआ कि, अबकी बार श्रीसमर्थके शिष्य, स्वयं श्रीधर स्वामी हमारे साथ रहेंगे, ऐसी दशामें बहुत सम्भव है कि, श्री-

समर्थके दर्शन हमको अवश्य ही होजायँ। फिर भी उनके चतुर मनमें यह बात आये बिना नहीं रही कि, शायद हम बीजापुर जानेका हठ कर रहे थे, इसीकारण स्वामीजीने यह युक्ति निकाली हो;और हसते हँसते उन्होंने अपने मनका यह भाव स्वामीजीसे प्रकट भी किया। इसपर स्वामीजीने भी कहा— शिवबा, सचमुच ही मैं चाहता हूं कि, तुम बीजापुर इस समय न जाओ। तुम्हारे हाथसे न जाने कितने महत्त्वपूर्ण कार्य होनेको हैं। मैं तो एक निमित्तमात्र हूं। समर्थकी दिव्यदृष्टिने ही तुमको अपने ध्यानमें ला रखा है। इसलिए तुम्हारा अपनी जान खतरेमें डालना मानो श्रीसमर्थकी सब आशाओंको विफल करना है। श्रीसमर्थ तपस्या कर रहे हैं, सो कुछ अपने लिए पुण्यशक्ति प्राप्त करनेके लिए नहीं; किन्तु इसमें उनका उद्देश्य यही है कि, उस पुण्यशक्तिका उपयोग तुम्हारे कार्यमें हो—अर्थात् तुम्हारे हाथसे बड़ी बड़ी दिग्विजयें कराकर सम्पूर्ण मराठामात्रको एक कर दिया जाय; और एक मराठा-राज्य स्थापित किया जाय। बस, यही उनका एक-मात्र उद्देश्य है। इस उद्देश्यको सिद्ध करना केवल तुम्हारे हाथमें है। तपस्या कितनी कठोर है, सो देखनेकी तुमको इच्छा है। वह इच्छा यदि अभी पूरी की जायगी, तो तुमको सविशेष आनन्द होगा; और तुमको यह भी विश्वास हो-जायगा कि, तुम्हारे हाथसे कैसे कैसे बड़े पराक्रम होंगे। बस, इसीलिए मैं तुमसे वहां चलनेके लिए कहता हूं। इस मौकेपर

तुम्हारी और समर्थकी प्रत्यक्ष भेंट चाहे न हो, पर उनके दर्शन मैं तुम्हें अवश्य करा दूंगा।"

स्वामीजीने इस प्रकार जब सरलतापूर्वक सब कुछ बतला दिया, तब राजासाहबको भी उनका कथन सयुक्तिक जान पड़ा; और फिर बीजापुर जानेका आग्रह उन्होंने छोड़ दिया; तथा समर्थके दर्शनोंकी इच्छासे वे दोनों परलीके पर्वतोंकी ओर चल दिये। चलते समय इस बातकी उन्होंने सावधानी रखी कि, किसीको यह मालूम न होने पावे कि, हम कहां जाते हैं। उनकी गुफा कन्दराओंमें जिस प्रकारका पहरा सदैव रहता था, वैसा ही क़ायम रहा। गुफाके ठीक मुखपर और मन्दिरके मुखपर जिनका पहरा था, उनको अवश्य यह मालूम था कि, स्वामीजी और राजासाहब किधर गये हैं। अन्य लोग सब स्वामीजीकी सदैवकी स्थितिसे पूर्ण परिचित थे। वे जानते थे कि, स्वामीजी कई कई दिनतक भुँहारेके बाहर भी नहीं निकलते। भीतरके एक सोतेपर ही स्नान इत्यादि करके समाधि लगाकर बैठ जाते हैं। ऐसी ही हालतमें अब भी वे होंगे। इस प्रकारका ख़याल बाहरके तथा घुड़साल इत्यादिके सब पहरेदारोंका था। राजा शिवाजीके विषयमें लोगोंका ख़याल था कि, अब महीना महीना, पन्द्रह पन्द्रह दिनतक आजकल वे आते ही नहीं; फिर एकदम किसी दिन आ खड़े होते हैं। उधर कोंकनकी तरफ अथवा अन्य कहीं, जब सवारी लूटपाट करने चली जाती है, तब यहांतक कि, घरके लोगोंको भी

उनका महीनों कुछ पता नहीं चलता। इसी प्रकार अब भी कहीं चले गये होंगे। सारांश यह कि, कुछ ख़ास ख़ास लोगोंके अतिरिक्त स्वामी और राजाका पूरा पूरा पता किसीको नहीं था; और तानाजीको भी उनका समाचार ऐसे ही ख़ास ख़ास लोगोंसे प्राप्त हुआ।

इधर स्वामीजी और राजासाहब अपने अपने गुप्त वस्त्र पहनकर घोड़ोंपर सवार होकर समर्थकी ओर चल दिये। स्वामीजी यद्यपि घोड़ेपर आरूढ़ होनेमें बड़े होशियार थे, फिर भी उन्होंने ऐसा स्वांग किया कि, वैरागीकी जात, भाड़ेके टट्टूके अतिरिक्त और भारी घोड़ेपर बैठना क्या जाने? इधर राजा शिवाजीने भी ऐसा भेष धारण किया कि, जिसको कोई पहचान न सके। यह मालूम ही न होसके, ये कौन हैं, कहां जारहे हैं। रास्तेमें चलते हुए उन दोनोंमें बहुतसी बातें हुईं— देखो, हमारी हिन्दू प्रजाकी कितनी बुरी अवस्था है, इसको फिर पूर्वावस्थापर लानेके लिए किन किन उपायोंकी योजना करनी चाहिए; और उनकी योजना करते समय द्रव्य भी बहुतसा ख़र्च होगा, सो कहांसे लाया जाय? यवनोंका राज्य आज, कमसे कम दो-तीन सौ वर्षसे, दक्षिणकी तरफ़ प्रबल होरहा है; और प्रजा काफी पीड़ित होरही है; फिर भी लोगोंको उसीमें आनन्द मालूम होता है। नानासाहबके पिता रंगराव अप्पाने अपने लड़केको कैसी शिक्षा दी; और जब उसने सुनी नहीं, तब उससे ऐसे कटुवचन कहे कि, जाओ,

तुम्हारा मुंह भी नहीं देखेंगे। बस, ऐसे ही लोगोंकी अधिक संख्या है। ऐसी दशामें कोई सरदार लोग तो हममें आकर शामिल नहीं होसकते, उनकी आशा रखना केवल दुराशा-मात्र है। हां, नवयुवकोंसे सहायता मिल जाय, तो भले ही! अन्यथा, विशेषकर हम लोगोंको, ग़रीब-गुरबा लोगोंके ही सहारे सब काम करना होगा; और कष्ट भी इन्हीं लोगोंको विशेष है। बड़े लोगोंको क्या! शायद किसीको ही कष्ट हो, बाक़ी तो सब आनन्दमें हैं। इसके सिवाय सरदारोंमें फूट और ईर्षाद्वेष भी बहुत है। यदि किसीको इस यावनी राज्यसे कष्ट भी होता है, तो अन्य लोग उसका कुछ अनुभव नहीं करते। सभीका केवल इसीपर ध्यान है कि, हमारा और हमारे ख़ान्दानके लोगोंका दरबारमें रुतबा कैसे बढ़े; इसलिए इस बातकी कोई सम्भावना नहीं कि, परस्परमें एक दूसरेकी मदद करें, अथवा सब मिलकर, राष्ट्रीय भावसे, स्वराज्यकी स्थापनामें भाग लें। ऐसी दशामें हमारे समान लोग ही जब, इनकी सहायताकी परवा न करते हुए, अपने बलपर कुछ कर दिखलावें; और इनको मालूम होजाय कि, सचमुच ही हम कुछ न कुछ पराक्रम कर रहे हैं, हमको सफलता प्राप्त होरही है; और बादशाहकी तरह हम भी दरबार सजाकर किसीको जागीर, किसीको इनाम, देरहे हैं, तब शायद ये सरदार लोग भी हममें आकर मिलने लगेंगे। और यदि नहीं आवेंगे, तो हमको अपने नवीन ही सरदार बनाने पड़ेंगे,

इत्यादि, इत्यादि अनेक प्रकारकी बातें उनमें हुईं। स्वामीजीने अपना अनेक वर्षोंका अनुभव इस समय राजा शिवाजीके सामने प्रकट किया। श्रीधर स्वामी और राजा शिवाजीका परिचय हुए आज इतने दिन होगये; पर आज स्वामीजीने जितने मुक्त हृदयसे बातचीत की, वैसी अभीतक कभी नहीं की थी। आज स्वामीजी बिलकुल आनन्दमें निमग्न होकर ख़ूब दिल खोलकर बातचीत कर रहे थे। मैंने आजतक कौन कौनसे प्रान्तोंमें किस किस तरहसे भ्रमण किया, कैसे कैसे लोगोंसे भेंट की, उनसे इस विषयमें कैसी कैसी बातें निकालीं, फिर उनकी ओरसे कैसे कैसे निराशाजनक उत्तर मिले, इत्यादि सब अपना अनुभव स्वामीजीने बतलाया। उन्होंने कहा कि, इस राज्यके कारण तकलीफ़ तो सबको है, इसकी भयंकरता सबको ही भास होरही है; पर इसका प्रतिकार कैसे किया जाय, सो किसीको नहीं सूझता। जहां जहां मैंने देखा, लोगोंका यही भाव है कि, इसका प्रतिकार हो ही नहीं सकता—यह जैसा है, वैसा ही चलेगा। यह भाव तो दीन-हीन और कृषक-समाजका है; पर बड़े बड़े लोगोंमें यह भाव भी नहीं। उनका तो लक्ष्य यही है कि, सरकारकी सेवा करते रहो; और उसकी मर्ज़ीसे जो कुछ टुकड़े प्रसादके तौरपर मिल जायं, उन्हींपर सन्तोष करो। हां, मौक़ा देख देखकर, अपनी, और अपने लड़कोंकी, उन्नति जिस प्रकार होती हो, करते रहो। कितने ही सरदारोंका तो यही उद्देश्य रहता है

कि, दूसरे दूसरे सरदारोंको, जिनका कि रुतबा दरबारमें उनसे अधिक है, उनको नीचा दिखाकर अपना ही प्रभाव सरकारमें बढ़ाते रहनेका विशेष प्रयत्न किया जाय; और रातदिन वे इसी प्रयत्नमें लगे भी रहते हैं। ऐसी दशामें यह आशा रखना, कि इन लोगोंसे हमको कुछ मदद मिलेगी, बिलकुल दुराशामात्र है। सारे महाराष्ट्रमें, बिलकुल कर्नाटककी हदतक, मैं घूमते घूमते गया हूं, और मैंने जगह जगह छोटोंसे लेकर बड़ोंतकके सबके मन टटोले हैं; परन्तु सब जगह मैंने यही देखा है कि, दीनहीन और किसान बेचारे तड़फड़ा रहे हैं; परन्तु निराशाके कारण चुपके अपने दिन बिता रहे हैं, कोई उनको रास्ता बतलाने-वाला नहीं। इधर बड़े लोगोंकी नज़र सरकारकी ओर है। जिसे देखिये, वही इस प्रयत्नमें है, कि किसी तरह सरकारमें हमारा प्रवेश होजाय, कोई बड़ी पदवी अथवा ओहदा मिल जाय, न हो, तो दरबारमें ही बैठनेकी इज़्ज़त मिल जाय। सच्ची राजभक्तिके उदाहरण भी बहुत कम हैं, बहुत ही कम हैं—हज़ारमें कोई एक आध, नहीं तो "जी हुज़ूर" वालोंकी ही भरती विशेष है—किसी प्रकार राजभक्तिका ढोंग दिखलानेसे हमारा स्वार्थ सधता है, तो उसको साध लेना चाहिए—बस, यही उनका भाव है! स्वामीजीने अनेक उदाहरण दे देकर अपना यह सारा अनुभव शिवराजको बतलाया। कई ऐसे सुन्दर सुन्दर उदाहरण दिये कि, जिनको प्रत्यक्ष उन्होंने अपनी आँखोंसे देखा था। इस प्रकार अपना सारा अनुभव बतलाकर वे शिवराजके मनमें इस

बातके जमानेका प्रयत्न करते रहे थे कि, इन बड़े लोगोंसे कुछ भी आशा नहीं, इनकी आशा रखना बिलकुल अनुचित और एक प्रकारसे ख़तरेकी बात है—हमको जो कुछ करना है, दीनहीन मावले, किसान, हेटकरी, रामोशी इत्यादि ग्रामीण लोगोंको ही एकत्रित करके, उनकी सहायतासे करना चाहिए। इस प्रकार बातें करते करते फिर स्वामीजीने अपनी यात्राका भी बहुतसा मनोरञ्जक और उपदेशप्रद वृत्तान्त बतलाया। समर्थ रामदास स्वामीके अनेक चमत्कार भी बतलाये। उन सबको सुनकर शिवराजको श्रीधर स्वामीके साहस और समर्थ-सम्बन्धी उनकी श्रद्धाका सच्चा सच्चा परिचय मिल गया; और अत्यन्त आश्चर्य तथा पूज्यभावसे उनका मन परिपूरित होगया। बड़े ध्यानसे, दत्तचित्त होकर, वे सब वृत्तान्त सुनते रहे। और अन्तमें उनको ऐसा मालूम हुआ कि, समर्थके दर्शन हों, चाहे न हों, स्वामीके साथ इस यात्रामें भी हमको कुछ कम लाभ नहीं हुआ। महाराष्ट्रमें उस समय यादव, मोरे, इत्यादि कई बड़े बड़े सरदार-घराने थे; उन सबका उस समयका समाचार उनको मालूम हुआ। उक्त घरानोंमें उस समय जो लोग मौजूद थे, उन सबके चरित्र, उनके मत और उनकी नीति इत्यादि अनेक बातोंका ज्ञान उनको स्वामीजीसे प्राप्त हुआ। आज उनको श्रीधर स्वामीके हृदयका पूरा पूरा परिचय मिला; और अभीतक स्वराज्यसम्बन्धी उनके जिन विचारोंका उनको पता नहीं था, उन विचारोंका भी आज उन्हें पता चल गया; और यह विश्वास

उनका और भी दृढ़ होगया कि, यदि शिष्यत्व स्वीकार करे तो श्रीधर स्वामीके समान और समर्थके सदृश सद्गुरुका ही शिष्यत्व स्वीकार करे! इससे समर्थके दर्शनकी उत्कण्ठा उनके हृदयमें और भी अधिक बढ़ी।

इस प्रकार यात्राके दिन, कुछ मनोरञ्जक अनुभव ग्रहण करते हुए और कुछ पिछले अनुभवोंकी बातचीत करते हुए, वे व्यतीत कर रहे थे। चलते चलते एक दिन वे किसी एक गाँवके पास पहुँचे। धूपका समय होचुका था, इसलिए स्वामीजीने महादेवजीके एक मन्दिरके पास, बेलके वृक्षकी शीतल छाया देखकर, वहींपर अपना कम्बल बिछा दिया। नदीका तट था, अतएव शीतल वायु बह रही थी। भोजनका समय होचुका था, इसलिए स्वामीजी बस्तीकी ओर गये। पिछली रात ऐसे ही एक वृक्षकी छायामें वे दोनों सोये थे, इसलिए पसीना आनेपर हवा लगनेके कारण राजासाहबके एक हाथमें दर्द पैदा होगया था, साथ ही साथ रातको उन्हें कुछ हरारत भी रही थी, अतएव स्वामीजी, उनको वहीं छोड़कर, आप आटा, दाल इत्यादि मोल लानेके लिए बस्तीमें गये। नहीं तो नित्यका नियम यह था कि, स्वामीजी तो टिकनेकी जगहपर रहकर स्नान-सन्ध्या इत्यादिमें लग जाया करते थे; और राजा शिवाजी स्वयं जाकर आटा, दाल इत्यादि लाते थे। इसके बाद स्वामीजी भोजन तैयार करते और राजासाहबको खिलाते थे। परन्तु आज स्वामीजीने स्वयं ही उनको बाहर जाने नहीं

दिया। राजासाहब शान्त पड़े हुए थे; परन्तु जहां वे पड़े थे, वहांसे नदीके घाटपर दृष्टि पूरी पूरी जारही थी। नदीमें जल अगाध भरा हुआ था। उसके उस पार भी एक बस्ती थी, और इसी पारकी तरह वहां भी मन्दिर था। उस मन्दिर और उसके घाटकी ओर स्वाभाविक ही राजासाहबकी नज़र गई। इतनेमें एक विचित्र ही दृश्य उनको उस पार दिखाई दिया। उन्होंने देखा कि, नदीसे एक ब्राह्मण, स्नान करके, अपने उन्हीं भीगे वस्त्रोंसे, हाथमें जलसे भरा हुआ लोटा लिये, मन्दिरकी सीढ़ियोंसे ऊपर चढ़ रहा है। अभी वह चार सीढ़ियां भी ऊपर चढ़ने नहीं पाया था कि, नीचेकी ओरसे नदीमें न जाने क्या कुछ धोनेवाला एक आदमी दौड़ता हुआ उस ब्राह्मणकी ओर गया; और उसके शरीरपर थूक दिया! यह देखते ही राजा शिवाजीके क्रोधकी सीमा न रही, उन्होंने सोचा कि यह है क्या बात? हम जो कुछ देख रहे हैं, यह सच है अथवा स्वप्न? इस वक्त वे पड़े हुए थे, सो तुरन्त उठ बैठे, और एकटक उसी ओर देखने लगे। देखते क्या हैं कि, वह ब्राह्मण क्रोधमें आकर कुछ कह रहा है; और वह थूकनेवाला व्यक्ति भी कुछ क्रोधमें और कुछ हँसते हुए उसको चिढ़ा रहा है। इतनेमें ब्राह्मण फिर नीचे उतरकर नदीमें पैठता है; और अच्छी तरह स्नान करके और लोटा भरकर फिर चढ़ने लगता है। इधर वह दूसरा आदमी भी अपने धोनेके स्थानपर चला गया था। सो वहांसे फिर न जाने क्या लेकर वह ब्राह्मणके पीछे फिर दौड़ता है; और

अपने हाथमें जो कुछ लेआया था, उसे उस ब्राह्मणके शरीरपर फेंक देता है, जिससे ब्राह्मणके शरीरके रोंगटे खड़े होजाते हैं; और उसका शरीर एकदम थर्रा उठता है। इधर राजासाहब यह सब दृश्य ध्यानपूर्वक देख रहे थे। उस ब्राह्मणका शरीर थर्राया; और उसके साथ ही उसका लोटा हाथसे छूटकर उसके पैरपर गिरा; और ऐसा जान पड़ा, मानों उसके चोटसी लग गई; और ब्राह्मण व्याकुल होकर वहीं बैठसा गया। इधर वह दूसरा आदमी ब्राह्मणको कुछ न कुछ बक ही रहा था। राजासाहबने यह सब हाल देखा; और बड़े सन्देहमें पड़ गये कि, यह बात क्या है! जो कुछ भी हो—बात उनकी समझमें आगई; और एकदम इतना जोश उनके शरीरमें आगया कि, एक क्षणका भी विलम्ब न करते हुए वे एकदम वहांसे उठे, मानों उनको इस बातका भान ही न रहा कि, पिछली रातको हमें ज्वर आया था—हमको ठण्डे पानीमें एकदम नहीं जाना चाहिए, अथवा हमारे हाथमें दर्द है, तैर सकेंगे या नहीं, इत्यादि कोई भी प्रश्न उनके मनमें नहीं आये—उन्होंने अपने कपड़े उतारकर तुरन्त ही लँगोट कसा; और अपनी तलवार आड़ी मुँहसे पकड़-कर वे पानीमें कूद पड़े। फिर वे, सामनेके घाटपर ब्राह्मणकी ओर बराबर अपनी नज़र रखकर सीधे, तेज़ीके साथ, पानीको चीरते हुए आगे बढ़े। सामने बीचमें धारा बड़ी प्रखर थी, परन्तु उससे बचनेके लिए उन्होंने अपना मार्ग ज़रा भी नहीं

बदला; और सीधे ही तैरते हुए घाटके पास पहुँचे। वहां जाकर देखते हैं, तो सचमुच ही जो सन्देह उनको हुआ था, वही ठीक था। स्नान करके जो व्यक्ति ऊपर चढ़ रहा था, वह बेचारा एक बुड्ढा ब्राह्मण था; और उसके शरीरपर थूकनेवाला एक कसाई था। फिर क्या कहना था—राजासाहबको इतना क्रोधआया कि, वे अपने आपेसे बाहर होगये। वे एकदम झपटकर सीढ़ियां चढ़ते हुए उस यवनके पास पहुँचे; और तलवारके एक ही वारसे उसको घायल करके नीचे गिरा दिया। ब्राह्मण बिलकुल बुड्ढा था। उसने ऊपरकी ओर देखा, तो सामने तलवार उठाये हुए एक नवयुवक खड़ा है; और उसको सतानेवाला वह कसाई घायल होकर नीचे पड़ा है। ब्राह्मणने समझा कि,यह खड्गधारी पुरुष यहां कौन आगया,जिसने उस यवनको मार गिराया—कहीं इसी तरह हमपर भी वार न करे! अतएव अत्यन्त दीनता-के साथ यह कहता हुआ कि, "महाराज, मैं आपके पैरों......" वह राजासाहबके पैरोंपर गिर पड़ा। वह घायल पड़ा हुआ यवन भी कराहता हुआ मुँहसे कुछ गालियां निकाल रहा था। राजासाहबने उसकी ओर बिलकुल ध्यान नहीं दिया। हां, ब्राह्मणको आश्वासन देकर उठाया; और पूछा कि, क्या बात थी। ब्राह्मणने कहा, "महाराज, मैं अपना स्नान करके यहीं मध्यान्ह-संध्या कर रहा था कि, इतनेमें यह कसाई गोमाताकी वे अन्तड़ियां—दुष्टने कहीं गोमाताका बध किया होगा—लेकर आया; और मेरे पास ही उधर पानीमें एकदम डाल दीं। मेरे

शरीरपर छींटे पड़े। यह अत्यन्त ही भयङ्कर दृश्य देखकर मुझसे न रहा गया; और मेरे मुखसे ये शब्द निकले—"रे चाण्डाल, इन पापोंका बदला तुझे कहां मिलेगा?" इसके बाद मैं फिर तुरन्त ही स्नान करके ऊपर चढ़ने लगा। इतनेमें यह चाण्डाल दौड़ता हुआ आया; और मेरे शरीरपर थूक दिया। मैं क्रोधसे दो गालियां देकर फिर नीचे गया; और स्नान करके ऊपर मन्दिरमें जारहा था, कि इतनेमें फिर दुष्टने आकर मेरे शरीरपर ये अन्तड़ियां डाल दीं। महाराज, अब ब्राह्मण और गोमाताका रक्षक कोई नहीं।"

राजासाहबसे आगे और कुछ सुना ही न गया।

साठवां परिच्छेद।

दर्शनोंकी एक झलक।

उस समय सचमुच ही राजासाहबकी चेष्टा यदि किसीने देखी होती, तो ऐसा ही मालूम होता कि, यह कोई स्वर्गीय देवता, अपने भक्तके पीछे लगे हुए दैत्यसे उसकी रक्षा करनेके लिए, नदीसे ऊपर निकला है। उनके वे विशाल और तेजस्वी नेत्र क्रोधके मारे बिलकुल आरक्तवर्ण होरहे थे। अबतक यवनोंके अत्याचारकी जितनी बातें उनके कानोंमें आई थीं, वे सब उस समय उनकी आँखोंके सामने आकर खड़ी होगईं।

परन्तु आजका यह प्रत्यक्ष अनुभव तो उन सबसे ही अधिक भयंकर था। लड़कपनमें जब कभी वे बीजापुरमें रहते थे, तब मार्गमें दोनों ओर कसाइयोंकी दूकानें देखकर उनको बहुत ही दुःख होता था; परन्तु आज जब उन्होंने देखा कि, एक ग़रीब ब्राह्मण, जो बेचारा अपने नित्यनैमित्तिक धार्मिक कृत्योंमें लगा हुआ था, उसके शरीरपर एक कसाईने आकर गोमाताकी अन्तड़ियां डाल दीं, तब उनको अत्यन्त ही दुःख हुआ। उनका सारा शरीर क्रोधसे मानो जल उठा। अपने विशाल और आरक्त नेत्रोंसे उन्होंने फिर एक बार उस यवनकी ओर देखा। अब वह पड़े ही पड़े अत्यन्त दीनतापूर्वक सलाम करते हुए दयाका प्रार्थी होरहा था। राजासाहबकी आँखें उसे इतनी क्रुद्ध और क्रूर दिखलाई दीं, जैसे वह कसाई अब मन ही मन यह कह रहा हो कि,मैं कहीं इनके तेजसे ही जलकर भस्म न होजाऊं। सबलके पैर पकड़कर दुर्बलपर दुलत्ती झाड़नेकी मुसल्मानोंकी आदत मानो उस कसाईके अन्दर बहुत ही अधिक मात्रामें थी। वही कसाई, जोकि अभीतक उस दीनहीन ब्राह्मणसे ऐसी दुष्टता और उद्दण्डताका वर्ताव कर रहा था, अब राजासाहबके सामने हाथ जोड़कर जीवनदान मांगने लगा। जो शरण आजावे, उसको जीवदान देना—यह भी राजा शिवाजीका, प्रारम्भहीसे, एक मुख्य व्रत था, जो उन्होंने महाभारतकी कथाओंसे सीखा था! अतएव उस कसाईको जानसे मार डालनेका वे विचार भी मनमें नहीं लाये; और उससे बोले, "तू

इतनी चिरियां-विनती कर रहा है, इसलिए छोड़ देता हूं; किन्तु जिन हाथोंसे तू ऐसे नीचतापूर्ण कार्य करता है, उन हाथोंको मैं अब छोड़ नहीं सकता। उनको काट ही डालूंगा।" इतना कहनेके बाद फिर उन्होंने वैसा ही किया भी। इसके बाद उन्होंने ब्राह्मणकी ओर देखकर उसे इस प्रकार आश्वासन दिया—"नदीपार, उस वृक्षके नीचे, जहां मेरे वस्त्र इत्यादि रखे हैं, वहां यदि तुम अपने लड़के इत्यादि किसीको भेज दोगे, तो तुमको मैं कुछ दक्षिणा पहुँचाऊंगा। अब तुम फिर स्नान कर लो; और शुद्ध होकर संध्या इत्यादि करके आरामके साथ अपने घर जाओ। मैं भी जाता हूं।" इतना कहकर, ब्राह्मण देवताको नमस्कार करके वे वहांसे पीछे लौट पड़े। ब्राह्मण कुछ भी नहीं सोच सका कि, यह ऐसा परोपकारी धर्मात्मा पुरुष कौन है; और वह बिलकुल आश्चर्यचकित होकर सिर्फ उनकी ओर देखताभर रहा। उसका मन, उनके विषयमें, आदर-भावसे इतना भर गया, कि वह एक शब्द भी मुँहसे बाहर निकाल नहीं सका; और राजासाहबने भी फिर उसकी ओर पीछे मुड़कर नहीं देखा; और चुपकेसे नदीके पास आकर फिर उसीमें कूद पड़े। इस बार वे अपनी तलवार पहलेकी भांति मुँहसे नहीं पकड़ सकते थे; क्योंकि वह यवन-रक्तसे सनी हुई थी, अतएव अबकी बार उन्होंने वह कमरमें ही आड़ी बांध ली, इसके अतिरिक्त और कोई उपाय ही न था। आते समय जो जोश था, वह लौटते समय अब नहीं था। आते समय मन

आतुरतासे व्याप्त था; परन्तु अबकी बार वह खिन्नतासे ग्रस्त था। तैरते समय किसीका भी मन किसी विचारमें निमग्न नहीं देखा जाता; पर राजासाहबका मन तैरनेमें बिलकुल ही नहीं था, हां, वे सिर्फ हाथभर बढ़ाते हुए चले जारहे थे। ऊपर हमने बतलाया ही है कि, आजतक राजासाहबने ऐसा कोई दृश्य स्वयं आंखोंसे नहीं देखा था; किन्तु मुसलमानोंके अत्याचार अभीतक उन्होंने सिर्फ कानोंसे ही सुने थे। पर आजका जो भयंकर दृश्य उन्होंने स्वयं अपनी आँखोंसे देखा, उससे उनका चित्त बिलकुल व्याकुल होगया। तैरनेमें वे बहुत ही पटु थे—उस नदीकी तो कोई गणना ही नहीं थी; किन्तु अन्य किसी भी नदीमें चाहे जितनी भारी बाढ़ आई हो; और जल चाहे जितना अगाध हो, वे उसको बातकी बातमें तैर जासकते थे। आज उनको जोश भी बहुत आया था; और वे मन ही मन यह विचार करते जारहे थे कि, "ऐसे छोटे छोटे गाँवोंके कसाई भी ऐसे ऐसे भयंकर अत्याचार करते हैं—ऐसी दशामें अब रास्ता कहांतक देखते रहें! कहांतक सोचते रहें—कि 'अब करेंगे, तब करेंगे, यह करना है, वह करना है,' इत्यादि—जो कुछ करना हो, सो बहुत जल्द प्रारम्भ कर देना चाहिए। हमारे इन हाथोंसे जो कुछ होना होगा, सो हो ही जायगा; और यदि न होगा, तो इतना तो अवश्य होगा कि, हमारे प्राण धर्मकी रक्षा और गो-ब्राह्मणके प्रतिपालनमें लग जायंगे।" बस, यही बात बार बार मनमें सोचते हुए राजा शिवाजी नदी तैरकर इस पार आये।

इधर वह ब्राह्मण, अपनी उस मन्द दृष्टिको पूर्णतया ख़र्च करके, जहांतक देखते बना, उस महापुरुषको, जोकि चुपकेसे तैरता जारहा था, बहुत देरतक खड़ा हुआ देखता रहा। इसके बाद जब वह मूर्ति उसकी वृद्ध दृष्टिकी ओटमें होगई, तब उसके मुखसे अचानक ये शब्द सुनाई दिये—“परमात्मन्! क्या कोई ऐसा भी दिन आवेगा कि, जब ऐसा ही कोई अवतारी पुरुष अवतीर्ण होकर इन म्लेच्छोंके हाथसे धर्मकी और गो-ब्राह्मणकी रक्षा करेगा!” इतना कहकर उस ब्राह्मणने एक दीर्घ निःश्वास छोड़ा; और फिरसे नदीके किनारे जाकर, स्नान करनेके बाद, मन्दिरमें जाबैठा।

राजासाहबने अपने ज्वरपीड़ित शरीरकी ओर बिलकुल ही ध्यान न देते हुए उस नीच यवनके अत्याचारसे ब्राह्मणकी रक्षा करनेके लिए अपनी जानको ख़तरेमें डाला। निस्सन्देह पहले तो उक्त बातका उन्हें कुछ भी ख़याल नहीं हुआ; परन्तु जब वे किनारेपर पहुँच गये; और शरीर पोंछकर अपने वस्त्र धारण किये, तब उनकी तबीयत कुछ ख़राबसी मालूम होने लगी।

उपर्युक्त घटनाके वर्णन करनेमें हमको जितना समय लगा, उससे कुछ ही अधिक समय शायद उसके घटित होनेमें लगा हो। अर्थात् लगभग पौन घंटेमें राजासाहब उपर्युक्त सारा कार्य करके वापस आगये। स्वामीजी वापस आकर देखते हैं, तो राजासाहबकी सवारी, जैसी पहले लेटी हुई थी, वैसी ही अब भी लेटी थी; और तलवार जहांकी तहां रखी थी। हां, चेष्टा

उनकी अवश्य ही उस समय कुछ विलक्षणसी दिखाई देरही थी; क्योंकि बुख़ार चढ़ता आरहा था; और उपर्युक्त घटनाके कारण उनके हृदयको सन्ताप भी काफ़ी होरहा था। अतएव स्वामीजी उनकी वह चेष्टा देखकर और उनके शरीरमें हाथ लगाकर कहते हैं, शिवबा, बुख़ार चढ़ता आरहा है—क्या नदीमें स्नान इत्यादि तो नहीं किया ?" इतना उन्होंने कहा ही था कि, उनकी दृष्टि पास ही पड़े हुए भीगे लँगोट और धोतीकी ओर गई। जिससे उनको स्पष्ट ही मालूम होगया कि, ये नदीमें अवश्य पैठे हैं। इसपर स्वामीजीने उनसे कहा कि, देखो, यह अच्छा नहीं किया; परन्तु राजासाहबने उन्हें कुछ भी नहीं बतलाया कि, उनके जानेपर क्या घटना हुई; और उनको किस कारण नदीमें पैठना पड़ा। उन्होंने सोचा कि, इसके बतलानेसे कोई भी लाभ नहीं, अतएव वे बिलकुल ही मौन रहे; और स्वामीजीको वैसे ही सोच-विचारमें रहने दिया। कुछ देर बाद उठकर स्वामीजीने रसोई तैयार की; और शिवबाको भी आग्रह करके थोड़ासा खिलाया; और फिर स्वयं भी भोजन करनेके बाद आज आगे चलनेका विचार रहित किया; क्योंकि राजासाहबकी तबीयत ठीक नहीं थी। परन्तु राजा शिवाजी-को ऐसा करना ठीक नहीं जान पड़ा। अतएव उन्होंने कहा कि, मेरे ज्वरकी आप परवा न करें, यह ज्वर थोड़ा न थोड़ा जन्मभर ही रहेगा! और यह कहनेके बाद उन्होंने तुरन्त ही उठकर अपना कम्बल लपेटा। स्वामीजीने बहुत कुछ सम-

भ़ाया-बुझाया; पर शिवराजने उनकी एक नहीं सुनी; और कहा, "अब बहुत जल्द यहांसे चलकर समर्थके दर्शन करके तुरन्त ही लौट पड़ना चाहिए—हमें अपने अगले उद्योगमें शीघ्र लगना है। अब चुप बैठनेसे काम नहीं चलेगा। गुरुजी, आज-तक हमने बहुतसा समय ख़राब किया!" ये अन्तिम शब्द उन्होंने कुछ विचित्र ही आवाज़से निकाले। ऐसा जान पड़ा कि, उनकी उस आवाज़में दुःख, खेद और पश्चात्तापके भाव पूर्ण रूपसे भरे हुए हैं। अब स्वामीजीने ताड़ लिया कि, हमारे पीछे कोई न कोई घटना ऐसी अवश्य घटी है, जिसे ये बतलाते नहीं हैं। वह घटना कौनसी हुई, सो कुछ उनके अनु-मानमें नहीं आया। हमने आजतक व्यर्थके लिए समय ख़राब किया—ऐसा समय व्यतीत करना उचित नहीं था—ये विचार राजा शिवाजीके मनमें कुछ यों ही, आप ही आप, नहीं आये—कोई न कोई कारण अवश्य है। मालूम होता है, कोई न कोई भयंकर घटना इन्होंने ख़ुद देखी है, अथवा शायद किसीने आकर इनको बतलाई हो। जो कुछ भी हो; परन्तु ऐसी ही किसी बातके बिना, अचानक राजासाहबके चित्तको ऐसा खेद होनेका कोई कारण नहीं था। यहांतक तो स्वामीजीने ठीक अनुमान किया; पर अब आगे वे यह नहीं सोच सके कि, ऐसी घटना कौनसी हुई, कब हुई; अथवा किसने आकर इनको बत-लाई। जो हो, राजासाहबकी वह मनोदशा उनको कुछ अनिष्ट नहीं जान पड़ी। अतएव उसपर विशेष कुछ न कहकर उन्होंने

इतना ही कहा, "क्यों ? आज इतनी जल्दी क्यों ? आज ही, मेरे पीछे ऐसी कौनसी बात हुई, जिससे तुम्हारा चित्त इतना खिन्न हुआ ?" राजासाहबने सिर्फ इतना ही कहा कि, चलिये, रास्तेमें मैं सब कुछ बतलाऊंगा। और यह कहकर उन्होंने घोड़े-पर ज़ीन कस दिया। स्वामीजीने सोचा कि, अब विशेष कहनेसे कोई लाभ नहीं; और परलीका मुक़ाम भी अब यहांसे कुछ बहुत दूर नहीं है, लगभग दो मंज़िलपर है, इसलिए राजासाहबके ही मनके अनुकूल चलना ठीक होगा। यह सोचकर उन्होंने भी अपना श्यामकर्ण तैयार करके उसपर अपना आसन जमाया। मार्गमें चलते समय बहुत देरतक राजासाहब कुछ भी नहीं बोले; और न स्वामीजीने ही उनसे उस विषयमें कोई पूछ-तांछ की। क़रीब एक घंटेतक दोनों ही चुपकेसे मार्ग चलते रहे। इतनेमें सूर्यास्तका समय आगया। सूर्यनारायणका बिम्ब आरक्त होकर बिलकुल क्षितिजमें जाकर भिड़ने लगा। शीतल वायु बहने लगी; और वेला बिलकुल शान्त होने लगी। तब राजासाहबका मस्तक भी कुछ शीतल हुआ; अतएव उनके मनमें आया कि, अब दोपहरकी दुर्घटना स्वामीजीको बतलाना चाहिए। उसी दुर्घटनाको देखनेसे उनके मनमें यह बात आई थी कि, अब अपने उद्योगमें बहुत जल्द लगना चाहिए; और तदनुसार ही करनेका उन्होंने निश्चय किया था। अतएव अब वह निश्चयभर उनके मनमें क़ायम रह गया; और बाक़ी खिन्नता इत्यादि सारी दूर होगई। दूर न हुई हो, तो कमसे

कम वह बहुत कुछ घट गई, इसमें सन्देह नहीं। शरीरमें जो ज्वर चढ़ रहा था, वह भी, उस चलते समयके जोशके कारण, न जाने कहांका कहां चला गया! मनका सन्ताप भी धीरे धीरे कम होगया था; और चित्त अब बहुत कुछ स्थिर हो-गया था। इस प्रकार जब मनकी स्थिरता फिर प्राप्त हुई, तब राजासाहबको इस बातपर बड़ा पश्चात्ताप हुआ कि, देखो, हम उस समय स्वामीजीसे अच्छी तरह बोले नहीं, यह अच्छा नहीं किया। अतएव, अब वे स्वामीजीसे एकदम बोले; और उनसे क्षमा मांगी, तथा उनके जानेके बाद नदीके घाटपर जो दुर्घटना हुई थी, उसका सब वृत्तान्त बतलाया; और यह भी बतलाया कि, उन्होंने उस दुर्घटनाको देखकर क्या क्या कार्य किया। इसके बाद फिर उन्होंने अपने मनकी यह बात भी बतलाई कि, हम वैसे ही वहांसे अपने कार्यको वापस जानेवाले थे; परन्तु समर्थके दर्शनोंकी उत्कंठासे फिर इधर बहुत जल्द आपके साथ चल दिये। स्वामीजीने राजा शिवाजीकी वे सब बातें सुनीं; और उनको अत्यन्त ही आनन्द हुआ। उन्होंने सोचा कि, हमने आजतक अनेक बार इस प्रकारके उदाहरण इनको बतलाये थे; और उन उदाहरणोंको सुनकर इनके मनपर प्रभाव भी बहुत हुआ था; पर आज जो उदाहरण स्वयं इनकी दृष्टिमें आया; और उसके लिए प्रत्यक्ष इन्होंने इतना कार्य भी किया; इससे अवश्य ही इनके मनपर और भी अधिक प्रभाव पड़ा है; और हम अपने उद्देश्यके पूर्ण करनेमें इनके ऐसे प्रभावोंका बहुत अच्छा उप-

योग कर सकेंगे। यह सोचकर स्वामीका मन सचमुच ही बहुत सन्तुष्ट हुआ। उस सन्तोषके आवेगमें कुछ देरतक वे बिलकुल नहीं बोले। सिर्फ चुपके राजासाहबका वृत्तान्तभर सुनते रहे। फिर उन्होंने सोचा कि, देखो, हमने यह एक ऐसा ही वीर पुरुष ढूँढ़ निकाला, जो हमारे सद्गुरु स्वामीको ख़ूब ही पसन्द आवेगा; और यदि ईश्वरने चाहा, तो इसीके हाथसे महाराष्ट्रका उद्धार भी होगा। यह सोचकर उनको अवश्य ही कुछ अभिमानसा मालूम हुआ। उनको यह बिलकुल निश्चय होगया कि, हमने एक बहुत ही वीर पुरुषको इस महान् कार्यके लिए चुना है; और यह हमारी कल्पनासे भी अधिक शूरवीर, दृढ़प्रतिज्ञ और राजनीतिज्ञ पुरुष है। इन सब बातोंको सोचकर स्वामीजीके चित्तमें सन्तोष, सुख और स्वाभिमानकी लहरें उठने लगीं।

उपर्युक्त सब वृत्तान्त सुननेके बाद स्वामीजी बहुत देरतक कुछ भी नहीं बोले। फिर एकदम वे राजासाहबसे कहते हैं, "देखो, शिवराज, जो बात हुई, बहुत अच्छी हुई। अपने इस प्रत्यक्ष अनुभवसे इन यवनोंकी नीचता जैसी तुम्हारे ध्यानमें आई, वैसी और किसी प्रकार भी नहीं आसकती थी। इसके सिवाय, तुमने भी इस समय ख़ूब ही साहस दिखलाया—भरे बुख़ारमें, अपनी जानकी परवा न करते हुए, नदीमें तैरकर उस पार गये—यह भी तुम्हारे व्रतके योग्य ही हुआ। तुम्हारे हाथसे, आगे सहस्रों पराक्रम होंगे—पीछे भी सैकड़ों ही हुए

होंगे; पर आजके पराक्रमकी कुछ बात ही निराली है। तुम्हारा यह आजका साहस, और उदारताका कार्य, तुम्हारे अन्य अनेक कार्योंसे कहीं अधिक महत्वका है।"

इतना कहनेके बाद फिर किसीने उस सम्बन्धमें एक अक्षर भी नहीं कहा; और प्राय: अपना बहुतसा समय चुपकेसे मार्ग चलनेमें ही बिताया। मंज़िल-दरमंज़िल तै करते हुए उक्त दोनों सज्जन परलीतक पहुंच गये; और उस प्रदेशके आसपास-का रमणीय सृष्टिसौन्दर्य देखकर राजासाहबको अत्यन्त आनन्द हुआ। परन्तु उस सृष्टिसौन्दर्यको देखनेकी अपेक्षा वहां निवास करनेवाले उस महात्माके दर्शनकी ही अभिलाषा उनको विशेष थी; अतएव उनका सारा चित्त उसी ओर लगा हुआ था।

परन्तु कई बार ऐसा होता है—कई बार क्या? अधिकांश बार ऐसा ही होता है कि, अभिलाषा जितनी अधिक होती है, निराशा भी उतनी ही आकर उपस्थित होजाती है। बस, इसी नियमके अनुसार राजासाहबके लिए भी मानो निराशाका ही अवसर आने लगा। समर्थके दर्शन और सम्भाषणकी उन्हें जितनी अधिक अभिलाषा थी, उतनी ही अधिक निराशाके लक्षण उनको दिखाई देने लगे। पहुंचते ही उन्होंने मठमें पता लगाया; पर मालूम हुआ कि, न जाने समर्थ कहां गये हैं, कुछ पता नहीं। इसपर राजा शिवाजीको अत्यन्त खेद हुआ। मठके शिष्य लोगोंने उनका अच्छा आदर-सत्कार किया; पर जब उन्होंने देखा कि, जिस उद्देश्यसे हम इतनी दूर चलकर आये,

वह उद्देश्य सिद्ध होता दिखाई नहीं देता, तब उनको खेद होना स्वाभाविक ही था। वे समर्थके मठमें जिस समय पहुँचे थे, उस समय तीसरा पहर उलट गया था, अतएव उनका पता लगानेके लिए भी काफी समय नहीं मिला। और जो समय मिला भी, उतने समयमें वे उस समयके उनके बैठनेके स्थानका भी पता नहीं लगा सके।

जिस समय समर्थ श्रीरामदास स्वामी पहलेपहल लोगोंमें प्रकट हुए, उस समय उनके कुछ दिन ऐसे व्यतीत हुए थे कि, उन दिनोंमें उनकी सभी छोटी-मोटी बातोंका जानना एक बहुत ही दुर्घट विषय था। उनके बड़ेसे बड़े शिष्य भी यह नहीं बतला सकते थे कि, वे इस समय कहांपर होंगे। उनकी मनोवृत्ति परमार्थ-दृष्टिसे अत्यन्त स्थिर थी, धर्म-दृष्टिसे और राष्ट्रीय-दृष्टिसे भी स्थिर थी; पर व्यवहार-दृष्टिसे उसमें तनिक भी स्थिरता न थी। किस समय स्वामी कहां होंगे, किस समय कहां जायँगे; और कितने दिन कहां, किस ओर जाकर विराजेंगे, इसका किसीको कुछ भी पता नहीं रहता था। इसके अतिरिक्त मठको भी अभी वैसा स्वरूप प्राप्त नहीं हुआ था। उन साधु-पुरुषका मुख्य उद्देश्य था—“मराठामात्रको एकत्र करो,” और इसी उद्देश्यको सिद्ध करनेके लिए क्या क्या प्रयत्न करने चाहिए, इसीका मानो उन दिनों वे एकान्तमें जाकर विचार किया करते थे। स्वामीको शिष्य-सम्प्रदायकी कोई विशेष परवा नहीं थी। किन्तु आप स्वयं ही कहीं जंगल और पहाड़ोंमें

निकल जाते, वहीं किसी झाड़ी अथवा गुफा-कन्दरामें जाकर राम-नामका जप करते रहते, अथवा कोई पुरश्चरण करते, या वृक्षों और पौधोंको ही उखाड़ उखाड़ कर फेंकते रहते। अनेक लोगोंकी दृष्टिमें स्वामी अभी एक पागल ही प्राणी मालूम होते थे; और स्वामीकी निस्पृह और निरहंकार वृत्तिसे लोगोंके उक्त ख़याल्में एक प्रकारसे दृढ़ता ही होती जाती थी। किन्तु स्वामी कभी किसीकी कोई परवा नहीं करते थे। अपने कार्योंपर किसीका निर्बन्ध तो उन्हें बिलकुल ही पसन्द नहीं आता था। कोई आदरपूर्वक उनके पास आता, तो उससे बोलना-चालना भी उनको बिलकुल नहीं भाता। शायद एक ही दो प्राणी ऐसे होंगे, जिनसे वे कुछ बोलते-चालते हों। ऐसी दशामें इधर राजासाहब आकर उपस्थित होगये; पर समर्थ को इसका कुछ पता न चला। राजासाहब उनके दर्शनोंके लिए अत्यन्त उत्सुक थे, इसलिये श्रीधर स्वामीने बहुत कुछ ढूँढ़-खोज की; पर कुछ पता न चला। परलीके आसपास-का सारा जङ्गल ढूँढ़ डाला; पर कुछ पता नहीं। करवंदी इत्यादि मुकामोंकी झाड़ियां, सब गुफ़ाएँ और कन्दराएँ ढूँढ़ डाली गईं; पर स्वामीका कहीं सुराग़ नहीं लगा। अन्तमें निराश होकर दूसरा दिन भी बिताया। अब राजा शिवाजीकी उत्कंठा और भी अधिकाधिक बढ़ने लगी। दो दिन बीत गये, तीसरा दिन भी बीत गया। राजासाहबके मनमें स्वामिदर्शनके अतिरिक्त और कोई विषय नहीं था; और उस विषयकी सफ-लताका कहीं पता न था।

अन्तमें—चाहे इसकारणसे हो कि, उनका ध्यान उसी बात-पर लग रहा था,अथवा अन्य किसी कारणसे—राजासाहब-के स्वप्नमें एक ब्राह्मणने आकर उनसे कहा, "भैया, इतना क्यों तड़फड़ा रहा है ? स्वामी तुझपर अत्यन्त प्रेम करते हैं; किन्तु यह मौक़ा तेरे भाषण-सम्भाषणका नहीं है । तेरी प्रतिज्ञाके दिन निकट आरहे हैं । कमसे कम एक बित्ताभर स्थान ही यवनोंके हाथसे ले ले, तब फिर यहां आ । इस समय आया ही है, तो सिर्फ तुझे दर्शनमात्र होजायँगे । तेरे धैर्य-शौर्यकी सफलताके उद्देश्यसे स्वामी उत्तरकी ओर जाकर आधे कोसपर एक गुफामें बैठे पुरश्चरण कर रहे हैं । वहीं तू अकेला जा, तुझको दर्शन होंगे; किन्तु बोलनेकी आशा भी न रख ।" इतना कहकर वह स्वप्नका वृद्ध ब्राह्मण गुप्त होगया; और राजासाहबकी आंख खुल गई । राजा शिवाजीको जिस प्रकार धर्मपर श्रद्धा थी, उसी प्रकार ऐसे स्वप्नके दृष्टान्तोंपर भी श्रद्धा थी । "मनकी बातें ही स्वप्नमें दिखाई देती हैं"—ऐसा कहकर उन्होंने उसे टाल नहीं दिया; किन्तु उनको दृढ़ विश्वास होगया कि, यह स्वप्न हमारा बिलकुल सच्चा है; और श्रीसमर्थ रामदास स्वामी-की ओरसे ही हमको स्वप्नमें यह दृष्टान्त हुआ है । अतएव दूसरे दिन प्रातःकाल ही, जबकि अभी पूर्व दिशाकी ओर लालिमा भी नहीं आई थी, आप उठे; और श्रीधर स्वामीको भी न बतलाते हुए उसी दिशाकी ओर चल दिये कि, जिसका उन्हें स्वप्नमें ज्ञान हुआ था । मार्गमें एक झरना मिला, उसीपर

स्नान इत्यादि करके वे शुचिभूत हुए; और फिर स्वप्नज्ञानके अनुसार उतने ही अन्तरपर पहुँचे, जहांकि उक्त गुफा होनेकी सम्भावना थी। वहां जाकर वे इधर-उधर देखने-भालने लगे कि, इतनेमें एक गम्भीर घाटीकी ओरसे गम्भीर स्वरके आनेका उन्हें भास हुआ। ध्यान लगाकर सुननेपर उन्हें वह ध्वनि और भी स्पष्टरूपसे सुनाई देने लगी। भवभूतिने एक जगह कहा है कि, किसी अन्तस्थ हेतुके कारण ही दो व्यक्तियों अथवा पदार्थोंका प्रेम एक दूसरेकी ओर आकर्षित होता है। इसका एक बहुत ही उत्तम उदाहरण यहां दिखाई दिया। वह धीर-गम्भीर ध्वनि, जोकि क्षण क्षणपर अधिकाधिक सुस्पष्ट हो-रही थी, कानोंमें पड़ते ही राजासाहबके शरीरपर, आदरप्रेरित आनन्दसे, रोमाञ्च होआया। आजतक जिसकी हम केवल कीर्ति ही सुन रहे थे; और जिसका शिष्यत्व सम्पादन करनेकी हमको उत्कृष्ट इच्छा है, उसका पुण्यदर्शन अब आज हमको होनेवाला है—यह भाव उनके मनमें आया; और उनका मन बिलकुल तल्लीन होगया। अतएव अब वे अत्यन्त धीर-गम्भीर क़दमोंसे उसी ओरको चले कि, जिस ओरसे वह पवित्र ध्वनि आरही थी। वहां जाकर देखते हैं, तो वृक्षोंकी घनी छायासे शीतल होनेवाली एक खोहकी आड़में वह पुण्य-मूर्ति आसन लगाये और कुबड़ीपर हाथ टेके हुए बैठी है, तथा रामनामका गम्भीर घोष होरहा है। पासमें एक, नित्य साथमें रहनेवाले, कम-ण्डलुके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। उस पुण्यपुरुषको

देखते ही राजासाहबका हृदय भक्तिरससे बिलकुल परिपूर्ण हो गया; और अधिक नहीं, तो कमसे कम, दो-ढाई घड़ीतक वे अपने उन विशाल, तेजस्वी, और अब भक्तिपूर्ण नेत्रोंसे उनकी ओर एकटक देखते रहे। किसी प्रकार भी उस मूर्तिकी ओरसे अपने नेत्रोंके हटानेको उनका चित्त नहीं चाहता था;और सचमुच ही वह धीर और गम्भीर मूर्ति भी ऐसी ही थी। शरीर-कान्ति बिलकुल दिव्य—ऐसा जान पड़ता था कि, सम्पूर्ण शरीरके आसपास एक प्रकारका तेजोमण्डल प्रदीप्त होरहा है; और उस तेजोमण्डलके बाहरी ओर उनके पुण्यप्रतापका एक और भी मण्डल उस पहले तेजोमण्डलकी अपेक्षा भी विशेष उद्दीप्त दिखाई देरहा है। स्पष्ट ही है कि, जो प्राणी बिलकुल दृढ़ श्रद्धासे, पूर्ण भक्तिसे और अटल सत्यनिष्ठाके साथ समीप आना चाहेंगे, उन्हींको उस प्रताप अथवा तेजसे कोई हानि नहीं होगी; किन्तु जिनकी आत्मा शुद्ध और निष्कलंक नहीं है, उनको एक क़दम आगे बढ़नेका भी साहस न होगा। चारों प्रकारके योगसे ज्ञान-प्राप्ति करके पूर्ण ब्रह्मज्ञानमें लीन होजानेवाले व्यक्तिकी जो अवस्था होती है,वही अवस्था पूर्ण रूपसे उस पुण्यपुरुषकी दिखाई देरही थी। देहकी अणुमात्र भी चिन्ता न होनेपर भी सारा शरीर ऐसा सुसंगठित था कि, देखते ही बनता था! पूर्ण अन्तःशुद्धिके बिना ऐसा होना कब सम्भव है? जैसे किसी उत्तम मल्लका शरीर हो, वैसा ही, ख़ूब कसा हुआ, स्वामीका शरीर था। उनकी कान्तिका तो कहना ही क्या है! मुखमण्डलको

देखकर ऐसा जान पड़ता था कि, सम्पूर्ण ज्ञानका, और उस ज्ञानके साथ ही साथ, एक प्रकारकी चिरन्तन शान्तिका, निधान ही यह मूर्ति है। और यह बिलकुल सच था! इसके सिवाय, उसी मुखमण्डलसे यह भी स्पष्ट दिखाई देरहा था कि, इस पुण्य-पुरुषकी निज-हित-निरपेक्षता कितनी विलक्षण है; और केवल परहितपरायणता कितनी दृढ़ है। इस प्रकारकी वह पुण्यमूर्ति, रामनामका पुरश्चरण करती हुई ज्यों ही राजा शिवाजीको दिखाई दी, त्यों ही एकदम उनके मनमें यह भाव आया कि, धन्य है इस महात्माको, आजतक हमने इसका जितना कुछ वर्णन सुना, वह कितना अल्प और अधूरा था, उससे तो एक सहस्रांश भी कल्पना इनकी सत्यस्थितिकी नहीं होसकती थी। ज्यों ज्यों वे स्वामीकी ओर देखने लगे, त्यों त्यों उनके मनका भक्तिप्रेम उनके नेत्रोंकी राह बाहर झमकने लगा; और अचानक उनके मनमें यही आया कि, राज्यकामना, महत्वा-कांक्षा इत्यादि सभी बातोंको एक ओर रखकर इसी महात्मा-की सेवामें दिन व्यतीत करें—यह इच्छा उस समय बराबर क्षण क्षणपर, उनके हृदयमें प्रबल ही होती गई—अन्तमें उनसे रहा न गया; और उन्होंने बड़े ज़ोरसे यह कहा—"महा-राज, गुरुवर्य, दयानिधे, राजा शहाजीका पुत्र शिवाजी आपको यह साष्टांग-प्रणाम करता है। इसपर कृपादृष्टि रखें—" इतना कहकर उन्होंने अपना शरीर एकदम, दण्डकी तरह, पृथ्वीपर डाल दिया। इधर तो राजा शिवाजीकी यह दशा

होरही थी; और उधर ऐसा दिखाई दिया कि, स्वामीने भी मानों अन्तर्ध्यानसे यह सब कुछ जान लिया; क्योंकि उनके मुखपर किंचित् स्मित-छाया दिखाई देने लगी, फिर भी नेत्र खोलकर देखने इत्यादिकी कुछ भी सम्भावना दिखाई नहीं दी। रामनामका जप बराबर जारी था। इधर राजा शिवाजी दण्डकी तरह वैसे ही पड़े रह गये। किसी प्रकार भी उठते नहीं थे। पृथ्वीपर सिर रखकर मानो वे भी स्वामीके ध्यानमें निमग्न होरहे थे। इतनेमें राजासाहबके कानमें, ऐसा जान पड़ा, मानो कोई अत्यन्त मन्द मधुर वाणीसे कुछ कह रहा है। वह कथन उनको बिलकुल स्पष्टतया सुनाई दिया; और उनके हृदयपर मानो बिलकुल खचितसा होगया—"गो-ब्राह्मणोंका प्रतिपालन, दुष्ट म्लेच्छोंके अत्याचारसे उनका संरक्षण ; और स्वराज्य संस्थापन—बस,यही तुम्हारा कर्त्तव्य है; और इसीलिए तुम्हारा अवतार हुआ है। तुम्हारा पुरश्चरण यही है। यही तुम्हारा जप-तप है; और यही तुम्हारी गुरुसेवा है! इसमें तुम विलम्ब क्यों लगा रहे हो? जाओ, जितनी शीघ्रतासे होसके, इसको करो—अवतारी पुरुषोंको अपने अवतारकी सफलता प्राप्त करनेमें विलम्ब न लगाना चाहिए। हम तो सिर्फ निमित्त-मात्र हैं। कार्य सारा तुम्हारे ही हाथमें है। इसलिए अब और कोई भी विचार मनमें मत लाओ। हमको तुम गुरु करके मानते हो, इसलिए कार्यका आरम्भ होते ही, प्रथम-सिद्धिके प्रसंगपर, आकर मिलेंगे। तबतक मिलनेके लिए, अथवा

भाषणके हेतु उतावली न करना। उतावली जो कुछ करना हो, सो कार्यके लिए ही करना।"

राजासाहबको मालूम हुआ, जैसे उक्त सम्पूर्ण शब्द कोई, अत्यन्त मन्द मधुर वाणीसे, बहुत धीरे धीरे, उनके कानमें कह रहा हो, अतएव उनको ऐसा जान पड़ा, जैसे विलकुल अमृतविन्दु ही किसीके मुखमें, एकके बाद एक, पड़ रहे हों; और वह इस प्रतीक्षामें हो कि, एक विन्दु आया, अब दूसरा कब आवेगा; और वह फिर अपने तनमनसे उसी अमृतरसके पानमें तल्लीन होजावे—बस, इसी प्रकार राजासाहबके कानमें उस समय वे शब्द पड़ रहे थे; और उनका तनमन उन्हींके सुननेमें—किंबहुना, एक एक अमृतविन्दु ज्यों ज्यों गिरता जाय, त्यों त्यों उसे अपने हृदय-सरोवरमें भर लेनेमें—लग रहा था। उपर्युक्त भाषणके समाप्त होते ही राजासाहब एकदम चमककर उठ पड़े; और देखते हैं, तो पासमें कोई भी नहीं है। जो पुण्यमूर्ति अबतक उनके सामने बैठी हुई थी; और जिसकी वह मन्द मधुर वाणी अभीतक उनके कानमें गूंज रही थी, उसका अब कहीं पता भी नहीं। राजासाहबने इधर-उधर, चारों ओर घूमकर, बहुत कुछ तलाश किया; पर वहां उसका पता कहां? राजाने सोचा कि, मूर्ति अन्तर्धान होगई, इधर-उधर कहीं गई नहीं; क्योंकि यदि गई होती, तो ढूँढ़कर हम अवश्य पता लगा लेते। उन्होंने सोचा कि, देखो, अन्तमें स्वामीके दर्शनकी हमें एक

झलकमात्र ही प्राप्त हुई, प्रत्यक्ष दर्शन और सम्भाषणका सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ। इसपर उन्हें पहले कुछ खेदसा हुआ; परन्तु फिर शीघ्र ही यह सोचकर उन्होंने अपने मनका समाधान किया, अस्तु—जो कुछ भी हो—एक बार उनका दर्शन और भाषण हमको इस प्रकार तो प्राप्त होगया, यही क्या कम है ? अब, स्वामीकी आज्ञाके अनुसार कार्य करनेमें सचमुच ही हमको विलम्ब न लगाना चाहिए—और न हम लगावेंगे ही—यह निश्चय करके राजासाहब उठे;और मठकी ओर चल दिये। फिर स्वामीकी खोज करनेका विचार भी वे मनमें नहीं लाये। आज स्वामीके विषयमें राजासाहबके मनमें जो भक्तिभाव उत्पन्न हुआ, वह कुछ अद्वितीय ही था। जैसे किसी मनुष्यकी कोई नैसर्गिक प्रवृत्ति हो; और उसी प्रवृत्तिके अनुसार चलनेके लिए कोई एक ऐसा व्यक्ति उसे उत्साह दिलाता हो, जिसे वह अत्यन्त पूज्य मानता है; और जिसपर उसकी बड़ी भारी श्रद्धा है—यही नहीं, बल्कि वह व्यक्ति उसे अपनी पूर्ण सम्मतिका आश्वासन देकर और उलटे इस बातका दोष भी देरहा हो कि, तुम अपनी इस प्रवृत्तिके अनुसार कार्य करनेमें विलम्ब क्यों लगा रहे हो—अब, बतलाइये, इससे अधिक आनन्द और हर्षकी बात और क्या होसकती है ? राजा शिवाजीकी नैसर्गिक प्रवृत्ति इस बातकी ओर थी कि, गो-ब्राह्मणोंका प्रतिपालन किया जाय; म्लेच्छ लोग उनपर जो अत्याचार कर रहे हैं, उससे उनकी रक्षा की जाय; और

परकीय लोगोंका जो चारों ओर राज्य होरहा है; अपनापन कहीं कुछ भी नहीं रहा, इस परिस्थितिको बदलकर स्वराज्य स्थापित किया जाय। उनके जीवन-चरित्रकी अनेक बातोंपर ध्यान देनेसे मालूम होता है कि, यवनोंके विषयमें और यावनी राज्यके विषयमें पहलेहीसे उनके मनमें पूर्ण तिरस्कार बस रहा था; और अपनी प्राचीन सभ्यताके विषयमें, अपने प्राचीन राज्यके विषयमें उनके मनमें पूर्ण आदरभाव लड़कपनसे ही था। ऐसी दशामें, फिर आगे चलकर, श्रीधर स्वामीसे उनकी मुलाक़ात होगई, यह सोनेमें सुगन्ध होगया! परन्तु फिर भी, एक बातकी आवश्यकता अभी भास रही थी; और वह यह थी कि, कोई उत्साह दिलानेवाला गुरु उनको चाहिए था; और वह आवश्यकता आज पूरी होगई। अभीतक तो सिर्फ राजासाहबको यही एकमात्र विश्वास था कि, इस प्रकारका कोई न कोई प्रयत्न हमको करना चाहिए; और यदि हम करेंगे, तो अवश्य उसका कोई न कोई फल होगा; पर आज, जबसे उस मधुर वाणीने उनके कानोंमें उक्त उपदेश दिया, तबसे तो उनको यह विश्वास होगया कि, हमारा जन्म ही इस कार्यके लिए हुआ है—परकीयोंके राज्यको हटाकर स्वराज्यका संस्थापन करना हमारा जन्मसिद्ध कार्य है; और इस कार्यमें लग जाना ही इस समय हमारा कर्त्तव्य है। जब हम इस कार्यको कर लेंगे, तभी हमारा जन्म सार्थक होगा। यह न करते हुए यदि हम और किसी

काममें लग जायँगे, तो हमारा जन्म व्यर्थ जायगा, तथा गो-ब्राह्मणोंको और भी अधिक अत्याचारमें डालनेका पाप हमारे सिर आवेगा। इसलिए समर्थने आज शिवाजीको जो कर्णमंत्र दिया, वह उनके लिए रामबाणका कार्य कर गया; और उसमें भी—"तुम्हारा जप-तप यही है, पुरश्चरण यही है, अवतारी पुरुषको अपने अवतारकी सफलता प्राप्त करनेमें बिलकुल ही विलम्ब न लगाना चाहिए"—इत्यादि वाक्योंने तो उनके हृदयपर वह कार्य कर दिखलाया, कि जिसका वर्णन् किया नहीं जासकता। राजा शिवाजीकी बाहरी तैयारी आजतक सब पूर्ण होचुकी थी। उनकी नैसर्गिक प्रवृत्ति उस ओर थी ही; बालपनकी शिक्षा भी वैसी ही मिली थी। उनका साथ जिन लोगोंसे हुआ, वे यद्यपि बिलकुल उनके समान ही स्वभावके तो नहीं थे; किन्तु उनकी बतलाई हुई बातें उनको पसन्द अवश्य आगई थीं। फिर उसमें भी श्रीधर स्वामीके समान कट्टर स्वराज्यभक्त उपदेशकका उपदेश! यह सब ठीक था; परन्तु फिर भी, किसी महत्कार्यके अपने हाथसे होनेमें जो एक प्रकारके, अपनी आत्माके अन्तस्थ परिचयकी—आत्मपरिचय या आत्मविश्वासकी—आवश्यकता होती है, वह अभी उतनी नहीं थी। अबतक कभी कभी मनके अन्दर यह शंका उठ आती थी कि, न जाने हमारे हाथसे यह कार्य होगा, अथवा न होगा; क्या होगा, क्या नहीं होगा, इत्यादि; और इस शंकाके कारण मन भी निराश अवश्य ही होजाता था, सो उस निराशाका

मूल ही आज बिलकुल नष्ट होगया। आज अपने कर्तव्यके विषयमें दृढ़ श्रद्धा उत्पन्न होगई। ठीक ही है, जिस पुण्यपुरुषके दर्शन करनेके लिए चित्त इतने दिनसे चंचल होरहा था, उसके दर्शन आज होगये; यही नहीं, बल्कि आज उसने हमको अपना आत्मपरिचय भी करा दिया, हमको अपने जन्मके कर्तव्यका ज्ञान करा दिया; फिर अब और क्या चाहिए? अस्तु। अनेक प्रकारके विचार और निश्चय मनमें करते हुए राजासाहब फिर वहांसे लौट आये। उस समय उनकी चेष्टा एक प्रकारके स्वर्गीय आनन्दसे प्रफुल्लित दिखाई देरही थी; और मन बिलकुल तदाकार होरहा था।

राजासाहबकी सवारी मठकी ओर वापस आई। आज सुबहसे ही राजासाहबकी सवारी न जाने किधर निकल गई! श्रीधर स्वामी और अन्य लोग बड़े आश्चर्यके साथ इधर-उधर तलाश कर रहे थे। श्रीधर स्वामीको इस बातका तो आश्चर्य अवश्य ही था कि, आज न जाने हमको छोड़कर सवारी कहां चली गई; पर चूंकि उनको यह विश्वास था कि, श्रीसमर्थके दर्शनोंकी इच्छाके अतिरिक्त इसका और कोई भी कारण नहीं होसकता, अतएव वे यही अनुमान कर रहे थे, कि शायद राजासाहब आज अकेले ही जंगलोंमें घूम घूमकर उनके दर्शनोंका प्रयत्न कर रहे होंगे; और इसी ख़यालसे उन्होंने उतनी आतुरताके साथ राजासहबकी खोज भी नहीं की थी। अब, जबकि राजासाहब वापस आगये; और उनकी चेष्टा बहुत ही प्रफु-

ललित दिखाई दी, तब श्रीधर स्वामीको यह पक्का विश्वास होगया कि, इनको दर्शन होगये। अतएव उनको यह सोचकर सन्तोष हुआ कि, चलो, इतनी दूरसे यात्रा करके आनेका श्रम सफल हुआ। उनको स्वयं यद्यपि समर्थके दर्शन नहीं हुए; परन्तु इसका उन्हें कोई विशेष खेद नहीं हुआ। इसके बाद जब राजा-साहबने सारा वृत्तान्त बतलाया, तब तो स्वामीजीके आनन्दकी सीमा ही न रही; और अचानक उनके मुखसे ये शब्द निकल पड़े, "धन्य है, राजा, तेरे भाग्यको! तेरे समान भाग्यशाली तू ही है!" श्रीधर स्वामीने रातके उस स्वप्न-साक्षात्कारसे लेकर अन्ततकका सारा वृत्तान्त बार बार शिवाजीसे पूछा; और शिवाजीको भी चूंकि उसके बतलानेमें अपूर्व आनन्द आता था, अतएव उन्होंने भी, जितनी बार स्वामीजीने पूछा, उतनी बार, ख़ूब विस्तारके साथ, बतलाया। इसके बाद मठमें वह दिन और वह रात बड़े सुखके साथ समाप्त करके हमारे दोनों यात्री फिर अपने स्थानको वापस आये।

इकसठवां परिच्छेद ।
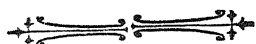
हमारी वही पगली ।

पाठकोंको याद होगा कि, उधर नानासाहब इत्यादि लोग बीजापुरकी ओरसे आकर पड़े थे; और राजासाहबसे उनकी भेंट ही न हुई थी। यही नहीं, बल्कि नानासाहबको तो जब यह मालूम हुआ कि, राजासाहब न जाने कहां चले गये, उनका पता ही नहीं, तब उनको बहुत खेद हुआ। उनकी बड़ी इच्छा थी कि, ज्यों ही राजासाहब मिलें, उनको अपना सब वृत्तान्त बतलावें; और उनके द्वारा सुलतानगढ़पर एकदम चढ़ाई करा दें। उनका यह विचार था कि, यह चढ़ाई हमारे पिताके सुल-तानगढ़ वापस आजानेके पहले ही होजानी चाहिए; क्योंकि पिताजी जब क़िलेपर आकर जम जायँगे, तब फिर क़िलेका हस्तगत होना उतना सहज नहीं रहेगा। अतएव अब उनको ऐसा जान पड़ा कि, उनकी यह इच्छा शीघ्र ही पूरी होती हुई दिखाई नहीं देती। राजासाहब वहांपर मौजूद ही नहीं थे, इसलिए उन्होंने दो-एक दिन उनके आनेकी प्रतीक्षा भी की; पर जब वे नहीं आये, तब नानासाहब बहुत ही निराश हुए! इधर बीजापुर छोड़नेके बादसे उनकी चित्तवृत्ति और भी कुछ विलक्षणसी होगई थी, शान्ति तो उनके मनको थी ही नहीं। दो-एक दिन रास्ता देखनेके बाद फिर उनको वहां रहना असह्य-

सा जान पड़ने लगा; और उनकी तबीयत वहांसे चलनेको होने लगी। सोचते सोचते उनके ध्यानमें आया कि, एक बार सुलतानगढ़की ओर घूम आवें; और देख आवें कि, उधरका क्या हालचाल है। इससे हमको अपने आगेके विचारोंको पूर्ण करनेमें सुविधा होगी। बस, यह बात उनके मनमें आई; और वे तानाजी इत्यादि अपने साथियोंकी सम्मति लेकर घोड़ेपर सवार होकर उसी भाँति चल दिये कि, जैसे इस कथानकके प्रारम्भमें वे वहां आये थे। तानाजीने भी यह सोचकर उनको अपनी सम्मति देदी कि, अच्छी बात है, सुलतानगढ़पर अब दस-पन्द्रह दिनके बीचमें चढ़ाई होनेका अवसर आ ही गया है, अतएव एक बार नानासाहब उधर जाकर यदि वहांकी सब हालत देख आवेंगे, तो हमारे अगले विचारके पूर्ण होनेमें एक प्रकारका सुभीता ही होगा।

नानासाहब उधरसे चलकर मंज़िल-दरमंज़िल तै करते हुए एक दिन रातको एक गाँवके बाहर एक वृक्षके नीचे आकर ठहरे। उनका विचार था कि, रात यहीं व्यतीत करके, ख़ूब तड़के, चन्द्रके उदय होनेपर, आगेका सफर करेंगे। बस, अपने इसी विचारके अनुसार उन्होंने वहीं अपना कम्बल बिछा दिया; और लेट रहे। इतनेमें उनको ऐसा जान पड़ा कि, उस वृक्षसे कुछ ही दूरपर मानो कोई स्त्री मधुर स्वरसे कुछ गीतसा गारही है। इसलिए वे और भी कुछ ध्यान लगाकर उस आवाज़को सुनने लगे; पर इतनेमें फिर उनको वह मधुर गीत तो सुनाई

नहीं दिया; बल्कि उसकी जगहपर कुछ अत्यन्त आर्त शोकस्वर उनके कानोंमें सुनाई दिया। यह क्या बात है? कुछ उनकी समझमें न आया। कोई मधुर गीत सुनाई दिया अवश्य; परन्तु उस गीतके शब्द ठीक ठीक कानोंमें नहीं आये, तथापि गीत गानेवाली स्त्रीका कंठ बहुत ही मधुर था, अतएव फिर उनका ध्यान उधर गया; और वे ध्यानपूर्वक सुनने लगे; पर इतनेमें वह गीत तो बन्द होगया; और उसकी जगह शोकस्वर सुनाई दिया—यह क्या मामला है? नानासाहब चकित होकर इधर-उधर देखने लगे। रात अँधेरी थी; और देर भी बहुत होचुकी थी। सच पूछिये, तो नानासाहबको इतनी रातके समय वृक्षके नीचे नहीं ठहरना चाहिए था; और न वे कभी ठहरते ही; परन्तु जबसे उन्होंने बीजापुर छोड़ा, उनकी चित्त-वृत्ति अपने निजके सुरक्षितपनके विषयमें ऐसी कुछ उदासीन और निश्चिन्त होगई थी कि, उनको अब कहीं भी किसी बातका भय नहीं मालूम होता था। अस्तु।

इतनी रातको यह गाने और रोनेका शब्द कहांसे सुनाई दे-रहा है? यह प्रश्न बारम्बार उनके मनमें आया; और फिर फिर उन्होंने कान लगाकर सुना। पहलेपहल ऐसा जान पड़ा कि, वह गानेकी ध्वनि पासके इस गाँवकी ही ओरसे आरही है—पर उधर अच्छी तरह कान लगाकर सुना, तो वैसा कुछ मालूम नहीं हुआ। गाँवकी ओरसे किसी प्रकारका भी शब्द सुनाई नहीं देरहा था। इसलिए अब उनको विश्वास हुआ कि, यह

आरही थी। परन्तु मार्गमें उन्हें बहुत ही कठिनाई मालूम होने लगी; क्योंकि बीचमें वह आवाज़ कुछ देरके लिए बन्द भी होजाती थी, इसलिए उस अँधेरेमें नानासाहबको, जोकि बिलकुल टटोल टटोलकर ही चल रहे थे, बीच बीचमें ठहर भी जाना पड़ता था। परन्तु फिर वे ज्यों ज्यों आगे बढ़ने लगे, त्यों त्यों वह आवाज़ क्रमशः और भी अधिक स्पष्ट सुनाई देने लगी; और उनका कार्य सरल होगया। कुछ दूर चलनेपर उनको ऐसा मालूम हुआ कि, वह आवाज़ बिलकुल पासहीसे आरही है। इसके बाद वे और भी कुछ आगे चले, सो मालूम हुआ कि, वहीं एक झोपड़ीसे वह आवाज़ निकल रही है। गायनके शब्द भी अब उन्हें बिलकुल स्पष्ट सुनाई देने लगे थे। वे शब्द कुछ—"मसल गये सब मेरे फूल। किसी दुष्टने पैरतले ये कुचल मिलाये धूल।" इसी प्रकारके थे। झोपड़ीमें सचमुच ही कोई स्त्री थी, जो उन शब्दोंको बहुत ही मधुर, परन्तु आर्तस्वरसे गाती, इसके बाद कुछ देर ठहर जाती, फिर चिल्ला चिल्लाकर रोती, फिर कुछ देरके लिए बिलकुल चुप होजाती; और थोड़ी देर बाद फिर आप ही आप हँसने लगती। बस, यही सिलसिला उसका जारी था। नानासाहब वहां जाकर कुछ देरतक झोपड़ीके बाहरसे ही उसका वह गाना, रोना और हसना सुनते रहे। इसके बाद फिर उन्होंने सोचा कि, यह बात क्या है, इसका पूरा पूरा भेद लेना चाहिए। इसलिए उन्होंने उस झोपड़ीका दरवाजा खटखटाया; और खोलनेके लिए आवाज़ भी

दी। परन्तु दरवाजा किसीने खोला नहीं। हां, वह गाना, रोना और हँसना वैसा ही जारी रहा। नानासाहबने सोचा कि, बड़े ताज्जुबकी बात है, यह स्त्री गारही है, हँस रही है;पर हम दरवाजा इतने ज़ोरसे खटखटा रहे हैं, फिर भी यह खोल नहीं रही है; और न यही पूछती है—"कौन हो, क्या बात है? दरवाजा क्यों खटखटाते हो?"—यह मामला क्या है? यह सोचकर नानासाहब और भी ज़ोरसे दरवाजा खटखटाने लगे, तब अन्तमें अन्दरसे किसीने बहुत ही त्रस्त और कठोर भावसे पूछा, "कौन है?" जिसे सुनते ही नानासाहबने ज़ोरसे कहा, "दरवाजा खोलो।" इधर यह सब होरहा था, परन्तु उस स्त्रीका गाना और रोना बन्द नहीं था। अस्तु। नानासाहबने जब ज़ोरसे कहा, तब भीतरसे कठोर शब्दोंमें यह उत्तर आया, "जबतक तुम यह न बतला दो कि, तुम कौन हो, तबतक दरवाजा खोला नहीं जासकता।" नानासाहबने कहा, "कोई नहीं, मैं एक मुसाफिर हूं।" इसपर उत्तर मिला, "मुसाफिर हो, तो आगे जाओ। यहां स्थान नहीं। गाँव पास ही है। हम, एक ग़रीब आदमी, यहां रहते हैं। जाओ, जाओ।" अब नानासाहबको एकाएक ऐसा मालूम हुआ कि, भीतरसे जो मनुष्य इतने ज़ोरसे बोल रहा है, वह कोई न कोई, ऐसा जान पड़ता है, मानो हमारी पहचानका ही है। कमसे कम इसकी आवाज़ तो कहीं न कहीं हमने अवश्य सुनी है। इतना विचार आनेपर फिर उनकी जिज्ञासा और भी अधिक बढ़ी;

अतएव वे फिर और भी ज़ो ज़ोरसे दरवाजा खटखटाने लगे' तथा साथ ही साथ भीतरके उस मनुष्यको ज़ोर ज़ोरसे पुकारने लगे। एक प्रकारसे अब वहां बिलकुल शोरगुल मच गया; परन्तु आश्चर्यकी बात यह कि, उस स्त्रीका गाने, रोने और हसनेका सिलसिला इतनेपर भी बन्द नहीं हुआ, जैसे उस शोरगुलसे उसे कोई मतलब ही न हो! यह स्त्री कौन है, जो भीतर और बाहर, दोनों ओरसे, पुरुषोंके चिल्लाते रहनेपर भी, उनके सामने इस प्रकार गाती,रोती और हँसती हुई दिखाई देरही है? अस्तु। भीतरके उस आदमीने जब देखा कि, यह बाहरका व्यक्ति हमारे धमकाने-घुड़कानेकी आवाज़ोंसे नहीं जाता, तब वह नाराज़ होते हुए दरवाज़ेके पास आया; और एकदम दरवाजा खोलकर बोला, "क्यों जी, तुम कौन हो, जो इतनी रातको हम ग़रीबोंको सतानेके लिए आये हो और यहां उपद्रव मचा रहे हो, जाते नहीं हो?" इस प्रकार, दरवाजा खुलनेके बाद, जब ये शब्द नानासाहबके कानोंमें प्रत्यक्ष रूपसे पड़े, तब वे कुछ पीछे हट गये; और सोचने लगे कि, अवश्य ही यह आवाज़ हमने कहीं न कहीं सुनी है—फिर यह चाहे जब और चाहे जहां सुनी हो। यह सोचकर वे कुछ देरके लिए चुप होगये। परन्तु उस व्यक्तिकी सूरत देखे बिना फिर भी वहांसे उनकी जानेकी इच्छा नहीं हुई। अतएव उन्होंने उससे कहा, "महाराज, नाराज़ न हों, मैं मार्गका बटोही हूं; कोई चोर अथवा लुटेरा नहीं। रास्ता भूल गया हूं।

आपकी झोपड़ीसे एक सुन्दर आवाज़ कानोंमें आई, इसलिये सोचा कि, चलकर देखूं, शायद स्थान मिल जाय। आप इतने क्रुद्ध क्यों होते हैं? किसी यात्रीको इस प्रकार अपमानपूर्वक अपने दरवाजेसे भगा देना हम हिन्दुओंका कर्त्तव्य नहीं है। फिर उसमें भी इतनी रातको जो बटोही आपके दरवाजे आपड़ा है, उसको इस प्रकार झिड़ककर भगा देना आपके समान सज्जनोंको शोभा नहीं देता।" इस प्रकारकी बातें किये बिना नानासाहब वहांका भेद कैसे पासकते थे?

नानासाहबका यह कथन सुनते ही, ऐसा जान पड़ा कि, उस महाशयकी भी चित्तवृत्तिमें कुछ विचित्रसा ही परिवर्तन हुआ—कह नहीं सकते, किस कारणसे—चाहे यही कारण हो कि, जिस प्रकार नानासाहबको उस महाशयकी आवाज़ कुछ परिचितसी मालूम हुई थी, उसी प्रकार शायद उसको भी नानासाहबकी आवाज़का परिचय मिल गया हो, अथवा और ही कोई कारण हो—जो हो, परन्तु इतना अवश्य हुआ कि, उक्त महाशय बड़बड़ाते हुए नानासाहबको अपनी झोपड़ीके अन्दर लेगया; और नानासाहब अभी कहने भी न पाये थे कि, उसने चकमक रगड़कर आप ही आप बत्ती जलाई—मानो उक्त व्यक्तिकी सूरत देखनेके लिए जैसे नानासाहब उत्कण्ठित होरहे थे, वैसे ही वह भी नानासाहबकी सूरत देखनेके लिए उतावला होरहा था; और इसीकारण बत्ती जलाते जलाते वह महाशय नानासाहबसे कहता है, "देखो, उसके गाने और हँसनेकी ओर तुम

बिलकुल ध्यान न दो। यह एक हमारा बड़ा भारी दुर्भाग्य है। यह हमारी लड़की है, जो पागल होगई है—सारा दिन और सारी रात यही गीत गाती रहती है; और आप ही आप रोती और हँसती रहती है।"

इतना उसने कहा ही था कि, चिराग़ अच्छी तरह जल उठा; और उस महाशयकी नज़र नानासाहबके चेहरेकी ओर गई, तथा उसकी चेष्टासे स्पष्ट दिखाई देने लगा कि, नानासाहबको उसने पहचान लिया। वह महाशय प्रायः वृद्ध था। नानासाहबने भी उसकी ओर कई बार देखा; और उनको ऐसा मालूम हुआ कि, उन्होंने भी उसकी सूरत कहीं देखी है; परन्तु ठीक ठीक वे उसको पहचान नहीं सके।

हां, उस बुड्ढे ने, ऐसा जान पड़ा कि, उनको अच्छी तरहसे पहचान लिया; क्योंकि उसके बर्तावमें अब बहुत कुछ अन्तर पड़ गया था; और अब मानो वह इसी विचारमें था कि, नानासाहबपर हम यह बात प्रकट होने दें अथवा नहीं कि, हमने उनको पहचान लिया है। कुछ देरतक दोनों ही एक दूसरेकी ओर चुपके देखते रहे। इसके बाद उस वृद्ध महाशयने, मानों अपने मनका कोई न कोई निश्चय स्थिर कर लिया; और फिर वह नानासाहबसे बोला, "आप तो आजकल अपने क़िलेपर ही रहते होंगे?"

यह प्रश्न सुनते ही नानासाहब बड़े चकराये; और मन ही मन सोचने लगे:—"क्या इस महाशयने हमको पहचान लिया?

हम जहां जाते हैं, लोग हमें पहचान लेते हैं—यह क्या बात है ?

उस वृद्ध महाशयने मानो उनके मनकी दशाको पहचान लिया, क्योंकि तुरन्त ही वह बोला, "आपको मैं अच्छी तरह जानता हूं, आप आश्चर्य न करें। आपका सब हाल मुझे मालूम है।"

वृद्ध महाशयके इस कथनने तो नानासाहबको और भी अधिक अचम्भेमें डाल दिया ; और वे सोचने लगे कि, यह महाशय कौन हैं। इतनेमें बाहरकी ओरसे घोड़ेकी टापोंकी आवाज़ आई; और दोनों यह देखनेको उठे कि, यह कौन आया। नानासाहबने समझा कि, शायद हमारा ही घोड़ा छूट गया हो; पर यह बात नहीं थी।

नानासाहब और वह बुड्ढा, दोनों बाहर आकर देखते हैं, तो कोई एक घुड़सवार घोड़ा दौड़ाता हुआ सामनेसे आरहा है। सवार आया और एकदम झोपड़ीके दरवाजेके पास आकर रुक गया; और उतरकर भीतर चला आया। ऐसा जान पड़ा कि, वह सवार कोई सदैवका आने-जानेवाला व्यक्ति है, यदि इतना नहीं, तो कमसे कम उस बुड्ढेसे उसकी जान-पहचान तो बहुत अच्छी दिखाई दी। नानासाहबको भी—कह नहीं सकते किस कारणसे—ऐसी शंका अवश्य हुई, जैसे उस सवारसे उनकी भी कुछ न कुछ पहचान हो। परन्तु इतना वे अवश्य नहीं सोच सके, कि वह कौन है। सवारने बुड्ढेको एक ओर बुलाया—उस समय नानासाहबने जब उसका बोल सुना, तब उनको पूरा

पूरा विश्वास होगया कि, हां, अवश्य यह हमारी पहचानका है। क्योंकि उसकी आवाज़ नानासाहबके बिलकुल पहचानकी थी; परन्तु फिर भी वे एकदम उसका नाम नहीं सोच सके।

इधर बुड्ढे की और उसकी धीरे धीरेसे कुछ बातचीत होने लगी, जिससे मालूम हुआ कि, वे दोनों ही नानासाहबके विषयमें कुछ बातचीत कर रहे हैं, क्योंकि कई बार हाथसे नानासाहबकी तरफ उनका इशारा हुआ; और ऐसा जान पड़ा, मानो वे नानासाहबसे उक्त बातचीत बहुत ही गुप्त रखना चाहते हैं; और इसीलिए वे दोनों और भी धीमी धीमी आवाज़से बोलने लगे। यह मामला क्या है? हम कहां आगये? ये कौन लोग हैं? इत्यादि बातोंके विचारमें नानासाहब बिलकुल निमग्नसे दिखाई दिये।

इधर उस सवारके साथ वृद्ध महाशयकी जो बातचीत होनी थी, सो होगई; और वह सवार वहांसे जाने लगा। उसने अभी दरवाजेसे पीठ फेरी ही थी कि, इतनेमें नानासाहबकी अत्यन्त प्रबल इच्छा हुई कि, वे उससे पूछें कि, भाई, तुम कौन हो? कहांसे आये हो, इत्यादि। और अपनी इसी इच्छाके अनुसार उन्होंने उस सवारको रोका भी; परन्तु ऐसा जान पड़ा, मानो वह सवार उनसे बातचीत नहीं करना चाहता था; फिर भी जब उसने देखा कि, वे रोक ही रहे हैं, तब लाचार होकर उसे ठहरना पड़ा; और उसने तुरन्त ही, बाहर अँधेरेमें जाकर, उनसे कहा, "क्यों जी; मुझसे आपका क्या काम है? मैं तो……"

इतनेमें नानासाहबको एकदम ही मानो कुछ यादसा आया; और शीघ्रतापूर्वक वे वहांसे उठकर उस सवारके पास गये; और आगे बढ़कर बोले, "वाहजी वाह! आप यह न समझें कि, मैंने आपको पहचाना नहीं। महाशय, आप इतने दिनतक कहां रहे? मैंने आपको बहुत तलाश किया, पर कुछ पता ही नहीं चला; किन्तु आज अचानक······"

नानासाहब यह कह ही रहे थे कि, इतनेमें ऐसा जान पड़ा कि, उनको कुछ और याद आया; और वे एकदम उस सवारसे बोले, "और ये आपके श्वसुर सम्भाजी घोरपड़े ही तो हैं?" वे यह कहने भी न पाये थे कि,इतनेमें दोनोंने—"चुप, चुप। ज़ोरसे न बोलिये। अजी, दीवालोंके भी कान हैं!"—कहकर उनको मना किया। इन लोगोंसे मिलकर नानासाहबको बहुत ही आनन्द हुआ। क्योंकि आज बहुत दिनोंसे नानासाहब सिर्फ उनका वृत्तान्तभर सुन रहे थे, परन्तु मिलनेका मौक़ा न आया था। फिर उसमें भी, वह सवार, जो पीछेसे आया था, नाना-साहबका बड़ा भारी मित्र था; और उन्हींकी तरह यवनोंका कट्टर विरोधी था। उस समय महाराष्ट्रमें कुछ ऐसे नवयुवक उत्पन्न होचुके थे, जिनका यह विचार था कि, यवनोंको पराभूत करनेके लिए कोई न कोई युक्ति निकालनी चाहिए, अपने समान दस-पांच युवकोंको मिलाकर कोई न कोई उद्योग इसके लिए करना चाहिए। जबतक ऐसा नहीं किया जायगा, तबतक यवनोंकी यह बला, जो हमारे गले पड़ी है, छूट नहीं

सकती; और न हम स्वराज्यकी ही आशा कर सकते हैं। अपनेमें-से कोई न कोई एक मुखिया खड़ा करके उद्योग प्रारम्भ करना चाहिए। इस प्रकारके विचारोंसे कुछ नवयुवकोंके मस्तिष्क उस समय सदैव व्याप्त रहा करते थे; और उन्हीं नवयुवकोंमेंसे सूर्याजी भी एक थे। नानासाहबकी और उनकी सदैव गुप्त मंत्रणा हुआ करती थी; और इसी प्रकारकी अनेक बातोंकी चर्चा उन दोनोंमें सदैव होती ही रहती थी। यही नहीं, बल्कि नानासाहब जब शिवाजीके गुटमें जाकर मिले थे, तब सूर्याजीसे सब बातचीत करके ही गये थे। वास्तवमें नानासाहब और वे—दोनों ही मिलकर उनके पास जानेवाले थे; पर सूर्याजीने सोचा कि, दोनोंका एक साथ जाना ठीक न होगा, अतएव वे नहीं गये। आगे फिर सूर्याजीके ऊपर क्या क्या बीती, सो पाठकोंको मालूम ही है। अस्तु।

सूर्याजीने जब देखा कि, अब हमको अपना भेष छिपानेसे कोई लाभ नहीं, तब वे नानासाहबके साथ भीतर गये; और सब वृत्तान्त बतलाया। यवनोंने अचानक उनके घरमें आकर कैसा कैसा उपद्रव किया, सारा घर किस प्रकार विध्वंस कर दिया; और उनकी क्या हालत होगई, फिर वे और उनकी स्त्री किधर गई, दोनोंकी कैसी कैसी भयङ्कर दशा हुई, स्त्री पगली कैसे होगई, उनको उस भयङ्कर घायल स्थितिसे आराम होनेमें कितने दिन लगे; और फिर तबसे वे किस उद्योगमें लगे हैं, इत्यादि सब बातें बतलानेके लिए वे नानासाहबको वहीं एक

ओर लेगये; और फिर सब हाल बतलाया। उसको बतलाते समय उनकी बड़ी विचित्र दशा होगई। विशेषतः, जब वे यह बतलाने लगे कि, उनकी स्त्री पागल कैसे होगई; और अब किस प्रकार उसको अपने पतिका भी कुछ ज्ञान नहीं है, तब उनका हृदय एकदम भर आया। नानासाहबको भी उनकी दशा सुनकर बड़ा खेद हुआ; और उन्होंने सूर्याजीको समझानेका भी प्रयत्न किया, पर जो स्वयं अपने ही घावोंसे व्यथित है—कमसे कम जिसको यह ज्ञान होचुका है कि, शत्रुओंने उसको बुरी तरहसे घायल किया है—वह दूसरेको क्या समझावे? और फिर सूर्याजीको तो एक खरोंचामात्र लगा था—अर्थात् उनकी स्त्री सिर्फ पागल ही हुई थी, आराम होनेकी फिर भी आशा होसकती थी; परन्तु इधर नानासाहब तो स्त्रीकी ओरसे अपने मनमें बिलकुल घायल ही होचुके थे। अतएव सूर्याजीको समझाते समय उनके मनकी क्या दशा हुई होगी, उसका पाठकगण ही अनुमान करें! उन्होंने अपना सारा वृत्तान्त एक बार सूर्याजीके सामने कह डालनेका विचार किया; पर फिर तुरन्त ही सोचा कि, ऐसी घृणित और दुःखजनक बातकी चर्चा न करना ही अच्छा, अतएव उन्होंने अपने उक्त विचारको तत्काल ही रहित कर दिया। हां, उस समय सिर्फ इतना ही बतलाया कि, हम राजा शिवाजीके समूहमें जाकर शामिल होचुके हैं; और अब उन्हींके काममें सुलतानगढ़ जारहे हैं। ऐसा विचार है कि, यह क़िला उनके हाथमें आजावे; और इसीलिए

हम पहलेहीसे जाकर इसका कुछ प्रबन्ध करनेवाले हैं। इस प्रकार सिर्फ ऊपर ऊपरकी बातें बतलाकर फिर उन्होंने विस्तार-पूर्वक यह बतलाया कि, राजा शिवाजीकी इस समय कहांतक तैयारी होचुकी है; और उनके द्वारा स्वराज्य-संस्थापना होनेकी कहांतक सम्भावना है। उन्होंने कहा कि, हम सभी यदि जाकर उनके समुदायमें मिल जायँगे, तो बहुत जल्द इन दुष्ट यवनोंकी हड्डी नरम कर सकेंगे; और वास्तवमें राजा शिवाजीका गिरोह बहुत अच्छा जम चुका है। इसके बाद फिर उन्होंने शिवाजीकी वीरता और उनकी चतुरताके भी अनेक दृष्टान्त दिये; और श्रीधर स्वामीको क़ैदसे छुड़ाते समय उनको स्वयं शिवाजीके विषयमें जो अनुभव प्राप्त हुआ था, सो भी सब बतलाया। सारांश यह कि, बहुत दिनके बाद दो मित्रोंके मिलनेपर जितना कुछ परस्परका वार्त्तालाप होता है, उतना सब उनमें हुआ। परन्तु हां, नानासाहबके हृदयमें जो बड़ा भारी असाध्य घाव होचुका था, उसे सूर्याजीके सामने वे प्रकट नहीं कर सके।

इधर सूर्याजीने भी अभीतक यह नहीं बतलाया था कि, आजकल वे क्या कर रहे हैं, इसलिए उनके मनको भी चैन न था, अतएव उन्होंने वह सब हाल अपने मित्रके सामने बतलाना शुरू किया।

उन्होंने कहा :—"नानासाहब, मेरे घरपर तो ऐसा भयंकर संकट आया कि, कुछ पूछिये नहीं—पिता माता इत्यादि सभी घरके लोगोंको वे दुष्ट पकड़ लेगये। अब ऐसी दशामें मेरी

क्या परिस्थिति होगई, इसका आप ही विचार करें। आपके कुटुम्बपर जो आफत आई, सो आपके आगे नहीं; पर यहां तो मेरी आंखों देखते यह सब हुआ। इधर सम्भाजीरावके घरपर संकट आ ही चुका था, जिसकी याद अभी हम लोगोंको नहीं भूली थी, कि इतनेमें हम लोगोंपर भी यह आफ़त आगई। अब, आप ही सोचिये, वास्तवमें मेरी क्या दशा हुई होगी! मैंने अपनी ओरसे एक मराठेका व्रत निबाहनेमें कोई कसर नहीं की, ख़ूब लड़ा, पर कहांतक टिक सकता था—मैं अकेला; और वे दस-बीस मुस्टण्डे! उनके आगे मैं क्या करता? मैं इतना घायल होगया था कि, बचनेकी कोई आशा नहीं थी; पर आपके पिताकी चिट्ठी लेआनेवाले उस लड़केने ही मेरे कुलकी लाज रखी; और मेरे प्राण बचाये। मैं बिलकुल मरनेहीपर आरहा था; और जीवनकी आशा बिलकुल छोड़ चुका था। इतनेमें आपके यहांका वह लड़का मेरे सामने आगया; और मैंने यह सोचकर कि, स्त्रीका और उस बच्चीका, यदि कोई प्रबन्ध होसके, तो अच्छी बात है, मैंने आपके उस लड़के—श्यामा—से कहा कि, भैया, तू इन दोनोंको, यदि होसके, तो अमुक अमुक स्थानमें पहुँचा दे; और यह ले, मेरी निशानी, वहां दिखला देना, इससे तुझको वे लोग पहचान लेंगे। उस समय मुझे स्वप्नमें भी विश्वास नहीं था कि, वह लड़का मेरे इस कार्यको कर सकेगा; और उसकी चपलतासे मुझे ये दिन फिर नसीब होंगे। पर वाहरे श्यामा! उसने मेरे कार्यको इस ख़ूबीके साथ निबाहा

कि, उसकी बदौलत ही आज मुझे ये दिन दिखाई पड़ रहे हैं। बीचमें किसी कारणवश हमको अपनी उस असली झोपड़ीसे एकदम चला जाना पड़ा। श्यामाको हम इसका समाचार भी नहीं देसके; पर शाबाश श्यामा—उसने हमारा पता लगा ही लिया; और फिर हमलोगोंके पास आपहुँचा—आज वही श्यामा हमलोगोंका जीवन-प्राण होरहा है। उसकी माताने मेरी पत्नीकी सेवा-शुश्रूषा करके उसको बहुत कुछ आराम दिया है; और उसकी दशाको सुधारा है, पर अब भी उसका पागलपन किसी उपायसे भी दूर नहीं हुआ है। उसके सिरमें अबतक वही भयंकर घटनाएं चक्कर काट रही हैं। उन्हींपर उसने स्वयं अपना गीत भी बनाया है, जिसको रात दिन गाया करती है। इधर-उधर जङ्गलमें, जहां मन माना, घूमा-फिरा करती है। हमने अपनी ओरसे उसको होशमें लानेके लिए सब प्रयत्न किये; पर कुछ लाभ न हुआ। मुझे पहचानती भी नहीं; और न अपने बापको ही पहचानती है—बस, अपनी ही सनकमें रहती है। अस्तु। आराम होनेके बाद मैंने इस बातका विचार किया कि, अब मैं यवनोंसे इसका बदला किस प्रकार निकालूं; और यह सोचकर कि, चुप बैठना ठीक न होगा, दस-बीस रामोशी (जङ्गली जातिविशेष) लोगोंका एक गिरोह इकट्ठा किया; और अब उन्हींके साथ इस जङ्गलमें रहता हूं। इसके सिवाय यह प्रतिज्ञा भी की है, कि चाहे जो करूं, एक बार पहलेकी अपनी दशाको फिर प्राप्त करूंगा। हां, एक बातका ध्यान अवश्य

रखता हूं, कि जब कभी किसी गाँवमें डाका डालने जाता हूं, तब यवनोंके घरको छोड़कर अन्य किसीपर धावा नहीं करता हूं; और मार्गमें भी जब कभी लूट-मार करता हूं, तब भी इस बातका ध्यान रखता हूं कि, यवनोंको छोड़कर और किसीको कष्ट पहुँचने न पावे। नानासाहब, लोग कहते हैं कि, डाका डालना और लूट-मार करना एक बहुत ही नीच कार्य है; पर मेरा ख़याल है कि, यह कार्य नीच तभी होगा, जबकि केवल अपने पेटके लिए किया जायगा। मेरा ऐसा उद्देश्य नहीं है। किन्तु मेरा तो, इसके विरुद्ध, यह विचार है कि, जिन चोरोंने हमको लूटा है, उनके हाथसे उस धनको छीन लें; और फिर उसी धनसे अपना उद्धार करके स्वराज्य स्थापित करें। इसके अतिरिक्त यदि और कोई उद्देश्य होता, तो अवश्य ही मेरे मनको कुछ ख़याल होता। पर ऐसी कोई बात नहीं। और इन्होंने भी क्या किया है? इन्होंने भी तो डाकेज़नी ही की है! इनसे हमारा क्या सम्बन्ध था? हमारे घरमें घुसनेका इनको क्या अधिकार था? नानासाहब, जो कोई लुटेरापन दिखलानेमें चतुर हो, और ज़ोरके साथ आगे बढ़कर सफलता प्राप्त कर ले, वही राजा! और यदि सफलता प्राप्त न कर सके, तो वही लुटेरा! आप भी प्रयत्न करें—प्रयत्न करना हमारे हाथमें है; और सफलता मिलना ईश्वरके अधीन! बस, मैं तो यही सब सोचकर इस धुनमें पड़ा हूं। आज हमको लोग लुटेरे कहेंगे, चोर कहेंगे, स्वयं हमारे भाई भी हमको

डाकू कहेंगे, कोई हमारा साथ नहीं देंगे; पर इससे क्या? डरनेसे कहीं काम चल सकता है? मेरे समान कितनोंको मरना होगा, तब कहीं कोई एक-आध माईका लाल आगे आवेगा। आपने शिवबाकी बात निकाली; पर आपके पिता, मेरे पिता और स्वयं उन्हींके पिता, क्या कहते हैं, सो सोच देखिये। हम आज फौज-फांटा रखने, अथवा अन्य किसी प्रकारसे युद्धकी तैयारी करनेकी तो शक्ति नहीं रखते; परन्तु वह शक्ति जिस मार्गसे हमारे अन्दर आवेगी, उस मार्गको हमने स्वीकार कर लिया है, और यही सच्चा मार्ग है, और कोई नहीं, आप समझकर देख लें।"

सूर्याजी जिस समय यह सब कह रहे थे, नानासाहब चुपकेसे सुन रहे थे। अवश्य ही उनका मत भी इससे भिन्न नहीं था। इसलिए, एक तरहसे, उनको इससे आनन्द ही हुआ। उसमें भी सूर्याजीका यह नियम तो उन्हें और भी पसन्द आया कि, यवनोंको छोड़कर अन्य किसीपर लूट-मार न की जाय। सूर्याजी बोलते बोलते बीचमें ही रुक गये थे, सो अब फिर वे आगे बोले, "और, नानासाहब, देखिये, मैंने आज ही रास्तेमें दो आदमी पकड़े हैं। उनके विषयमें मुझे कुछ शंका है; और इसी-लिए उनको मैंने सिर्फ बन्द कर रखा है। मैं मुसलमानोंकी तरह स्त्रियोंपर हाथ नहीं डालता। जिस प्रकार मेरी मा-बहन हैं, उसी प्रकार उनकी। झगड़ा-फिसाद, मारकाट, जो कुछ हो, पुरुषोंमें ही, स्त्रियोंको उसमें कभी शामिल न करे। बस,

इन्हीं दो-तीन बातोंका ख़याल रखना है; और इनपर जबतक हम ख़याल रखेंगे, तबतक हमको खेद होनेका कोई कारण नहीं। शिवराजको भी इन्हीं बातोंपर ध्यान रखना चाहिए।"

यह अन्तिम वाक्य सुनकर नानासाहब बीचहीमें बोल उठे; और उन्होंने राजा शिवाजीका और भी विशेष वृत्तान्त सूर्याजीको बतलाया, तथा साथ ही साथ यह भी कहा कि, आप भी उन्हींमें जामिलें, उनके पास हथियार काफी जमा हो-चुके हैं; और जहां सुलतानगढ़ एक बार उनके हाथमें आगया कि, फिर युद्धकी भी पूरी पूरी तैयारी उनके पास होजायगी। सूर्याजीके मनमें भी यह बात आगई; और उन्होंने सोचा कि, गत महीने-दो महीनेमें डाकेज़नी अथवा बटमारीसे जो धन हमने प्राप्त किया है, वह भी शिवाजीके ही कोशमें देदिया जाय। इसके बाद जब दोनों बातचीत करके सुचित्त हुए, तब नानासाहबने सूर्याजीकी छावनी और उनके आदमियोंको देखनेकी इच्छा प्रकट की; और सूर्याजीने भी उनको वहां ले-जानेका निश्चय किया। इतनेमें पूर्व दिशाकी ओर प्रकाशकी प्रभा आने लगी। वह पगली बीचमें कुछ देरके लिए कहीं पड़ रही थी, अथवा सोरही थी, सो फिर अपना वही नित्यका गीत गाने लगी; और बीच बीचमें पहलेहीकी भांति रोने लगी। सूर्याजी और उनके श्वसुरके लिए यह कोई नवीन बात नहीं थी;अतएव उनको कुछ भी मालूम नहीं हुआ; परन्तु नाना-साहबके लिए वह एक बिलकुल ही नवीन बात थी। उन्होंने उसे

सिर्फ रातको एकबार सुना था; और एक बार अब फिर सुना। इसके सिवाय सूर्याजीके मुखसे अभी वे उसका सारा हाल सुन भी चुके थे, अतएव उनको उसकी वह सारी दशा देखकर अत्यन्त ही दुःख हुआ। कुछ देर बाद बिलकुल सुबह होगया, तब वह नानासाहबको भी दिखाई पड़ी। रूपमें कितनी सुन्दर; और उसकी ऐसी दशा! यह सोचकर नानासाहबको और भी अधिक खेद हुआ। परन्तु इतनेहीमें क्या चमत्कार हुआ कि, नानासाहबको देखकर वह पगली अपनी जगहसे उठी; और बहुत ही बिकट रूपसे हँसी; फिर "आगया दुष्ट" ऐसा कहती हुई; और दीर्घ रोदनस्वर निकालती हुई झोपड़ीके बाहर निकल पड़ी। इसके बाद फिर, जितने ज़ोरसे उससे दौड़ते बना, उतने ज़ोरसे दौड़ती हुई न जाने कहांकी कहां चली गई!

बासठवां परिच्छेद।

श्यामा।

सूर्याजीने कहा कि, "उसके पीछे लगनेमें कोई लाभ नहीं। वह जब मन चाहता है, तब चाहे जहां घूमती-फिरती रहती है। चाहे जो कुछ कहो, कुछ सुनती-धुनती नहीं। हां, इतना ही अच्छा है, कि उससे किसीको हानि नहीं होती; और न खुद ही पागलपनमें आकर अपनी हानि करती है। जो कुछ वह करती रहती है, सो सब कलसे आप देख ही रहे हैं। बस, इसके सिवाय

और कुछ नहीं।" यह कहकर उन्होंने नानासाहबसे अपने अड्डेकी ओर चलनेकी प्रार्थना की; और दोनों ही वहांसे चल दिये। सूर्याजीने जिस जगह अपना अड्डा जमाया था, वह जगह बहुत ही सुरक्षित और रमणीय थी। वहां किसी दिशाकी ओरसे भी कोई यात्री निकलता, तो इसकी ख़बर उनको लगे बिना नहीं रह सकती थी। अभीतक जो कुछ तैयारी उन्होंने कर रखी थी; और जो कुछ सामग्री एकत्र कर रखी थी, वह सब उन्होंने नानासाहबको दिखलाई। शिवराजके मन्दिरके तहख़ानेमें जो सामग्री जमा थी, उसके आगे इसकी कोई गणना नहीं थी; परन्तु फिर भी थोड़े दिनके अन्दर सूर्याजीने जो सामान इकट्ठा कर रखा था, वह सन्तोषजनक था। उसे देख-कर नानासाहबने कहा कि, राजा शिवाजीको आपसे अवश्य ही बड़ी मदद मिलेगी; और आप अवश्य उनकी मदद करें, इसके बिना हम लोगोंका उद्देश्य सिद्ध नहीं होसकता। इस प्रकार बातचीत होनेके बाद फिर नानासाहबने अपना आगे जानेका विचार प्रकट किया। इसपर सूर्याजीकी यह सम्मति हुई कि, पहले दूसरे किसीको भेजकर गुप्त रूपसे सब हाल मँगा लेना चाहिए, तब जाना उचित होगा। बीजापुर आप गये थे; और वहां आपका हाल कुछ लोगोंको मालूम हुआ था; इसलिए सम्भव है कि, उस समय इधर-उधर और भी कुछ चर्चा चली हो; और आपका पता लगानेके लिए उधर गुप्तचर भी गये हों। ऐसी दशामें एकदम आपका उधर जाना ठीक नहीं होगा। जो

काम करना है, विचारकर करना चाहिए। हमारे पास आदमी भी मौजूद हैं—ऐसा नहीं कि न हों—वे तुरन्त जाकर सब पता ले आवेंगे। यह कहकर उन्होंने नानासाहबकी ओर देखा। नानासाहब पहलेहीसे इसी विचारमें निमग्न थे। सूर्याजीका कथन उनको सत्य जान पड़ा; और विशेषतः उनके मनमें यह शंका आई कि, यदि पिताजी क़िलेपर आगये होंगे, तो अवश्य ही हम उतनी गुप्त रीतिसे अपना कार्य नहीं साध सकेंगे। नानासाहबको मुख्य कार्य यही सिद्ध करना था कि, क़िलेके आसपासके और उसके ऊपरके सब लोगोंको अपनी ओर मिला लिया जाय; और जब क़िला लेनेका मौक़ा आवे; तब वे सब लोग इस कार्यमें मदद करें। यह कार्य सिद्ध करना उसी दशामें अभीष्ट था, जबकि उनके पिता क़िलेपर न हों। क्योंकि क़िलेपर पिताजीके रहते हुए क़िलेके लोगोंको बहकानेका प्रयत्न करना मानो एक प्रकारसे पितृद्रोह करना है। उस दशामें शायद क़िलेके लोगोंको भी यह बात पसन्द न आवेगी; और न वे हमको सहायता ही देंगे। बस, यही सब सोचकर नानासाहबका भी यही विचार हुआ कि, अवश्य, पहले किसी होशियार आदमीको उधर भेजकर सब भेद मँगाना चाहिए। इसलिए, अब कौन आदमी इस कार्यके लिए नियुक्त किया जाय, इसी विचारमें सूर्याजी और नानासाहब थे कि, इतनेमें वह लड़का, श्यामा, दूरसे आया; और नानासाहबके सामने झुककर उसने तीन बार सलाम किया।

पाठकोंको मालूम ही है कि, नानासाहबपर श्यामाकी अत्यन्त ही भक्ति और श्रद्धा थी, वह उनको बहुत ही प्रेम और आदरकी दृष्टिसे देखता था। उसने दूरसे पहले ही नानासाहबको देखा था, नानासाहब और सूर्याजी जब छावनी देखते हुए इधर-उधर घूम रहे थे, तभी श्यामाकी नज़र नानासाहबकी ओर गई थी; और वह इस बातका मौक़ा देख रहा था कि, कब मैं नानासाहबके सामने जाऊं; और उनको अदबके साथ सलाम करूं। अब वह मौक़ा उसे मिल गया; और आगे बढ़कर उसने उनको सलाम किया। नानासाहबने देखा कि, अब पहलेकी अपेक्षा वह बहुत कुछ सम्हल गया है; और उसकी स्वाभाविक चपलतामें भी बहुत कुछ वृद्धि हुई है। यह देखकर उनको बहुत आनन्द हुआ। नानासाहब जिस समय क़िलेपर थे, कई बार उन्होंने श्यामाको देखा था; और सूर्याजीने अभी पिछली रातको उसका जो वृत्तान्त बतलाया था, वह भी उनके ध्यानमें था। अतएव उन्होंने सोचा कि, श्यामाको ही यदि सुलतानगढ़पर सब भेद लेनेके लिए भेजा जावे, तो विशेष उपयोगी होगा। वह लड़का बहुत ही खुशदिल और आनन्दी स्वभावका था, अतएव क़िलेके ऊपर और नीचेकी बस्तीमें सभी उससे भलीभांति परिचित थे। परन्तु अब इधर कई महीनेसे वह अपनी माताके साथ चूंकि इधर चला आया था, अतएव, सोचा गया कि, इस समय यदि यह फिर क़िलेपर जायगा; और वहां सब मनुष्योंसे मिलकर हमारे बादका सब हाल इत्यादि पूछेगा, तो

कोई सन्देह भी न करेगा; क्योंकि लोग समझेंगे कि, यह इतने दिन बाद बाहरसे आया है; अतएव ऐसी दशामें सबसे मिलना और बातचीत करना इसके लिए स्वाभाविक है। इसके सिवाय वाचालतामें इसकी वहां ख़ूब प्रसिद्धि है, इसलिए कोई, कहीं जानेसे, इसको मना भी नहीं कर सकता; क्योंकि सभी इससे बातें करनेके लिए उत्सुक रहते हैं; और इससे बातचीत करनेमें सभीको आनन्द आता है। इधर सूर्याजी भी उस लड़केपर बहुत प्रेम करने लगे थे; और उसे अपने निजके लड़केके समान ही समझते थे। उसके सभी गुणोंपर वे ख़ूब मोहित थे। इसलिए श्यामाका सलाम लेनेके बाद वे उससे बोले, "क्यों रे, क़िलेपर जाकर तू वहांका सारा हालचाल लेआवेगा ?" श्यामा तो ऐसे किसी न किसी कार्यकी प्रतीक्षामें सदैव ही रहा करता था। अतएव सूर्याजीके मुखसे उक्त प्रश्न सुनते ही उसको अपूर्व आनन्द हुआ; और वह बोला, "मैं बहुत जल्द जाकर सब समाचार आपको ला दूंगा।" इधर सूर्याजी और नानासाहब दोनोंको विश्वास था कि, यदि यह कार्य कोई अच्छी तरहसे कर सकता है, तो वह श्यामा ही कर सकता है। इसलिए दोनोंने श्यामाको वहां जानेकी आज्ञा देदी।

नानासाहब वहीं रह गये। क़िलेकी ओरको रास्ता इसी जगहसे जाता था, जहां उन लोगोंका अड्डा था। इसलिए कोई भी आदमी जब वहांसे निकलता—विशेषकर बड़ा आदमी—तब इन लोगोंको ज़रूर ही उसका समाचार मिल जाता था।

इसलिए सूर्याजीसे मालूम हुआ कि, अभीतक बीजापुरकी ओरसे कोई भी मनुष्य इस तरफ नहीं गया। इससे नाना-साहबको विश्वास होगया कि, अवश्य ही हमारे पिताजी भी अभीतक क़िलेपर न गये होंगे; क्योंकि यदि गये होते, तो अवश्य ही इन लोगोंको मालूम होता। तथापि उन्होंने निश्चय यही किया कि, अब श्यामा जबतक वहांका भेद लेकर लौट न आवे, तबतक यहांसे आगे बढ़ना ठीक न होगा। इसके सिवाय, उन्होंने सोचा कि, राजा शिवाजी भी अभीतक वापस नहीं आये, इसलिए एक-आध दिन यहां लग भी जाय, तो कोई विशेष हानि नहीं। यह सोचकर वहीं एक-आध दिन रह जानेमें उन्हें कोई चिन्ता नहीं हुई।

श्यामा अपनी जगहसे चला, सो पहले क़िलेकी ओर नहीं गया; किन्तु बीजापुरके मार्गपर गया। "आकृति छोटी; परन्तु कृति भारी", ऐसे ही लोगोंमेंसे वह एक था। धूर्त्तताकी तो मानो उसे लड़कपनसे घूंटी ही दीगई थी। मतलब उसका यह, जिससे यह भी किसीको पूरा पूरा मालूम होने न पावे कि, मैं किस ओरसे आया। इसीलिए वह बीजापुरके मार्गपर बहुत दूरतक जाकर फिर वहांसे लौटनेवाला था; और ऐसी ही युक्ति उसने की। पास ही चार-पांच कोस जाकर फिर वहीं उसने एक गाँवमें कुछ देरके लिए ठहर जानेका भी विचार किया। गाँवमें जाकर पहुँचा। वहां एक कुएंके पास, रोटी, जो साथमें लेआया था, खानेका विचार करने लगा; और

रोटीकी पोटली वहीं एक वृक्षके नीचे रखकर उसके पास ही आप स्वयं बैठा; इसके बाद फिर एक लोटाभर पानी लाकर रोटी खानेका प्रारम्भ करनेहीवाला था कि, इतनेमें क्या देखता है कि, दूरसे एक स्त्री और एक पुरुष उसी ओरको आरहे हैं। श्यामाकी दृष्टि कैसी तीव्र थी, सो पाठकोंको मालूम ही है। दूरपर आनेवाले वे मनुष्य कौन हैं? इस विषयमें उसे पूरी पूरी शंका उपस्थित हुई; और वह उसी ओरको ख़ूब ग़ौरसे देखने लगा। ज्यों ज्यों वे लोग पास आते गये, त्यों त्यों उसकी शंका और भी अधिकाधिक दृढ़ होती गई; और अन्तमें उसे निश्चय ही होगया कि, वे दोनों व्यक्ति कौन हैं। अब वह इस अचम्भेमें पड़ा कि, यह मामला क्या है? ये लोग पास आकर मुझे क्या कहेंगे? हम इनसे मिलें अथवा नहीं? इनका हाल-चाल जाननेके लिए कुछ छिपकर बैठ जायँ? इस प्रकार क्षणभर विचार करके वह वहांसे उठनेहीवाला था कि, इतनेमें उन दोनों व्यक्तियोंमेंसे एक व्यक्तिकी आंख उससे भिड़ गई। श्यामाने सोचा कि, इस मनुष्यने हमको पहचान लिया; और हमने भी इसे देख लिया, इस विषयमें इसको भी अब कोई शंका नहीं। ऐसी दशामें अब छिपने-विपनेसे कोई लाभ नहीं। यह सोचकर वह भी अपनी जगहसे कुछ आगे बढ़ा; और उन-मेंसे जो स्त्री थी, उसीको, उसके नामसे, पुकारा। उस स्त्रीने भी उसका नाम लेकर 'हां' कहकर उत्तर दिया। इसके बाद उसने अपने साथके पुरुषसे वहीं खड़े रहनेके लिए कुछ धीरेसे

कहा; और स्वयं अकेले आगे बढ़कर श्यामासे बोली, "श्यामा, मैं तेरे ही घर आनेवाली थी। तेरी मासे मुझे मिलना था। वह कहां है? मेरे साथ दूसरा वह कौन है, सो तू पहचान ही गया होगा। क़िलेतक पहुँचनेके लिए अभी बहुत चलना पड़ेगा! जो दो क़दम भी पैदल कभी नहीं चलीं थीं, आज कोसों पैदल ही चलनेकी नौबत उनपर आगई है। भेष भी सदैव एक समान नहीं रख सकतीं—कभी कुछ, कभी कुछ वस्त्र पहनने पड़ते हैं, नहीं तो लोग पहचान लेवें। इसके सिवाय, अब वे किसीको मुख भी नहीं दिखला सकतीं, क्योंकि मुँहमें जो कालिमा लग गई है, वह जबतक दूर नहीं हो-जायगी, तबतक मुँह नहीं दिखावेंगी, ऐसा उन्होंने निश्चय कर लिया है। अबतक जिस तरह होसका, लुकते-छिपते हुए, उन्होंने यात्रा की है; पर अब यह भी सम्भव नहीं है; क्योंकि ज्यों ज्यों क़िला पास आता जायगा, त्यों त्यों इस प्रकार गुप्त रहते हुए प्रवास करना और भी कठिन होता जायगा। श्यामा, तुझे क्या क्या बतलाऊं? तू समझ भी तो नहीं सकेगा! तेरी मा अब जहां कहीं हो, वहीं मुझे लेचल। उससे मेरी मुलाक़ात एक बार करा दे। उसीकी सहायतासे क़िलेके आस-पास हम दोनों कहीं रहेंगी। परन्तु हां, यह किसीको भी मालूम न होने पावे कि, हम लोग यहीं कहीं हैं। क़िलेके नीचे बस्तीमें जितने आदमी हैं, सबके विषयमें मैंने विचार किया, पर तेरी माके अतिरिक्त मुझे और कोई इस कार्यके लिए उपयुक्त

दिखाई नहीं दिया। मेरी मौसी यहांसे दो कोसपर नांदेगाँवमें है, वहीं मैं आज इनको लेजाकर रखूंगी। लेकिन इनके मनमें है कि, क़िलेसे कहीं नज़दीक ही रहें; और सो भी गुप्त रूपसे। यह बात तेरी; और तेरी माकी सहायता बिना बिलकुल असम्भव है; और तेरी मा अवश्य सहायता करेगी, इस विषयमें मुझे कोई शंका ही नहीं।"

वह स्त्री जिस समय श्यामासे उपर्युक्त बातें कह रही थी, श्यामा चुपके खड़ा हुआ सुन रहा था। इसके बाद वह उसके अन्तिम वाक्य सुनकर बोला, "ऐसा क्यों ? क़िलेपर अप्पासाहब नहीं, इसलिए ? पर इस विषयमें अब कोई चिन्ता करनेकी आवश्यकता नहीं। नानासाहब यहांसे पास ही हैं। उनको जाकर मैं सब हाल बतलाता हूं—वे……"

परन्तु नानासाहबका नाम सुनते ही वह स्त्री बिलकुल घबड़ासी गई; और एकदम श्यामाका हाथ पकड़कर बोली, "अरे नहीं, नहीं, ऐसा मत कर। उनको हम लोगोंके यहां आनेकी ख़बर भी मत दे। क्या कहता है ? वे पास ही हैं ? पास कहां ? क़िलेपर ? श्यामा, बाईसाहबा जीती रहें, ऐसी यदि तेरी इच्छा है, तो तू उनको हम लोगोंका कुछ भी समाचार न बतलाना। यह भी न बतलाना कि, हम लोग तुझसे मिलीं। यह बात उनके कानोंमें न जानी चाहिए। पास कहां हैं वे ?"

उस स्त्रीके इस विचित्र सम्भाषणसे और उसके उस हाथ पकड़नेके ढंगको देखकर श्यामाको बड़ा अचम्भा हुआ। वह

उसके उक्त कथन और उसके इस व्यवहारका कुछ अर्थ ही न समझ सका। उसने सोचा कि, नानासाहबकी स्त्री भेष बदल-कर अपनी दासीको साथ लेकर कहीं गई थी अवश्य; और अब यह वापस आरही है, परन्तु यह क्या बात है, जो यह कहती है कि, नानासाहबको इस विषयमें कुछ भी न बतलाना; और हम अब गुप्त रूपसे क़िलेके आसपास कहीं रहेंगी? श्यामा बड़े चक्करमें पड़ा, परन्तु वह नानासाहबके समान ही—किंबहुना, उससे भी कुछ अधिक—उनकी पत्नीका भक्त था, अतएव उस दासीके यह कहनेपर कि, अब आगे कुछ मत पूछ, वह कुछ नहीं बोला। परन्तु फिर कुछ देर बाद कहता है, "चन्द्राबाई, नांदेगाँवके रास्तेपर ही वह स्थान मिलता है, जहां नानासाहब इस समय मौजूद हैं। इसलिए उस रास्तेसे तुम गुप्त रूपसे जा नहीं सकतीं। किसी न किसी युक्तिके साथ जाना पड़ेगा। और युक्ति बहुत सहज है। बाईसाहबा इस पोशाकको छोड़ दें, और तुम्हारे ही समान दासीका भेष धारण करें। मैं भी तुम्हारे साथ हो रहूंगा; और एक दूसरे ही मार्गसे तुमको लेचलूंगा। फिर तुम नांदेगाँवमें रह जाना; और मैं अपनी माको लेकर वहीं आजाऊंगा। इस प्रकार मेरी मा जब तुमसे मिल जाय, तब फिर जो आगे तुम्हारी इच्छा हो, सो करना। लेकिन इस समय बाईसाहबा इन वस्त्रोंमें इधरसे किसी प्रकार नहीं जा-सकतीं। क्योंकि मार्गमें ऐसे अनेक लोग मिल सकते हैं, जोकि उनको पहचान लेंगे।" यह सुनकर दासीके ध्यानमें भी

आगया कि, अब श्यामाकी सलाहके अनुसार कार्य किये बिना, निर्वाह नहीं होगा। परन्तु भेष बदलनेके लिए उस दासीके पास सिर्फ एक पुराना लुगड़ा था, जिसे वह अपने साथ लिये थी। उसने सोचा कि, देखो, समयकी बलिहारी है— जिसकी कितनी ही पुरानी साड़ियां मैं जन्मभर पहनती रही, उसीको आज मुझे अपना ही एक पुराना लुगड़ा पहनानेकी नौबत आपहुँची! इस बातपर उस बेचारीको अत्यन्त दुःख हुआ। किन्तु क्या करती? कोई दूसरा साधन ही न था। आंखोंमें आंसू भरकर उसने अपनी मालकिनको वह सब बातचीत बतलाई, जोकि श्यामाके साथ उसकी हुई थी। साथ ही साथ उसने यह भी कहा कि, नानासाहब यहांसे बिलकुल पास ही ठहरे हुए हैं, तथा और भी अनेक आदमी हैं, जो पहचान सकते हैं; इसलिए अब नांदेगाँवतक एक दरिद्री दासीका भेष धरकर ही चलना होगा। उसकी स्वामिनीने यह सब सुन लिया। यह सुनकर, कि नानासाहब पास ही हैं, उसकी चेष्टा कुछ खिन्न हुई। परन्तु उस खिन्नताका प्रभाव उसने अपने कार्यपर बिलकुल ही नहीं पड़ने दिया; और तत्काल ही अपनी दासीकी बगलसे वह पुराना लुगड़ा खींच लिया; और यह भी प्रकट किया कि, मुझे इसके पहननेमें कुछ भी खेद नहीं। इसके बाद उसने अबतककी उस मर्दानी पोशाकको एक बार नमस्कार किया; और उसकी एक गठरी बना ली। अब चूंकि उसने वह पुराना लुगड़ा पहन लिया था;

और आज कई दिनसे पैदल चलनेके कारण थक भी बहुत गई थी, अतएव उसकी हालत बहुत ख़राब होरही थी; परन्तु फिर भी उस साध्वीको इसका कुछ भी खेद नहीं हुआ। निस्सन्देह उसकी आंखोंमें आंसू आगये थे; पर वे एक दूसरे ही कारणसे। उस दासीको अपनी स्वामिनीका वह भेष देखकर बहुत ही दुःख हुआ। वह ऐसा समय नहीं था कि, कुछ कहा जाता। पर उस दासीसे रहा नहीं गया; और वह एकदम रोकर बोली, "आईसाहबा, यह कैसा संकट हमारे ऊपर आया!" भेष बदलनेके बाद आगे आगे श्यामा और उसके पीछे वे दोनों स्त्रियां चलीं; और बहुत ही कठिनाईसे अन्तमें नांदेगाँव जापहुँचीं। मार्गमें एक-दो जगह सूर्याजीके आदमी अवश्य ही मिले; पर श्यामा साथ था ही—उसने यह कहकर मौक़ा टाल दिया कि, ये मेरी मौसीकी लड़कियां हैं, अमुक अमुक गाँवको जारही हैं। अतएव किसीने उनको नहीं रोका; और न किसीने पहचाना ही। नांदेगाँव पहुँचनेपर चन्द्राबाई अपनी मालकिनके साथ अपनी मौसीके घर रही; और श्यामा अपनी माताको लिवानेके लिए चला आया।

पाठकोंको स्मरण होगा कि, बीजापुरसे बाहर निकलकर अपनी पत्नीसे नानासाहबकी भेंट होगई थी; और वहीं उसकी दासीसे उनकी बातचीत भी बड़ी तेज़ीसे हुई थी। बस, उसी दिनसे उस साध्वीकी बड़ी विचित्र दशा होरही थी। वह बार बार यही सोचती कि, देखो, हम करने गई थीं क्या; और

होगया क्या ? और न जाने इसका परिणाम क्या होगा ? बस, यही सोच सोचकर अब वह एक प्रकारसे अपने जीवनसे निराशसी होचुकी थी। उसकी आज्ञाकारिणी दासी उसके साथ थी, इसकारण उसे बहुत कष्ट नहीं हुआ था। उसने संकट- समयमें भी सब प्रकारसे अपनी स्वामिनीको सुख देनेका प्रयत्न किया था ; पर जब हृदय ही झुलसकर जल-भुन गया, तब दासीका प्रयत्न कहांतक काम कर सकता था ? "हमने किया क्या ? और होगया क्या ?" इस द्वादशाक्षरी मन्त्रका मन मन वह बराबर जप कर रही थी। उसका विचार था कि, यहां न रहते हुए, सुलतानगढ़से कहीं पास ही, किसी पहाड़की गुफा अथवा किसी घाटीमें, झोपड़ी डालकर रहना चाहिए। इसमें उसका एक दूसरा ही उद्देश्य था, जो शीघ्र ही पाठकोंको मालूम होगा।

तिरसठवां परिच्छेद।
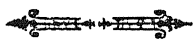
ख़ांसाहब बीबी बने

श्यामाने जब उन दोनोंको उक्त गांवमें पहुंचा दिया, तब फिर इस बातका विचार करते हुए कि, यह मामला क्या है, वह अपनी माताके पासको चला। सुलतानगढ़पर, उसके चले आनेके बाद, क्या क्या घटनाएं हुईं, सो कुछ श्यामाको मालूम था ही नहीं। इसलिए अब वह यही विचार करने लगा कि,

हमारे मालिककी पत्नी आज इतने दिनसे कहां चली गई थी; और फिर आज पुरुषवेशसे वह इधर कहांसे आरही है; इसके सिवाय, वह यह भी कहती है कि, हम नानासाहबसे गुप्त रह-कर क़िलेके आस ही पास कहीं अज्ञातवासमें रहना चाहती हैं! इस बातका अर्थ क्या है; श्यामा विचार करने लगा। उसने सोचा कि, चन्द्री दासीकी इच्छाके अनुसार क्या नानासाहबकी पत्नीका कभी भी अज्ञातवासमें रहना सम्भव है? हां, यदि वह इस बातका निश्चय कर ले कि, हम कभी घरसे बाहर नहीं निकलेंगी, तो शायद उक्त बात सम्भव होजाय। परन्तु हमारी मालकिन चाहे एक बार अज्ञातवासमें रह भी लेवे; पर चन्द्री कैसे रह सकेगी? इसको तो आसपासके सभी लोग अच्छी तरह जानते हैं; इसका अज्ञातवासमें दिन व्यतीत करना बिल-कुल असम्भव है। अस्तु। हमको इससे क्या? हमारा तो इस समय मुख्य कर्त्तव्य यही है कि, हम अपनी माताको उनसे मिला दें। बस, यही सोचकर श्यामा तुरन्त ही वहां पहुँचा, जहां उसकी माता थी; और उसको सब समाचार बतलाकर उसे नांदेगाँवको रवाना कर दिया। इसके बाद फिर वह अपने असली कामको चल दिया।

अभीतक जितना काम श्यामाने किया, उस कार्यको करने-के बाद श्यामाको अपने असली कार्यपर जानेमें कुछ थोड़ा-बहुत विलम्ब अवश्य ही होगया। परन्तु श्यामा मामूली बातों—जैसे रात-विरात अँधेरेमें चलने इत्यादि—के लिए डर जानेवाला

लड़का नहीं था। अतएव, यद्यपि अब शाम होने आई थी, परन्तु फिर भी वह सुलतानगढ़की ओर बड़े सपाटेसे चला आ-रहा था। इतनेमें स्वाभाविक ही पीछेकी ओर उसकी दृष्टि गई, तो क्या देखता है कि, दूरपर कोई यात्री घोड़ेपर बैठा हुआ आरहा है। यात्री शरीरसे ख़ूब हृष्टपुष्ट और भारी था। हथि-यार बांधे हुए बड़ी शानसे चला आरहा था। लेकिन ऐसा जान पड़ता था कि, वह बहुत दूरसे आरहा है, इसकारण उसकी चेष्टापर थकावटके चिन्ह दिखाई देरहे थे। वह ज्यों ही श्यामाके पास आया, त्यों ही न जाने क्या सोचकर उसने एकदम अपने घोड़ेको रोक लिया; और उससे बोला—"क्यों बे छोकरे, क्या तू इस प्रान्त और क़िलेकी ओरके कुछ लोगोंको जानता है?" उसने यह बड़ी शानसे पूछा। श्यामा तुरन्त ही ताड़ गया कि, यह यात्री कोई मुसल्मान है। इधर कुछ दिनसे, चूंकि श्यामा सूर्याजीके गुटमें शामिल होगया था, अतएव मार्ग-में पकड़े जानेवाले ऐसे ऐसे मुसल्मानोंको तङ्ग करनेकी उसकी आदत ही पड़ गई थी; और चाहे जैसा ज़बरदस्त यवन हो, उसका उसे कुछ भी भय नहीं मालूम होता था। उसमें भी जब इस प्रकारके कोई ख़ांसाहब मिल जाते, तब वह अवश्य ही उनसे कुछ बातचीत करता, उनकी हँसी करता; और उनको धोखा देकर अपने अड्डेकी ओर लेजाता। ऐसी बातोंमें अब वह बहुत ही चतुर होगया था। अस्तु। उपर्युक्त ख़ांसाहबने ज्यों ही उससे उपर्युक्त प्रश्न किया, त्यों ही तुरन्त श्यामाने

उत्तर दिया—“हां, मैं इधरकी सभी बातोंसे ख़ूब ही वाक़िफ़ हूं; और क़िलेपर तो मैं सदैव ही आया-जाया करता हूं, इस-लिए वहांका सब हाल मुझे मालूम है। आप कहां जाना चाहते हैं, सो मुझे बतलाइये। मैं आपको ठीक वहीं पहुंचा दूंगा। आपको यदि किसीसे मिलना हो, तो मैं मिला भी दूंगा। मुझे आप अपना सेवक ही समझिये। यह ग़ुलाम आपकी ख़िदमतके लिए हाज़िर है। जो हुक्म हो, फ़रमाइये। आपकी ख़िदमतसे मुझे भी सन्तोष होगा।”

ख़ांसाहब (श्यामाने उस व्यक्तिको ख़ांसाहबकी पदवी दे ही दी; और उसने भी चूंकि इसपर कोई आपत्ति नहीं की, कि वह कोई ख़ांसाहब नहीं, इसलिए हम भी अब उसके लिए इसी—‘ख़ांसाहब’—शब्दका ही प्रयोग करेंगे।)ने देखा कि,लड़का बड़ा होशियार है; और बातचीत करनेमें किसी प्रौढ़ व्यक्तिसे कम नहीं है,तब उनको भी इस बातका बड़ा कौतूहल हुआ; और उन्होंने समझा कि, हम जिस कामके लिए आये हैं, वह काम इस लड़केकी सहायतासे बहुत ही सफलतापूर्वक सिद्ध होगा। यही समझकर वे उससे बोले—“वाह! तू तो बहुत ही होशि-यार लड़का जान पड़ता है। अच्छा, यदि तू अब मेरे साथ चलेगा; और सचाईके साथ मेरा काम करेगा, तो मैं तुझको बहुत अच्छा इनाम दूंगा। तुझे एक बड़ा ‘पटेल’ बना दूंगा। अच्छा, बतला, क़िलेदारका लड़का नानासाहब आजकल कहां है? क़िलेपर ही है या और कहीं?”

यह प्रश्न सुनते ही श्यामा कुछ चकित हुआसा दिखाई दिया; पर तुरन्त ही कुछ अपनी जीभ दांतोंतले दबाकर और कुछ आंखें भी मटकाकर ख़ांसाहबसे कहता है, "ख़ांसाहब, वह तो यहांसे कहीं भाग गया था;पर (बिलकुल धीरेसे) फिरसे छिप-कर आया है। मैं अच्छी तरह जानता हूं—वह कहां है ; लेकिन मैं आपको बतलाऊंगा नहीं।

यह उत्तर सुनते ही, ऐसा जान पड़ा कि, ख़ांसाहबको बड़ी ख़ुशी हुई; पर बाहर प्रकट न करते हुए वे श्यामासे कहते हैं— "अरे, तू भी बड़ा पागल है! यह क्यों? फिर तू इनाम किस बातका लेगा? बतला, कहां है वह?"

श्यामा जान-बूझकर कुछ नहीं बोला। ऐसा जान पड़ा कि, वह किसी विचित्र ही विचारमें निमग्न है।

ख़ांसाहबने सोचा कि, इससे धमकी-घुड़कीसे काम नहीं चलेगा। दम-दिलासेके साथ ही इससे सब जान लेना चाहिए। अतएव वे उससे कहते हैं, "अच्छा, सोचकर बतला, तूने एक स्त्री और एक पुरुषको भी जाते देखा है?"

श्यामाने फिर कुछ विचार किया; और एकदम बोला, "हां, उनको भी देखा है।"

ख़ांसाहबको मानो इस विषयमें भी कुछ आशासी उत्पन्न हुई। इसके कुछ देर बाद वे फिर उससे कहते हैं, "वाह! तू तो बहुत ही होशियार लड़का दिखाई देता है। शाबाश! तुझे क्या कहना है! अच्छा, यह भी बतला कि, इसी रास्तेसे, एक

बड़े लवाजमेके साथ, कोई बेग़म भी तूने जाती हुई देखी ? उसके साथ एक दासी भी होगी ?"

इस प्रश्नको सुनकर श्यामा कुछ गोलमालमें पड़ा; पर उसने अपने मनकी स्थिति प्रकट नहीं होने दी; और तुरन्त ही बोला, "जीहां ! इस प्रकारके कुछ लोग क़िलेकी ओर जारहे थे सही; पर……"

श्यामा कुछ नहीं बोला। यह देखकर ख़ांसाहब बहुत ही अशान्तसे देख पड़े—क्षणभर वे इस प्रतीक्षामें रहे कि, 'पर' शब्दके आगे शायद श्यामा कुछ और भी कहे; पर जब उन्होंने देखा कि, वह कुछ बोला ही नहीं, तब एकदम वे उससे बोले, "अबे छोकरे, पर क्या ? बोल आगे—पर क्या ?"

"पर उनको…पर…पर…आप बड़े ग़ुस्सेमें आयेंगे—कहेंगे कि, क्या कहता है। पर मैं जो कुछ कहता हूं, सो बिलकुल सही है। वे लोग इधरसे गुज़रे थे ज़रूर, पर…"

"पर, पर क्या ? अबे सुअर !" ख़ांसाहब श्यामाकी ओर घुड़ककर कहते हैं, "बतला, बतला जल्दी—वे लोग यहांसे निकलकर क़िलेकी ओर नहीं गये ? क़िलेकी ओर नहीं गये, तो फिर कहां गये ? जल्दी बतला, नहीं तो तुझे ख़ूब ही पीटूंगा।"

श्यामा काहेको ऐसी बन्दरघुड़कीसे डरनेवाला था ! ऐसा डरनेवाला होता, तो अबतक कभीका भग गया होता। वह बड़ा उस्ताद था। यह देखकर कि, ख़ांसाहब इस समय बिगड़ रहे हैं, वह उनसे कहता है—"हुज़ूर, उनको चोरोंने रास्तेमें लूट लिया; और अब क़ैदमें डाल दिया है।"

खांसाहब बहुत ही क्रुद्ध होकर कहते हैं—"कहां हैं ? कहां हैं वे चोर ? चल, मुझे दिखला। मैं उनकी अभी हड्डी हड्डी नरम कर दूंगा।"

श्यामा यह सुनकर कुछ हँसा; और फिर बोला, "ख़ांसाहब, आप उन्हें अवश्य ही दुरुस्त करेंगे, यह मैं अच्छी तरह जानता हूं; और मुझे उनके छिपनेकी जगह भी मालूम है; किन्तु ख़याल इसी बातका है कि, आप अकेले हैं; और उनके साथ बहुत लोग हैं।"

ख़ांसाहब अपने बलपर काफ़ीसे अधिक विश्वास रखते थे, इसलिए श्यामाके उपर्युक्त कथनपर वे कुछ असन्तुष्ट भी हुए; पर अपने उस असन्तोषको भीतर ही भीतर दाबकर बोले, "अबे छोकरे, तू मुझे समझता क्या है ? चल तो तू, दिखला उन चोरोंकी जगह !"

श्यामा बार बार उनसे यही कहने लगा कि, "चोर लोग संख्यामें अधिक हैं। उन्होंने एक अपना ख़ासा अड्डा ही बना रखा है—अकेला-दुकेला आदमी उनके सामने नहीं टिक सकता। पर मुझे क्या ? मैं आपको लेचलूंगा; और ठीक उनके अड्डेतक पहुँचा दूंगा। पर यदि आप बेग़मसाहबासे मुलाक़ात करना चाहेंगे, तो इसके लिए कोई न कोई युक्ति करनी पड़ेगी। वह युक्ति यदि आप करेंगे, तो सब बातें बन जायँगी। नाना-साहबको भी उन्हीं चोरोंने पकड़ रखा है; और एक स्त्री और पुरुष, जो आप पूछते हैं, उनको भी उन बदमाशोंने वहीं क़ैद कर

रखा है। ख़ांसाहब, मेरे समान मददगार अब आपको नहीं मिलेगा। यदि आप मेरे साथ चलेंगे, तो यह मौक़ा अच्छा है, सब काम एकदम बन जायँगे।"

अब ख़ांसाहब बड़े चकराये—श्यामा जो कहता है, ये सभी बातें सच हैं या झूठ—ख़ांसाहब कुछ निश्चय नहीं कर सके। पर इतना स्पष्ट दिखाई दिया कि, जो बातें उन्होंने सुनी थीं, उनके कारण उनको हर्ष और खेद, दोनों साथ ही साथ हुए। कुछ देर विचार करनेके बाद ख़ांसाहब फिर एकदम श्यामासे कहते हैं, "अच्छा, कोई परवा नहीं, अब तू मुझे कमसे कम रातको कहीं ठहरनेकी जगह बतला। तुझे अच्छा इनाम दूंगा। तू रातको मेरे खानेका भी इन्तज़ाम कर दे।"

"हां, इसमें तो कोई सन्देह नहीं, मैं सब आपका इन्तज़ाम कर दूंगा। इसी आगेके गाँवमें मेरे एक परिचित दाऊद मियां रहते हैं। उन्हींके यहां आपको लेचलूंगा। वे बड़े भलेमानस आदमी हैं। उनके यहां आपको बड़ा आराम रहेगा। खाने-पीनेका भी सब प्रबन्ध होजायगा। लेकिन आपको लेचलनेके पहले मैं एक बार उनको देख आऊं। यहांसे वे कुछ बहुत दूर नहीं हैं। गाँव यह पास ही है। आप यहां घड़ीभर बैठ जाइये। मैं जाकर सब इन्तज़ाम किये आता हूं। आप चिन्ता न करें। मैं बहुत जल्द आजाऊंगा; और यदि आप मुझे अपना यह घोड़ा देदें, तो बातकी बातमें लौट आऊंगा; क्योंकि मैं घोड़ेपर बैठना बहुत अच्छा जानता हूं। मेरे पटेलका घोड़ा भी ऐसा ही है। मैं उसपर अच्छा बैठ लेता हूं।

हमारा घोड़ा यह छोकरा मांग रहा है, यह बात ख़ांसाहबको कुछ अपमानजनक जान पड़ी। श्यामाने देखा कि, ख़ांसाहब घोड़ा देनेमें कुछ कुसुर-मुसुर कर रहे हैं, अतएव उसे ज़रा और भी ज़्यादा ज़ोर आया; और वह कहने लगा, "देखिये जनाब, आप अपना घोड़ा देदेंगे, तो मैं जल्दी आजाऊंगा। अन्यथा यहांसे जानेमें ही न जाने मेरा कितना समय लग जायगा; और फिर वहांसे लौटूंगा, तब तो बिलकुल अंधेरा ही होजायगा; और शायद अँधेरेमें आनेकी मेरी इच्छा न हुई, तो फिर आ भी नहीं सकूंगा। मेरी मा भी वहीं रहती है, सो अँधेरा होजानेपर वह भी काहेको आने देगी! हां, यदि घोड़ेपर जाऊंगा, तो इसकी बात अलग है। सड़ासड़ उड़ता जाऊंगा; और फड़ाफड़ लौट आऊंगा। आप इस बातकी शंका न करें कि, मैं आपका घोड़ा लेजाऊंगा। क्योंकि मैं ग़रीब आपके घोड़ेको लेकर क्या करूंगा? उसको खानेको देनेकी ही पंचाइत! मैं अपना सारा घर-द्वार बेच डालूंगा, फिर भी तो उस घोड़ेका एक दिनका दानातक न निकलेगा!"

अब, इसके कहनेके अनुसार, यदि घोड़ा नहीं दिया जायगा, तो यह लौटकर कभी न आवेगा; और हमको इसी ख़तरेकी जगहमें किसी न किसी प्रकार रात बितानी होगी। ख़ांसाहब बार बार यही विचार कर रहे थे कि, इसको घोड़ा दिया जाय या न दिया जाय; और अब वे इसी निश्चयपर आनेवाले थे कि, घोड़ा नहीं दिया जाय, इतनेमें श्यामा उनसे फिर कहता है,

"ख़ांसाहब, जल्दी निश्चय कीजिए, जो कुछ आपको करना हो। मुझे अब बहुत जल्द जाना चाहिए। फिर अँधेरा होजायगा ; और मुझे जानेमें डर लगेगा। फिर मैं लौट भी नहीं सकूंगा, इसलिये लीजिए, मैं यह चला।" श्यामाने जब इस प्रकार जानेकी धमकी दी, तब ख़ांसाहबको अवश्य ही अपने पूर्व-निश्चयमें कुछ परिवर्तन करनेकी अक्ल सूझी। अतएव वे श्यामासे बोले, "अच्छा, बेटे, कोई हानि नहीं। देख, तुझे घोड़ेहीपर तो चलना है ? मैं तुझको आगे बैठाकर लेचलूंगा। दोनों साथ साथ चलेंगे।"

ये शब्द ख़ांसाहबके मुखसे अभी निकलने भी नहीं पाये थे कि, इतनेमें श्यामा एकदम उनकी ओर घुड़ककर कहता है, "वाह ! ख़ांसाहब, मुझे ऐसी कौनसी गरज़ आपकी पड़ी है ? क्या मैं आपकी जोरू हूं, जो अपनी गोदमें घोड़ेपर बिठाकर आप मेरी बरात निकालेंगे ? आपको गरज़ हो, तो मुझे घोड़ा दीजिए, नहीं तो बैठकर बजाइये यहीं भोंपा ! मैं तो जाता हूं—मुझे पहले ही ख़याल था कि, आप समझते हैं मानो मैं आपका घोड़ा लेकर भग जाऊंगा। जब आपको इतना विश्वास नहीं है, तब मैं ही आपके चक्करमें क्यों आऊं ? मैंने तो समझा था कि, कुछ इनाम ही मिल जायगा; पर जाने दीजिये, अब मैं जाता हूं।"

यह कहकर एकदम वह खूब ज़ोरसे भग चला। ख़ांसाहबने भी उसके पीछे पीछे अपना घोड़ा लगाया। लेकिन उसने कहा

कि, "मुझको घोड़ा न देकर यदि आप मेरे पीछे आवेंगे, तो मैं ऐसी जगह आपको लेजाकर पटकूंगा कि, आप भी याद करेंगे! आप और घोड़ा, दोनों एक दूसरेपर लोटने लगेंगे; और मैं अपना खड़ा होकर मौज देखूंगा।" यह कहकर वह कुछ ऐसे ढंगसे हँसा, जैसे वह भावी मौज बिलकुल उसके सामने हो ही रही हो! ख़ांसाहबने समझा कि, कहीं यह सचमुच ही ऐसा न कर उठावे; अतएव बहुत जल्द यह कहकर कि, "अच्छा, ठहर, मैं तुझको घोड़ा देता हूं," उससे ठहरनेके लिए कहा; और ख़ुद भी ठहर गये। इसके बाद घोड़ेसे उतरकर उन्होंने श्यामासे उसपर बैठनेके लिए कहा। श्यामा मन ही मन बड़ा खुश हुआ; और तुरन्त ही उछलकर घोड़ेपर सवार होगया। इसके बाद यह जतलाते हुए कि, मुझको घोड़ेपर बैठना नहीं आता, वह एक एक क़दम घोड़ेको वेगसे चलनेका इशारा देने लगा। परन्तु पूरा पूरा इशारा देनेके पहले उसने ख़ांसाहबसे कहा, "ख़ांसाहब, पहलेपहल जब मैंने घोड़ा मांगा था, उसी समय यदि आप मुझे घोड़ा देदेते, तो मैं अवश्य ही बहुत जल्द वापस आजाता; और आपको ले भी जाता; परन्तु अब बहुत देरी होगई है, इसलिए यहांसे जाकर फिर लौटनेका शायद ही मुझे साहस हो! इसलिए, यदि आपको आवश्यकता ही हो, तो आप भी मेरे पीछे पीछे दौड़ते हुए चले आवें। अन्यथा मैं तो जाता हूं, लौटते समय यदि कोई साथी मिल जायगा, तो आपको भी लेजाऊँगा, नहीं तो आपकी मर्ज़ी!"

अन्तिम शब्द अभी श्यामाके मुखसे पूरा पूरा बाहर भी न निकला था कि, उसने घोड़ेको ऐंड़ मारी, घोड़ा भग चला। ख़ांसाहबने सोचा कि, अब न जाने इस जगह मेरी क्या दशा हो—लड़केने तो सोलह आना चक्करमें डाला। यह सोचकर उन्होंने भी अपना क़दम बढ़ाया; और चिल्लाकर श्यामासे कहा, "अरे लड़के,खड़ा हो! खड़ा हो! घोड़ेको दौड़ा मत। मैं आरहा हूं!" श्यामा पक्का बदमाश ठहरा! वह बीच बीचमें कुछ खड़ासा होजाता; और फिर घोड़ेको बढ़ाकर ऐंड़ मारता। ख़ांसाहब चिल्लाने लगते, तब फिर कुछ घोड़ेको खड़ासा कर देता; और जब वे पास आजाते, तब कहता, "क्या करूं? आपका घोड़ा ही नहीं खड़ा होता।" इतना कहता; और फिर घोड़ेको ऐंड़ मारकर बेतहाशा भगा देता। इसी प्रकार करते करते क़रीब दो कोसतक उसने ख़ांसाहबको रपेटा; और जब बस्ती बिलकुल पास दिखाई देने लगी, तब कहने लगा कि, "अब आप आइये, वे सामने चिराग़ दिखाई देरहे हैं, उन्हींकी सीधमें चले आइये; और मैं आगे जाकर आपका सब प्रबन्ध किये रखता हूं।" यह कहकर उसने घोड़ेको ऐंड़ मारी; और न जाने कहांका कहां निकल गया। ख़ांसाहब बेचारे बड़े चक्करमें पड़े कि, क्या करें और क्या न करें; परन्तु किसी न किसी प्रकार क़दम क़दम, दो दो क़दम आगे बढ़ते हुए आख़िर उस बस्तीके पास पहुंच गये; और लगे दाऊद मियांका घर तलाश करने! परन्तु न दाऊद मियांका पता और न उस लड़केका! बस्ती कुछ बहुत

बड़ी भी नहीं थी; परन्तु फिर भी ख़ांसाहबने बार बार उसमें घूमकर दाऊद मियांका नाम पूछा, पर किसीने कुछ पता नहीं बतलाया, अतएव दाऊद मियांसे वे बिलकुल निराश हुए, तब उस लड़केकी हुलिया बतला बतलाकर उसीको पूछने लगे। कहा कि, इतनी इतनी उमरका छोकरा है,बड़ा ढीठ है बातचीत करनेमें बड़ा चालाक है, घोड़ेपर बैठकर आया है। वह लड़का कहां है? किसीने कहा, हां, एक लड़का तो ऐसा बस्तीमें था; बहुत दिनसे न जाने कहां चला गया। आज तो कोई ऐसा लड़का नहीं आया। अन्तमें ख़ांसाहब निराश होकर रात काटनेके लिए कहीं जगह देखने लगे। अब कोई न कोई उनपर दया करके जगह देता ही, अथवा अन्य कोई स्थान बतलाता; पर इतनेमें ख़ुद श्यामा ही उनके पास हांफते हांफते आया; और बोला, "ख़ांसाहब, अजी ख़ांसाहब! आप कहां रहे, मुझे चोरोंने घोड़ेपरसे गिरा दिया। बहुत पीटा। घोड़ा लेकर भाग गये। आपको न जाने कितनी बार पुकारा! पर आप सनके भी नहीं। अन्तमें वैसा ही भगता भगता आया—सोचा कि, घोड़ा आपका गया, सो गया; पर आपके रहने इत्यादिका प्रबन्ध तो कर दें, इसीलिए दौड़ता हुआ मैं……के घर गया; और सब प्रबन्ध करके आपको बुलानेके लिए आया। व्यर्थके लिए, आपका उपकार करनेमें, मुझे मार भारी सहनी पड़ी। चलिये, चलिये जल्दी। अब देर न कीजिए।"

"बदमाश, चोर, मुझे धोखा देरहा है?" ख़ांसाहब ग़ुस्सेमें आकर बोले।

श्यामा अब अपने अड्डेपर ही था। अब काहेको वह खांसाहबकी धमकी-घुड़की और नाराज़गीकी परवा करता है? खांसाहब ज्यों ही उपर्युक्त रीतिसे घुड़ककर बोले, त्यों ही श्यामा खिलखिलाकर हँसने लगा; और हँसी यदि न आई, तो बनावटी ही हँसी हँसकर खांसाहबके सामने उसने थोड़ीसी उछल-कूद मचाई।

"वाह! वाह खांसाहब! आपने तो अच्छा मज़ा किया। आपके लिए जी-जान तोड़कर कोशिश की। दौड़-धूप की। इधर-उधर भागता फिरा। चोरोंके पंजेसे न जाने किस तरह अपने प्राण बचाये; और इतना सब करके, फिर भी, आपको तक़लीफ़ न हो, इसलिए वापस आया। इधर उलटे आप मुझीपर नाराज़ होरहे हैं। आपहीको चोरोंने पकड़ा होता; और आपको अच्छी तरह दुरुस्त किया होता, तो सब हाल मालूम होजाता। अस्तु। अब चलिये, दाऊद मियांके घर, फिर वहांसे आपको उस जगह लेचलें, जहां चोरोंने आपकी उस बेगमको और उस एक स्त्री तथा पुरुषको क़ैद कर रखा है। वहां चलकर उस बेगमसे मैं आपकी भेंट कराऊंगा, यदि इच्छा हो, तो आइये, नहीं तो आपकी मर्ज़ी, मैं तो अपना यह जाता हूं।"

उपर्युक्त लोगोंके नाम निकलते ही खांसाहबकी चेष्टा बदल गई; और कुछ हँसते हँसते, यह कहते हुए कि, "अबे बदमाश, झूठ बोलता है," उन्होंने श्यामाकी पीठपर धीरेसे ही एक थाप

मारी। श्यामा तुरन्त ही ताड़ गया कि, बस,अब मेरा काम हो चुका। इसके बाद वह फिर अपनी उसी बदमाशीकी आवाज़से कहता है,"वाह! ख़ांसाहब! मैं बदमाश! मैं इतना छोटा बच्चा, बदमाशी करना क्या जानूं? किन्तु ख़ांसाहब, आप उस बेगमसे ही तो मिलना चाहते हैं? वह………"

"चुप बैठ छोकरे, चुप बैठ। पर, क्योंरे, उस बेगमके साथ उसकी कोई लौंड़ी भी थी? तूने देखा था? लौंड़ी कौन होती है, समझ गया?"

"हां, हां,ख़ांसाहब,समझ क्यों नहीं गया! लौंड़ी उसीको तो कहते हैं—जो किसी बड़े ख़ांसाहबकी स्त्री होती है, उसीको तो? आपके समान लोगोंकी स्त्रियोंको लौंड़ी ही तो कहते हैं—ठीक है न? हां, एक थी ज़रूर!"

"चल पाजी कहीं का! ख़ांसाहबोंकी स्त्रियोंको कहीं लौंड़ी कहते हैं। अरे लौंड़ी कहते हैं दासीको। उस बेगमके साथ कोई दासी भी थी?"

"हां, हां, ज़रूर थी, मैंने देखी थी।"

"देखी थी?"

"हां, अवश्य देखी थी।"

"कैसी थी?"

"कैसी क्या थी? स्त्रीकी तरह थी। किन्तु ख़ांसाहब, अब यहीं कितनी देर बातचीत करते रहेंगे? अब यहांसे चलना ही ठीक होगा। और देखिये, ख़ांसाहब, मैं बिलकुल

आपके उस ख़ुदाकी ही कसम खाकर कहता हूं, आप यदि मेरे कहनेके अनुसार काम करते जायंगे, तो मैं आपको उस बेगमके पास बिलकुल अचूक लेचलूंगा। पर यदि आप मेरी बात ही न सुनेंगे, तो मैं फिर लाचार हूं। यदि आप उनको चोरोंके पंजेसे छुड़ाना चाहते हैं, तो जैसा मैं बतलाऊं, वैसा ही आप करते जावें; इससे आपको अवश्य सफलता मिलेगी। और यदि उसमें ज़रासी भी चूक होगई, तो समझ लीजिए कि, सब काम बिगड़ जायगा। इस समय आप चलें, फिर मैं सब कुछ आपको बतला दूंगा।"

श्यामाकी वे सारी बातें इतनी मज़ेदार और विश्वासोत्पादक थीं—अथवा यों कहिये कि, ख़ांसाहब ही ऐसे कुछ भोले-भाले थे—कि,ख़ांसाहबको इस बातका कोई विशेष सन्देह नहीं हुआ कि, यह छोकरा हमारी हँसी कर रहा है। सच तो यह है कि, जब मनुष्य किसी ख़ास बातके पीछे पड़ जाता है, तब—फिर अन्य बातोंमें वह चाहे जितना चतुर और होशियार हो, पर जिस बातके वह पीछे लगता है,उसके विषयमें न जाने उसकी वह चतुरता और वह सावधानी कहां चली जाती है—वह उसके लिए एक प्रकारसे पागल ही बन जाता है। बस, यही दशा इस समय ख़ांसाहबकी होरही थी। ये ख़ांसाहब कौन थे? यह बात जब हमारे पाठकोंको मालूम होगी, तब उन्हें थोड़ा-बहुत आश्चर्य अवश्य होगा। पर इस समय हम उनका परिचय नहीं देना चाहते; आगे चलकर आप ही आप पाठकोंको उनका

परिचय मिल जायगा; और वही परिचय उचित भी होगा। अस्तु। ख़ांसाहब श्यामापर बिलकुल लट्टू होगये। वह जिधर लेगया, उधर ही वे गये। दाऊद मियांका घर क्या—एक छोटीसी खपड़ैलमात्र थी, जिसके भीतर दाऊद मियां अकेले बैठे थे। दाऊद मियांकी खपड़ैलके पास पहुँचते ही ख़ांसाहब श्यामासे कहते हैं, "क्यों रे छोकरे, मैंने गाँवभरमें तलाश किया; किन्तु दाऊद मियांकी यह खपड़ैल मुझे किसीने नहीं बतलायी—और अब अचानक तू मुझे यहां कैसे लेआया?" परन्तु ख़ांसाहबके प्रश्नका उत्तर तो एक ओर रहा, श्यामा एकदम आगे बढ़ा; और पुकारकर कहने लगा, "अजी दाऊद मियां, ये मियांसाहब, ये ख़ांसाहब आये हैं। दो दिन इनका प्रबन्ध कर दीजिएगा?" श्यामाका बोल सुनते ही एक लम्बी दाढ़ीवाले दाऊद मियां उस खपड़ैलसे बाहर निकल आये; और बोले—"हां, जनाब, आइये साहब, आइये हुज़ूर, आइये!" इतना कहकर फिर वे अपनी खपड़ैलकी ओर हाथ दिखाकर कहते हैं, "अजी जनाब, आप बड़े बड़े राजमहलोंके रहनेवाले। इन्द्रसभा एक ओर, और आपका महल एक ओर। आपके बड़े बड़े बग़ीचे, आपका वह ऐश-आराम मुझ ग़रीबको नसीब कहां! मेरी तो यह छोटी-सी झोपड़ी है, इस झोपड़ीमें आपके क़दम पड़े, यह मेरी बड़ी खुशनसीबी है—यह सब इस छोकरे श्यामाकी मेहरबानी है। हुज़ूरका नाम तो चारों ओर मशहूर होरहा है, यह बात इस ग़रीब ग़ुलाम बन्देसे छिपी नहीं है। आइये भीतर, अपने क़दमोंसे

इस ग़रीबकी झोपड़ीको पाक फ़रमाइये। यह आपका बन्दा गुलाम जी-जानसे हाज़िर है—है तो अकेला ही, लेकिन हुज़ूरकी ख़िदमतमें कोई कोर-कसर नहीं करेगा........"

दाऊद मियांकी यह चर्पटपंजरी और भी अधिक अव्याहत-रूपसे जारी रहती—क्योंकि उनकी जिह्वापर मानों प्राचीन कालके अरब ग्रन्थकारोंका पूरा प्रसाद ही होचुका था। वे बड़ी शानसे और विशुद्ध उर्दूमें बोल रहे थे। परन्तु साथ ही साथ उनके उस कथनमें सत्यांशका लवलेश भी न था—किन्तु हमारे खांसाहब उसमेंसे कुछ भी समझ न सके। और दाऊद मियांका आमन्त्रण स्वीकार करके उनकी झोपड़ीमें जानेको तैयार होगये। दाऊदमियांने अपनी बातोंसे तो उनको यहांतक तर कर दिया, जिससे उनको पूरा पूरा विश्वास होगया कि, यह दाऊद मियां एक बहुत ही भलामानुस आदमी है। इतनेमें दाऊद मियांने ख़ांसाहबके आगे एक अत्यन्त गन्दा, परन्तु हालका ही भरा हुआ, हुक्का लाकर रख दिया; और आगे बढ़कर बड़ी नम्रतासे उसको पीनेके लिए उनसे प्रार्थना करने लगे। श्यामा अवश्य ही उस समय एक अक्षर भी नहीं बोल रहा था; और दाऊद मियांकी ओर देख देखकर मन ही मन हँस रहा था। कह नहीं सकते कि, उसके इस हँसनेका कारण क्या था? इधर ख़ांसाहबके पेटमें भूखके मारे चूहे कूद रहे थे। बेचारे इधर-उधर निगाह दौड़ा रहे थे। बार बार दाऊद मियांकी ओर वे आतुरता-पूर्वक देखते कि, मियांसाहब खानेके लिए अब पूछेंगे, तब

पूछेंगे। पर अन्तमें जब उन्होंने देखा कि, अब स्पष्ट कहे बिना काम नहीं चलेगा, तब दाऊद मियांकी ओर देखकर वे कहते हैं, "मियांसाहब, रात तो बहुत होचुकी—अब यदि कहीं कुछ खानेको मिले, तो ये पैसे लीजिए; और कुछ खानेके लिए मँगाइये।" यह सुनते ही मियांसाहब कुछ सचिन्त चेष्टा बनाकर कहते हैं, "जनाब, रात तो बहुत आचुकी है, देहातका मामला है, इस समय खानेको कहां मिलेगा? परन्तु मुझ ग़रीबकी खिचड़ी यदि हुज़ूरको पसन्द आवे, तो थोड़ीसी रखी है, दोपहरकी बची हुई।" यह कहते हुए वे पैसे तो मियांसाहबने अपनी कमरमें किये; और अपनी दोपहरकी बची हुई बासी खिचड़ी ख़ांसाहबके सामने रख दी। ख़ांसाहब भूखके मारे व्याकुल हो ही रहे थे, क्या करते बेचारे? जैसे-तैसे उस बासी खिचड़ीको गलेके नीचे उतारा; और मियांसाहबकी बिछाई हुई चटाईपर लेटकर रात बिताई। लेकिन हां, मियांसाहब बोलनेमें इतने तेज़ थे, कि ख़ांसाहबको वे तक़लीफ़ें कुछ जान नहीं पड़ीं।

श्यामाने भी वह रात उसी जगह बिताई। दाऊद मियांने ख़ांसाहबको अनेक बातें बतलाईं; और अपने वंशका वृत्तान्त बतलाते बतलाते अपनी रिश्तेदारी बिलकुल अलाउद्दीन ख़िलजीके घरसे जाभिड़ाई। "परन्तु समयकी बलिहारी! उसके सामने किसीकी कुछ नहीं चलती। हमारे घरमें न जाने कितनी सम्पत्ति भरी हुई थी; और हमारे वंशके लोगोंने जो जो पराक्रम कर

दिखलाये, उनका यदि सारा वृत्तान्त लिखा जाय, तो एक बड़ी भारी पोथी ही तैयार होजाय। परन्तु आज हमारे वंशमें हमको छोड़कर और कोई नहीं बचा। क्या करें, इसीलिए हम भी फ़क़ीर बनकर यहां आपड़े हैं। हमारे कोई लड़का-बाला भी नहीं। बिलकुल अकेले फक्कड़-सुलतान होरहे हैं। स्त्री थी, सो भी गये साल चल बसी।" यहांतक कथा बतलाकर फिर दाऊद मियां अपनी स्त्रीकी मृत्युपर अत्यन्त ही शोक करने लगे। यह सब सुनकर श्यामाको इतनी कुछ हँसी आने लगी कि, अन्तमें उसे बाहर ही जाना पड़ा, और वहीं वह पेट पकड़ पकड़कर हँसता रहा। ख़ांसाहब बेचारे चुपके दाऊद मियांकी वह सारी रामकहानी सुन रहे थे; इतनेमें दाऊद मियां फिर उनसे कहते हैं, "ख़ांसाहब, देखिये, मैं एक बिलकुल ग़रीब आदमी; और आप इतने अमीर! पर मुहब्बत ही एक ऐसी चीज़ है कि, जिसके सामने अमीर और ग़रीब सब बराबर हैं। आप क्या कभी उसके जालमें फँसे हैं? यदि फँसे होंगे, तो फिर आपको मेरी इन सारी बातोंकी क़ीमत ज़रूर ही मालूम हो-जायगी। और यदि नहीं फँसे हैं, तो मेरी यही आपके लिए दुआ है कि, आपको जल्दी ही ऐसी मुहब्बत नसीब हो—और क्या कहें?" इतना कहनेके बाद फिर दाऊद मियां अपनी स्त्रीकी प्रेम-प्रशंसा करते हुए उसके गुणोंका लम्बा-चौड़ा वर्णन करने लगे। और बीच बीचमें "कहिये, सच है न? मैं जो कुछ कह रहा हूं, वह ठीक है न? आपको भी इसका

मज़ा कुछ न कुछ मालूम ही होगा ?" इत्यादि वाक्य कह कहकर बेचारे ख़ांसाहबको और भी अधिक टोंचते जाते थे। इस प्रकार होते होते दाऊद मियांकी कहानी फिर यहांतक आ-पहुँची कि, हमारे ख़ांसाहबका मन भी उसमें पूरा पूरा रँगने लगा। कह नहीं सकते कि,दाऊद मियां सचमुच ही उनके मनकी वह दशा लाना चाहते थे, अथवा क्या ? परन्तु दाऊद मियांकी प्रेमकहानी सुनते सुनते हमारे ख़ांसाहबकी भी बोलनेकी इच्छा होआई; और वे मियांसाहबसे बोले, " मियां साहब, यह तो नहीं कह सकते कि, हमारी और आपकी कहानी बिलकुल ही मिलती है; पर हां, बहुत कुछ मिलती-जुलती है। मेरा भी प्रेम ऐसी ही एक जगह फँसा हुआ है; और मेरे एक शत्रुने उसपर डाकेज़नी की है। मेरी प्रियतमाका प्रेम दूसरी ओर जानेकी कोई विशेष सम्भावना तो नहीं; पर क्या कहा जाय ? स्त्रियोंकी जात है ! अबतक उसके साथ मेरा निकाह भी नहीं हुआ है कि, इतनेमें वह अपनी स्वामिनीके साथ इसी तरफ कहीं चली आई है। यह लड़का कहता है कि, उन सभी लोगोंको यहां कहीं चोरोंने क़ैद कर रखा है। लेकिन सच मामला क्या है, कुछ समझमें नहीं आता। "

यह अन्तिम वाक्य ख़ांसाहबके मुखसे अभी पूरा पूरा निकला भी नहीं था कि, इतनेमें श्यामा शीघ्रतापूर्वक उठ बैठा; और एकदम कहता है, "क्यों ख़ांसाहब, मेरी बातोंपर अभी-तक आपको यक़ीन नहीं आया ? आप इसे झूठ ही समझते

हैं ? मैं नहीं कह सकता कि, उन लोगोंमें वह आपकी कौन है; किन्तु इस प्रकारके कुछ लोग—जिनमें वह बेगम और उसकी वह बांदी अवश्य है—चोरोंने पकड़ रखे हैं सही; मैं आपसे कह ही चुका हूं कि, आप यदि अपनी उस (प्रेमिका) से मिलना चाहते हों, तो मैं मिला सकता हूं। चोर हों, चाहे चोरके बाप हों—यह श्यामा किसीको डरता नहीं;और हर तरहके प्रयत्न करके आपको इस काममें सहायता देनेको तैयार है। परन्तु हां, उसकी युक्ति आपको माननी पड़ेगी। यदि आप यह कहकर टाल दें कि, चलो, लड़कोंकी युक्ति है, इसमें रखा ही क्या है, तो इससे काम नहीं चलेगा। आप यदि तजरुबा ही करना चाहते हैं, तो कर देखिये। मैं जो कुछ कह रहा हूं, उसको सत्य करके दिखलाऊंगा। कभी चूकूंगा नहीं।" इतना कहकर श्यामा कुछ देरके लिए चुप होगया; परन्तु फिर तुरन्त ही कहता है, "अच्छा, आप न मानें, तो इन मियांसाहबसे ही पूछ लें कि, मैं जो कुछ कहता हूं, सो सच है या नहीं।" उसका यह कथन सुनते ही मियांसाहब एकदम बोल उठे, "अजी हां,हांजी! यह बिलकुल ठीक कहता है। इसको मैं बिलकुल बचपनसे ही जानता हूं। यह कभी झूठ बोल नहीं सकता, मुझे बिलकुल यक़ीन है। इसकी युक्तिके अनुसार आप कोई भी काम करें, उसमें कामयाबी ज़रूर-बिलज़रूर होगी, इसमें शंका कुछ भी नहीं। आप इसपर पूरा भरोसा रखिये। कभी धोखा नहीं होगा। हर एक नाजुक काममें इसकी हिकमत ज़रूर काम कर जाती है।"

दाऊद मियांने श्यामाकी प्रशंसाके पुल बांध दिये। इस प्रकार बातचीत होते होते बिलकुल सुबह होगया। बेचारे ख़ांसाहबको पलभरके लिये भी नींद लेनेका मौक़ा नहीं मिला। बड़े कष्टके साथ आप उठे; और श्यामाके पीछे लगे कि, बतला भैया, अपनी युक्ति, हम उसे करके एक बार उन चोरोंके अड्डे में तो पहुँचें, फिर उनका सारा भेद खोल दें; और जितने लोगोंको उन्होंने अभीतक पकड़ रखा है, सबको छुड़ा दें।

श्यामा मानो इसी प्रतीक्षामें था कि, ख़ांसाहबके मुखसे ऐसी बात अब निकलेगी ही—अतएव ख़ांसाहबके मुखसे उक्त अक्षरोंके निकलते देर न होने पाई कि, वह एकदम बोल ही उठा, "हां हां, युक्ति तो मैं बतलाऊंगा ही; पर आप करें तब तो! इसीलिए मैं बतलाता नहीं।"

"अरे क्यों? मैं करूंगा क्यों नहीं? ऐसा तू कैसे कहता है? यदि तू सचमुच ही मुझको वहांतक पहुँचा देने कहता है, तो मैं तेरी युक्ति क्यों नहीं करूंगा? मैं तो कहता हूं कि, तेरी युक्ति चाहे जितनी कठिन हो, मैं किये बिना न छोड़ूंगा। हम लोगोंके लिए कठिन क्या है! बतला। जबतक यह तलवार मेरे हाथमें है; और शरीरमें ताक़त है, तबतब मुझको किसीका भय नहीं। बतला जल्दी, बदमाश कहींका! मेरा घोड़ा खोदिया, नहीं तो उन दुष्ट चोरोंकी मैंने ख़ूब ही ख़बर ली होती। कभी न छोड़ा होता। चल, बतला। कहां हैं वे चोर तेरे—मुझे एक बार दिखलाभर दे; और किसी युक्ति-व्युक्तिकी ज़रूरत ही नहीं।"

"ख़ांसाहब, आपकी ऐसी बातोंसे कोई लाभ नहीं होगा। आपको सचमुच ही यदि असली जगहतक ठीक ठीक तौरसे पहुँचना है, तो जैसा मैं बतलाऊं, आप कीजिए; और नहीं तो जैसी आपकी मर्ज़ी हो—मेरी कोई हानि नहीं। हां, इतना ज़रूर है कि, आप मुझसे कोई लाभ न उठा सकेंगे। अजी, नानासाहबके समान बड़े बड़े लोगोंको जिन चोरोंने हैरान करके क़ैदमें डाल रखा है, उनके सामने आपकी क्या दाल गलेगी? आपकी इस व्यर्थकी बड़बड़से कोई काम सिद्ध न होगा। इसलिए आप मेरी युक्ति सुनिये। हां, युक्ति ज़रा विचित्र आपको अवश्य मालूम होगी; पर है वह अचूक।"

नानासाहबका नाम सुनते ही ख़ांसाहबकी चेष्टा कुछ विचित्र-हीसी दिखाई दी। पर फिर शीघ्र ही सम्हलकर वे श्यामासे कहते हैं, "अच्छा, तो बतला, अपनी युक्ति ही कह डाल।"

"बतलाऊं? मेरी युक्ति बहुत ही छोटी है। वे चोर स्त्रियोंसे कुछ नहीं बोलते; और लड़कोंको भी नहीं छेड़ते। सो मैं लड़का तो मौजूद ही हूं। हां, आपको सिर्फ......"

"और आपको मेरी स्त्रीका लहँगा......"

दाऊदमियांको ख़ांसाहबने आगे कुछ भी बोलने नहीं दिया। वे क्रोधसे बिलकुल सुर्ख़ होगये।

चौंसठवां परिच्छेद।

बीबीका काम होगया।

उस समयका वह खांसाहबका क्रोध देखनेहीयोग्य था। वे समझ गये कि,यह लड़का हमको किस रूपमें चोरोंकी छावनीमें लेजाना चाहता है। उस क्रोधके आवेशमें उन्होंने उस लड़केके मुँहमें दो-चार थप्पड़ भी जमाये होते; किन्तु श्यामा मानो यह बात पहलेहीसे ताड़ गया था; और इसकारण वह उनके हाथसे पहले ही कुछ अन्तरपर होगया था। श्यामा अपनी ओरसे पूरा पूरा सावधान था; क्योंकि वह जानता था कि, ख़ांसाहब एक बहुत ज़बरदस्त आदमी हैं। और सच है, यदि ख़ांसाहबने उसके एक भी थप्पड़ ज़रा कसकर जमा दिया होता, तो उस बेचारेका काम ही होजाता। परन्तु श्यामाकी स्वाभाविक धूर्त्तताके कारण ऐसी कोई बात नहीं हुई। श्यामा उनसे दूर हटकर आनन्दपूर्व्वक अपनी आंखें मटका रहा था। उसके उस आनन्दमें विनोद और कौतूहलकी मात्रा भी काफी थी! ख़ांसाहब अवश्य ही बहुत बिगड़े; और खूब बके-झके; पर अन्तमें कुछ शान्त हुए। यह देखकर श्यामा एकदम उनसे कहता है, "वाह जनाब, मैंने आपको एक सच्चा रास्ता बतलाया; और आप उसपर नाखुश होकर मुझे गालियां दे-रहे हैं। देखिये साहब, यदि सचमुच ही आपको बिलकुल

अन्दरतक पहुँचकर बेगम साहबाकी उस बांदीसे मिलना हैं, तो जैसाकि मैं कहता हूं, वैसा किये बिना आपका काम नहीं होसकता। और कोई मार्ग ही नहीं; और यदि हो तो आप ही बतलाइये। चोरोंके उस अड्डेके आसपास किसी मुसलमान मुसाफिरको भी घूमनेका साहस नहीं होसकता। मैं आपको बेगम साहबाकी उस बांदीसे मिलानेके लिये जारहा हूं। मैं अपनी माकी शपथ खाकर कहता हूं कि, मैं अवश्य आपको उससे मिलाकर ही रहूंगा; लेकिन जब आप मेरा कहना मानेंगे तब! अन्यथा यह बात हो ही नहीं सकती। और कौनसा मार्ग है? किस तरह आप इस कामको कर सकेंगे? मियांसाहब, आप ही बतलाइये, मैं झूठ कहता हूं? चोरोंका वह अड्डा कोई छोटा-मोटा अड्डा नहीं है। उनमेंसे एक एक आदमी ऐसा ज़बरदस्त है कि, बड़ों बड़ोंके छक्के छुड़ा देता है। आप जब स्वयं चलकर देखेंगे, तभी मालूम होगा। इसके बिना कैसे मालूम होसकता है? फिर आपको तो एकदम भीतर पहुंचकर अपना काम करना है। यह काम युक्तिहीसे होगा।" श्यामा उस समय बिलकुल एक प्रौढ़ मनुष्यकी तरह गम्भीरतापूर्वक बोल रहा था; और बीच बीचमें मियांसाहबकी ओर देख देखकर "आप ही बतलाइये", "आप ही बतलाइये" कहता जाता था, सो अब दाऊद मियांने उसके कथनकी और भी अधिक पुष्टि कर दी। उन्होंने कहा, "सच है, जब इस प्रकार गुप्त रूपसे शत्रुके अड्डेमें प्रवेश करना है, तब फिर कोई भी भेष धरकर क्यों न

जावे ? इसमें क्या हानि है ? हमें तो अपना काम निकालना है, और कोई बात देखना ही नहीं। सच तो यह है कि, अपना काम निकालनेके लिए सब कुछ करना पड़ता है, फिर उसमें आगे-पीछेका कोई भी विचार नहीं करना होता। यह एक नीति है।" यह कहकर दाऊद मियांने अपने पूर्वजोंके अनेक उदाहरण दिये कि, देखो, हमारे अमुक अमुक पूर्वजोंने, अमुक अमुक समयपर,ऐसे ऐसे पराक्रम किये;और उनके लिए इस इस प्रकारकी अनेक युक्तियोंकी योजना की। वास्तवमें दाऊद मियांकी बतलाई हुई वे बातें यदि सचमुच ही सत्य थीं, तो यही कहना चाहिए कि, उनके पूर्वजोंने जितने कुछ पराक्रमके कार्य किये थे, सब स्त्रियोंका ही भेष धरकर! सबने एक एक बार अपने पुरुष-भेषको उतारकर लहँगा, चोली अथवा स्त्रियोंका पायजामा पहनकर कोई न कोई महत्वपूर्ण कार्य किया ही था। और, नहीं जनाब—दाऊद मियां अपने पूर्वजोंके पराक्रमोंतक ही नहीं रहे—किन्तु उन्होंने यह भी बतलाया कि,उन्होंने खुद भी,एक बार,ऐसा ही मौक़ा पड़नेपर,इसी युक्तिका अवलम्बन करके अपना एक बड़ा भारी कार्य,और बहुत ही खूबीके साथ,किया था। इस प्रकार अपने पूर्वजोंका और अपना निजका भी अनुभव बतलाकर दाऊद मियांने हमारे ख़ांसाहबको भलीभांति सुझा दिया कि,यदि सचमुच ही आपको अपना कार्य सिद्ध करना है,तो ऐसा करनेमें कोई हानि नहीं। इधर श्यामाने जब देखा कि, हमारे दाऊद मियांके कहनेसे—उनकी मधुर वाणीसे—ख़ांसाहबका

मुन इस ओर झुक रहा है, तब वह कहता है, "मैं सच कहता हूं दाऊद मियां, आप यदि बेगमसाहबाको देखें, तो बिलकुल लट्टू होजाँय—ऐसी वे ख़ूबसूरत हैं! और उनकी दासीका तो फिर कहना ही क्या ? ऐसी सुन्दर युवती है कि, कुछ पूछिये ही मत!" श्यामाका यह कथन सुनकर ख़ांसाहब तुरन्त ही कहते हैं, "किन्तु, क्योंरे लड़के, उस दासीका अथवा बेगम-साहबाका नाम क्या है ? बतला तो सही!"

"नाम ? बेगमसाहबाको तो बेगम ही कहते हैं, उनका नाम क्या ? और वे मुसल्मानी नाम भी हमारे ध्यानमें क्यों रहने लगे ? आप उसका नाम लीजिए, यदि ठीक होगा, तो मैं तुरन्त ही बतलाऊंगा। नहीं होगा, तो वैसा बतलाऊंगा!"

"उसको फ़तिमा कहते हैं?" ख़ांसाहबने बड़ी ख़ूबसूरतीके साथ पूछा।

"हां, हां, बस—बिलकुल ठीक है। यही नाम है—यही नाम है, जो आप बतलाते हैं।" श्यामा एक क्षणभर भी न रुककर शीघ्रतापूर्वक कहता है, "बिलकुल यही, इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं। मैंने उस बेगमके मुँहसे कई बार सुना। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं। बस, फ़तिमा—फ़तिमा ही उसका नाम है! फ़तिमा! वाह क्या ही सुन्दर है फ़तिमा! आप उसीसे मिलना चाहते हैं? अच्छा, तो अब चलिये। देर न कीजिए। आज रातको चांदनी निकलनेपर हम लोग यहांसे चल देंगे, इससे मार्गमें हमको कोई मिलेगा भी नहीं। और, आप डरते किस

बातको है? ऐसी कोई बात नहीं। आप निश्चिन्त होकर मेरे साथ चलें।"

दाऊद मियां और श्यामाने मिलकर ख़ांसाहबको समझानेका पूरा पूरा प्रयत्न किया; और बार बार उक्त दासीका नाम ले लेकर उनको इतना प्रलोभित किया कि, ख़ांसाहबका मन हिंडोलेकी तरह झूलने लगा। अब वे करें क्या? कुछ उनको सूझने ही न लगा। इतनेमें श्यामाके मुखसे स्वाभाविक ही नानासाहबका नाम निकल पड़ा, जिसे सुनकर ख़ांसाहब एकदम चौकन्ने हुए; और श्यामासे पूछने लगे, "क्योंरे, तो वह फ़ातिमा बार बार नानासाहबसे मिलकर बातचीत किया करती होगी?" पाठक जानते ही हैं कि, श्यामाका यह स्वभाव था कि, वह कुछ न कुछ उत्तर अवश्य ही देता; और वह भी ऐसा उत्तर देता, जिससे कुछ न कुछ आनन्द मालूम हो। अतएव वह तुरन्त ही ख़ांसाहबको उत्तर देता है—"हां! हां! वह तो सदैव ही उनके पास आती है, बैठती है, बातचीत करती है; और......"

श्यामाने जितने शब्द कहे, उतने ही ख़ांसाहबके लिए पर्याप्त थे। उनको सुनकर उनकी चेष्टा बड़ी विचित्रसी होगई। और ऐसा जान पड़ा, मानो अब वे सोच रहे हैं कि, अब हमें कुछ न कुछ करना ही होगा। इसके बाद ख़ांसाहब मन ही मन कहते हैं, "अरे पाजी, अन्तमें तूने उड़ा ही लिया? जिसको मैं अपना—बिलकुल ही अपना—माल समझता था, वह आख़िर तेरे

हाथमें आ ही गया। अच्छा, बेटा, कोई हर्ज नहीं। मैं तुझको समझ लूंगा। चाहे जो करूंगा, लेकिन तुझे मार डाले बिना न रहूंगा।" ख़ांसाहब यह मन ही मन कह रहे थे; पर अन्तिम शब्द उनके मुखसे,आवेशके मारे, कुछ ज़ोरसे निकल पड़े,जिनको श्यामाने सुन लिया; और वह बहुत ही विचित्र प्रकारकी चेष्टासे उनकी ओर देखने लगा। "तुझे मार डाले बिना न रहूंगा।" तुझे? तुझे किसको? यह हमारे ही लिए तो ऐसा नहीं कह रहा है? यह सोचकर वह एक एक क़दम पीछेकी ओर हटने लगा। शायद सचमुच ही यह अपनी तलवार चला दे, तो मैं क्या करूंगा? लेकिन ऐसी कोई बात उसे दिखाई नहीं दी, बल्कि इसके विरुद्ध ख़ांसाहब ही कुछ विशेष चिन्तितसे दिखाई दिये। अब ख़ांसाहब इस विचारमें थे कि, हम श्यामासे अब कहें क्या? क्या इससे कह दें कि, "अच्छा, चल। तेरी युक्तिसे काम निकलेगा, तो मैं वैसा करनेको भी तैयार हूं?" अथवा जबतक यह और कुछ न बोले, तबतक चुप ही रहूं? ख़ांसाहबके कुछ ध्यानमें न आता था—वे इस कठिनाईमें पड़े थे कि, श्यामासे एकदम यह कैसे कहें कि, "चल भाई, मैं तेरे साथ स्त्रीका भेष धरकर चलनेको तैयार हूं।" थोड़ी देरतक वे इसी सोच-विचारमें पड़े रहे; पर अन्तमें इधर-उधर कुछ सिर खुजलाकर वे उससे कहते हैं, "क्यों लड़के, मैं तेरे साथ चलनेको तैयार हूं; पर क्या इसके अतिरिक्त और कोई युक्ति नहीं होसकती?"

"और तो कोई नहीं—और कौनसी युक्ति होसकती है ? आप यदि गुप्त रूपसे उन चोरोंके अड्डेमें घुसकर अपना कार्य सिद्ध करना चाहते हैं, तो मेरे ख़यालमें और तो कोई युक्ति नहीं आती। किसी भी पुरुषको—फिर यदि वह मुसल्मान हुआ, तो क्या कहना—वे उधरसे फटकने भी नहीं देते। आहट मिलते देर नहीं होती, कि वे दौड़कर आजाते हैं। मैं तो हज़ारों बार उधरसे निकलता रहता हूं, इसलिए मुझे सब उनका भेद मालूम है। हां, औरतोंको वे सिर्फ पकड़भर लेते हैं; लेकिन उनको सताते नहीं। उनको परदेकी ओट लेजाते हैं। वहां कुछ स्त्रियां सीखी हुई मौजूद रहती हैं। उन्हींके द्वारा वे लोग उन स्त्रियोंके पाससे सब आभूषण इत्यादि हरण करवा लेते हैं; और फिर उनको छोड़ देते हैं। बेगमसाहबा और उनके साथकी दासीको भी वे इसी उद्देश्यसे पकड़ लेगये थे, पर उनके पास-से जितने मालके मिलनेकी उम्मेद थी, उतना नहीं मिला, इस-लिए, उनको बड़ा आदमी समझकर, इस आशासे क़ैद कर रखा है कि, इस ढंगसे उनके पाससे और भी कुछ वसूल कर सकेंगे। अब आगे यदि कोई उन्हें छुड़ावेगा नहीं, तो न जाने क्या होजाय !" इत्यादि बातें श्यामाने कहीं। इसके सिवाय दाऊद मियांने भी ख़ांसाहबको बहुत समझाया; और दोनोंने मिलकर उनके मनमें इतना तो अवश्य जमा दिया कि, यदि अपने कार्यके लिए औरतका भी भेष धरकर जाना पड़े, तो कोई हानि नहीं; एक बार वहां जाना अवश्य चाहिए; और यदि

होसके, तो बेगमसाहबाका भी वहांसे छुटकारा करना चाहिए। क्योंकि दाऊद मियांने बड़े अपनत्वके साथ कहा कि, कैसी ही हो, वह बेगम आख़िर अपनी जातिकी ही है, उसे छुड़ाना भी आपके समान लोगोंका ही कर्त्तव्य है। साथ ही साथ उन्होंने यह भी समझाया कि, एक बार यह हाल तो हम लोगोंको मालूम ही होचुका है, अब केवल वस्त्रोंकी ही लज्जामें पड़कर—अर्थात् स्त्रीका भेष लेवें या न लेवें,इसी सोच-विचारमें पड़कर—यदि इस कामसे लापरवाही की जायगी, तो यह उचित न होगा। भेष किसलिए बदला जाता है? इसीलिए कि, हमारी सच्ची स्थिति शत्रुको मालूम न होसके; और हम उसके अन्दर घुसकर अपना काम कर आवें—छिपकर शत्रु का गला काटनेके लिए यह एक साधनमात्र है। दाऊद मियांका यह गम्भीर विचार अन्तमें ख़ांसाहबको पसन्द आया; और अब इस बातका विचार उपस्थित हुआ कि, पोशाक कहांसे लाई जावे? पर इसके लिए कोई विशेष चिन्ताकी आवश्यकता ही न थी। पहले-पहल जब पोशाकका प्रश्न निकला, तब तो दाऊद मियां मानो बड़े विचारमें पड़ गये; पर अन्तमें मानो आंखोंमें एकदम आंसू भरकर कहने लगे, "ख़ांसाहब, बन्देको माफ़ किया जाय; मेरी औरत अभी हालहीमें गुज़री है, उसका पायजामा, लहँगा, ओढ़नी, वग़ैरः सब मैंने एक गठरीमें बांधकर उसकी यादगार-के तौरपर रख छोड़ा है—और क्या बतलाऊं, ख़ांसाहब, जबसे मैंने आपको देखा है, कई बार उसकी याद आचुकी है, उसका

डीलडौल, चेहरा-मोहरा, सब आपहीके समान था। उसकी पोशाक आपके बदनमें बिलकुल ठीक आजायगी; और जब आप उसका वह बुर्क़ा ऊपरसे डालेंगे, तब तो न जाने मेरी क्या गत हो! कह नहीं सकता। आपका चेहरा देखते ही मेरे मनमें आया, जैसे आप उसके भाई हों, अथवा वह ख़ुद ही मर्दका भेष धरकर आई हो।" दाऊद मियांका यह कथन इतनी बदमाशीसे भरा हुआ था कि, कुछ पूछिये मत। इसे सुनकर ख़ांसाहबको क्रोध भी आया; और हँसी भी आई। श्यामा तो हँसते हँसते बिलकुल लोट-पोट होगया। हां, दाऊद मियां अवश्य ही बिलकुल चुप और दुःखित बैठे रहे। मानो सचमुच ही उन्हें अपनी मृतपत्नीकी याद आरही हो। वे अपनी आंखोंमें आनेवाले आंसुओंको पीछे ही पीछे रख रहे थे। अस्तु। अन्तमें श्यामाने सूचित किया कि, अब यदि इस विचारके अनुसार कार्य करना है, तो शीघ्रता करनी चाहिए। इसपर ख़ांसाहब बिलकुल राज़ी होगये; और पायजामा, कुर्ता, ओढ़नी, इत्यादि किस प्रकार पहनी जाय, इसका पाठ लेकर वे अपने वस्त्र बदलनेको तैयार होगये। श्यामाको उन्होंने बाहर जाकर खड़ा होनेके लिए कहा कि, जिससे भीतर कोई आने न पावे; और अन्दर दाऊद मियां वस्त्र बदलनेमें उनको सहायता देने लगे। श्यामा एक मौजी जीव; उसको कोई न कोई मौज करनेका मौक़ा चाहिए—वह बाहर खड़ा हुआ क्षण क्षणपर यही कहता, "अजी मियां, अजी मियां-

साहब, देखो रामजी पटेल आये; मोहन आया, अजी! सोहन भी वह आरहा है, आपहीकी ओर आता है। अजी, आया आया—नहीं नहीं—लौट गया। वह जारहा है।" इस प्रकार कहनेके बाद फिर कुछ देर ठहर जाता; और फिर उसी प्रकार किसी न किसीका नाम लेकर चिल्लाने लगता। इस प्रकार श्यामा उधर उपद्रव मचा रहा था; और इधर दाऊद मियां ख़ांसाहबको कपड़े पहनाते पहनाते बोले, "अजी, जहां आपने बुर्क़ा डाला कि, बिलकुल उसी (हमारी स्त्री) की तरह दिखाई देंगे, इसमें कोई सन्देह नहीं। वाह! उसका यह पायजामा आपके कैसा ठीक होजाता है! यह ओढ़नी कितनी सुन्दर लगती है! और यह लहँगा? यह लहँगा तो जैसे बिलकुल आपहीके लिए बनाया गया हो। बस, वह भी ऐसी ही थी। ऐसी ही दिखाई देती थी।" इस प्रकार कहकर दाऊद मियां उसके गुण गाने लगे; और बीच बीचमें आंखोंसे आँसू भी टपका देते। अस्तु। उस समय बेचारे खांसाहबकी क्या दशा होरही होगी, इसका पाठक ही अनुमान करें। पर बेचारे एक बार जब फँस गये, तब अब कहां निकलना होता है? इसके सिवाय, श्यामाके मुँहसे जबसे उन्होंने यह सुना कि, नानासाहब और फ़तिमा एक ही जगह हैं; और दोनोंकी मुलाक़ात भी रोज़ हुआ करती है, तबसे उनकी इच्छा और भी प्रबल होगई कि, चाहे जिस तरहसे हो, एक बार वहां पहुंचना अवश्य चाहिए; और उस हरामख़ोर नानासाहबको, यदि मौक़ा मिले, तो मार ही डालना चाहिए। ख़ांसाहबको

बिलकुल विश्वास होगया था कि, फ़तिमा जो हमारे हाथ नहीं लग रही है, इसका एकमात्र कारण नानासाहब है। इसी दुष्टने उसे बहका रखा है; और जबतक यह मौजूद है, फ़तिमा हमें नहीं मिलेगी, इसलिए इसका एक बार ख़ातमा ही कर देना चाहिए; और इसका ख़ातमा करनेके लिए मौक़ा भी यही अच्छा है, फिर ऐसा मौक़ा हाथ न आयेगा। हम अब इस विचित्र भेषमें जायंगे; और अपनेको बेगमसाहबाकी बाँदी बतलायंगे, तब हमको अन्दर जानेसे कोई रोक नहीं सकेगा; और इस लड़केको दो-चार पैसे देकर चुप बैठनेके लिए कहेंगे, बस, सब काम होजायगा। ख़ांसाहबने कपड़े तो स्त्रियोंके पहन लिये थे; पर अपने हथियार उनके भीतर छिपानेमें वे नहीं चूके थे। श्यामाको भी यह बात मालूम होगई, अतएव उसने मन ही मन कहा, "अच्छा बेटा, तुम चाहे जितने हथियार साथमें लो, लेकिन तुम्हारी दुर्गति कराये बिना हम न रहेंगे।" मनमें तो उसने इस प्रकार कहा; पर बाहरसे यही कहा, "हां, हां, ख़ांसाहब, हथियार ज़रूर लेलीजिए, वीर पुरुषोंके लिए ऐसा ही उचित है—वे चाहे जिस भेषमें रहें; पर शस्त्र उनके साथ चाहिए ही।" इस प्रकार कहकर श्यामा अब ख़ांसाहबको साथ लेकर वहांसे रवाना हुआ। उसने अपना और सब काम भी कर लिया था। जो कुछ ख़बरें उसको लेनी थीं, सब उसने अन्य किसी मार्गसे प्राप्त कर ली थीं; और उनमें कोई विशेष महत्वकी ख़बर भी नहीं थी।

इस प्रकार जब ख़ांसाहब बीबी बन गये, तब ऊपरसे बुर्क़ा डालना भी आवश्यक ही होगया। क्योंकि भीतरकी सारी पोशाक ज़नानी थी; और इसके सिवाय हथियार भी छिपे रहने चाहिए। पर बेचारे ख़ांसाहबको बुर्क़ा डालकर चलनेकी आदत कहां? यह भो एक आफ़त ही थी। अच्छा, रास्तेमें यदि केवल ओढ़नी ही ओढ़कर चलें, तो यह भी सम्भव न था कि, लोग उन्हें पहचानते नहीं; सभी लोग रास्तेमें यह कहकर हँसी करते कि, यह अच्छा पुरुष है, जो स्त्री बना जारहा है! इन सब विघ्नोंसे बचनेके लिए मार्ग एक ही था; और वह यह था कि, मुसलमान स्त्रियोंकी तरह भीतरकी पोशाकपर ऊपरसे बुर्क़ा डाल लिया जाय।

बेचारे ख़ांसाहबको सब कुछ चुपकेसे करना पड़ा। पर चुपकेसे वे क्या कर सकते थे? उनके हाथहीमें क्या था? उनका मार्ग-दर्शक—वह श्यामा—न जाने क्या सोच रहा था, कुछ समझहीमें न आता था। उसने रातको उस ज़नानी विचित्र पोशाकमें ख़ांसाहबको एक बार रपेटा सही! कोई भी रास्तेमें जाने-आनेवाला मिलता, तो वह बिना कारण ऐसा कहने लगता, "देखो, हमारी बीबीसाहबा जारही हैं—भाई, इनके सामने मत कोई आना।" इस प्रकार कहकर ख़ांसाहबकी ओर ख़ास तौरपर वह लोगोंका ध्यान आकर्षित करता। अस्तु। इस प्रकार वह उन बीबीरूप ख़ांसाहबको बहुत देरतक पहले तो इधर ही उधर रगड़ता रहा, फिर इसके बाद सूर्याजीकी छावनीकी

ओर उनको लेगया। तत्पश्चात् उनसे यह कहकर, कि आप यहीं इस वृक्षके नीचे खड़े रहिये ; और मैं जाकर तबतक चोरोंका हालचाल लेआऊँ, आप बिजलीकी तरह न जाने कहांका कहां ग़ायब होगया। बेचारे ख़ांसाहब उस वृक्षके नीचे खड़े हुए, अपने बुर्क़ेकी जालीसे देखते रहे कि, बाहर क्या होरहा है ? श्यामा कब आता है ? इत्यादि। पाव घंटा होगया। आधा घंटा होगया। श्यामाका कहीं पता नहीं। अब ख़ांसाहब क्या करें ? कुछ उनकी समझमें ही न आरहा था। इतनेमें बहुत देर बाद धूर्त्त श्यामा दूरसे दौड़ता हुआ आया; और बीबीसाहबाके पास आकर बोला, "अजी, अन्तमें वही हुआ,जो मुझे भय होरहा था। चोरोंने चारों ओर बड़ी चतुरतासे नाकेबन्दी कर रखी है, लेकिन उनमेंसे दो-एकको मैंने पैसेका लालच देकर मिला लिया है। अब चलिये आप, बहुत जल्द।" इतना कहकर उसने बड़ी सावधानीसे बुर्क़ा डाले रहनेके लिए, ख़ांसाहब—या बीबीसाहबा—को सचेत किया; और फिर दोनों वहांसे आगे चल दिये।

पैंसठवां परिच्छेद ।

इसके आगे ।

जैसाकि पिछले परिच्छेद्में बतलाया गया, श्यामा बीबी-साहबाको उन चोरोंकी बातें बतलाते हुए सूर्याजीकी छावनी-की सीमातक आया; फिर बीबीसाहबाको एक वृक्षके नीचे खड़ा करके ख़ुद दौड़ता दौड़ता गया; और वहां अपनी उस सम्पूर्ण कारस्तानीका समाचार देआया। जैसे किसी लड़केके हाथमें कोई नवीन ही खिलौना आजावे; और वह उसके कारण अपने पहलेके सभी खिलौनोंको भूल जावे—यही नहीं, बल्कि उसके मा-बापने यदि कोई काम बतलाया हो, तो वह उसको भी भूलकर अपने उसी नवीन खिलौनेके आनन्दमें मग्न हो-जावे—बस, ठीक ऐसा ही हाल उस समय श्यामाका होरहा था। जैसे किसी बिल्लीके बच्चेको कोई बड़ा चूहा मिल जाय; और फिर वह ख़ुश होकर उसको तोड़नेके लिए, उसके साथ लीलापूर्वक खेले—बस, ऐसा ही विचार श्यामाका उस समय दिखाई पड़ रहा था। उसने सोचा था कि, जो मुस-लमान हमारे पंजेमें पड़ गया है, उसका हम ख़ूब ही कौतुक कर सकेंगे; और जिस समय उसने ऐसा सोचा था, उसी समयसे उसका वह नन्हासा, पर बहुत ही चतुर और कावेबाज़ सिर,

नाना प्रकारकी युक्तियां निकाल रहा था; और अन्तमें यहांतक उसीने नौबत ला दी।

बहुत देरतक पैरोंको रगड़ते रहनेके बाद वे दोनों एक पहरेके पासतक आये। वहां आते ही श्यामा, जैसे बहुत ही घबड़ाया हुआसा कहता है, "अरे झुरुवा, अरे यह तो बहुत ही चग्घड़ दिखाई देता है, जान पड़ता है, हमारे कहनेमें नहीं आवेगा! देखो, क्या होता है! स्त्रियोंपर हाथ डालनेका हुकम नहीं है; परन्तु फिर भी क्या कहा जासकता है? आख़िर डाकू ही तो ठहरे!" यह कहकर, बहुत ही घबड़ाते हुए, वह चींटीकी चालसे चलने लगा। साथ ही साथ क्षण क्षणपर यह भी कहता जाता, "अरे! देखो तो, एकके दो होगये—अरे, दोके तीन होगये, चार-पांच-छै! अब इस रास्तेसे बचकर ही जाना चाहिए। कौन कह सकता है कि, इन छहोंमेंसे सभी भलेमानुस होंगे? कुछ बदमाश भी होंगे। न जाने क्या सन्देह करें! बड़े संकटका सामना है; पर आप घबड़ावें नहीं—खांसाहब, मैं आपको ज़रा भी तंग न होने दूंगा; और बिलकुल ठीक जगह-पर जाकर पहुँचा दूंगा। आप बिलकुल चिन्ता न करें।" इस प्रकार कहते हुए इधर उधर दौड़ दौड़कर जाता; और जैसे कुछ देखसा आता हो! यही हाल कुछ देरतक रहा; फिर ऐसा जान पड़ा कि, कोई डांटकर पूछ रहा है—"कौन हो तुम? कौन जारहा है? बोलते क्यों नहीं?" इन शब्दोंको सुनते ही श्यामा जैसे बिलकुल ही घबड़ासा गया; और कहता है, "अरे

बापरे ! जिस बातको मैं टाल रहा था, वही सामने आगई ! बीबीसाहबा—अरे हँ—ख़ांसाहब, अरे यह क्या हुआ ? यह तो एक बड़ी बला आगई ! अब क्या करूं जी ! और, मेरे मिलाये हुए आदमियोंमेंसे तो इनमें कोई दिखाई नहीं देता ! बड़ी मुशकिलकी बात हुई—अच्छा, देखो अब…"

श्यामा इतना कह ही रहा था कि, इतनेमें उपर्युक्त आदमी, जो घुड़ककर बोला था, बिलकुल समीप आगया; और श्यामाके कन्धेपर ज़ोरसे हाथ मारकर बोला, "क्योंरे, तू कौन है ? कहां जारहा है ?"

"ममम—मम मैं—बि बि बि बी…" श्यामा इतना घबड़ाकर चुप खड़ा रह गया, और आगे उसके मुँहसे एक अक्षर भी नहीं निकला। यह देखकर वह आदमी तुरन्त ही कहता है, "मम मैं, बि बि बि बी, यह क्या कहता है ? तुझे अच्छी तरह बोलना नहीं आता ? तू बीबी है—इसका अर्थ क्या है ? अरे, तू किसकी बीबी है ? बतला छोकरे…और (बीबी बने हुए ख़ांसाहबके पास जाकर) यह क्या स्वांग लाया है ? यह किसकी बीबी है ? क्या तेरी ? अरे वाहरे छोकरे ! बीबी तो तू ख़ूब लाया ! बहुत ही नन्हीसी बीबी लाया है !" यह कहकर वह बड़े ज़ोरसे हँसा; और उसका बोल सुनकर और भी दो-एक आदमी जो वहां थे, हँसते हुए आगये; और देखने लगे कि, क्या बात है। यहांतक कि, उनमेंसे एक तो बिलकुल बीबीसाहबाके पास ही जापहुंचा; और कहता क्या है—" बीबी क्या है—बिलकुल

कलेजा ही तोड़नेवाली है ! ” यह कहकर वह हँसा, इतनेमें एक दूसरा और भी आगे बढ़ा; और जैसे बीबीसाहबाको बिलकुल पकड़ना ही चाहता हो ! यह देखकर बीबीसाहबा, मुँहसे कुछ भी न बोलती हुई, क़दम क़दम पीछे हटने लगीं। अब, श्यामा बिलकुल पैंतड़े बदलकर, आगे आकर, कहता है, “ देखो जी, औरतको हाथ न लगाना—ख़बरदार ! मैं उनके साथ मौजूद हूं—जो कुछ कहना हो, मुझसे कहो। उनसे बोलनेका तुम्हारा क्या काम ? तुम्हारे वे कौन नायक या सूबेदार हैं—उनका क्या नाम है—सूर्याजी या नानासाहब—उनकी मेरी अच्छी जान-पहचान है। मैं उनसे जाकर तुम्हारा सब हाल कह दूंगा—तुम समझते क्या हो ? हां, तुम हमको क़ैद करना चाहते हो ? ख़ुशीसे करो। हम कहां इनकार करते हैं ? लेकिन अगर तुम शरीर-वरीरपर हाथ डालोगे, तो ख़बरदार—याद रखना ! यहां कोई नादिरशाही नहीं मची है—समझे !” क्या यह वही श्यामा है, जो पहले ‘ममम’, ‘बि बि बि बी’ करता था ? अब तो वह बीबीसाहबाके आगे होकर बड़ी डांटके साथ बोल रहा था, जैसे बीबीसाहबाकी रक्षाका सारा भार उसीके सिर हो !

वह उसकी चपलता और धृष्टता देखकर उन सिपाहियोंको बहुत ही हँसी आई; और उनमेंसे एक आगे बढ़कर कहता है, “ अरे वाहरे छोकरे ! वाह-वाह ! वाह-वाह ! बीबी तो तू अच्छी नन्हीसी लाया ! कब हुआ तेरा निकाह ? अरे—ऐ बच्चे, मुझे अपनी बीबीका मुखड़ा तो देखने दे ! ज़रा बुर्क़ा तो हटा;

और यदि तेरा हाथ न पहुँचे, तो मैं हटाऊं !......" यह कहते हुए वह आगे बढ़ा; और बीबीके कंधेपर हाथ डाला। यह देखते ही बीबीसाहबा हां—हां करती हुई पीछे हटने लगीं। इससे उस आदमीने और भी अधिक धृष्टता प्रकट की; और अपना हाथ बीबीके कन्धेसे नहीं हटाया। यह देखकर बीबीने उसके हाथमें एक ऐसा झटका दिया कि, जिसका कुछ कहना ही नहीं! फिर क्या पूछना है ?

"अजी वाहजी बीबी! बीबी तो ख़ूब ज़ोरदार दिखाई देती हैं!" यह कहते हुए सभी बीबीके आसपास जमा होगये; और मिलकर उनको ख़ूब तंग करने लगे। एकने एक कंधेपर हाथ डाला, दूसरेने दूसरे कंधेपर; और एक उनका बुर्क़ा निकालने लगा। श्यामा चिल्लाने लगा, "अरे यह क्या करते हो ? यह क्या करते हो ? औरतके शरीरपर हाथ डालते हो ? रोशनबीबीके शरीरको हाथ लगाते हो ! देखो, बीबीसाहबा कोई ऐसी-वैसी नहीं—बड़े ख़ानदानकी हैं। इनके ख़ांसाहब तुम्हारा सबका नाश कर देंगे"—इस प्रकार वह बराबर चिल्लाता रहा; पर उस बेचारेकी सुनता कौन है ? इधर बीबी साहबा बहुत ही बिगड़ीं; और इतनेमें एक सनकीने उनका बुर्क़ा भी मुँहसे हटा दिया। बीबीका सच्चा स्वरूप दिखाई दिया—यही नहीं, बल्कि उनके उस स्वरूपका अनुभव भी हुआ; क्योंकि एक आदमीको बीबीसाहबाने ऐसा भारी धक्का दिया कि, वह जाकर एक ओर लोटने लगा। पर, कह नहीं सकते किस कारणसे—

शायद श्यामाने ही इशारा कर दिया हो—उस आदमीने फिर कोई विशेष उपद्रव नहीं किया। हां, सिर्फ श्यामासे इतना ही पूछा, "अच्छा, बीबीसाहबाको हम जाने देते हैं; लेकिन वे जायँगी कहां ?"

श्यामाने चुपकेसे उसके कानमें बतलाया। फिर क्या था—लोग तुरन्त ही समझ गये; और बोले, "अच्छा, जाओ। लेकिन यह किसीसे मत कहना कि, हमारे पहरेसे आये।" यह कहकर आंखें मटकाते हुए उन सिपाहियोंने उनको जाने दिया। बीचमें और एक-दो जगह भी पहरोंपर बीबीसाहबाकी ऐसी ही दशा हुई; पर फिर श्यामा और बीबी, दोनों छावनीके अन्दर आगये; और आगे आगे ज्यों ज्यों वे पहरोंको पार करते हुए जाने लगे, त्यों त्यों श्यामा ख़ांसाहबको अधिकाधिक धैर्य और उत्साह दिलाने लगा—"देखिये, पहलेपहल जो पहरे पड़े, उन्हींके सिपाही बड़े दुष्ट और बदमाश हैं। अब उतनी कठिनाई नहीं पड़ रही है। अब एक पाव घंटेके अन्दर ही हम बिलकुल अन्तिम पहरेके पास पहुंचते हैं; और फिर जहां आप एक बार भीतर पहुंच गये कि,फिर आपका काम होनेमें देर नहीं। देखिये, कैसी ख़ूबीके साथ काम हुआ।" इस प्रकार श्यामा बराबर बड़-बड़ा रहा था;और ख़ांसाहब बेचारे अपने कियेपर पछता रहे थे। बार बार सोच रहे थे, "देखो, इस लड़केके चक्करमें आकर हम केवल अपनी सनकसे ऐसे गोलमालमें पड़ गये ! हमने यह बहुत ही बुरा काम किया ! अब देखना चाहिए, अन्ततक पहुंचनेमें

क्या क्या होता है! और मान लो, एक बार फ़तिमासे जाकर हमने भेंट ही कर ली; पर इससे हमारा उद्देश्य क्या सिद्ध हुआ? कुछ भी नहीं। ये चोर भी एक प्रकारके राजा ही दिखाई देते हैं। जगह जगह इनके सिपाही और सैनिक लगे हुए हैं—चौकी-पहरेका भी भारी इन्तज़ाम है! अब इनके बीचसे अपना काम सिद्ध करके हमको निकलना है—यह कोई छोटा-मोटा काम नहीं। चक्करमें आगये ज़रूर, पर अब देखना चाहिए, क्या होता है।" अस्तु। अन्तमें श्यामा ख़ांसाहबको अन्तिम पहरेपर लेआया; और वहां भी सब पहलेकासा ही फार्स (स्वांग) हुआ। परन्तु हां, इस फार्समें इतनी विशेषता रही कि, बीबीसाहबाका बुर्क़ा एकदम निकाल दिया गया; और अब उनके ऊपर सिर्फ दाऊद मियांकी औरतके ही कपड़े रह गये। उस पोशाकमें ख़ांसाहबको देखकर सिपाहियोंको बहुत ही कौतुक मालूम हुआ; और वे हँसते हँसते बिलकुल लोटपोट होगये। जो उठता, वही बीबीसाहबाके कपड़ोंमें हाथ लगाकर देखने लगता; और विनोदपूर्वक कहता कि, "वाह! क्या ही सुन्दर पोशाक है; और ये वस्त्र तो देखिये, कितने झीने और मुलायम हैं; और इस सुन्दरीके शरीरपर कितने अच्छे खिलते हैं!" इस प्रकार वे सिपाही लोग बराबर उन बीबीरूप ख़ांसाहबकी हँसी-दिल्लगी कर रहे थे कि, इतनेमें एक सिपाही उठा; और उनकी कमरसे, लिपट जानेके हेतुसे, अपना हाथ लगाया, तो उसको मालूम हुआ कि, इसकी कमरमें शस्त्रकी तरह कोई

कठोर वस्तु है। इधर इतनी देरकी हँसी-दिल्लगी और हैरानीके कारण ख़ांसाहब भी बहुत ही त्रस्त होगये थे; और अब तो कमरमें भी लिपटनेकी नौबत आगई ! हँसी-दिल्लगीका भी कुछ ठिकाना है ! ख़ांसाहब क्रोधके मारे जामेसे बाहर होगये; और अपने स्त्री-वेशमें छिपा रखी हुई एक भुजाली निकालकर उस कमरमें हाथ लगानेवाले सिपाहीकी ओर दौड़ पड़े। फिर क्या कहना है ? बातकी बातमें अन्य दो-चार सिपाही भी दौड़ पड़े; और ख़ांसाहबको पकड़ लिया, सभी बड़ी बुरी तरहसे उनपर टूट पड़े; और गालियां दे देकर उनके छिपे हुए सब अस्त्रशस्त्र निकाल लिये। चारों ओरसे उनपर हँसी-ठट्ठे और गालियोंकी बौछार होने लगी। कुछ देरतक इस प्रकार तंग करनेके बाद सिपाहियोंने यह विचार किया कि, इसको अब अपने स्वामी, अर्थात् सूर्याजी, के पास लेजाकर पेश करना चाहिए। परन्तु इतनेहीमें एक सिपाहीकी राय हुई कि, इसकी पोशाक तो यही रखनी चाहिए, लेकिन इस बदमाशने बुर्का डालकर जो अपनी दाढ़ी और मूँछोंको छिपा रखा था, सो अब उनको छिपानेकी आवश्यकता ही हम लोग दूर कर दें। पहले ही वह मुसलमान; और फिर औरतका भेष धरकर उस छावनीमें आया ! फिर क्या पूछना है—एक अच्छासा शिकार मराठोंके हाथ लगा। उपर्युक्त राय देनेभरकी देर थी, कि इतनेमें एक-दो आदमी नाईको बुलानेके लिए दौड़ पड़े। नाई आया। फिर चार-पांच मुचण्डोंने मिलकर ख़ांसाहबको पकड़ा; और उनकी

दाढ़ी तथा मूँछोंको उड़वा दिया। श्यामा पास ही खड़ा हुआ कह रहा था—"ख़ांसाहब, अजी क्या बतलावें, क्या करने गये थे; और क्या होगया! मैं यदि ऐसा जानता, तो आपको इस प्रकार कभी न लाता। लेकिन ख़ांसाहब, आप क्रोधमें आकर लोगोंपर दौड़े, इसीसे यह सब हुआ। आपने यह क्यों किया? अब, कहिये, इसमें मेरा क्या दोष? लेकिन, ख़ांसाहब, आपकी दाढ़ी-मूँछ चली गई, यह भी अच्छा ही हुआ—अब आपका स्वांग पूरा होगया! अब आप बिलकुल ही बीबीसाहबा बन गये!" यह कहकर वह बार बार हँसता हुआ और बनावटी खेद प्रदर्शित करता हुआ ख़ांसाहबके जलेपर नमक छिड़क रहा था। अस्तु। इस प्रकार जब ज़बरदस्ती उनकी दाढ़ी-मूँछ निकाल डाली गई, तब फिर, इसके बाद, सब सिपाहियोंने मिलकर उनको उठाया; और मुसकें बांधकर सूर्याजीके पास ले-चले। अपराध उनपर यह लगाया गया कि, यह व्यक्ति औरत-का भेष धरकर हमारी छावनीमें घुस आया; और चूंकि शस्त्र इत्यादि इसके पाससे बरामद हुए, इससे ऐसा जान पड़ता है कि, इसका उद्देश्य बहुत भयंकर था। अब ख़ांसाहबकी जो विडम्बना हुई, उसकी बात ही मत पूछिये। परन्तु हां, इतनी अभी अच्छाई थी, कि उनको किसीने अभीतक पहचाना नहीं था। कुछ देर बाद नानासाहब, जो वहीं-कहीं पास ही एक ओर बैठे थे, वह हँसी-ठट्ठेकी आवाज़ सुनकर उधरसे आ-निकले। देखते क्या हैं, सिपाही लोग एक व्यक्तिको औरतकी

पोशाकमें लिये जारहे हैं; और वह व्यक्ति उनकी बिलकुल पह-चानका था! नानासाहबको देखते ही बेचारे ख़ांसाहब मानो मुर्देसे भी ज़्यादा होगये। उनकी दशा बड़ी दयनीय दिखाई दी। गर्दन बिलकुल नीचेकी ओर झुक गई।

"अहमद ख़ां! ओ अहमद मियां!! वाह! आप औरत बनकर हमपर आशिक हुए; और हमारे पीछे पीछे आये? वाह! क्या कहना है! हमपर तुम्हारी इतनी मुहब्बत! ऐ मेरी जान अहमद बीबी! आपने इतनी दूर आनेकी तक़लीफ़ क्यों की—मैं तो ख़ुद ही आपके मालिककी मुलाक़ातको आनेवाला था। अच्छा, आगये, तो अच्छा ही हुआ। अब रहिये इसी रूपमें हमारी तैनातीमें!"

नानासाहबका यह कथन इतना मर्म-भेदक था कि, प्रत्यक्ष भाला लेकर यदि वे छेदनेको तैयार हुए होते, तो भी अहमदको उतना क्लेश न होता। परन्तु जिनको उसने नाना प्रकारसे कष्ट दिया था; और जिनको मार डालनेका कपट-व्यूह रचकर अपने उद्देश्यको पूर्ण करनेके लिये वह बिलकुल तैयार होगया था, उन्हींके सामने आज उसे इस रूपमें आकर खड़ा होना पड़ा; और उनके उपर्युक्त अपमानजनक शब्द उसे सुनने पड़े—इससे अधिक और दुःखकी बात उसके लिये क्या होसकती थी? पर क्या करता बेचारा! जो कुछ सामने आता जाय, उसको भोगते रहनेके अतिरिक्त उसके लिये और कोई चारा न था। नानासाहबने मनमाने अपमानजनक शब्द कहकर उसकी

खूब ही विडम्बना की; और फिर सूर्याजीको भी सब हाल बतलाया कि, इसी व्यक्तिने बीजापुरमें रहते समय मुझे इस इस प्रकार कष्ट दिया था। वह सब वृत्तान्त सुनकर सभी लोगोंको उसपर अत्यन्त क्रोध आया; और उसकी विडम्बनाकी कोई हद न रही। पर इतनेहीमें एक आदमीने आकर सूर्याजीको कोई ऐसा समाचार बतलाया, जिससे अहमद्‌की ओरसे उनका ध्यान हट गया; और उन्होंने उसके लिए सिर्फ़ इतना ही हुक्म दिया कि, "इसको अब इसी पोशाकमें रहने दिया जाय, इसकी पोशाक बदली न जाय; क्योंकि यदि मौक़ा आगया, तो इसको इसी पोशाकमें इसके मालिकके सामने पेश किया जायगा। जो व्यक्ति औरतकी पोशाक पहनकर घूम रहा है, उससे अब विशेष हँसी-दिल्लगी करने अथवा उसको पुरुष समझनेमें भी कोई विशेष तत्व नहीं। इसको ऐसा ही रखो।"

इतना कहकर सूर्याजी नानासाहबको एक ओर लेजाकर उन्हें कोई समाचार बतलाने लगे। अहमद्‌के मनमें अब सिर्फ़ यही एक बात रह गई थी कि, ख़ुदा करे, फ़तिमाके सामने मुझे इसी रूपमें जानेकी नौबत न आवे। पर बेचारेका नसीब उतना भारी न था; क्योंकि जो बात वह नहीं चाहता था, वही उसके सामने आई। सूर्याजीके आदमीने अभी हालहीमें जो समाचार आकर बतलाया था, वह यही था कि, उनके आदमियोंने और भी कुछ मुसलमान लोगोंको, लवाज़मेके साथ पकड़ा था। संयोगकी बात है—श्यामाने तो अपनी कल्पनासे

ही अहमदके प्रश्नोंका 'हां हां' करके उत्तर दिया था। वास्तवमें वह घटना उस समय हुई नहीं थी; पर अब उसकी वह कल्पना ही बिलकुल सच निकल गई—अर्थात् रणदुल्लाखांकी बहन और उसकी दासी फ़तिमा सुलतानगढ़ जानेके लिए उसी जगहसे निकल पड़ीं। सूर्याजीके आदमियोंने उनको रोका भी, पर नानासाहबकी प्रार्थनासे सूर्याजीने उनको प्रतिबन्धमें नहीं रखा; किन्तु वैसा ही जाने दिया—हां, उस थोड़े से समयमें भी इतना उन्होंने अवश्य किया कि, बेगमसाहबा और फ़तिमा-बीबीको अहमद मियांका वह स्त्री-रूप अवश्य दिखला दिया। उस दशामें अहमद्के मनकी क्या अवस्था हुई होगी, इसका पाठकगण ही अनुमान करें।

कुछ देरमें नानासाहब सूर्याजीसे बिदा होकर सुलतानगढ़की तरफ चल दिये; और वहां जाकर क़िलेके आस-पासके लोगोंसे मिले; तथा जो जानकारी उन्हें प्राप्त करनी थी, सो प्राप्त की; और जो प्रबन्ध उनको करना था, सो भी किया। इसके बाद वे लौटकर फिर सूर्याजीके पास आये; और अहमद्को सूर्याजीके ही अधिकारमें रखकर और जो कुछ सलाह सूर्याजीसे उनको करनी थी, सो करके फिर सासवड़ अर्थात् शिवाजीकी छावनी-की ओर चल पड़े।

छासठवां परिच्छेद ।

अप्पासाहब वापस आये ।

मुसलमानी बादशाहतमें कैसा कैसा अन्धेर मचा रहता था; और उस समयके प्रबन्धमें कितनी अस्थिरता रहती थी, इसकी आख्यायिकायें अब भी यत्र-तत्र सुनाई दिया करती हैं। एक बार एक हुक्म निकलता, तो दूसरी बार तुरन्त ही आधे घण्टे-में दूसरा हुक्म निकल जाता। एक बार कोई आदमी किसी कामके लिये नियुक्त किया जाता, तो दूसरी बार तुरन्त ही उसी दम उसकी नियुक्ति रद कर दीजाती; और उसकी जगहपर दूसरा ही आदमी उस कामपर भेज दिया जाता। कहते हैं कि, एक बार मुग़ल-बादशाहतमें किसी आदमीको तहसीलदार-की जगह मिली, तो वह अपने कामका चार्ज लेनेके लिये घोड़े-पर उलटा बैठकर जाने लगा—लोग पूछते कि, भाई, यह क्या बात है, तो वह कहता कि, मैं इस तरह बैठकर पीछेकी ओर देखता जाता हूं कि, मुझको निकालकर मेरी जगहपर जो आद-मी नियुक्त किया गया होगा, वह पीछेसे आ तो नहीं रहा है! इस प्रकारकी, उस ज़मानेकी, अनेक आख्यायिकायें बुज़ुर्ग लोग सुनाया करते हैं। अस्तु। जिस समयकी हम यह कथा लिख रहे हैं, उस समय भी यही हालत थी। पाठकोंको स्मरण होगा कि, अप्पासाहबको अधिक अधिकार इत्यादि प्रदान करके

फिरसे सुलतानगढ़पर उनकी नियुक्ति कीगई थी; किन्तु परोसी हुई थालीमें मक्खी टूट पड़ी! बेचारे अप्पासाहबके हाथमें हुक्मनामा आये अभी बहुत देर नहीं हुई थी, वे अपने ठहरनेके स्थानको लौटे ही थे; और सुलतानगढ़ चलनेकी तैयारीमें थे कि, इतनेमें एक ही दो दिनके बीचमें उनको फिर यह हुक्म मिला कि, "अभी आप यहांसे रवाना न हों।" कारण क्या? सो अप्पासाहबको क्या मालूम? बेचारे उनके अधिकारमें—हुक्म माननेको लाचार थे। दो दिन होगये। चार दिन होगये। उनको कुछ भी ख़बर नहीं। बेचारे बड़े दुःखी हुए। हां, रणदुल्लाख़ांने आकर उनसे दो-चार समाधानकी बातें अवश्य कीं; पर उन बातोंसे अप्पासाहबको शायद ही कुछ सन्तोष हुआ हो! उन्होंने सोचा कि, हम जितनी राजभक्तिके साथ बादशाहकी सेवा करते हैं, उतनी सारी राजभक्ति बादशाहके यहां बिलकुल ही व्यर्थ जाती है। इससे तो यही अच्छा होगा कि, हम काशीजी जाकर वहां अपने आनन्दसे श्रीविश्वनाथ-जीके सामने बैठकर भगवद्‌भजन करते रहें। जिस राजाके यहां अपने मानी नौकरोंकी कुछ भी क़द्र नहीं, उसकी नौकरी कर-नेसे क्या लाभ? हां, एक बार स्वीकार कर ली, सो करते भले ही रहें! सच पूछिये, तो ऐसी नौकरीको इससे पहले ही नमस्कार करना चाहिए था। इस प्रकारके विचार एक बार अप्पासाहबके मनमें भी आये बिना नहीं रहें; पर वृद्ध अप्पा-साहबकी हड्डी हड्डीमें राजभक्तिकी बू लड़कपनसे ही समाई हुई

थीं, अतएव उन्होंने उपर्युक्त विचारोंको अपने मनमें बहुत देर-तक स्थान नहीं दिया। परन्तु हां, उनका बीजारोपण एक बार अवश्य होगया। इसके बाद एक दिन बैठे हुए वे मन ही मन यह विचार कर रहे थे कि, अब आगे क्या करना चाहिए। इतनेमें सरदार रणदुल्लाख़ां वहां आपहुँचा। उस समय अप्पासाहबका मन बहुत ही खिन्न होरहा था। बार बार वे यही सोच रहे थे कि, जो स्वामी हमारे समान सेवककी कुछ भी क़द्र न करे, उसकी नौकरी हम क्यों करें? सच तो यह है कि, हमारे समान व्यक्तिकी सेवाकी इस दरबारमें कोई क़द्र हो ही नहीं सकती; और हम ही क्या, किसी भी सच्चे व्यक्तिकी नौकरीकी यहां यही दशा होगी। बस, इसी प्रकारके विचार उनके मनमें बारम्बार आरहे थे; और उनका मन बहुत ही उद्विग्न होरहा था। इतनेमें ज्यों ही रणदुल्लाख़ां आगया, त्यों ही उनके वे विचार, जो अभीतक भीतर ही भीतर दबे हुए थे, बाहर प्रकट होनेपर आगये। क्योंकि रण-दुल्लाख़ांपर उनका बड़ा विश्वास था। उनका यह सदैवका ख़याल था कि, इस दरबारमें यदि कोई हमारा सच्चा हितैषी है; और जो हमारे समान व्यक्तिकी पूरा पूरी प्रतिष्ठा कर सकता है, तो वह केवल रणदुल्लाख़ां ही है। और बस, इसी-कारण उन्होंने उस समय अपने हृदयको खोलकर सब बातें उसके सामने कह देनेका निश्चय किया। उन्होंने कहा—"बस, होचुका। जितनी सेवा मुझसे हुई, उतनी ही काफी है। अब

इस संसारमें मेरी कोई भी इच्छा बाक़ी नहीं रह गई है। और न अब मैं क़िलेपर ही जानेकी कोई इच्छा अपने मनमें रखता हूं। अब मैं काशीजी चला जाऊंगा; और वहीं श्रीविश्वनाथ-जीकी सेवामें अपना शेष जीवन बिताऊंगा। मेरे न कोई लड़का, न बाला! लड़का था, किन्तु मैं समझता हूं कि, अब वह मर गया। इसलिये ख़ांसाहब, बस, अब आप इतनी ही कृपा कीजिये कि, जिससे एक बार किसी न किसी प्रकार बाद-शाहसे मेरी फिर मुलाक़ात होजाय, जिससे मैं हुज़ूरके क़दमोंमें सब बातें अर्ज़ कर दूं। अब परसों, जो हुक्म मेरे हाथमें आया है, उसको हुज़ूरके क़दमोंपर रखकर और उनको आख़िरी सलाम करके, मैं तुरन्त काशीजीको चला जाऊंगा। अब मुझे कोई आशा नहीं कि, मेरी सेवाकी यहां कुछ भी क़द्र होगी।"

बुड्ढेके ये शब्द बिलकुल हृदयसे निकले थे, अतएव रण-दुल्लाख़ांको भी उसपर बड़ा तरस आया। सच पूछिये, तो आज वह भी उनके पास इसी विषयमें कुछ बातचीत करने आया था। अप्पासाहबके उपर्युक्त उद्गार सुनकर कुछ देर तो वह वैसा ही चुप बैठा रहा; पर फिर उनसे बोला, "देखिये, अप्पासाहब, इस समय दरबारकी हालत कुछ बहुत ही विचित्र होरही है। वह कहांतक विचित्र होरही है, इसकी आप कल्पना भी नहीं कर सकते। मैं भी अब यहां रहनेसे उद्विग्न होरहा हूं। मुरारसाहब भी मुझसे ऐसी ही कुछ बातें करते थे। लेकिन अन्तमें फिर उन्होंने कहा कि,

"भैया, जबतक ईमानके साथ रहकर हम बादशाहके हितके लिये उसकी सेवा कर सकते हैं, तबतक तो अवश्य ही करेंगे। जबतक हम देखते हैं कि, हुज़ूरके बदमाश अर्दली-वर्दली हमारे प्रत्यक्ष राजकाजमें हस्तक्षेप नहीं कर सकते, तबतक हम इस प्रकारका कोई भी विचार स्वप्नमें भी मनमें नहीं लासकते। और जिस दिन फिर ऐसी दशा आजायगी कि, हमारे हाथसे तो कुछ हो नहीं सकेगा; और वह दशा भी हमसे देखी न जायगी, तब फिर जो कुछ विचार करना होगा, देखा जायगा।" बाहरसे तो सारे संसारको आज यही मालूम होरहा है कि, सारा राजकाज मुरारसाहब और रणदुल्लाख़ांकी ही सलाहसे होरहा है। उनकी सलाहके बिना बादशाह हूं अथवा चूं भी नहीं करता। और कुछ अंशमें यह बात अब भी सच ही है। परन्तु, हां, दिन दिन अब इसमें कमी ही होरही है। गत दो-चार दिनोंसे तो दशा अत्यन्त चिन्ताजनक होरही है। मेहरजान बहुत बीमार है। और......"

रणदुल्लाख़ां आगे और भी कुछ कहनेवाला था; पर फिर सोचने लगा कि, अब आगे कहूं या न कहूं; और वह बात उसने फिर वहीं छोड़ दी। अप्पासाहबका ध्यान पूरा पूरा उसकी बातोंकी ओर था, अथवा नहीं, कुछ कहा नहीं जासकता। हां, रणदुल्लाख़ांका पहलेपहलका कथन—विशेषतः वह कथन, जो उसने मुरारपन्तका बतलाया—सुनकर तो मानो उनका मन बहुत ही विचारमग्न होगया। रणदुल्लाख़ां-

का अगला कथन शायद ही उनके कानोंमें पड़ा हो। अतएव वे बीचहीमें रणदुल्लाख़ांसे बोल उठे, "हां, मुरारसाहबने जो कुछ कहा, वह अक्षरशः सत्य है। ईमानदार नौकरों-का यही व्रत है। जबतक हमारे हाथसे नौकरी होसके—जब-तक मालिक स्पष्ट न कह दे कि, अब तुम्हारी नौकरीकी हमें आवश्यकता नहीं—और जबतक हमारे मनको यह विश्वास रहे कि, हम कुछ भी अपने स्वामीका हित कर सकते हैं, तबतक अपनी तरफसे स्वामिसेवा छोड़नी न चाहिए। लेकिन हां, एक बात है, जब स्वामी सेवा भी नहीं करने देता; और न यही कहता है कि, तुम्हारी सेवाकी आवश्यकता नहीं, तब हमारे समान नौकरोंकी बड़ी दुर्गति होती है—या तो यही कहकर छुट्टी दो कि, भाई, अब आगे तुम्हारी नौकरीकी हमको ज़रूरत नहीं, अथवा हमारे हाथसे पूरी पूरी सेवा ही लो—लेकिन यह कौनसी बात है कि, न इधरमें रखा जाय; और न उधरमें?"

अप्पासाहबके इस कथनका रणदुल्लाख़ांने भी अनुमोदन किया, सो कहनेकी आवश्यकता ही नहीं। लेकिन अन्तमें उसने इतना कहा कि, "आप बिलकुल निराश न होजावें। एक बार मैं आपके लिए फिर प्रयत्न करता हूं; और आपको यहांसे भिजवानेका प्रबन्ध करता हूं।" यह कह रणदुल्लाख़ांने उनका समाधान किया; और फिर यह भी कहा कि, "मेहरजान सुल-तानगढ़पर कुछ दिनके लिए रहना चाहती है। आप वहां उसका प्रबन्ध रखें। उसको यहांसे भेजनेमें दो उद्देश्य सिद्ध होंगे—एक

तो उसकी इच्छाकी पूर्ति और दूसरा भी ऐसा ही कुछ कारण है।"

उस कारणको जाननेकी इच्छा अप्पासाहबको थी; पर उन्होंने जान-बूझकर इस विषयमें पूछना उचित नहीं समझा। हां, अपने मनमें तर्क-वितर्क बहुतसे करते रहे।

रणदुल्लाख़ांने उस विषयमें कुछ कहनेका दो-चार बार विचार किया; और कुछ बार तो उस विषयके शब्द उसके होंठों-तक आगये होंगे; पर अन्तमें न जाने क्या सोचकर वह कुछ कह नहीं सका। हां, अन्तमें इतना ही उसने कहा कि, "आप-का छुटकारा चाहे यहांसे शीघ्रतापूर्वक न भी हो, तो भी मेहर-जानको वहां भेजनेका मेरा विचार है। कहिये, सब प्रबन्ध होजायगा न?" अप्पासाहबने कहा—"हां।" इसके सिवाय वे और कह ही क्या सकते थे?

रणदुल्लाख़ां मेहरजानको सुलतानगढ़पर भेजना चाहता था, इसमें मेहरजानकी इच्छा तो मुख्य ही थी, इसके अतिरिक्त, ऐसा जान पड़ता है कि, और भी कोई उससे भी विशेष प्रबल कारण था। क्योंकि रणदुल्लाख़ांने अपने कहनेके अनुसार, आगे चलकर चार ही पांच दिनमें, उसे वहांके लिए रवाना भी कर दिया। इसके चार दिन बाद, कर्म-धर्म-संयोगसे, अप्पा-साहबको भी एक प्रकारसे स्थायी हुक्म मिल गया कि, वे सुलतानगढ़पर पहुँचकर फिर अपनी क़िलेदारीके अधिकार अपने हाथमें लेलेवें। अप्पासाहबने भी सोचा कि, अब

शीघ्रता ही करनी चाहिए—शुभं च शीघ्रं—और इसलिए उन्हों-ने शीघ्र ही अब बीजापुरसे अपना बोरिया-बँधना समेटा! इसके बाद मंज़िल-दर-मंज़िल तय करते हुए वे उचित समयपर सुलतानगढ़ आपहुँचे। अप्पासाहबके वहां पहुँचनेके कोई पांच ही छै दिन पहले नानासाहब सुलतानगढ़ पहुँचे थे। वहां सब अपना ठीकठाक जमाकर वे सासवड़की ओर शिवा-जीकी सेवामें वहांका सब समाचार बतलानेको गये; और अगली तैयारीके विषयमें उनको सूचना दी। आसपासके लोगोंको फोड़कर अपनेमें मिलानेका सारा कार्य सूर्याजीने स्वीकार किया था; और तदनुसार वे अपने प्रयत्नमें संलग्न भी होगये थे। अप्पासाहब जब लौटकर सुलतानगढ़पर आये, तब एक बार अवश्य ही उनके मनमें यह आया कि, अब शायद हमारे कार्यमें कुछ बाधा उपस्थित हो; पर जब उन्होंने इस विषयपर अच्छी तरह विचार किया, तब उनको ऐसा मालूम हुआ कि, अप्पासाहबका आजाना एक प्रकारसे अच्छा ही हुआ। एक बार उनके मनमें यह शंका तो अवश्य आई कि, जिन जिन लोगोंने हमको अनुकूलता दिखाई है, वे वे लोग शायद अब अप्पासाहबके आजानेसे फिर निकल जायं—यह नहीं कि, ऐसी शंका सूर्याजीके मनमें न आई हो; पर सूर्याजी भी एक खासे राजनीतिज्ञ पुरुष थे, अतएव उन्होंने, उस झोपड़ी-वाले बुड्ढेकी सलाहसे, इस बातका पूरा पूरा विचार कर रखा था कि, अब अप्पासाहबके आजानेसे जो परिस्थिति उत्पन्न

होगी, उसपर क्या क्या योजना की जाय; अपनी कार्यव्यव-स्थामें क्या क्या परिवर्तन किये जायं। लेकिन हां, उ यह विचार अवश्य किया कि, अप्पासाहबके आनेका समाचार नानासाहबके पास भेजना ठीक न होगा; और अपने इसी विचारके अनुसार उन्होंने कार्य भी किया, अर्थात् इधरके इस समाचारका पता उन्हें नहीं लगने दिया। अप्पासाहब जब क़िलेपर पहुंच गये, तब अनेक लोगोंको बहुत आनन्द हुआ। अप्पासाहबका शासन ज़रा कठोर था; पर उनका व्यव-हार चूंकि बहुत ही सच्चा था, अतएव जैसा लोगोंपर उन-का प्रभाव था, वैसा ही लोगोंका उनपर प्रेम भी था। सूर्याजीने उस झोपड़ीवाले वृद्ध महाशयकी सलाह लेकर यदि चातुर्यसे काम न लिया होता, तो बहुत लोग निकल गये होते। लेकिन सूर्याजीने यह प्रकट किया कि, देखो, हम जो कुछ करनेवाले हैं, अप्पासाहबकी इसमें भीतरसे पूर्ण मदद है। यह सभी जानते हैं कि, अभी थोड़े दिन पहले उनका कितना बड़ा भारी अपमान किया गया, उनको क़ैद करके बीजापुर लेगये; और वहां पहरे-में उनको रखा, इन सब बातोंके कारण उनको बड़ा दुःख है; और इसीकारण हम कहते हैं कि, इस प्रकारका प्रयत्न यदि हम लोग करेंगे, तो इसके लिए अप्पासाहबका पूर्ण अनुमोदन मिलेगा। इतना ही नहीं, बल्कि सूर्याजीने किसी किसीसे तो यह भी कह दिया कि, ऐसा करनेके लिए असली सम्मति तो अप्पासाहबने ही दी है। इस कारस्तानीसे उनको कहांतक

लाभ होगा, अथवा न होगा, यह जाननेके लिए उस समय कोई साधन तो था ही नहीं; और मान लो कि, कुछ लोगोंको मालूम भी होजाता कि, ऐसा करनेसे इतना लाभ होगा, अथवा हुआ, तो ऐसे लोग बहुत थोड़े थे; और सो भी ऐसे थे कि, जो सूर्याजीके समान, यवनोंके अत्याचारोंसे कष्ट पाचुके थे; और उनके लिए वह बात अनिष्ट न थी।

नानासाहबको गये लगभग पन्द्रह दिन होगये। इधर अप्पासाहब सुलतानगढ़पर आये; और पहलेकी तरह अपना सब ठीकठाक किया। इसके दो ही चार दिन बाद एक दिन एक तरुण पुरुष, घोड़ेपर सवार, मुसल्मानी पोशाक पहने (उस समय मराठों और मुसल्मानोंकी पोशाकमें कोई बहुत अन्तर नहीं था, अथवा यों कहिये कि, उनमें बिलकुल ही अन्तर न था) सुलतानगढ़के पास ही नाईगाँवमें आया। वहां आकर गाँवकी सरहद्पर एक शिवालयके पास उसने अपने घोड़ेको विश्राम दिया; और स्वयं बस्तीमें इस विचारसे आया कि, कहीं द्रव्य देकर यदि कुछ भोजनका प्रबन्ध होजाय, तो करना चाहिए। चलते चलते वह एक ऐसे घरपर पहुंचा कि, जिसमें सिर्फ दो स्त्रियां दिखाई दीं; और वहां जाकर उसने अन्य स्थानों-कीही तरह अपना प्रश्न उपस्थित किया, जिसे सुनकर एक स्त्रीने उससे कहा, "भैया, जो कुछ रूखा-सूखा हमारे पास है, सो हम तुमको देंगी, लेकिन उसके लिए द्रव्य हम नहीं लेसकतीं। हम ग़रीब आदमी हैं, लेकिन यह नहीं चाहतीं कि, दो दिनके लिए

यदि कोई अभ्यागत हमारे यहां आजावे, तो उससे हम भोजनके लिए द्रव्य लेलेवें। और फिर तुम तो किसी कुलीन सरदार घरानेके राजकुमारसे दिखाई देते हो, तुमको जो भोजन दिया जायगा; और ऐसे कठिनाईके मौक़ेपर, सो कभी व्यर्थ नहीं जायगा। घड़ी-दो घड़ी बैठ जाओ, मैं रसोईं बना लूं; और फिर तुमको भोजन कराऊं।"

उस स्त्रीका यह कथन सुनकर वह तरुण महाशय बहुत चकित हुआ। परन्तु वह समय उसके लिए केवल चकित होनेका ही नहीं था, अतएव उस देवीके सम्मुख कृतज्ञता प्रकट करके उसने कहा, "अच्छा, बाई, मैं अपने घोड़ेको, जो गाँवके बाहर मन्दिरके पास बँधा है, चारा-दाना देकर अभी वापस आता हूं।"

उस स्त्रीने जब यह सुना कि, घोड़ा गाँवके बाहर बँधा है, तब उसे कुछ आश्चर्यसा हुआ। इसके बाद फिर वह अपने ही आप पहले कुछ गुनगुनाई; और फिर प्रकट उससे कहती है, "भैया, तुम ऐसा क्यों करते हो, कि एक जगह घोड़ा बँधा रहे; और एक जगह तुम रहो। तुम किसी बड़े आदमीके लड़के मालूम होते हो, सो तुमको यदि अभी हालहीमें रहनेके लिए कहीं कुछ कठिनाई हो, तो घोड़ेको भी यहीं क्यों न लेआओ; और उधर पड़छीमें बांध दो, तुम चबूतरेपर सो रहना। हम घरमें दो ही बहनें हैं; और एक हमारी मौसी है।"

सड़सठवां परिच्छेद ।

नवीन आदमी ।

उस युवा पुरुषने एकदम उस आमंत्रणको स्वीकार कर लिया, जिससे ऐसा जान पड़ा, मानो वह ऐसे किसी आमंत्रणकी प्रतीक्षा ही कर रहा था। उसने तुरन्त ही उत्तर दिया कि, "अच्छा, यदि तुमको कोई तक़लीफ़ न हो, तो मैं आजाऊंगा। मुझे सुभीता ज़रूर होगा।" इतना कहकर वह जल्दी ही अपना घोड़ा लाने चला गया। इधर वह स्त्री अब यह सोचने लगी कि, "देखो, हमने यह कैसा अविचारका काम किया! हमारे घरमें इस समय एक ऐसा व्यक्ति रहता है, जोकि बिलकुल अज्ञातवासमें है; और ऐसा होनेपर भी हमने एक नवीन आदमीको, एकबारगी, अपने घरमें रहनेकी अनुमति देदी! यह भी नहीं पूछा कि, वह कौन है, कहांसे आया है। यह काम अच्छा नहीं हुआ। और हमारे हाथसे तो ऐसा अविचार कभी नहीं हुआ, न जाने आज कैसे होगया! हम उस व्यक्तिकी तेजस्विता देखकर ही भूल गईं।" इस प्रकार सोच सोचकर मानो वह स्त्री अब इसी बातका विचार कर रही थी कि, इस भूलसे बचनेका अब कौन उपाय निकालूं। परन्तु इतनेमें वह नवपरिचित व्यक्ति अपना घोड़ा लेकर वहां आ ही पहुँचा; और इसलिए, मानो उस स्त्रीको आप ही आप यह उत्तर मिल गया,

कि, "नहीं, अब कुछ नहीं होसकता।" इसके सिवाय उस युवा पुरुषका चेहरा ही कुछ ऐसा था कि, उसे देखते ही उस स्त्रीका उपर्युक्त पश्चात्ताप भी कम होगया। वह बाई ऐसी नहीं थी कि, एक बार कहकर फिर बदल जावे। इसलिए तुरन्त ही उसने घोड़ा बांधनेके लिए जगह बतला दी; और चौपालमें बैठनेके लिए उस युवा पुरुषसे कहा। इसके बाद आप रसोई बनानेके लिए भीतर चली गई। वह युवा पुरुष अकेला ही बाहर बैठा हुआ, यह सोच सोचकर आनन्दितसा होरहा था कि, "अच्छा हुआ, यहांतक तो सब बात जम गई।" उसने सोचा कि, हम जिस कामके लिए इस ओर अकेले आये हैं, वह काम अब हमारा ठीक तौरसे होजायगा। कुछ देर बाद उस स्त्रीने भोजनके लिए उसे भीतर बुलाया; और वह तुरन्त ही उठकर भीतर चला भी गया। पर भीतर प्रवेश करते समय एक ऐसी बात हुई कि, जिससे वह पुरुष अत्यन्त विचारमग्न होगया। वह भीतर गया कि, इतनेमें एक स्त्री, मानो उसकी नज़र बचानेके लिए ही, एकदम अपनी जगहसे उठकर भीतरकी एक कोठरीमें घुस गई। युवाकी नज़रोंमें उस स्त्रीकी एक झलकमात्र दिखाई पड़ी; पर इतनेहीसे, न जाने क्या सोचकर, वह अत्यन्त विचारमग्न होगया। जिस स्त्रीको उसने देखा, उसका लुगड़ा उसके सौन्दर्यको शोभा देनेयोग्य न था, इसके सिवाय उसे यह भी विश्वास हुआ कि, यह स्त्री जिस स्थानमें इस समय मौजूद है, वहांकी यह रहनेवाली भी नहीं। परन्तु

फिर इस बातपर उसने और कोई विशेष विचार नहीं किया; और भोजनके लिए बैठ गया। यथारुचि भोजन होजानेपर वह बाहर आया; और अपने अभीष्ट कार्यके विषयमें, अथवा जो बातें उसने अभी देखी थीं, उनके विषयमें, विचार करता हुआ लेट गया। ऐसा मालूम हुआ कि, उस समय उसके मनमें नानाप्रकारके विचार आरहे थे। कुछ देर बाद उसको नींदसी मालूम होने लगी; और अब उसकी आंख लगनेही-वाली थी कि, ये शब्द, किसीके, उसके कानोंमें पड़े—"ऐसा ही था, तो मुझ अकेलीको यहां छोड़कर आप शहाजीके लड़केके गुटमें शामिल होनेके लिए काहेको चले गये? मुझको भी ले-जाना था। पहले ही इस बातका विचार कर लेते कि, मेरे बाद मेरी स्त्रीका क्या होगा, वह क्या करेगी, इत्यादि।"

"हां, ठीक ही है!" एक दूसरी स्त्री—शायद वही जिसने उस युवाको ठहरनेके लिए जगह दी थी—कहती है, "अपनी स्त्रीकी इज़्ज़त रखनेके लिए यहां तो रहा नहीं; और कहता है कि, धर्मरक्षाके लिए और स्वराज्य स्थापित करनेके लिए शहाजीके बाग़ी लड़केके पास जाऊंगा!"

फिर पहली स्त्रीके शब्द सुनाई दिये:—

"आप अब इधर आनेवाले भी हैं—देखती हूं, क्या क्या चमत्कार होता है! जिस स्त्रीको बिलकुल तुच्छ समझकर छोड़ दिया है, वह स्त्री ही अब बराबरीमें सामने खड़ी होकर युद्ध करेगी; और तब सब हाल मालूम होजायगा।"

इसके बाद भी और कुछ बातचीत होती रही; पर वह इतनी धीमी और अस्पष्ट आवाज़में हुई कि,उस युवाके कानतक नहीं पहुँची, किन्तु ऐसा जान पड़ा कि, जितना कुछ उसने सुना था, उसको विचारनिमग्न करनेके लिए उतना ही काफी था। उसकी नींद उड़ गई; और अब वह इस विचारमें पड़ा कि, मैं यहां, कहां आकर, किसके यहां ठहरा हूं; और ये लोग कौन हैं। इस बातपर कुछ देर सोच-विचार करनेके बाद फिर उसने निश्चय किया कि, दूसरे दिन हम इसका पता लगावेंगे; और उन विचारोंको फिर उसने वहीं छोड़ दिया। शायद मन ही मन उसने इस विषयमें कुछ अनुमान भी कर लिया; और ऐसा जान पड़ा कि, उस अनुमानसे उसे सन्तोष भी हुआ।

दूसरे दिन उसने घरकी मालकिनसे कहा कि, मैं अब किसी कामके लिए बाहर जाता हूं; और शामको फिर आऊंगा। यह कहकर वह वहाँसे विदा हुआ; और सचमुच ही फिर शामतक उसके दर्शन नहीं हुए। कई लोगोंने उस दिन उसे सुलतान-गढ़के आसपास घूमते हुए देखा; और प्रत्येकने अपने अपने मनमें यह तर्क भी किया कि, न जाने यह कौन आया है; परन्तु अन्तमें सभीने यह कहकर कि, "होगा कोई!" उसकी ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। बात यह थी कि, वे सब लोग उस समय अप्पासाहबके फिरसे आजानेपर ख़ूब आनन्दमग्न होरहे थे; और ऐसी दशामें कोई अन्य आदमी आकर यदि वहां कुछ

कर भी जाता, तो उसकी ओर कोई विशेष ध्यान जानेकी सम्भावना नहीं थी। संध्याकाल होते ही वह महाशय फिर अपने पूर्वस्थानपर आगया; और पिछली रातकी भांति ही अपने घोड़ेको चारा-दाना देकर और उस बाईके यहां रसोई जीमकर, कम्बल बिछाकर पड़ रहा। इसके बाद, आधीरातके लगभग वह बहुत ही चुपकेसे, जिससे किसीको उसके पैरोंकी भी आहट न मिले, वहांसे चल दिया; और फिर क़िलेके पास आकर उसके चारों ओर परिक्रमा की। दिनको उसने जिस ढङ्गसे क़िलेका निरीक्षण किया था, उसकी अपेक्षा इस समय-का उसका निरीक्षण बिलकुल निराला था। कह नहीं सकते--किस कारणसे—चाहे अन्धेरेके कारणसे हो; और चाहे अन्य किसी कारणसे—उसने इस बार बहुत ही बारीकीके साथ उसका निरीक्षण किया। लगभग दो-तीन घंटेतक चारों ओर-घूमकर—किसीको आहट न लगने देते हुए—उसने क़िलेका निरीक्षण किया; और अभी अच्छी तरह तड़का नहीं होने पाया था कि, इतनेमें फिर वह अपनी उसी ठहरनेकी जगहपर आकर लेट रहा। वह आकर लेटा नहीं कि, इतनेमें घरकी मालकिन यह देखनेके लिए बाहर निकली कि, अभी और कितनी रात है। देखती क्या है कि, उसका मेहमान जग रहा है; अत-एव उसने पूछा कि, "क्या आज रातको तुमको नींद नहीं आई? अब कितनी रात और है?" उस महाशयने कोई ढोंग इत्यादि न दिखलाते हुए उस स्त्रीके प्रश्नोंका ढंगसे सरल उत्तर देदिया;

और अब वह स्त्री भीतर लौटकर जानेहीवाली थी कि, इतनेमें वह कहता है, "बाई, मैं दो दिन तुम्हारे घरमें रहा। तुमने लड़केकी तरह मेरा सब प्रबन्ध रखा। इसके लिए मैं तुम्हारा अत्यन्त कृतज्ञ हूं। ऐसे मनुष्य बहुत थोड़े हैं, जो इस प्रकार किसी बाहरी आदमीको अपने घरमें आश्रय देकर उसका सब प्रकारका प्रबन्ध रखें। अब मैं आज अपने घर चला जाऊंगा। मेरा काम सारा होगया। हां, दो-एक बातें तुमसे पूछनी हैं; यदि आज्ञा हो, तो पूछूं।"

उसका यह अत्यन्त विनयपूर्ण भाषण सुनकर उस स्त्रीको आश्चर्य हुआ; और शीघ्रतापूर्वक वह पीछे लौटकर उसके पास आकर कहती है, "भैया, पूछो। जो बतलाने लायक बात होगी, तो बतलाऊंगी।" इस प्रकारका सरल उत्तर पाकर वह महाशय क्षणभरके लिए चुप होरहा, फिर तुरन्त ही कहता है, "बाई, तुम और कमसे कम तुम्हारे घरमें जो कोई दिखाई देते हैं, वे वैसे नहीं हैं, जैसेकि दिखाई देते हैं। यह क्या बात है? यदि कोई संकट आया हो, तो क्या मैं कोई सहायता कर सकता हूं? यदि मेरे योग्य कार्य हो, तो बतलाओ। बस, इतना ही मैं तुमसे पूछना चाहता हूं।" यह उसका विचित्र प्रश्न सुनकर वह स्त्री पहले अपने आप ही कुछ गुनगुनाई; और फिर बोली, "भैया, मैं नहीं जानती कि, तुम कौन हो, कहांसे आये हो; और न तुम ही जानते हो कि, हम कौन हैं। ऐसी दशामें तुमको सब बातें बतलानेमें क्या लाभ? इससे तो नहीं बतलाया जाय,

यही अच्छा। हां, इतना मैं अवश्य कह सकती हूं कि, मेरे घरमें जिसको तुमने देखा है, वह सचमुच ही वैसी कोई नहीं है। मेरी मालकिन सिर्फ संकटके ही कारण इस अवस्थामें रह रही है—उसके पतिने बिना कारण ही उसको कटुवचन कहकर छोड़ दिया है; और इसीकारण उसे अज्ञातवासमें—एक तरहसे वनवासमें ही—आकर रहना पड़ा है। इससे अधिक और इस विषयमें क्या बतलाऊँ? हां, इतना तुम करना कि, जब यहांसे तुम जाओ, तो इस बातका कृपा करके कहीं ज़िक्र मत करना। मुझे दृढ़ विश्वास है कि, सत्यकी विजय अवश्य होगी; और जिस मुँहसे नाना (जीभ दबाकर) मेरे मालिकने बाईसाहबाको तुच्छ बतलाकर इस दशामें ला रखा है, उसी मुखसे मैं उनके इस कृतकर्मके लिए उनसे क्षमा मँगवाऊंगी।"

उस बाईने इतना ही कहा था कि, भीतरसे आवाज़ आती है—"क्यों री, यह क्या? यह तू क्या कह रही है? अपने आपेमें तू क्यों नहीं है?" ये शब्द सुनते ही वह वहांसे चल दी। लेकिन वह महाशय उससे और कुछ देर ठहरनेकी प्रार्थना करके उससे कहता है, "बाई, मैं यहां अपने आनेकी निशानीके तौरपर तुमको यह एक छोटीसी थैली दिये जाता हूं। इसको तुम अपने पास रखो। अब आगे यदि मुझसे तुम्हारी कहीं मुलाक़ात होजाय, तो पहचान मत भूलना। मुझे तुम अपने भाईके समान समझो; और अपनी मालकिनके उस

अपमानको दूर करनेके लिए तुमने जो निश्चय किया है, उसमें मेरे हाथसे भी तुमको पूर्ण सहायता मिलेगी, इसका तुम विश्वास रखो। बस, अब मैं जाता हूं।"

इतना कहकर उसने एक छोटीसी थैली उसके आगे रख दी। वह उसके लिए कुछ 'हां' या 'नाहीं' करनेवाली थी; पर इतनेमें वह युवक एकदम पड़छीमें अपने घोड़ेके पास जाकर खड़ा होगया। इसके बाद फिर मानो एकदम उसके मनमें कोई बात आई; और वह लौट आया, तथा उस स्त्रीसे धीरेसे बोला, "बाई, तुमने अब मुझे अपने भाईकी तरह तो समझ ही लिया— इसलिए अब कृपा करके इतना प्रबन्ध कर दो कि, जिससे एक बार क़िलेपर जाकर हम देवीके दर्शन कर सकें। इधर मेरी पहचानका कोई भी आदमी नहीं है; और देवीजीके दर्शनोंके साथ ही साथ इस प्रसिद्ध क़िलेको भी देखनेकी मेरी इच्छा है, अतएव यदि मैं अकेले ही वहां जाऊंगा, तो शायद लोग शंका करें; पर यदि किसी पहचानवालेके साथ जाऊंगा, तो सहज-हीमें देख सकूंगा; और फिर उधर ही उधर अपने घरको चला जाऊंगा। एक बार दर्शन करनेका मेरा संकल्प था, सो यदि तुम्हारी सहायतासे पूर्ण होजाय, तो बड़ी उत्तम बात हो।"

थैली उस महाशयने पहले ही दे दी थी; और उसके बोलने-का ढंग भी अत्यन्त मनोहर था, इसलिए वह स्त्री उसकी ओर बड़े आदरभावसे देख रही थी। कुछ देर सोचनेके बाद फिर

मज़ेसे वे दोनों ऊपर पहुंच गये;और मनमाने तौरपर इधर-उधर घूमने लगे। किसीने यदि कुछ पूछा, तो श्यामाने कह दिया कि, ये हमारे मामा हैं, तुमसे मुलाक़ात करानेके लिए इनको लेआया हूं। देवीजीके लिए इन्होंने मानता मानी है कि, आधी रातके समय आकर तुम्हारे दर्शन करूंगा, सो आज ये आये हैं। बस, इसी प्रकार, जिससे जो मन आया, उसीसे वह कहकर उसने मौक़ा टाला। जितनी देरतक और जहां जहां जाने तथा देखनेकी उस महाशयकी इच्छा थी, उसीके अनुसार उसने ख़ूब अच्छी तरह देखभाल लिया। क़िलेका एक कोना भी उसने देखनेसे बाक़ी नहीं रखा। जिस जिस जगह खड़े होकर अथवा उतरकर वह जो जो देखना चाहता था, सब कुछ उसने यथेच्छ ताड़ लिया; और फिर रात-बिरातका कुछ भी ख़याल न करते हुए, श्यामाको साथ लिये हुए, वह क़िलेके नीचे उतर आया। वहां बहुत ही थोड़ी देर उसने विश्राम किया; और अपने घोड़ेपर सवार होकर तुरन्त ही वह वहांसे चल दिया। हां, श्यामाने उसके चलते समय इतना उससे कहा, "महाराज, मैंने आपको पहचान लिया है; और मेरी बड़ी इच्छा है कि, आपके पास रहनेके लिए मैं आपके साथ चलूं।"

वह महाशय कुछ हँसा और बोला, "मेरी भी ऐसी ही इच्छा है। कुछ दिनके बाद मौक़ा आयेगा।"

अड़सठवां परिच्छेद ।
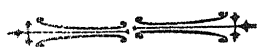
विचार निश्चित हुआ ।

पिछले परिच्छेदमें बतलाई हुई घटनाको हुए लगभग आठ-दस दिन होगये । राजा शिवाजीकी वृत्ति अब बहुत ही उच्छृंखलतापूर्ण दिखाई देने लगी—कमसे कम दादोजी कोंडदेव और उनकी माताजीको तो ऐसा ही जान पड़ने लगा कि, शिवबा आजकल न जाने किस चक्करमें है । लेकिन उन्होंने सोचा कि, ऐसे समयमें यदि हम इससे कुछ कहेंगे, तो स्वच्छन्द लड़का न जाने क्या कर डाले और क्या नहीं, इसलिए वे कुछ नहीं बोले । कुछ दिन पहले दादोजी कोंडदेव और शिवाजीमें जो बातचीत हुई थी; और उस समय शिवाजीने जो प्रतिज्ञा की थी, सो पाठकोंको याद ही होगी; और सचमुच ही उस प्रतिज्ञाके अनुसार शिवाजी, क़िलेको हस्तगत किये बिना, घरमें क़दम न रखते; किन्तु मातृभक्ति उनमें बहुत ही विलक्षण रूपसे जागृत थी । इसके सिवाय उनकी माता स्वयं एक दिन उनको ढूंढ़ती हुई उसी जंगलमें जा पहुँचीं कि, जहां वे रहते थे; और वहां जाकर उन्होंने उनसे घर चलनेके लिए बहुत ही आग्रह किया, अतएव राजासाहबको लाचार होकर अपनी प्रतिज्ञा तोड़नी ही पड़ी । इस प्रकार जब राजासाहब घर वापस आये, तब गुरु महाराजको भी ज़रा सम्हलकर ही उनके साथ बर्ताव

करना पड़ा। उस दिनसे वे भी उनके साथ विशेष सख़्ती न करने लगे। यों तो राजासाहब साधारणतः ऐसा कभी नहीं करते थे कि, जिससे गुरुकी अवज्ञा हो; परन्तु बात यह थी कि, जिन कार्योंको करनेके लिए उनका मन उनसे कहता था, वही कार्य गुरुजीको बिलकुल त्याज्य मालूम होते थे; और उन कार्योंसे राजासाहबको पराङ्मुख करनेके लिए ही वे सदैव प्रयत्न किया करते थे। बस, इसीकारणसे उन दोनोंमें एक प्रकारका दूरीभाव उत्पन्न होगया था। और ऐसा जान पड़ता था कि, दूरीभाव दिनपर दिन बढ़ता ही जायगा। राजासाहबका चित्त दिनपर दिन अपने अभीष्ट कार्यकी ओर विशेष रूपसे संलग्न होरहा था; और अपनी तलवारका पहला पराक्रम दिखलानेका मौक़ा वे पास पास लारहे थे। चूंकि मौक़ा पहला ही था, इसलिए विचार भी ख़ूब करना पड़ रहा था। राजासाहब अवस्थामें यद्यपि अभी नवयुवक ही थे, अथवा यों कहिये,कि बालक थे;पर उनके विचार किसी उच्चसे उच्च वृद्धकी अपेक्षा किसी प्रकार भी कम न थे। इतिहास इसकी साक्षी देरहा है। जिस स्थानमें वे अपना पहला पराक्रम दिखलाना चाहते थे, उस स्थानको उन्होंने अपने लिए अत्यन्त उपयुक्त समझा था; और अब तो अपना पराक्रम दिखलाकर उस स्थानको शीघ्र ही हस्तगत कर लेना उनके लिए अत्यन्त आवश्यक होगया था। हां, इस बीचमें एक नवीन ही कठिनाई अवश्य आकर उपस्थित होगई थी; और उसीके विषयमें वे

मन ही मन बहुत कुछ विचार किया करते थे। यद्यपि राजा-साहबकी अवस्था अभी थोड़ी ही थी, फिर भी वे सबकी सलाह लेकर विचार अपना स्वतंत्र ही रखते थे। ऐसा आचरण उनके हाथसे कभी नहीं हुआ कि, उनके नवयुवक साथियोंने कोई सलाह देदी हो; और उसीके जोशमें आकर, विना स्वतंत्र विचार किये, उन्होंने कोई कार्य कर डाला हो। बालकपनसे जिन लोगोंके साथ वे खेले-कूदे थे, उनके हाथसे भी यदि कभी कोई अक्षम्य चूक होगई, तो उन्होंने उनकी भी गम नहीं खाई। इस प्रकारके दो-एक उदाहरण इतिहास-पाठकोंसे छिपे नहीं हैं। तानाजी इत्यादि लोग प्रथम पराक्रम दिखलानेके लिए बड़े उतावले होरहे थे; और दिनमें चार चार बार उनसे कहते रहते कि, "अब तो सब तैयारी और सब जांच-पड़ताल होगई, अब जो कुछ करना हो, उसके लिए एक बार आज्ञा होजाय।" राजासाहब भी "हाँ, हाँ" कहकर उनको आश्वासन देदेते। परन्तु अभीतक उनका यह विचार चूंकि निश्चित हुआ ही नहीं था कि, किस प्रकार क्या करना होगा, इसलिए वे उन लोगोंकी सिर्फ सुनभर लिया करते थे। इधर तो यह हाल था; और उधर प्रतिज्ञाके दिन भी नज़दीक आते जाते थे, इसकारण उनका चित्त भी कुछ कुछ उद्विग्नसा होरहा था। आजतक जो जो विचार और कार्य उन्होंने किये थे, उनमें कभी कोई कठिनाई उपस्थित नहीं हुई थी; और सर्वदा सर्वथा सफलता ही

प्राप्त हुई थी। किन्तु अब जो कार्य आनेवाला था, उसकी सफलता-निष्फलतापर उनके भावी सम्पूर्ण उद्देश्यकी सफलता और निष्फलता अवलम्बित थी। बीजापुरवालोंका एक क़िला स्वयं अपनी शक्तिके बलपर हस्तगत कर लेना मानो बादशाहको अपना भीतरी उद्देश्य खुल्लमखुल्ला प्रकट कर देना था। यदि क़िला हाथमें आजायगा, तो अगली सारी इमारतकी नीव बहुत ही उत्तम प्रकारसे दृढ़ होजायगी; और यदि वह हाथमें न आया, तो सिर्फ बादशाहको हमारा भीतरी उद्देश्यभर मालूम होजायगा ; और वह हमारी ओरसे और भी अधिक सचेत होजायगा। इसके सिवाय राजासाहबने यह भी सोचा कि, आठ-दस दिन पहले क़िलेके हमारे हाथमें आजानेकी जितनी सम्भावना थी, उतनी अब नहीं रह गई है; क्योंकि इसी बीचमें एक कारण ही ऐसा उपस्थित हो गया है। बस, यही सब बातें सोच करके उनकी चित्तवृत्ति डगमगा रही थी। परन्तु दूसरी ओर वे यह भी सोच रहे थे कि, अब बादशाहके राज्य अथवा क़िलोंपर चढ़ाई न करते हुए यदि इसी प्रकार लूटपाटमें ही लगे रहेंगे, तो असली उद्देश्य सिद्ध नहीं होगा ; और बदनामी भी होगी। इसलिए अब आगे स्वयं बादशाहके राज्यपर ही चढ़ाई करके बादशाही अधिकारियोंसे मुक़ाबिला करना चाहिए। केवल लुटेरेपनसे अब काम नहीं चलेगा। इस प्रकारके विचार उनके चित्तपर विशेष रूपसे अपना प्रभाव जमा रहे थे। इसलिए अब उन्होंने सोचा

कि, स्वधर्म और स्वदेशपर परकीय लोग जो अत्याचार कर रहे हैं, उसको दूर करके यदि हमको सचमुच स्वराज्य स्थापित करना है, तो अब इस लूटपाटको बन्द करके प्रत्यक्ष बादशाहसे ही मुक़ाबिला करना चाहिए; और वह मुक़ाबिला करनेके लिए उत्तम मौक़ा भी यही है। क्योंकि प्रायः किसी भी विचारको जब कार्यरूपमें परिणत करना होता है, तब कभी कभी उसके लिए किसी किसी निमित्तकी भी आवश्यकता हुआ करती है, अन्यथा वह विचार, आवश्यकतासे अधिक समयतक, केवल विचारके ही रूपमें बना रहता है। सो इस प्रकारका एक निमित्त भी इस अवसरपर आकर उपस्थित होगया था; और वह निमित्त इस प्रकार था:—

पाठकोंको यह मालूम है कि, राजा शिवाजीके अभिभावक गुरु दादोजी कोंडदेव समय समयपर उनके पिता राजा शहाजी-को उनके आचरणके सम्बन्धमें पत्र लिख भेजा करते थे, सो इन दिनों भी उन्होंने ऐसा ही एक पत्र उनके विषयमें लिखा था। उसको पढ़कर राजा शिवाजीपर स्वाभाविक ही उनके पिता बड़े क्रुद्ध हुए; और उन्होंने, पिताकी हैसियतसे जो कुछ उनको लिखना चाहिए था, सो, लड़केकी किसी प्रकारकी मुरौवत न रखते हुए, दादोजीको लिख भेजा। दादोजीको भेजे हुए उस पत्रमें इस आशयका वृत्तान्त था:—"ग़रीब लोगोंको लूटकर उनका शाप अपने सिर लेने और यवनोंके नामसे सिर्फ़ जलनेसे ही यदि यवन राजाओंका

नाश होनेको होता; और स्वराज्य स्थापित होनेको होता, तब तो आजतक चोरों और लुटेरोंने भी अनेक स्वराज्य स्थापित कर लिये होते! पागल और स्वार्थी लोगोंकी धुनमें आकर यदि यह (शिवबा) चलेगा,तो न सिर्फ अपना ही नाश करेगा, बल्कि कुलको भी कलंक लगायेगा। यह जानकर कि,अब आपके दबावमें वह नहीं चलता,हमको परम खेद हुआ। हमारे लिखनेसे यदि रास्तेपर आनेकी आशा हो, तो पत्र आते ही हम तुरन्त लिखेंगे। यवनोंका नाश करनेके लिए यवनोंसे ही—यवनोंके अधिकारियोंसे—भिड़ना चाहिए। ग़रीब-ग़ुरबोंको क्यों सताना चाहिए? ग़रीबोंको सताना, देहातोंमें लूटपाट करना; और शहरों अथवा क़िलोंसे बचते रहना, नामर्दीका लक्षण है। न जाने क्यों यह बात उसके ध्यानमें नहीं आती?.........."

इस पत्रको पढ़कर दादोजीने सोचा कि, इसको एक बार अपने शिष्यकी नज़रोंमें भी लाना चाहिए; और देखना चाहिए कि,वह क्या कहता है। अपने इसी विचारके अनुसार मौक़ा देखकर उन्होंने वह पत्र शिवाजीके सामने रखा; और बड़े ध्यानसे उनकी चेष्टाकी ओर देखते रहे कि, इसके पढ़नेसे उनके मनपर क्या प्रभाव पड़ता है। राजासाहबने वह पत्र ध्यानपूर्वक पढ़ा;और क्षणमात्र उसका मनन करके फिर सामने ही,दीवालमें खिंचे हुए, महाभारतके कुछ चित्रोंकी ओर देखकर एक लम्बी सांस छोड़ी। गुरुजीने समझा कि, शायद शिवबाके चित्तको इस पत्रके पढ़नेसे खेद अवश्य हुआ है, ऐसी दशामें हमारे

बोलनेके लिए भी यह एक अच्छा मौक़ा है। बस, यही सोच-कर उन्होंने उस विषयमें कहना शुरू कर दिया। उन्होंने यह नहीं सोचा कि, महापुरुषोंका मन साधारण लोगोंकी तरह नहीं होता; और हमारा शिष्य कोई साधारण आदमी नहीं है, ऐसी विभूति हज़ार-पांच सौ वर्षमें कहीं एक बार किसी राष्ट्रमें उत्पन्न होजाती है; और ऐसी ही विभूतियोंमेंसे एक यह हमारा शिष्य है—ये बातें दादोजीके ख़यालमें नहीं आसकीं—अवश्य ही उन्हें अपने शिष्यके मनकी पहचान उस समय नहीं होसकी; क्योंकि अब भी उनके मनमें यहीं ख़याल बना रहा कि, शिवबा एक सनकी स्वभावका ही लड़का है; और उपद्रवी लड़कोंके साथ पड़कर उपद्रवी होता जारहा है। इस समय यदि इसे थोड़ासा कह-सुनकर समझाया जायगा, तो यह शायद सुधर भी जाय; पर फिर नहीं सुधरेगा। कुछ दिन पहले जब एक बार वे उनपर नाराज़ हुए थे, तब उनके मनपर बहुत ही बुरा प्रभाव हुआ था;और उसके कारण उन्होंने घरतक छोड़ देनेकी प्रतिज्ञा की थी; पर माताजीके बहुत समझाने-बुझानेपर वे अपनी प्रतिज्ञा भंग करके भी घर आये, अतएव दादोजी तबसे उनके साथ बहुत सम्हल सम्हलकर बर्ताव करते थे। पर आज उन्होंने फिर पिछली इन सब बातोंको एक ओर रख दिया; और इस प्रकारके कटुवाक्योंसे उनके हृदयको भेदना शुरू किया—"देख, तू धर्मके उद्धारके नामपर ग़रीबोंका काल ही बनेगा! यवनोंका राज्य लेना अथवा उनका पराभव

करना तो एक ओर रहा, तू एक बड़ा भारी लुटेरा अवश्य बन जायगा !" अपने गुरुके ऐसे मर्मभेदक वचन सुनकर शिवाजीको अत्यन्त दुःख हुआ। पहले तो वे स्वयं अपने मनमें ही इस बातको सोच-सोचकर दुखी हुआ करते थे ; पर आज उनके पिता और गुरुने उस विषयमें और भी अधिक मर्मभेदक वचन सुनाये, इससे उनके हृदयको कितना दुःख हुआ, इसकी पाठक कल्पना करें। किन्तु फिर भी शिवाजीने उनको कोई उत्तर नहीं दिया, चुपकेसे उनकी बातें सुन लीं; और कुछ ही देर बाद वहांसे उठकर चल दिये। जैसे घासका कोई गञ्ज रच रखा गया हो, उसके पास सिल्लों (सनके डण्ठलों) की मशाल भी बनाकर नख लीगई हो, आग भी तैयार हो ; और सिर्फ उस मशालको आगमें जलाकर गञ्जपर फेंक देनेभरकी ही देरी हो—बस, यही दशा इस समय शिवाजीके मनकी होरही थी। दादोजी कोंडदेवका कहना और राजा शहाजीका पत्र केवल निमित्तमात्र होगया। राजा शिवाजी वहांसे चलकर अपनी मित्रमण्डलीमें आये; और अपने मनका पक्का निश्चय करके ही आये। उनका निश्चय होगया कि, या तो अपनी प्रतिज्ञाके दिनोंके अन्दर सुलतानगढ़को हस्तगत करके ही छोड़ेंगे, अथवा वहीं अपने प्राणोंकी आहुति जगदम्बाको अर्पण करके ही रहेंगे। वे तुरन्त अपने गुप्त मन्दिरमें पहुंचे। उन्होंने श्रीधर स्वामीसे भी घड़ीभर अपने पास न आने की प्रार्थना की। मन्दिरमें जाकर उन्होंने अपनी तलवार निकालकर भवानी माताके सामने रख

दी; और अनन्यभावसे उनकी प्रार्थना करके अपनी आंखें समाधिस्थ अवस्थाके समान बन्द कर लीं। उस समय उनको देवीका जो कुछ दृष्टान्त हुआ, अथवा जो कुछ विचार हुआ, सो उन्हींको मालूम! घड़ी-दो घड़ी व्यतीत होजानेके बाद वे फिर पूर्वावस्थामें आये। पूर्वावस्थामें आनेके बाद उनकी चेष्टाकी पहलेकी उदासीनता बिलकुल जाती रही। जैसे बहुत दिनसे मनको त्रस्त करनेवाली कोई बात एकदम मनसे निकल जावे; और फिर चेहरा बिलकुल प्रफुल्लित हो-उठे, उसी प्रकार उनकी चेष्टा अत्यन्त आनन्दित दिखाई देने लगी। उद्विग्नताका नाम-निशान भी उनके चेहरेपर नहीं रह गया। इतने दिनतक जिस बहुत ही गूढ़ कूटकका उत्तर उनको सूझ नहीं पड़ रहा था, वह आज एकाएक उनको सुझाई दिया, पूरे पूरे विचारका निर्णय होगया; और उनके चित्तमें पूर्ण शान्ति आई। चेहरेपर किंचित् हास्य भी दिखाई देने लगा। इसके बाद तत्काल उन्होंने श्रीधर स्वामीको बुलाया; और उनसे परस्पर कुछ वार्त्तालाप किया। इसके बाद तानाजी, येसाजी और नानासाहबसे मिलकर सलाह-मशविरा किया; और सुलतानगढ़पर चढ़ाई करनेकी तैयारी हुई।

दूसरे दिन आधीरातके लगभग, क़रीब तीन-साढ़े तीन सौ मावले हेटकरी लोगोंका एक जमाव सासवड़के उसी निश्चित जंगलमें हुआ। उस समय तानाजीने उन लोगोंको सब बातें समझाईं; और भवानी माताके मन्दिरके शस्त्रभाण्डारमेंसे

एक एक तलवार प्रत्येक सिपाहीको पारितोषिक देकर उनके दो ग़ोल बनाये। इसके बाद यह निश्चय हुआ कि, एक ग़ोलकी अध्यक्षता स्वयं तानाजी स्वीकार करें; और दूसरेका आधिपत्य नानासाहबको दिया जावे, तथा, जैसाकि राजासाहबने कहा, ये दोनों दलपति, सुलतानगढ़के दो पार्श्वोंपर, वहांसे लगभग चार कोसके अन्तरपर, अमुक दिन, रातको जाकर छिपकर बैठ रहें। दोनों दल एकदम न जावें; किन्तु दो दो, चार चार आदमी ऐसा दिखलाते हुए जावें कि, जैसे एकका दूसरेसे कोई सम्बन्ध ही न हो; और अन्तमें क्या हुक्म होता है, इसकी प्रतीक्षा करते हुए सब लोग चुपकेसे वहीं बैठे रहें। इस योजनाके निश्चित होजानेके बाद यह भी निश्चित हुआ कि, सूर्याजीके आदमियोंका भी शायद काम पड़ेगा; और मौक़ा आजानेपर उनसे काम लेना ही पड़ेगा, इसलिये वे भी तैयार रहें; परन्तु जबतक उनको इशारा न मिले, वे अपनी जगहसे हिलें नहीं; और न अपनी तरफसे किसी बातमें कोई हाथ डालें। इस विषयका एक सन्देशा भी उनके पास भेज दिया गया।

इस प्रकार सब व्यवस्था होजानेके बाद उन सब सिपाहियोंको बिदा कर दिया गया। नानासाहबके आनन्दका पारावार नहीं रहा। उन्होंने सोचा कि, जिस उद्देश्यसे हम घर-द्वार छोड़कर यहां आये, उस उद्देश्यके सफल होनेका अब सुअवसर आगया; और हमारे उद्देश्यके अनुसार सुलतानगढ़—

जहां हमने अपना जन्म बिताया, वही—स्वराज्यकी पहली नींव होगी। अब उनके आनन्दका क्या कहना! इसके बाद उनके मनमें यह बात आई कि, वास्तवमें इस क़िलेसे हम भलीभांति परिचित हैं; और अब उस स्थानको और भी अधिक महत्व प्राप्त होगा। यह बहुत अच्छा हुआ कि, राजा शिवाजीको हम इस कार्यमें पूरी पूरी सहायता प्रदान कर सकेंगे। इस प्रकारके विचार जब उनके मनमें आये, तब उनका चित्त बहुत ही प्रफुल्लित हुआ। इसके बाद उनके मनमें यह आशा भी उत्पन्न हुई कि, अब पिताजी चाहे जो कहें, अथवा चाहे जैसा मौक़ा आजाय, हम उनको अपने पक्षमें मिला ही लेंगे। इस प्रकार सब विचार करके वे तुरन्त ही नियमानुसार भवानी माता और हनुमानजीके दर्शन करके वहांसे चल दिये। तानाजी भी उसी प्रकार वहांसे रवाना हुए। परन्तु राजा शिवाजीने अपने लिए क्या विचार किया था, सो उन्होंने किसीको भी नहीं बतलाया। अपने लोगोंसे उन्होंने यह तो कह दिया था कि, तुम लोग अमुक अमुक ओरसे अमुक जगह जाकर इस प्रकार घात लगाकर बैठो; पर यह बात उनको नहीं बतलाई थी कि, तुम्हें किस समय क्या हुक्म होगा; और उसके होनेपर तुमको किस प्रकार क्या क्या कार्य करना पड़ेगा। ये सब बातें उन्होंने बिलकुल अपने मनमें रखी थीं। पहला ही अवसर है। ऐसा न हो कि, कहीं अपना गुह्य बाहर फूट जाय; और सब खेल बिगड़ जाय! यह सोचकर उन्होंने अपने मनकी बात

किसीको नहीं बतलाई थी। क्योंकि इस पहले अवसरपर किसीका विश्वास करनेसे यदि काम बिगड़ जाता, तो उनके चित्तको विषाद होना स्वाभाविक ही था। अतएव उन्होंने पहलेहीसे अपने मुख्य विचारका पता किसीको भी नहीं चलने दिया। हां, सिर्फ स्वामीजीको अपना भीतरी विचार अवश्य बतला दिया था। अस्तु। जिन लोगोंको यह हुक्म हुआ था कि, तुम अमुक दिन, रातके समय, सुलतानगढ़के दोनों पार्श्वों-पर जाकर, इतने इतने कोसोंके अन्तरपर, घात लगाकर बैठो, उन बेचारोंको यह कुछ भी नहीं मालूम था कि, हमारे लिए वहांपर किस समय, क्या हुक्म, किस ओरसे मिलेगा; और इस बातका भी उनको साहस नहीं होता था कि, उक्त बातको पूछकर ही वे जान लें। उन सबको तो सिर्फ यही भावना थी कि, हम सिर्फ राजासाहबके आज्ञापालक हैं—जितनी बात वे बतला देवें; उतनी ही हम करें—विशेष बातसे हमको मतलब ही क्या? बस, इसीकारण फिर किसीने उस बातकी चर्चा भी नहीं की; और सब अपने अपने मार्गको रवाना हुए। राजा-साहब अपने अगले विचारमें लगे।

लगभग चार-पांच दिनके बाद नांदेगांवमें कमली ओढ़े एक आदमी उसी जगह आया कि, जहां पिछले परिच्छेदमें बतलाई हुई दो स्त्रियां रहती थीं। ऐसा जान पड़ा कि, वह कमलीवाला उन स्त्रियोंकी पहचानका था। इसके बाद दूसरे दिन जब वह लड़का, श्यामा, उन स्त्रियोंके घर आया, तब उसने

भी तुरन्त ही पहचान लिया कि, यह और कोई नहीं—वही पहलेका हमारा मामा अथवा काका है। फिर श्यामाके साथ बहुत देरतक उसकी बहुत कुछ बातचीत होती रही। श्यामा उस समय यद्यपि वहां ठहरनेकी ग़रज़से न आया था; पर जब मामासे भेंट होगई, तब उसका भी वहीं रहनेका विचार होगया; और वह मामाको साथ लेकर सुलतानगढ़के नीचेवाली बस्तीमें चला गया। वहां जाकर सब लोगोंसे उसे मिलाने लगा; और उसपर तुर्रा यह कि, मामासाहब भी प्रत्येक घरमें जा जाकर वहांके लोगोंसे घुल घुलकर बातें करने लगे। यही नहीं, बल्कि क़िलेके ऊपर भी जाकर सिपाही इत्यादिसे भी हिलमिलकर बातें करने लगे।

उनहत्तरवां परिच्छेद।

पास आया।

सैयदुल्लाख़ांने बड़ा प्रयत्न किया कि, मुरारपन्तकी बादशाहकी ओरसे अप्रतिष्ठा कराई जाय; और उनसे भी अधिक रणदुल्लाख़ांको गिरानेका उसने प्रयत्न किया। साथ ही साथ उसने इस बातकी भी अत्यन्त कोशिश की कि, बादशाह उनका दरबारमें आना बन्द कर दे। इसके बाद उसने रणदुल्लाख़ांकी बहनका सौन्दर्य वर्णन करके बादशाहको यह भी सुझाया कि,

उक्त सुन्दरी यदि बादशाहके अन्तःपुरमें रहे, तो उसकी बड़ी शोभा होगी। इस प्रकार सैयदुल्लाख़ांने रणदुल्लाख़ांकी विडम्बना करनेका सब कुछ प्रयत्न किया; पर बादशाह अभी इतना पागल नहीं हुआ था कि, रणदुल्लाख़ांके समान सच्चे सरदारका इस प्रकार अपमान करनेको तैयार होता। वह अच्छी तरह जानता था कि, रणदुल्लाख़ांके समान ख़ान्दानी सरदारका यदि किसी प्रकारसे भी विशेष अपमान किया जायगा, तो यह अच्छी बात न होगी; बल्कि राज्यके लिए और भी हानिकारक ही होगी। उसने सोचा कि, रणदुल्लाख़ांका ख़ान्दान हमारे दरबारका कोई छोटा-मोटा ख़ान्दान नहीं है। मुसलमान सरदारोंमें यह अत्यन्त प्राचीनतम घराना है; और उसका बाप हमारी बादशाहतका एक मुख्य आधारस्तम्भ था। इसलिए उसकी सन्ततिका अपमान करना, मानो दरबारके लोगोंमें बिना कारण असन्तोष उत्पन्न करना है। यह बात बादशाह बहुत अच्छी तरह जानता था;और इसीकारण इस विषयमें सैयदुल्लाख़ांकी वह एक भी नहीं सुनता था। परन्तु सैयदुल्लाख़ां मानो बादशाहके पीछे एक अमंगल (क्रूर) ग्रहकी तरह लगा हुआ था। बादशाहको मालूम था कि, सैयदुल्लाख़ां एक बहुत बदमाश आदमी है; उसको अक़ल बिलकुल ही नहीं। सब विषयोंमें यदि हम उसीके कहनेके अनुसार चलेंगे, तो बड़ी गड़बड़ी मच जायगी; और बादशाहतको बहुत बड़ा धक्का पहुंचेगा। उसको कोई भी नहीं चाहता, सभी उसका नाश करनेके प्रयत्नमें हैं।

ये सब बातें बादशाहको भलीभांति मालूम थीं। परन्तु फिर भी उससे भूलें होती ही थीं—जैसे कोई आदमी भ्रममें पड़ जाय, अथवा मद्यके नशेमें विवेकबुद्धि खोबैठे; और जान-बूझ-कर अपने हाथसे भूलें होने दे, उसी प्रकारकी अवस्था इस समय बादशाहकी थी। बादशाह उसकी मूर्खता अथवा बद-माशीके विषयमें चाहे जितना विचार करता; और एक वार उसके मनका निश्चय भी होजाता कि, सैयदुल्लाख़ां किसी कामका आदमी नहीं है—यही नहीं, बल्कि उसके पीछे उसपर क्रुद्ध होकर उसको गालियां भी देता; पर ज्यों ही फिर सैय-दुल्लाख़ां उसके सामने आजाता, त्यों ही बादशाह, उसका मुखावलोकन करते ही, पानो पानी होजाता! हां, कभी कभी जब वह सैयदुल्लाख़ांपर अत्यन्त ही नाखुश होता, तब उसे "पागल, गधा, हरामज़ादा!" कहकर गाली प्रदान कर देता; और सैयदुल्लाख़ां भी "वाह वाह! वाह वाह!" कहकर हँसते हुए उसको टाल देता, इससे बादशाह उसपर पूर्ववत् प्रसन्न हो जाता! इस प्रकार होते होते एक बार सैयदुल्लाख़ांके मनमें आया कि, अब किसी न किसी उपायसे रणदुल्लाख़ांका घमंड ज़रूर चूर करना चाहिए। यह बात तो पाठकोंको मालूम ही है कि, सैयदुल्लाख़ां कोई बहुत बड़ा राजनीतिज्ञ तो था ही नहीं, जो बदशाहकी भलाईका कोई उपाय सोचता, अथवा उसे कोई महत्वपूर्ण मंत्रणा देकर राज्यके कल्याणका अथवा उसकी कीर्त्ति बढ़ानेका कोई प्रयत्न करता; और इस प्रकार अपना

प्रभाव बढ़ाकर अपने प्रतिपक्षीको नीचा दिखाता! किन्तु वास्तवमें उसकी सारी चातुरी नीचतापूर्ण कार्योंमें ही थी—वह क्या करता कि, बादशाहको किसी न किसी सुन्दरीके प्रलोभन अथवा मद्यकी मदहोशीमें डालकर, उसके हाथसे अपना मन-माना कार्य करा लेता। सैयदुल्लाख़ांकी सारी कर्त्तव्य-दक्षता एक इसी बातमें थी कि, शराबके नशेमें बादशाहके द्वारा भले भले मनुष्योंका अपमान कराता; और आप फिर उसकी मौज देखता, तथा उसीमें आनन्द मनाता। बस, इसी प्रकारका उसका सारा व्यवहार था! किन्तु जब उसने देखा कि, इस प्रकारके व्यवहारसे मुरारपन्त अथवा रणदुल्लाख़ांका प्रभाव हमारे द्वारा कुछ भी न्यून नहीं होसकता, तब उसने इस प्रकारकी बातें बादशाहके मनमें भरनेका प्रयत्न किया कि, देखिये, रणदुल्लाख़ाँने सुलतानगढ़के क़िलेदारको इतनी कोशिश करके फिरसे क़िलेदारी दिलवा ही दी; और उसमें उसका सिर्फ इतना ही उद्देश्य है कि, जिससे वह उक्त क़िलेदारकी पुत्रवधू-को अपने पास रख सके। रणदुल्लाख़ांको गिरानेके लिए उसने बादशाहसे ऐसी बातें कहीं सही, किन्तु फिर भी उसको इससे कोई लाभ न हुआ। रणदुल्लाख़ांका महत्व और बादशाहकी नज़रोंमें उसका प्रभाव, कुछ भी कम न हुआ। यह देखकर सैयदुल्लाख़ांको अत्यन्त सन्ताप हुआ; पर उसका वह सन्ताप दूर कैसे हो? ऐसे नीचोंमें वह अक़ल तो होती नहीं कि, सामने मैदानमें भिड़कर अथवा अन्य कोई महान् पराक्रम दिखलाकर

अपने सन्तापको शान्त करें। किन्तु ऐसे लोग तो सदा इसी प्रयत्नमें रहते हैं कि, कोई न कोई कपट करके अपने प्रतिपक्षीसे बदला निकालें। बस, सैयदुल्लाख़ांका भी यही हाल था। उसने सोचा कि, देखो, हमने इतने प्रयत्न किये, अपने शत्रु रणदुल्लाख़ांपर इतना भारी कुचक्र चलाया; परन्तु फिर भी कोई लाभ नहीं हुआ; अन्तमें हमारे विरुद्ध, रणदुल्लाख़ांका ही बादशाहपर विशेष प्रभाव पड़ा; और रंगरावअप्पाको सुलतानगढ़की क़िलेदारी फिरसे मिल ही गई। यह बात उसके हृदयमें शल्यकी तरह चुभ रही थी। नीचोंको अपनी वैराग्नि प्रज्वलित रखनेके लिए क्षुद्रसे क्षुद्र कारण भी पर्याप्त होते हैं; और उन क्षुद्रातिक्षुद्र कारणोंपर विचार करते करते भी उनकी भ्रष्ट बुद्धिसे कोई न कोई अजब युक्ति निकल पड़ती है। तदनुसार सैयदुल्लाख़ां भी बहुत दिनसे विचार कर रहा था कि, कोई न कोई बात बादशाहके मनमें जमाकर उसके द्वारा रणदुल्लाख़ांका अपमान करावें; और ऐसा कर दें कि, जिससे फिर वह दरबारमें अपना मुख ही न दिखला सके। वास्तवमें बादशाहका इस समय यह हाल था कि, जिस समय वह प्रसन्न चित्त होता; और सैयदुल्लाख़ां उसके पास होता, उस समय रणदुल्लाख़ांके विषयमें यदि कोई बात निकलती, तो बादशाह उसकी निन्दा ही करता, उसको नमकहराम बतलाता; और यह निश्चय प्रकट करता कि, अब हम उसे अपने द्वारपर भी नहीं खड़ा होने देंगे; पर जब रणदुल्लाख़ां स्वयं

किसी कामके लिए उससे मिलनेको आता तब उसका सारा, वह पहलेका, निश्चय डिग जाता; और उसकी बात वह बड़े ध्यानसे सुनता; और उसका सब काम कर देता। फिर जब वह चला जाता, तब उसके पीछे फिर यही कहने लगता कि, "देखो, यह कैसा लुच्चा है!" इसलिए सैयदुल्लाख़ांने सोचा कि, बादशाहकी यह द्विधा परिस्थिति ठीक नहीं है, इसको बिलकुल ही दूर कर देना चाहिए; और कोई नवीन ही युक्ति ऐसी सोचनी चाहिए कि, जिससे बादशाहका मन रणदुल्लाख़ांसे एकदम बिलकुल ही फिरंट होजाय। उसने सोचा कि, बादशाहका ही मन केवल कलुषित करनेसे काम नहीं चलेगा, इससे रणदुल्लाख़ांका अपमान होनेकी कोई सम्भावना नहीं दिखाई देती; और ऐसी दशामें हमारा उद्देश्य भी सिद्ध नहीं होता। इसलिए अब, इसके विरुद्ध ही किसी युक्तिसे काम लेना चाहिए—वास्तवमें अब बादशाहके द्वारा ही ऐसा कोई कार्य कराया जाय कि, जिसको सुनकर रणदुल्लाख़ां एकदम ही क्रुद्ध होउठे; और वह ख़ुद बादशाहका अपमान करे। अवश्य ही, जब रणदुल्लाख़ां बादशाहका ऐसा कोई अपमान करेगा, तब बादशाहको वह क्यों सहन होने लगा! और ऐसी दशामें हमारा उद्देश्य आप ही आप सिद्ध होजायगा। ऐसा विचार जब सैयदुल्लाख़ांके मनमें आया, तब वह मन ही मन अपनी बुद्धिकी प्रखरतापर बहुत ही आनन्दित हुआ; और सोचा कि, आजकल जो परिस्थिति है, उसीमें यदि हम अपना उपर्युक्त विचार पूर्ण कर सकें,

तो विशेष सुविधा रहेगी; और यह सोचकर वह उसी धुनमें लग गया। सैयदुल्लाख़ांने क्या युक्ति सोची कि, रणदुल्लाख़ांकी बहन इस समय चूंकि सुलतानगढ़पर रहती है, इसलिए हम वहां जावें; और किसी न किसी युक्तिसे उसे वहांसे लाकर बादशाहकी नज़रमें डालें—अथवा अपनी ही तरफसे उसे लाकर बादशाही ज़नानख़ानेमें उसे रख दें। इसके बाद फिर चारों तरफ यह बात फैला दें कि, बादशाहने उसके साथ स्वैरताका व्यवहार किया। इससे हमारा काम बिलकुल सिद्ध होजायगा। ऐसा उसने अपना विचार स्थिर किया; और इसी उद्योगमें लग गया। पहले उसने यह सोचा कि, रणदुल्लाख़ांको कुछ दिनके लिए कहीं दूरपर भिजवानेका प्रबन्ध कर दिया जाय; और तब अपना विचार पूर्ण करनेमें विशेष सुविधा होगी; क्योंकि उसको जबतक बादशाहके पाससे कहीं दूर नहीं पटक देंगे, तबतक हमारे कार्यमें सफलता प्राप्त होना बिलकुल असम्भव है। यह सोचकर उसने कर्नाटक प्रान्तके एक सूबेदारसे इस आशयका एक पत्र मँगाया कि, इस प्रान्तमें बहुत भारी उपद्रव मच रहा है, इसलिए उसका बन्दोबस्त करनेके लिए कुछ सहायक सेना अवश्य भेजी जाय, इसके अतिरिक्त किसी अच्छे सरदारकी योजना करके यहांका ठीक ठीक बन्दोवस्त कराया जाय। यह पत्र जब बादशाहके सामने पहुँच गया, तब सैयदुल्लाख़ांने स्वयं भी जाकर कर्नाटकके उक्त उपद्रवका इतना भयंकर चित्र बादशाहके सामने रखा, जिससे बादशाहको

पूर्ण विश्वास होगया कि, यदि ऐसे समयमें कोई अच्छा सरदार ससैन्य वहां न भेजा जायगा, तो सचमुच ही उक्त प्रान्तके सारे सूबे हमारे हाथसे निकल जायँगे। इस प्रकार जब सैयदुल्लाख़ांने देख लिया कि, अब बादशाहको उस ओर एक अच्छे सरदारके भेजनेकी आवश्यकता भलीभांति प्रतीत होगई, तब उसने एक दूसरा काम किया। अर्थात् बादशाहको जतलाया कि, दरबारमें यदि आज कोई सच्चा शूर और लड़ाकू योद्धा है, तो वह रणदुल्लाख़ां ही है। उसके बिना ये उपद्रव कभी मिट नहीं सकते। निस्सन्देह हमारा उसका मेल नहीं है; लेकिन फिर भी हम सच्चे हृदयसे कहते हैं कि, ऐसे संकटोंके मौक़ोंपर यदि कोई पूरा पूरा काम देसकता है, तो ऐसा एक वही व्यक्ति है। इस प्रकार गौरवपूर्ण वचन कहकर उसने इतना मनोमहत्व प्रकट किया कि, बादशाह एकदम ख़ुश होगया; और सैयदुल्लाख़ांकी उदारतापर उसे बड़ा कौतुक हुआ। उसने तुरन्त ही रणदुल्लाख़ांको बुलवाया; और कर्नाटकके सूबेदारका वह पत्र दिखलाया। उसकी राजभक्तिकी प्रशंसा की; और बहुत जल्द बारह हज़ार सेना साथ लेजानेकी आज्ञा प्रदान की। राज्यके आधारस्तम्भ तुम्हीं हो, तुम्हारे सिवाय और कोई नहीं, इत्यादि उत्साहवर्द्धक वचन कहकर अन्तमें बादशाहने यह भी कहा कि, देखो, सैयदुल्लाख़ां—जिसकी तुम्हारे विषयमें सदैव शिकायत रहती है—कभी भी सिफ़ारिश नहीं करता, उसने भी इस बार तुम्हारी ही सिफ़ारिश की है। बादशाहने अपनी

समझसे तो यह बहुत ही अच्छी बात कही; पर रणदुल्लाख़ांके मनपर इसका कोई विचित्र ही प्रभाव पड़ा, सो बादशाहके ध्यानमें नहीं आया। सैयदुल्लाख़ांने हमारी सिफ़ारिश की—यह वाक्य सुनते ही रणदुल्लाख़ांका सारा शरीर, नीचेसे ऊपर-तक, जल उठा; और उसने सोचा कि, इसमें उसका कुछ न कुछ कपट-जाल अवश्य ही है। परन्तु कर्नाटकके सूबेदारका वह पत्र चूंकि सामने ही मौजूद था, अतएव उसकी उपर्युक्त शंकासे कोई लाभ नहीं हुआ। हां, उसने बादशाहसे इतना अवश्य कहा कि, "यह काम तो और लोग भी कर सकते हैं—मेरी ही इसमें क्या आवश्यकता है?" इसपर बादशाहने इस आशयके कठोर शब्द उससे कहे—"देखो, ऐसे समयमें भी तुम हमारा हुक्म माननेमें आनाकानी करते हो, इससे तो यही जान पड़ता है कि, तुम्हारी ख़ान्दानी राजभक्ति अब बिलकुल ही उड़ गई। जान पड़ता है, तुम राज्यको डुबो ही देना चाहते हो!" रणदुल्लाख़ां बेचारा अब बादशाहके सामने इसपर और क्या कहे? वह निरुत्तर ही होगया। उसने सोचा कि, अब इसपर और अधिक हम यदि कुछ कहेंगे, तो हमारे शत्रु-ओंको हमारे विरुद्ध बादशाहको उभाड़नेके लिए और एक नवीन ही मौक़ा मिल जायगा; और फिर हमारा बहुत ही नुक़-सान होगा। इसलिए अब और कुछ भी न्यूनाधिक न कहते हुए वह बादशाहको सलाम करके वैसा ही चला गया। रण-दुल्लाख़ांके जाते ही बादशाहने मुरारपन्तको बुलवाया; और सब

समाचार बतलाकर कहा कि, ऐसा जान पड़ता है, मानों रण-दुल्लाख़ांका मन अब राज्यके कायमें ठीक ठीक नहीं लगता है—वह और ही किसी विचारमें रहता है। बादशाहने बड़ी तेज़ीके साथ कहा कि, यदि कल ही सवेरे वह कर्नाटकके लिए रवाना नहीं होगया, तो उसका दरबारमें आना बन्द कर दिया जायगा। मुरारपन्तके सामने इस प्रकारकी बातचीत करनेमें बादशाहका आन्तरिक उद्देश्य यह था कि, इनसे जो कुछ कहेंगे, वह रणदुल्लाख़ांके कानमें अवश्य ही जायगा; क्योंकि उन दोनोमें जो प्रेमभाव था, वह बादशाहको भलीभांति मालूम था। और सचमुच ही बादशाहने जैसा सोचा था, वैसा ही हुआ। मुरारपन्त दरबारसे उठकर घर आये; और यह सोचने लगे कि, रणदुल्लाख़ांको यह सन्देश भेज दें कि, हम तुम्हारे पास आना चाहते हैं। उनको यह सोचते देर नहीं हुई थी कि, उनके अर्दलीने आकर यह सन्देशा दिया कि, सरदार रण-दुल्लाख़ां आपसे मिलनेको आये हैं। इस प्रकार तुरन्त ही दोनोंकी मुलाक़ात हुई; और सब बातोंपर विचार हुआ। सैय-दुल्लाख़ांका इसमें क्या कपट है, सो कुछ उनकी समझमें नहीं आया। लेकिन इतना विश्वास दोनोंको होगया कि, कोई न कोई कपट इसमें उसका है अवश्य। किन्तु अब, जब बादशा-हकी आज्ञा ही होचुकी, तब विचार करनेसे क्या लाभ? रण-दुल्लाख़ांने दूसरे ही दिन जानेकी तैयारी शुरू की; और लगभग पचास चुने हुए हथियारवन्द सिपाही अपनी बहनकी संरक्षाके

लिए भेज दिये। रणदुल्लाख़ांने सोचा कि, यदि सैयदुल्लाख़ांका कोई नीच उद्देश्य होसकता है, तो इसी विषयमें होसकता है; और इसीलिए उसने उसका बन्दोवस्त करनेके लिए उन सिपाहियोंको पहलेहीसे रवाना कर दिया। रणदुल्लाख़ांके वे चुने हुए सिपाही ऐसे थे, जो जानपर खेलकर भी अपने कर्त्तव्यसे हट नहीं सकते थे। उन लोगोंको रंगराव अप्पाके नाम उसने एक पत्र भी दिया, जिसमें लिखा था—"हमको एकाएक कर्नाटक जाना पड़ रहा है, किन्तु बहन आपकी संरक्षामें है, इसकारण हमें कोई भी चिन्ता नहीं। सैयदुल्लाख़ाका विचार इस समय बहुत ही कपटका दिखाई देरहा है। हम ये सिपाही भेज रहे हैं, ये जानपर खेल जानेवाले हैं। ये आपकी आज्ञासे उसका बन्दोवस्त रखेंगे। आपके भी काम आयगे।" बस, इसी प्रकारका समाचार उसमें था।

इस प्रकार,उस विषयमें जितना कुछ प्रबन्ध वह कर सकता था, किया; और मुरारसाहबसे प्रार्थना की कि, अब आप ही इधरका सब प्रबन्ध सम्हालियेगा। इतना करके रणदुल्लाख़ां बीजापुरसे बाहर निकला; और अपनी बारह हज़ार सेनाके साथ कर्नाटकके लिए कूच किया। उस समय यह विचार उसके मनमें आये बिना नहीं रहा कि, देखो, एक वे वीर थे, जिन्होंने बीजापुरका राज्य संस्थापित करके उसको इतनी उन्नत दशाको पहुँचाया; और एक यह हमारा बादशाह है, जो एक मामूली पियादेके कहनेमें आकर पतिव्रता देवियोंका

पातिव्रत्य भंग करते हुए विलासितामें निमग्न होरहा है! इस प्रकारके विचार उसके मनमें आये; और क्षणभरके लिए उसका मन उद्विग्न होगया।

इधर सैयदुल्लाखांने समझा कि हमारी कारस्तानी सफल होरही है; और हमारे मार्गका सबसे बड़ा रोड़ा रणदुल्लाखां दूर होगया, अतएव उसको इतना आनन्द हुआ कि, जिसका कुछ ठिकाना नहीं। इसलिए अब उसने यह सोचा कि, अब चाहे जब सुलतानगढ़ जाकर हम बेगमसाहबाको लेआवेंगे; और जो कुछ मनमें आयेगा, सो करेंगे—वह शेर, जिसकोकि हमने कर्नाटकके लिए रवाना किया है, लौटने भी न पायेगा; और इधर हम उसको क़ुद्ध करनेके लिए सब तैयारी कर रखेंगे। उसको विश्वास होगया कि, अब हमारा उद्देश्य पूरा पूरा सिद्ध हुआ; और अब इसमें कोई भी कठिनाई रह नहीं गई। बस, फिर क्या था—वह मन ही मन आनन्दमें बिलकुल तल्लीन होगया। इसके बाद उसने सोचा कि, अब चार ही पांच दिनके अन्दर हमें अपने इस उद्योगमें लग जाना चाहिए, इसलिए अब, पूर्ण विचारके साथ, हमें क्या क्या प्रबन्ध करना चाहिए कि, जिससे किसीको पता भी न लगने पावे; और हम अपने उद्देश्यमें सफल होजावें। बस, इसी बातके सोचनेमें उसने अपनी सारी शक्ति लगा दी। अन्तमें उसने न जाने क्या सोचकर अपने चुने हुए लगभग सौ सिपाहियोंको बुलाया; और कहा कि, तुम लोग सुलतानगढ़की दक्षिण ओर लगभग छै

कोसके अन्तरपर जाकर अपनी छावनी डालो। इसके बाद वह स्वयं अपने चार-पांच सिपाहियोंको साथ लेकर सुलतान-गढ़की ओर रवाना हुआ। राजा शिवाजीने अपना विचार उधर सासवड़की ओरसे निश्चित किया; और सैयदुल्लाख़ांने अपना यह विचार इधर बीजापुरकी ओरसे निश्चित किया। दोनोंके विचार संयोगवश एक ही समयके लिए निश्चित हुए। सैयदुल्लाख़ांका विचार यह था कि, पहले तो अपने सिपाहियों-को क़िलेसे दूर उपर्युक्त स्थानपर लगा रखा जाय; और फिर ठीक मौक़ेपर कुछ लोगोंको क़िलेपर बुला लिया जाय; और यदि आवश्यकता मालूम हो, तो शक्ति लगाकर भी अपना कार्य सिद्ध कर लिया जाय। उसका विश्वास था कि, शक्तिसे अवश्य काम लेना पड़ेगा, चुपकेसे कुछ काम न होगा। क्योंकि वह यह जानता था कि, रंगराव अप्पासे रणदुल्लाख़ांका बड़ा स्नेह है; और हमारे विषयमें अप्पासाहब भी द्वेष रखते हैं। ऐसी दशामें अप्पासाहबसे अपने काममें हमको मदद तो मिल ही नहीं सकती; बल्कि वे विरोध ही करेंगे। उसने सोचा कि यों ही जब कभी हम सुलतानगढ़पर चार दिनके लिए जाते हैं, तब तो अप्पासाहबको हमारा जाना अच्छा ही नहीं लगता, फिर ऐसी दशामें! लेकिन फिर उसने सोचा कि, हम बादशाहके गलेके तावीज़ हैं, इसलिए अप्पासाहब हमको वहां जानेसे रोक कभी नहीं सकते। सच तो यह था कि, उसको पूरी पूरी आशा थी कि,हम सम्पूर्ण कठिनाइयोंसे पार होकर अपना कार्य अवश्य

कर लेंगे; और हमें सफलता अवश्य मिलेगी। अस्तु। सब कठिनाइयोंका पूरा पूरा विचार करके सैयदुल्लाख़ांकी सवारी बीजापुरसे रवाना हुई; और श्यामाके उस मामा या काकाको आये अभी एक ही दिन हुआ था कि, सरदार सैयदुल्लाख़ांकी सवारी भी सुलतानगढ़पर आपहुंची। सैयदुल्लाख़ांके पीछे एक काला भूत बहुत दिनसे लगा था, सो वह बीजापुरमें अब कैसे रह सकता था? प्रकाश-रहित स्थानमें खड़े होनेपर ख़ां-साहबकी छाया चाहे न रहे; पर वह कालाकलूटा महाशय उनका पीछा कभी नहीं छोड़ता था। सुलतानगढ़पर जब ख़ांसाहबकी सवारी आई, तब वह महाशय उनके साथ ऊपर अवश्य ही नहीं आया; किन्तु नीचेकी बस्तीहीमें रह गया। किन्तु हां, ख़ांसाहब जब ऊपर क़िलेकी ओर चलने लगे, तब वह उनकी ओर देखकर अपने ही आप खुसफुसाया—"जा, जा, दुष्ट, आजसे चौथे दिन मेरी प्रतिज्ञाका अन्तिम दिन है; और इस समय तू कर्म भी ऐसा कर रहा है कि, जिसके करते हुए तेरा बध करनेमें और भी विशेष पुण्य है।"

इधर रंगराव अप्पाको ज्यों ही यह मालूम हुआ कि, सैयदुल्लाख़ां क़िलेपर आरहा है, त्यों ही उनका शरीर क्रोधसे एकदम जल उठा। पहले तो उनके मनमें यही विचार आया कि, एकदम हुक्म देकर क़िलेके खन्दकका पुल खिँचवा लिया जाय; और दरवाज़े बन्द करवा लिये जायँ, तथा इस पाजीको वहीं रोक दिया जाय; क्योंकि उनका पक्का विश्वास था कि, राज्यकी

यह सत्यानाशी इसी एक दुष्टके कारणसे हुई है; और बीजापुर-में लेजाकर हमारा जो इतना अपमान किया गया, उसका भी कारण यही दुष्ट है। इस विषयमें अप्पासाहबने अपना क्रोध अबतक दबा रखा था, सो आज बिलकुल उमड़ आया; और उस बुड्ढे के मनमें यहांतक आया कि, इस दुष्टको क़िलेपर बिलकुल ही न आने दिया जाय; और यदि आने भी दिया जाय, तो यहीं उसका कामतमाम भी कर दिया जाय। फिर उन्होंने सोचा कि, ऐसा करनेसे कोई लाभ नहीं। यह दुष्ट आज एक प्रकारसे दूसरा बादशाह ही बना बैठा है, इसका यदि अणु-मात्र भी अपमान किया जायगा, तो बादशाह आकाश-पाताल एक कर देगा; और हमारे लिए क्या करेगा; और क्या नहीं— इसका कोई ठीक नहीं। और उसमें भी, यदि कहीं इसको हम यहींका यहीं मार डालेंगे, तो सब ख़ातमा ही समझिये। इसके प्रत्येक रक्तबिन्दुके लिए बादशाह एक एक आदमीका ख़ून किये बिना न रहेगा; और हमको क्या करेगा, क्या नहीं, इसकी कल्पना भी नहीं की जासकती। इस प्रकारकी सभी बातें रंगराव अप्पाके मनमें आईं। सैयदुल्लाख़ां आजकल प्रत्यक्ष बादशाह ही बन रहा है। उसके मनमें जो कुछ आयगा, सो करायगा, कभी नहीं मानेगा। ऐसी हालत थी। इसलिए ज्यों ही ऐसा सन्देशा हरकारेने दिया कि, सरदार साहबकी सवारी आरही है,त्यों ही अप्पासाहबने चारों ओर सब व्यवस्था ठीक रखनेका हुक्म दिया; और आप स्वयं बहुत दूरसे

ख़ांसाहबका स्वागत करनेके लिए चल पड़े। सैयदुल्लाख़ांको सामनेसे आता हुआ देखकर अप्पासाहबने बड़े अदबसे उसका स्वागत किया; और "इधर आनेकी तकलीफ़ क्यों की ?" इत्यादि प्रश्न करके आप पालकीके साथ चार क़दम आगे भी चले। यह सब करते समय बेचारे अप्पासाहबके हृदयमें ऐसे कुछ विचित्र और भयंकर विचार आरहे थे कि, उनको स्वयं भी इस बातका ख़याल न था कि, इस प्रकारके विचार भी कभी हमारे मनमें आसकते हैं। उन्होंने सोचा कि, देखो, यह दुष्ट अन्तमें यहांतक आपहुंचा, अब इसे यदि हम यहीं मार डालें, तो बीजा-पुरके राज्यको एक बड़े भारी संकटसे बचानेका श्रेय हमको प्राप्त हो, पाप कुछ भी न लगे। सोचनेकी बात है कि, जिस बुड्ढे के मनमें विश्वासघात करनेका कभी विचार भी नहीं फटक सकता था, उसीके मनमें आज ये विचार—और निश्चयात्मक विचार—आरहे हैं कि, "इसके क़िलेपर पहुंचते ही, क़िलेका पूरा पूरा बन्दोबस्त करके,इसको ऊपर ही ऊपर ख़ुदाके घर रवाना कर दिया जाय,ऐसा करनेसे पाप बिलकुल नहीं लगेगा !" परन्तु उनका यह विचार—निश्चयात्मक होनेपर भी—एक क्षणसे अधिक टिक नहीं सका—तुरन्त ही उन्होंने उसे अपने हृदय-प्रदेशसे निकाल बाहर किया; और उसकी जगहपर इस विचार-को क़ायम किया कि, "अच्छा, आया तो आया—अब इसको नाख़ुश करनेका कोई काम नहीं करना चाहिए, बस—इतना ही हमारा कर्त्तव्य है।" यह सोचकर उन्होंने उसकी उचित मर्यादा और व्यवस्था रखनेका प्रबन्ध किया।

सैयदुल्लाख़ां जितना दुष्ट, उतना ही डरपोक भी था। क़िलेपर आते ही पहले उसने इन बातोंकी जांच की कि, हमको जो जगह दीगई है, वह कहांतक सुरक्षित है, रातबिरात आकर कोई हमारा ख़ून तो नहीं कर सकेगा, हमारे मकानमें गुप्त रूपसे किसीके आनेका मार्ग तो नहीं है, क़िलेका बन्दोवस्त किस प्रकारका है, इत्यादि। इन बातोंके विषयमें जितनी चौकसी वह चाहता था, उतनी जब उसे नहीं दिखाई दी, तब उसने रंगराव अप्पापर अपना रोब गांठकर पहले सब बन्दोबस्त पूरा पूरा करनेका हुक्म दिया। उसने देखा कि, क़िलेके आसपास खन्दकमें पूरा पूरा पानी नहीं है, इसलिए पानी छुड़वानेका भी उसने हुक्म दिया। पहरे-चौकीका ख़ूब कठोर प्रबन्ध किया; और यह हुक्म दिया कि, कोई भी अपरिचित आदमी, जिसका क़िलेसे सम्बन्ध नहीं है, ऊपर न आने पावे। रंगराव अप्पाको जिन बातोंकी आवश्यकता ही नहीं मालूम होती थी, उन बातोंके न होनेपर भी उसने उनको दोष दिया; और कहा कि, तुम थानेदार होकर भी इतनी ग़फ़लतसे रहते हो—तुमको मालूम नहीं है, आजकल इन प्रान्तोंमें कितनी अराजकता फैली हुई है; किस समय कौन क्या करेगा, इसका कोई ठीक नहीं, फिर भी इतनी अन्धाधुंध! यह है क्या? इस प्रकार उसने ख़ूब अप्पा-साहबको डांटा; और अनेक मर्मभेदक बातें कहीं। इसके बाद उसने अपने ही हुक्मसे क़िलेको ऐसा सुसज्जित कराया, मानो आज ही कोई क़िलेपर चढ़ाई करने आरहा हो! अभीतक

ऐसा नियम था कि, सूर्योदयसे लेकर सूर्यास्ततक, प्रत्येक परिचित व्यक्ति, फिर चाहे उसका क़िलेसे कोई सम्बन्ध भी न हो, क़िलेपर जासकता था; पर अब ख़ांसाहबने यह सारी व्यवस्था बदल दी। उन्होंने अपना कठोर हुक्म सुनाया कि, चाहे जो कोई हो, परवानेके बिना ऊपर न आने दिया जाय। मतलब यह कि, रंगराव अप्पासाहबकी सारी व्यवस्था बदलकर ख़ांसाहबने, अपने आनेके दिनसे ही, अपनी सम्पूर्ण स्वतंत्र व्यवस्था जारी कर दी! अथवा यों कहिये कि, एक प्रकारसे क़िलेका सारा कारबार ही उन्होंने अपने हाथमें लेलिया। रंगराव अप्पाके समान स्वतंत्रप्रकृति व्यक्तिको अवश्य ही यह बात पसन्द नहीं आई। सच तो यह था कि, उनको इस बातका विश्वास था कि, जबतक हम क़िलेपर मौजूद हैं, तबतक कोई ऐसा माईका लाल नहीं, जो क़िलेकी तरफ तिरछी नज़रसे देख भी ले। शान्तिके दिनोंमें भी, युद्धके दिनोंकी भांति, क़िलेको सजा रखना नामर्दोंका काम है। उनको पक्का विश्वास था कि, मौक़ा आनेपर हमारी सारी पलटन क्षणभरमें ही क़िलेकी रक्षाके लिए तैयार होजायगी। उनका यह एक कठोर नियम था कि, रातको कोई भी सिपाही कहीं दूसरी जगह न रहे, क़िलेपर ही रहे; और रातको दस बजे आकर स्वयं उनके पास हाज़िरी दे। बस, अपने इसी नियमको वे काफी समझते थे। परन्तु आज सैयदुल्लाख़ांने उपरोधक वचन कह कहकर उनको अत्यन्त खिन्न कर दिया; और क़िलेका सारा कारबार

अपने हाथमें लेलिया। सैयदुल्लाख़ां अब क़िलेपर इस प्रकार हुकूमत करने लगा, जैसे अप्पासाहब मौजूद ही न हों। उसके इस कार्यसे रंगराव अप्पाको कितना क्रोध आया होगा, इसकी कल्पना पाठक स्वयं कर सकते हैं।

सैयदुल्लाख़ांने भयके वश होकर तो ऐसी व्यवस्था कराई ही थी, पर इसके अतिरिक्त इसमें उसका एक और भी भीतरी उद्देश्य था; और वह उद्देश्य यही कि, जिससे उस कार्यमें उसे सुविधा हो, जिस मुख्य कार्यके लिए वह सुलतानगढ़पर आया था। पहले दिन रंगराव अप्पाके हाथसे क़िलेका सारा कारबार हाथमें लेकर ही सैयदुल्लाख़ांको सन्तोष नहीं हुआ; बल्कि उसने क़िलेकी दक्षिण ओर जो अपने सिपाही कुछ अन्तर-पर लगा रखे थे, उनमेंसे पचास आदमियोंको बुलाया; और क़िलेके सब दरवाज़े भी उन्हींके हाथमें देदिये; और अबतक जो संरक्षक दरवाजोंपर रहते थे, उनको अलग कर दिया। पहले ही दिन उसने ऐसा, नादिरशाहीका बर्ताव, किया—अब और क्या चाहिए? लोगोंके मन एकदम बिगड़ उठे। इसके बाद, दूसरे दिन, उसने जो व्यवहार दिखलाया, वह और भी अधिक असन्तोषजनक था। पाठकोंको मालूम है कि, रण-दुल्लाख़ां जिस समय कर्नाटककी चढ़ाईपर जाने लगा था, उस समय उसने अपने पचास चुने हुए सिपाहियोंको, अपनी बहनके संरक्षणार्थ, क़िलेपर भेज दिया था। इसलिए सैयदुल्लाख़ांने सोचा कि, ये लोग हमारे कृष्णाकृत्यके लिए एक विघ्नस्वरूप ही

हैं, अतएव उसने इन लोगोंको भी अलग कर देनेका विचार किया। रंगराव अप्पाको उसने बुलवाया और कहा कि, "इतने लोगोंकी कोई आवश्यकता नहीं, इन लोगोंको आज ही जानेके लिए कहो।" रंगराव अप्पाने स्पष्ट ही उत्तर दिया कि, "ये लोग हमारे अधिकारमें नहीं हैं। बेगमसाहबाके अधिकारमें हैं। रणदुल्लाख़ांने इनको भेजा है। इनको जानेके लिए कहना मेरे अधिकारसे बाहर है।" यह उत्तर सुनकर सैयदुल्लाख़ां एकदम जल उठा; क्योंकि उसका पक्का विश्वास था कि, ये लोग यदि जायंगे नहीं, तो हमारी कारस्तानी सफल नहीं होगी। फिर भी उसने निश्चय किया कि, अन्ततक प्रयत्न करना चाहिए। इसलिये यह निश्चय करके उसने उन सिपाहियोंके नायकको बुलवाया; और उससे बहुत ही घुड़ककर कहा कि, अब हम यहां आगये हैं, हमारे साथ बहुत आदमी हैं, तुम्हारी कोई आवश्यकता नहीं। एक-दो आदमी भले ही बने रहें, बाक़ी सब यहांसे बीजापुर चले जायं। उस नायकने पहले तो अदबके साथ जो उत्तर देना चाहिए था, दिया; पर सैयदुल्लाख़ांको उससे कोई सन्तोष नहीं हुआ; और वह उससे भी अधिक कठोर तथा अपमानजनक बातें कहने लगा, जिनको वह कट्टर सिपाही सह नहीं सका। अतएव उसने भी वैसे ही उत्तर दिये—यही नहीं, बल्कि अपनी तलवारपर भी वह एक बार हाथ लेगया। यह देखते ही डरपोक सैयदुल्लाख़ां एकदम नरम पड़ गया; और उस नायकके साथ दिलासेसे कुछ बातचीत करके उससे अपना पिंड छुड़ाया।

इस विषयमें सैयदुल्लाख़ांको सफलता नहीं हुई; परन्तु इससे वह निराश नहीं हुआ। बहादुरीके साथ कोई कार्य करनेमें यदि सफलता प्राप्त नहीं होती, तो नामर्द लोग इससे घबड़ाते नहीं; परन्तु वही यदि नीचताका कोई कार्य हुआ—यदि नीचताकी कोई युक्ति उनकी सफल नहीं हुई—तब फिर उनको बड़ा ही खेद होता है। उसने सोचा कि, अच्छा, सिपाही भले ही बने रहें, कोई परवा नहीं। इनको छकाकर भी हम उस गुलबंकावलीको अवश्य लेजायँगे, उसको एक बार बादशाहके महलोंमें अवश्य ही रक्खेंगे; और सो भी जब हम पहले उसका स्वाद लेलेंगे तब—इसीमें हमारी सारी क़ीमत है; और यही हमारी सारी करामात है! यह सोचकर फिर उसने अपना सड़ा हुआ मस्तिष्क उसी बातके सोचनेमें लगाया। यह घटना क़िलेपर उसके आनेके दूसरे दिनकी है। उसी दिन रातको एक और विलक्षण घटना हुई। उसको बतलाकर तब आगेका वृत्तान्त बतलावेंगे।

रात काफी जाचुकी थी। परन्तु हां, चांदनी ख़ूब छिटक रही थी। सैयदुल्लाख़ांने नींद लेनेका बहुत प्रयत्न किया; पर काले सांपको कहीं रातको नींद आती है! और उसने यदि कहीं किसीका दंश सोचा हो, तो कहना ही क्या? फिर तो वह उसी चक्रमें रहता है। सैयदुल्लाख़ांने सोचा कि, रणदुल्ला-ख़ांको यद्यपि हमने भगा दिया, फिर भी उसने, जो कुछ प्रबन्ध उसको करना था, कर ही लिया। यह सोचकर उसपर वह

बहुत ही क्रोधित हुआ। उसी क्रोधके आवेगमें अब उसको यही न सूझने लगा, कि अब वह क्या करे और क्या न करे। नानाप्रकारकी युक्तियां उसने सोचीं; पर कोई भी उसके मनमें न आई। उसका सिर विचारोंके कारण बड़ी गड़बड़ीमें पड़ गया; और अब उसको ऐसा मालूम हुआ कि, जैसे उसका सारा विचार ही निष्फल जायगा; और उसका उद्देश्य अब सिद्ध न होगा। वह मनही मन निराश होने लगा। पर वह इस प्रकार निराश होजानेवाला मनुष्य न था। शीघ्र ही उसने अपने मनको समझा लिया; और उठकर खिड़कीके पास आया। वहांसे उसने देखा कि, बाहर खूब चांदनी छिटक रही है। उस चांदनीको देखकर एकदम उसके मनमें क्या विचार आया कि, ऐसी चांदनीमें यदि वह चम्पकली मुझे मिल जाय, तो क्या ही बहार आजाय! इस विचारके आनेसे उसके मनको कुछ सन्तोषसा हुआ। फिर उसके मनमें आया कि, यह केवल मेरे मनका विचार ही नहीं है, बल्कि इसमें सत्यता भी है; और बहुत जल्द इसका मुझे अनुभव भी होनेवाला है—यह बात अपने मनमें लाकर उसने अपनी दृष्टि उस भवनकी ओर घुमाई कि, जिस भवनमें वह बेगम रहती थी। जैसे प्रत्यक्ष दर्शन नहीं, तो न सही; उसके बँगलेके ही दर्शन सही! ख़ांसाहबने उस दिन शराबकी मात्रा कुछ अधिक कर दी थी; और इसीकारण अपनी रची हुई कल्पनासृष्टिमें मनोराज्य करनेका उन्हें एक प्रकारसे अच्छा मौक़ा मिल रहा था।

अस्तु। अब उनके मनमें यह आया कि, आओ, एकदम चांदनीमें चलकर बैठें। बस, मनमें आनेभरकी देरी थी कि, उन्होंने अपने आदमीको हुक्म दिया कि, हमारी कुर्सी सामनेके बुर्जपर (उस बुर्जपर जो बेगमके महलसे निकट था) लेचलकर लगाओ। आदमीने आज्ञानुसार कुर्सी लगाकर ख़बर दी; और ख़ांसाहबकी सवारी उसपर जाकर विराजमान हुई। आनन्दसे, मौजमें आकर, आरामके साथ, हुक्का पीते हुए और बीच बीचमें शराबके घूंट लेते हुए ख़ांसाहब सामनेके उसी महलकी ओर दृष्टि लगाकर, अपने मनोराज्यके सिंहासनपर बैठे हुए, तरंगें लेरहे थे। कुछ देर बाद उन्होंने अपने नौकरोंको भी वहांसे चले जानेकी आज्ञा दी, जिससे उनके उस एकान्त-आनन्दमें किसी प्रकारका व्यत्यय न होने पावे। उन्होंने सख़्त हुक्म देदिया कि, एक भी आदमी हमारे पास न रहे। इसके बाद आप फिर अपने उसी मनोराज्यमें निमग्न होगये। अपने सम्पूर्ण विचारोंके सफल होजानेपर हम अनेक बातें कर सकेंगे! रणदुल्लाख़ां क्रुद्ध होकर बादशाहसे वैर करने ही लगेगा; और तब राजद्रोही बतलाकर उसका बध भी किया जासकेगा। उसके नष्ट होजानेपर फिर मुरारपन्त और अफ़ज़लख़ां इत्यादि लोग बातकी बातमें दरबारसे निकाले जासकेंगे; अथवा उनको हम अपनी मुट्ठीमें भी लेसकेंगे। और रणदुल्लाख़ांकी बहनको तो हम उसी प्रकार वशमें कर लेंगे, जैसे रम्भावती!

रम्भावतीका विचार उसके मनमें आया; और उसकी मूर्ति

उसकी आंखोंके सामने आकर खड़ी होगई। इसके बाद उसके, सम्बन्धकी सारी घटनाएं—अर्थात् उसके प्राप्त करा देनेमें उसने क्या क्या प्रयत्न और क्या क्या कारस्तानियां कीं, कितनी विचित्र विचित्र युक्तियां भिड़ाईं, इत्यादि सब घटनाएं—एकके बाद एक—उसके मनमें आने लगीं। इसके बाद उसने सोचा कि, उस समय हमने जो कुछ कार्य कर दिखलाया; और जो सफलता प्राप्त की, वैसा ही—नहीं, नहीं, उससे भी विशेष महत्वपूर्ण और कठिन—कार्य करनेका अब मौक़ा आगया है। यह सोचकर वह अपनी बुद्धिको और भी विशेष रूपसे उसमें प्रवेश कराने लगा। अहा! रम्भावतीके प्राप्त होनेसे बादशाह कितना हमारे वशमें होगया; और अब यदि इस कार्यमें सफलता प्राप्त होगई, तो फिर पूछना ही क्या है! फिर तो बादशाह बिलकुल हमारी मुट्ठीमें ही आजायगा। इस प्रकार आनन्द और सुखके विचार उसके मनमें आरहे थे; और वह अपने बड़े भारी कल्पनामन्दिरमें यथेच्छ रूपसे विहार कर रहा था। इतनेमें अचानक उसे ऐसा भास हुआ, जैसे उसके सामने कोई अत्यन्त काली छाया पड़ रही है। उस छायाको देखते ही वह चौंक पड़ा; और एकदम सिर उठाकर देखता है, तो एक व्यक्ति उसे दिखाई पड़ा। उस व्यक्तिको देखते ही उसके सारे अंग शिथिल होगये। वह उठनेका प्रयत्न करने लगा, पर अपने पैरोंको वह उठा ही नहीं सका। आज कई दिनमें उसे इस मूर्तिके दर्शन हुए थे कि, जिसके कारण उसे

इतना चौंकना पड़ा। उस व्यक्तिके हाथमें एक हथियार—ख़ंजर अथवा भुजाली थी, जोकि ख़ूब ही चमकती हुई उसे भास होरही थी। यही नहीं, बल्कि उसे यह भी भास हुआ, जैसे वह व्यक्ति अपने उस हथियारको बड़ी बुरी तरहसे उसको दिखला रहा हो। यह सोचकर कि, देखो, इस कालेकलूटेने यहां भी हमारा पीछा किया, वह डरते डरते, उसकी ओर देखने लगा। इतनेमें वह क्या देखता है कि, उस कालेकलूटे मनुष्यकी आंखें बिलकुल लाल चिनगारीकी तरह चमक रही हैं। उनको देखकर तो वह और भी अधिक घबड़ाया। एक क्षणभरके बाद वह क्या देखता है कि,जैसे वह व्यक्ति किसी काले बादलकी तरह अपने स्थानसे धीरे धीरे चलकर उसकी ओर आरहा है। यह देखकर उसके हाथ-पैर फूल गये। अपने लोगोंके पहरेमें अपने निवासस्थलसे इतने नज़दीक वह बैठा था, फिर भी उसकी इतनी घबराहट! पर करता क्या? जैसे कोई कितना ही शूरवीर क्यों न हो; परन्तु फिर भी सामने यमदूतको देखकर वह घबड़ा ही जाता है,वैसी ही उसकी दशा हुई। इस व्यक्तिका दर्शन उसे बीच बीचमें हो ही जाता था, जो उसके सारे सुखोंको बिलकुल विषकी भांति कर डालता था। इस व्यक्तिको पकड़ने और उसको मरवा डालनेके लिए उसने इन महीनोंके अन्दर बड़े बड़े प्रयत्न किये; पर सब व्यर्थ गये। वह व्यक्ति दिखाई पड़ता; और पन्द्रह मिनटके अन्दर ही न जाने कहां ग़ायब होजाता, कुछ पता ही न चलता; और फिर किस

समय दिखाई देजायगा, इसका भी कुछ अनुमान न होता! किन्तु आजकी दशा वैसी नहीं थी। आज वह व्यक्ति उसके सामने ही बिलकुल स्पष्ट खड़ा था। सैयदुल्लाख़ां उसकी ओर देख रहा था! उसके नौकर-चाकर भी कुछ बहुत दूर नहीं थे। परन्तु उस व्यक्तिकी वह भुजाली और उसके वे भयंकर नेत्र देखते ही वह कुछ ऐसा घबड़ा गया कि, उसके मुखसे शब्द ही न निकलने लगा। बोलती बन्द होगई! इधर वह व्यक्ति ज्यों ज्यों एक एक क़दम आगे बढ़ने लगा, त्यों त्यों सैयदुल्लाख़ां-का शरीर और भी अधिक लटपटाने लगा। उसकी जीभ तलुए-में जालगी। मुंह सूख गया। उसको ऐसा भास हुआ कि, जैसे वह अपनी कुर्सीमें भीतर भीतर धँस रहा है; और उसकी कुर्सी ज़मीनके अन्दर अन्दर धँस रही है। इतनेमें वह काला पुरुष, जिसके हाथमें भुजाली थी, उसके बिलकुल पास ही आगया; और उसके कंधेपर हाथ रखकर धीरेसे ही—"घबड़ा मत। कुल डेढ़ दिनका तुझे और अवकाश है। अब तू मेरे पंजेसे छूट नहीं सकता। और यदि छूट गया, तो फिर मैं तुझे दिखाई नहीं दूंगा। जो कुछ करना हो, डेढ़ दिनके अन्दर कर ले"—इतने शब्द उच्चारण किये।

ये शब्द उसने इतनी शान्तिके साथ और स्वाभाविक तौरसे उच्चारण किये कि, सैयदुल्लाख़ांको भी अचम्भा हुआ। वह सोचता था कि, अब मेरी गर्दनमें अथवा छातीमें यह भुजाली भोंककर मेरे प्राण ले लेगा; और अब मेरे मरनेमें विलम्ब नहीं;

परन्तु उसकी जगहपर वे शान्तिके साथ उच्चारण किये हुए शब्द उसके कानमें पड़े! इससे अधिक अचम्भेकी और कौनसी बात होसकती है? वह व्यक्ति, जो कुछ कहना था, कह चुका; और कुछ समय भी व्यतीत होगया। अब वह नहीं बोलेगा, यह सोचकर सैयदुल्लाख़ांने अपनी गर्दन ऊपर उठाई; और आंखें खोलकर देखा, तो न वह व्यक्ति है; और न कोई! उस व्यक्तिकी छाया भी कहीं नहीं। अभी बहुत समय नहीं हुआ—शायद एक मिनट भी मुशकिलसे हुआ हो; और इतनी ही देरमें वह न जाने कहांका कहां ग़ायब होगया? उसकी छाया भी कहीं दिखाई नहीं पड़ती—बड़े आश्चर्यकी बात है! सैयदुल्लाख़ां अपने चारों ओर देखता है; पर व्यर्थ। कोई कहीं नहीं दिखाई पड़ता। ठंढी हवामें कुछ ऊंघकर हमने स्वप्न तो नहीं देखा? सैयदुल्लाख़ांको सन्देह हुआ; परन्तु उसकी वह घबराहट; और वह स्पष्ट दिखाई देनेवाली भुजाली, तथा जो अबतक कानमें गूंज रहे थे—ऐसे वे भयंकर शब्द, इत्यादि बातोंसे उसे पूर्ण विश्वास होगया कि, नहीं, यह स्वप्न नहीं था—बल्कि अक्षरशः सत्य घटना थी। उसने तुरन्त ही अपने आदमियोंको पुकारा और पूछा कि, यहां भुजाली हाथमें लिये हुए एक आदमी दिखाई दिया था, वह कहां गया? पर किसीने उसे देखा ही नहीं था, उत्तर क्या देते? हुक्म हुआ कि, देखो, वह कहीं पास ही छिपा बैठा होगा, उसकी तलाश करो। फिर क्या कहना है—चारों ओर दौड़-धूप शुरू होगई—कोई इधर दौड़ता है, कोई उधर दौड़ता है; मशालें,

पलीते, कन्दीलें, जलाई जारही हैं—दस-बीस आदमी इधर-उधर दौड़ पड़े; पर उस व्यक्तिका पता कहां लगता है! कई लोग नीचे दौड़ाये गये, कुछ वस्तीमें दौड़ाये; कहीं कुछ पता नहीं। अन्तमें सोचा कि, शायद हमारे ही मकानमें कहीं छिपा बैठा हो, इसलिए मकानका कोना कोना छान डाला गया; पर कहीं नामनिशान नहीं। अन्तमें बिलकुल निराश होकर; और अपने चारों ओर चार चुने हुए आदमियोंका सख़्त पहरा रखकर ख़ांसाहब तड़फड़ाते हुए अपने बिछौनेपर लेट रहे।

सत्तरवां परिच्छेद।

ख़ांसाहबकी घबड़ाहट।

चारों ओरसे चार पहरेदारोंको रखकर ख़ांसाहब लेटे हुए हैं; पर फिर भी उनको अपने सुरक्षितपनका विश्वास नहीं है। उनका चित्त अशान्त होरहा है। यहांतक कि एक बार उनके मनमें यह भी आया कि, व्यर्थके लिए हम अपना शहर छोड़कर यहां आये। इसके बाद बहुत देरतक वे इसी बातका विचार करते रहे कि, अब आगे हमको क्या करना चाहिए। इस प्रकार विचार करते करते रात व्यतीत होगई, सुबह हुआ, सूर्य-प्रकाश आया; और चारों ओर ख़ूब उजेला होगया। उस समय ख़ांसाहबकी वैसी ही दशा हुई, जैसीकि उस लड़केकी होजाती

है, जोकि सारी रात भूतके भयसे बड़ी घबड़ाहटमें बिताता है; और सुबह होते ही इस प्रकारकी बड़ी बड़ी बातें मारने लगता है कि, अजी, भूत है क्या चीज़! उसको क्या डरना! उसी प्रकार सैयदुल्लाख़ांने भी सोचा कि, "देखो, हम उस कालेकलूटे आदमीको व्यर्थके लिए डरे। उसमें डरनेकी कोई बात ही नहीं थी। हां, वह अचानक आगया; और इसीलिए हम इतने डर गये; नहीं तो बातकी बातमें उसकी ख़बर लेली होती—उसीके हाथका ख़ंजर छीनकर उसीके पेटमें भोंक दिया होता; पर क्या करें! अच्छा मौक़ा हाथसे चला गया!" इस प्रकारके विचार उस दिन सैयदुल्लाख़ांके मनमें कमसे कम सौ बार तो अवश्य ही आये होंगे। परन्तु साथ ही साथ उसके मनमें यह भी आया कि, उस दुष्ट मनुष्यने हमको जो मुद्दत बतलाई है, उसी मुद्दतके अन्दर हमको यहांसे रवाना होजाना चाहिए। मतलब यह कि, उसने अन्तमें यही विचार किया कि, अपना कार्य्य जहांतक शीघ्र होसके, करके हमको यहांसे बहुत जल्द चला जाना चाहिए। किन्तु यह बात एक दिनमें कैसे हो? जो कार्य्य उसको सिद्ध करना था, वह एक दिनमें होने-योग्य नहीं था। और इधर एक दिनमें ही उसे करना उसके लिए अत्यन्त आवश्यक होगया। अन्तमें, जो हो, उसने निश्चित यही किया कि, हम कार्य आज ही पूरा करेंगे; और तदनुसार उसने अपनी कावेबाज़ प्रणालीको ध्यानमें रखकर कुछ विचार भी अपने मनमें बांध लिये। वास्तवमें जिस काममें कपट कर-

नेका कोई भी कारण नहीं था, जो बात बिलकुल सरलताके साथ सिद्ध की जासकती थी, उसमें भी कपट करनेका उसने निश्चय किया। इसके बाद तुरन्त ही उसने अपने एक विश्वास-पात्र आदमीको बुलाया; और कोई गुप्त सन्देशा उसके कानमें कहा। वह आदमी चला गया; और लगभग एक पहरके अनन्तर वापस आया। उसके साथ ख़ांसाहबके उन सौ मनुष्योंके सेनाध्यक्ष महाशय थे। सेनापति महाशय ख़ांसाहबको बाक़ायदा सलाम करके उनके सामने खड़े होगये। ख़ांसाहबने उन्हें अपने पास बैठा लिया; और उनकी बड़ी प्रशंसा की। फिर इसके बाद धीरेसे उनके कानमें बतलाया, कि हमारे क्या विचार हैं; और आपको क्या करना चाहिए। इसपर उन सेना-ध्यक्ष महाशयने उनसे कुछ प्रश्न किये; और ख़ांसाहबने उनके उत्तर दिये। बहुत देरतक उन दोनोंमें कुछ गुप्त सलाह-मशविरा होता रहा। अन्तमें सब बातें निश्चित होगईं; और सेनाध्यक्ष महाशय वहांसे चले गये। "हमको जो कुछ प्रबन्ध करना था, उसका एक भाग तो हमारी इच्छाके अनुसार होचुका; अब थोड़ासा ही और रह गया है; और वही कठिन भी है—देखना चाहिए, क्या होता है?" ये शब्द ख़ांसाहबने अपने ही आप कहे; और फिर विचारमें निमग्न होगये। लगभग एक घण्टाभर विचार करनेके बाद उन्होंने अपने उस अत्यन्त विश्वासपात्र नौकरको फिर

बुलाया; और बहुत देरतक उससे कुछ कहते-सुनते रहे, फिर अन्तमें उससे कहा, "मैं चाहता था कि, कार्य धीरे धीरे साव-काश सात-आठ दिनमें करूं; परन्तु किसी कारणवश अब उतना अवकाश नहीं मिल सकता। उस ओरके दो आदमी भी यदि फूट जावें, और वे मेरे कथनानुसार अन्य लोगोंको शराब पिलाकर बेहोश कर दें, तो काम बन जाय। यह कार्य यदि सध जाय, तब तो कोई बात नहीं—जहांतक होसके, साधना चाहिए—और यदि न सधं, तब भी कोई हानि नहीं। मुझे जो कुछ करना है, सो करूंगा ही। परन्तु इस मार्गसे हो, तो बहुत अच्छा हो।" नौकरने सब बातें सुनकर यह कहकर स्वामीको आश्वासन दिया कि, जहांतक होसकेगा, मैं अवश्य आपके विचारोंको पूर्ण करनेका उद्योग करूंगा। इसके बाद वह वहांसे चला गया। अब सैयदुल्लाख़ां मन ही मन चुपके चुपके कुछ विचार करने लगा। आज उसे भूख-प्यास कुछ भी मालूम नहीं हुई। उसका सारा चित्त इसी एक विचारमें लगा था कि, हमारी इच्छाके अनुसार सारा कार्य किस प्रकार पूर्ण हो; और हम कब बीजापुर पहुँचें।

सैयदुल्लाख़ांका हुक्म लेकर उसके उन चुने हुए सौ सिपा-हियोंका सेनापति अपनी छावनीमें वापस आया; और अपने विश्वासके चार आदमी बुलाये। उनको सब बातें उसने बतलाईं और तैयारी करनेके लिए कहा। उन चारोंसे फिर अन्य सब लोगोंमें वे बातें फैल गईं; और सबके मुखसे यही

सुनाई देने लगा कि, भाई, आज रातको अमुक अमुक बातें करनी हैं।

लगभग सात बजे शामको सैयदुल्लाख़ांका शत्रु वह काला-कलूटा पुरुष उन दोनों स्त्रियोंके घरपर आया कि, जहां श्यामाका वह मामा ठहरा हुआ था। वहां जाकर श्यामाके मामासे उसने भेंट की; और फिर दोनों वस्तीके बाहर, एक मन्दिरमें जाकर, परस्पर कुछ बातचीत करने लगे! थोड़ी देर बातचीत होनेके बाद फिर वह काला महाशय श्यामाके मामासे कहता है, "आपकी और मेरी कोई जान-पहचान नहीं, फिर भी धृष्टतापूर्वक मैं आपके पास आया; और आपको इस मन्दिरमें लेआया। आप मेरी प्रार्थना स्वीकार करके यहांतक चले आये,यह आपकी बड़ी भारी कृपा हुई। आपका उद्देश्य क्या है; और आप कौन हैं, सो मुझे अच्छी तरह मालूम है। परन्तु यहां इन बातोंके बतलानेकी कोई आवश्यकता नहीं है! फिर कभी बतलाऊंगा। आज मैं आपसे सिर्फ़ इतना ही कहनेके लिए आया हूं कि, "जिस उद्देश्यसे आप यहां आये हुए हैं, उस उद्देश्यको यदि आप एकदम सिद्ध करना चाहते हैं, तो आजका मौक़ा बड़ा अच्छा है।" इतना कहनेके बाद वह कुछ देरके लिए चुप होगया। इसके बाद फिर कुछ देरमें कहता है, "यह तो आपको मालूम ही है कि, इस समय सैयदुल्लाख़ां क़िलेपर आया हुआ है। यह सैयदुल्लाख़ां मानो एक पापका पुंज ही है। इसके समान दुष्ट आदमी और कोई नहीं होगा। आज भले

भले आदमियोंकी बीजापुरके दरबारमें जो विडम्बना होरही है, उस सबका कारण यही है। इसीके कारण बीजापुरका दरबार इतनी हीनावस्थाको प्राप्त होरहा है। बादशाह वास्तवमें एक बहुत ही अच्छा आदमी है; पर इसी पापीने उसे ख़राब कर रखा है। इन सब बातोंपर ध्यान देनेसे आपको मालूम होजायगा कि, यह मनुष्य यहां किस बातसे आया है। यह आजतक जिन नीचतापूर्ण कार्योंके कारण बादशाहका प्रिय-पात्र बना है, उसी प्रकारके एक नीच कर्मके लिए यह यहां आया है; और आज ही रातको यह अपने उक्त नीच कर्मको सिद्ध करनेके विचारमें है। बीजापुरके दरबारमें जो दो-चार भले भले आदमी हैं, उनमें रणदुल्लाख़ां बहुत ही भला मनुष्य है। उसने अपनी वहनको यहां क़िलेपर कुछ दिनके लिए रख दिया है। बस, उसीको ज़बरदस्ती यहांसे लेजाकर बादशाहके रंगमहलमें रखनेका नीच विचार इसने किया है। वह बहुत सुन्दरी और बड़ी साध्वी है। सैयदुल्लाख़ांका विचार है कि, इसको एक बार लेजाकर यदि वह बादशाहके महलोंमें रख देगा, तो बादशाह उसपर और भी अधिक प्रसन्न होजायगा; और इसीलिए यह सारा प्रयत्न वह कर रहा है। इसी प्रयत्नके लिए वह यहां आया है; और आज ही रातको वह अपने उद्योगमें लगेगा। इसलिए यह मौक़ा ऐसा है कि, उसका उद्योग सफल न होने दिया जाय; और उसकी पूरी पूरी ख़बर लीजाय। उसकी ख़बर स्वयं आप कोई भी न लें। यह काम

मुझे सौंप दीजिए। आज कितने ही वर्षोंसे मेरी यह बड़ी भारी महत्वाकांक्षा होरही है कि, मैं इस दुष्टका बध करूं। इसने मेरा बड़ा भारी अपराध किया है। आज रातको वह बेगमके आदमियोंको कोई न कोई नशा देकर बेहोश करनेवाला है। उनके बेहोश होजानेपर वह अपने चुने हुए सौ सिपाही चुपकेसे क़िलेके ऊपर बुला लेगा। वे सौ सिपाही उसने पहले ही क़िलेकी एक ओर छिपा रखे हैं। उन सिपाहियोंके ऊपर पहुंच जानेपर फिर वह बेगमके महलपर एकदम छापा मारेगा; और उसको यहांसे उड़ा लेजायगा। आप यदि इस समय चतुराईसे काम लेंगे, तो आपका काम सहजहीमें हो-जायगा। इसके सिवाय, एक साध्वीकी संरक्षाका श्रेय भी आपको प्राप्त होगा। आपकी सम्पूर्ण व्यवस्था भी मुझे मालूम है। उस व्यवस्थामें भी आपको कोई विशेष परिवर्तन नहीं करना पड़ेगा। रातका मौक़ा है ही, आप उसके आदमियोंको जहांके तहां रोक रखनेका और अपने आदमियोंको ऊपर भेजनेका प्रबन्ध करें—बस, इतनेहीसे सब काम होजायगा। नहीं तो आप अपना एक गिरोह इस ढंगसे लगा रखें कि, वह दुष्ट जब उस साध्वीको पकड़कर लेजाने लगे, तब रास्तेमें ही उसको रोक रखा जाय। लेकिन यह काम आप मुझे बतलाइये; क्योंकि मुझे अपनी प्रतिज्ञा पूरी करनी है, सो मुझे पूर्ण करनी चाहिए।"

वह महाशय जबकि यह सब बातें कह रहा था, उसका

श्रोता चुपकेसे बैठा हुआ सुन रहा था। यह कौन महाशय है, जो हमारे निश्चय और हमारे विचारोंका इतना पता रखता है; और हमको पहचानता भी है? कुछ भी उसके ध्यानमें नहीं आया; और इसलिए क्षणभरके लिए उसके मनमें यह शंका भी उपस्थित हुई कि, यह जो कुछ कह रहा है, सो बिलकुल हृदयसे कह रहा है, अथवा इसमें इसका कोई विशेष उद्देश्य है? परन्तु इतनेमें उसके ख़यालमें आया कि, शायद हमने इसका वृत्तान्त कहीं सुना अवश्य है। अतएव वह एकदम उससे कहता है, "आपके कथनानुसार कार्य करनेमें कोई हानि तो दिखाई नहीं पड़ती। पर आपने जो वृत्तान्त बतलाया, वह क्या सचमुच उसी प्रकार होनेवाला है? आपको क्या इसकी सत्यताके विषयमें विश्वास है? और यदि है, तो यह कैसे कहा जासकता है कि,इस प्रकार कार्य करनेसे सफलता अवश्य ही प्राप्त होगी?"

"इसमें आपको कोई शंका करनेकी आवश्यकता नहीं। मैं जो कुछ कहता हूं, उसमें रत्तीभर फ़र्क नहीं पड़ सकता। मेरे विषयमें आप सन्देह न करें। आपको यदि मेरा विचार पसन्द आवे, तो वैसा आप करें। मैं तो अपनी प्रतिज्ञा किसी न किसी प्रकार पूरी ही करूंगा, इसमें फ़र्क पड़ नहीं सकता। हां, मेरी सूचनाके अनुसार आप यदि कार्य करेंगे, तो आपके प्रयत्नोंको सफलता प्राप्त होनेमें सुविधा रहेगी। आपको फिर टेढ़े-मेढ़े रास्तेसे क़िलेपर चढ़नेकी आवश्यकता नहीं रहेगी।

बस, इसीलिए मैं आपको यह सूचना देरहा हूं। यदि आपका निश्चय हो, तो अभी आप सूर्याजीके सिपाहियोंसे सैयदुल्ला-ख़ांके सौ सिपाहियोंको रोक रखनेकी तजवीज़ करवा दें। इसके बाद अपने सिपाहियोंको आप यह हुक्म दें कि, वे उसी समय क़िलेके ऊपर चढ़ आवें, जिस समय सैयदुल्लाख़ांने अपने सिपाहियोंको क़िलेके ऊपर चढ़नेका हुक्म देरखा है। ऐसा करनेसे सुलतानगढ़ बातकी बातमें आपके हाथमें आ-जायगा। समय ठीक रातके बारह बजेका निश्चित हुआ है। सध सके, तो साधिये। न सध सके, तो मेरा कोई आग्रह नहीं। ऐन मौक़ेपर किसीके आकर कुछ कहनेसे आप अपना मन बदलनेवाले नहीं हैं, यह मैं जानता हूं। पर इसके साथ ही साथ मैं यह भी जानता हूं कि, ठीक मौक़ेपर मिली हुई जानकारीसे लाभ उठा लेनेमें भी आप कुछ कम दक्ष नहीं हैं। बस, इसीलिए मैंने आपको यह सूचना देनेका प्रयत्न किया है। इसका आप भलीभांति विचार करें; पर साथ ही यह भी ध्यानमें रखें कि, अब विचार करनेके लिए आपके पास उतना समय नहीं है।"

इतना कहकर वह तुरन्त ही उठा; और "जाता हूं" कहकर न जाने कहांका कहां ग़ायब होगया।

इकहत्तरवां परिच्छेद।

द्विधा चित्त।

वह कालाकलूटा आदमी जब उपर्युक्त रीतिसे बातचीत करके चला गया, तब हमारे वे नवयुवक महाशय लगभग पांच ही मिनट मन ही मन सचिन्त होकर कुछ विचार करते रहे। उन्होंने सोचा कि, अब हम अपना पहलेका ही विचार स्थिर रखकर उसीके अनुसार कार्य करें या इस महाशयकी सूचनाके अनुसार इस अवसरसे लाभ उठावें—इसमें सन्देह नहीं, कि हमने अपना जो प्रबन्ध कर रखा है, उसकी अपेक्षा इस महाशयके बतलाये हुए मार्गमें हमको बहुत अधिक सुविधा है; पर इस बातका तो विचार पहले होजाना चाहिए कि, सचमुच ही वह सुविधा हमको प्राप्त होगी, अथवा औरका और ही होरहेगा। उस महाशयके विषयमें यद्यपि उन्होंने अपने मनमें अनुमान कर लिया था; फिर भी यह निश्चय नहीं था कि, उनका वह अनुमान कहांतक सच है; और सच भी हो, तो इसका क्या ठीक कि, उस अनुमानके अनुसार ही सब बातें होंगी। बस, यही दो विचार उनके मनमें आरहे थे। अन्तमें उन महाशयने अपनी सदैवकी पद्धतिके अनुसार अपनी कुलदेवीका ही ध्यान करना निश्चित किया; और लगभग पांच मिनटतक उन्होंने उसका ध्यान किया। उस ध्यानमें उनको देवीका साक्षात्कार

हुआ; और यह सूचना मिली कि, "इस अवसरपर तुझे व्यर्थके लिए कष्ट न हो, इसीकारण मैंने ये सब सुविधाएं उपस्थित कर रखी हैं। तू निस्संकोच होकर इस अवसरसे पूरा पूरा लाभ उठा ले।" देवीकी आज्ञा होचुकी, अब क्या पूछना है? तुरन्त ही सूर्याजीके पास यह सन्देशा गया कि, सुलतानगढ़की अमुक ओर इतने इतने लोगोंकी एक छावनी पड़ी है। यह छावनी वहांसे उठकर क़िलेपर धावा करनेके लिए अमुक समय-पर चल देगी, सो आप उसको जहांका तहां दाब रखें। बिलकुल वहांसे इंचभर भी हिलने न दें। साथ ही साथ अपने गिरोहके लिए यह हुक्म हुआ कि, इतने इतने बजे क़िलेपर बिलकुल सामनेहीके, दिल्लीदरवाजेसे, धावा करना है, सो सब आदमी एकदम तैयार रहें। किसी प्रकारकी ग़फ़लत न हो। इस तैयारीमें फिर दो घड़ी भी नहीं लगी। सूर्याजीके गिरोहके लिए जो कार्य बतलाया गया, उसके लिए तो उन्हें कोई आश्चर्य नहीं हुआ; किन्तु जब स्वयं राजासाहबके लोगों-को यह बतलाया गया कि, आज इतने बजे आगेके दरवाज़ेसे ही ऊपर जाना होगा, तब उनको अवश्य ही अत्यन्त आश्चर्य हुआ। क्योंकि पहले सबका यही ख़याल था कि, आगेके दर-वाज़ेसे जाना बिलकुल असम्भव होगा; बल्कि उन लोगोंने समझा था कि, क़िलेके पीछेकी ओरसे अथवा दाईं-बाईं ओरसे, जहां चढ़नेयोग्य स्थान होगा, वहींसे जाना होगा। इसके बाद फिर क़िलेपर पहुँचकर वहांके लोगोंपर अचानक छापा

मारना होगा; और छापा मारनेपर जब क़िलेके सिपाही मुक़ा-
बिला करने लगेंगे, तब उनको परास्त करके क़िलेको अपने
हाथमें लेलेना होगा। वे समझते थे कि, क़िलेके बिलकुल सामनेके
ही दरवाजेपर जाकर और उसको तोड़कर घुसनेका प्रयत्न
करना मानो एक प्रकारसे क़िलेके लोगोंको सावधान करके
उनके साथ मुक़ाबिला करना है। बात यह थी कि, श्रीधर
स्वामीके छुटकारेके समय जो युक्ति कीगई थी, उसीका
लोगोंको ख़याल था; और वे सोचते थे कि, ऐसा ही इस बार
भी करना होगा। इसके सिवाय, बहुत लोगोंका यह भी
ख़याल हुआ कि, अपनी वर्तमान अवस्थामें, इतनी प्रबलताके
साथ, आगेकी ओरसे, शत्रु पर धावा करना हमारे लिए ठीक
न होगा। फिर उसमें भी सैयदुल्लाख़ांके समान सरदार
अपनी सेनाके साथ पहलेहीसे आजमा है। ऐसी दशामें
वास्तवमें हमको इस समय क़िला लेनेका अपना विचार ही
छोड़ देना चाहिए था, सो वैसा न करके यह क्या उपद्रव रचा
जारहा है, इसमें कोई भूल तो नहीं होरही है? तानाजीको
भी इसपर थोड़ासा सन्देह ही हुआ, परन्तु चूंकि उनकी अपने
मित्रपर इतनी दृढ़ श्रद्धा थी कि, जिसके कारण उनको कोई भी
कार्य असम्भव नहीं जान पड़ता था। उनको पक्का विश्वास
था कि, हमारे मित्रपर भवानी माताकी पूर्ण कृपा है; और इस-
कारण वह उन्हें प्रत्येक कार्यमें सफलता अवश्य ही प्रदान
करेगी; और इसीकारण उन्होंने अपने मनके उपर्युक्त सन्देहको

अपने किसी मित्रसे प्रकट नहीं किया। हां, उन्होंने सिर्फ इतना ही प्रबन्ध किया कि, जो कुछ जानकारी अपने कार्यके विषयमें उनको प्राप्त करनी थी, सो सब प्राप्त करके अपने लोगोंको नियत स्थानपर लगा रखा; और हुक्मकी प्रतीक्षा करनेके लिए कहा। इस प्रकार जब लोगोंको उचित स्थानपर लगा रखनेका प्रबन्ध होचुका, तब एक और महत्वपूर्ण कार्यकी ओर ध्यान दिया गया। जिस दिनसे क़िलेके लेनेका विचार निश्चित होकर लोग क़िलेके पास लाकर लगा रखे गये थे, उसी दिनसे, अर्थात् जबसे उस नवयुवक महाशयने श्यामाके काका-मामाका रूप धरकर सारे क़िलेका, सब दृष्टियोंसे, निरीक्षण किया था, तभीसे, उसके मनमें एक बात बार बार आरही थी; और वह यह कि, जिस तरहसे होसके, क़िलेदारको अपने पक्षमें कर लिया जाय। क़िलेको जीतकर उसे अपने वशमें करनेकी अपेक्षा पहले ही वशमें करना अच्छा—इससे विशेष लाभ होगा। बस, इसी कार्यको सिद्ध करनेके लिए विचार किया जारहा था कि, इसके लिए किस युक्तिकी योजना की जाय। परन्तु वास्तवमें यह कार्य अब एक प्रकारसे असम्भवसा ही मालूम होरहा था। सच पूछिये, तो लड़का, पिताके विरुद्ध होकर, अपने पिताके हाथका क़िला बादशाहके शत्रुके अधिकारमें दिलानेका प्रयत्न कर रहा था; और यह बात उस नवयुवकके मनको कुछ बहुत पसन्द नहीं आरही थी। इधर आज अब बिलकुल अन्तका समय आगया।

इसलिए यह तो बिलकुल निश्चित होचुका कि, अब अप्पा-साहब चाहे हमारे अनुकूल हों, चाहे न हों, क़िला तो अवश्य ही हस्तगत किया जायगा, इसमें सन्देह नहीं; परन्तु फिर भी एक बार प्रयत्न करके देख लिया जाय, यदि उनकी अनुकूलता प्राप्त होजाय, तो अच्छी ही बात है। यह विचार बार बार उसके मनमें आने लगा। सच पूछिये, तो अब दरवाज़ेपर उसके सिपा-हियोंके पहुँचने और धावा बोलनेमें लगभग घण्टे-डेढ़ घण्टेका ही अवकाश रह गया था; पर उतने अवकाशमें भी यदि कुछ होसके तो करके देख लिया जाय, यह सोचकर उस नवयुवकने तुरन्त ही नानासाहबको बुलवाया। और उनके आजानेपर उसने कहा कि, तुम एक बार फिर क़िलेपर जाओ; और अपने पिताको, सोतेसे भी जगाकर, आज शामके वक्ततकका सारा वृत्तान्त बतलाओ; और ऐसा यत्न करो कि, जिससे उनका मन हमारे कार्यकी ओर लग जाय। अन्ततक आशा न छोड़नी चाहिए। हम लोग हिन्दू हैं, इसलिए यह लोकापवाद न होना चाहिए कि, देखो, लड़केने बापपर धावा बोल दिया, उसको क़ैद किया; उसका पराभव किया, उसकी मानखण्डना की। यह लोकापवाद बुरा है। पिताकी जीवितावस्थामें उसको क़ैद करके स्वयं राज करना हम हिन्दुओंका व्रत नहीं। इसलिए तुम जाओ; और अब भी उनके चित्तको बदलनेका प्रयत्न करो। तुम्हारे द्वारा यदि यह कार्य नहीं होगा, तो अन्तमें मैं स्वयं जाऊंगा; परन्तु हमको स्वयं, और जनसमाजमें, पीछेसे यह

कहनेकी नौबत न आने देनी चाहिए, कि हमने उनको समझानेका कोई प्रयत्न नहीं किया। राज्यभक्ति और स्वामिभक्तिका जब उनको इतना अभिमान है, तब क्या स्वधर्मभक्ति और स्वदेशभक्तिके विषयमें उनके मनमें कुछ भी अभिमान न होगा? जाओ, और उनसे मिलकर, सब बातें समझाकर, उनको बतलाओ।"

नानासाहबने यह सब सुना; और कुछ मुस्कुराये। अपने पिताके अपने पक्षमें मिलनेकी अब उनको कुछ भी आशा नहीं रह गई थी। वे भलीभांति जानते थे कि, हमारे पिता इतने कठोर दृढ़प्रतिज्ञ हैं कि, ऐन वक्त़ पर यदि हम उनके सामने पड़ जायंगे, तो वे हमारी गर्दन भी काट डाले विना न रहेंगे। बीजापुरमें वे अपने पितासे एक बार मिल ही चुके थे। वहांका अनुभव अभी उनके लिये बिलकुल ताज़ा था। अतः उन्होंने उस नवयुवकको बतलाया भी कि, आप जो यह कार्य हमको बतला रहे हैं,इसमें हमको कोई आशा नहीं है;परन्तु जब उन्होंने उसका यह आग्रह देखा, कि नहीं—एक बार अन्तिम प्रयत्न करके फिर देख लो, तब वे इनकार नहीं कर सके। इसके सिवाय, उन्होंने यह भी सोचा कि, शायद हमको इस प्रकार आगे भेजनेमें इनका और भी कोई अच्छा उद्देश्य होगा, इसलिए अन्तमें वे जानेको तैयार होगये। इस प्रकार उनकी तैयारी देखते ही राजा शिवाजीने उनको सांकेतिक शब्द भी बतला दिया। उन्होंने यह कहकर नानासाहबको सचेत कर दिया कि, "देखो,

आज पहले दरवाज़ेसे ही अन्ततक सब पहरेदार सैयदुल्लाख़ांके हैं। इसलिए प्रत्येक जगहपर जब तुम यह सांकेतिक शब्द उच्चारण करोगे, तभी ऊपरतक पहुँच सकोगे, अन्यथा नहीं।" यह सुनकर नानासाहबको बड़ा आश्चर्य हुआ कि, राजा शिवाजीको सैयदुल्लाख़ांके आदमियोंका यह गुप्त सांकेतिक शब्द मालूम कैसे होगया। परन्तु वह मौक़ा आश्चर्य अथवा कौतुकमें ही पड़े रहनेका नहीं था; इसलिए फिर उन्होंने कुछ भी न कहते हुए अपना रास्ता पकड़ा। चलते समय राजासाहबने उनसे कहा कि, "देखो, समय अब बिलकुल निकट आता जारहा है। इसलिए अब ऊपर जाकर फिर नीचे वापस आनेके लिए तुम्हें बिलकुल मौक़ा नहीं है। जिस कामके लिए तुम जारहे हो, वह काम होजाय, तब तो ठीक ही है, अन्यथा फिर तुमको वहीं रह जाना चाहिए। ठीक समयपर हमारे लोग ऊपर चढ़कर आवेंगे ही, सो उनको वहीं रहकर नाकेबन्दीमें तुम सहायता करना; और क़िलेपरके अपने पुराने लोगोंको यही समझाते रहना कि, तुम लोग हमारे कार्यमें बाधा न डालो, हमारे आदमियोंके साथ उपद्रव मत करो। बस, इतना यदि तुमने कर लिया, तो क़िला हमारे हाथमें आ ही जायगा। हमारे लोग जब आवेंगे, तब इस बातकी शंका किसीको हो ही नहीं सकती कि, ये किसके सिपाही हैं; परन्तु जब सब पहरों और बुर्जोंके आदमी बेकार कर दिये जायंगे; और उनकी जगह हमारे लोग बुर्जों पर जम जायंगे, तब अवश्य ही भीतरके लोगोंमें बड़ी

गड़बड़ी मचेगी। परन्तु क़िलेपरके पुराने सिपाही आज सब असावधान हैं—उनके स्थानपर सब जगह सैयदुल्लाख़ांके ही आदमी तैनात हैं। इसलिए सैयदुल्लाख़ांके आदमी जब मारे जायंगे, तब अन्य लोगोंको बुरा लगनेका कोई कारण ही नहीं। इसलिए तुम उनको समझाना और कहना कि, "देखो, अब तुम आजसे मुसलमानोंके अत्याचारसे बिलकुल मुक्त होगये। अब तुमको हम सब प्रकारसे सुखी रखेंगे।" इस प्रकारका आश्वासन जब उनको तुम दोगे, तब वे काहेको उपद्रव करेंगे? और यदि कुछ उपद्रव करेंगे भी, तो हम देख लेंगे। और जिस कामके लिए तुम जारहे हो, वह काम यदि होगया, तब तो फिर कुछ कहना ही नहीं; पर यदि न हुआ, तो भी क़िलेके पुराने लोग, जो हमारे हैं, उनके प्राण जहांतक होसके, बचाने ही चाहिये। हां, जहां बिलकुल लाचारीकी हालत आजाय; और ऐसा जान पड़े कि, सामोपचारसे काम नहीं होता, वहीं उनकी प्राणहानि कीजाय। परन्तु जहांतक वे मिलाये जासकें, वहांतक उनको मिला लेना ही ठीक होगा। इस बातपर ख़ूब ध्यान रखो। अबतक हमने इसी भावको रखकर सब व्यवस्था की है; और अन्ततक यही भाव क़ायम रखेंगे।"

इतना कहकर उन्होंने नानासाहबको विदा किया। और नानासाहब बिलकुल निराशचित्तसे; परन्तु कर्त्तव्यकी ओर ध्यान देकर, क़िलेकी ओर चले गये। नानासाहब क़िलेके नीचे अभी ख़न्दकके इसी पार थे कि, इतनेमें सामनेवाले बुर्जके

ऊपरके पहरेदारने आवाज़ दी कि "कौन है?" परन्तु उसकी आवाज़ अभी पूरी पूरी निकलने भी नहीं पाई थी कि, नाना-साहबने वही शिवाजीका बतलाया हुआ, सैयदुल्लाख़ांके सिपाहियोंका, सांकेतिक शब्द कहा। उसे सुनते ही क़िलेका फाटक खुल गया, उसकी ज़ंज़ीरें धड़ाधड़ बजीं, खंदकके ऊपरका पुल लग गया; और नानासाहबके लिए भीतर आनेका मार्ग खुल गया। प्रत्येक पहरेपर वे सिपाहियोंको उसी सांकेतिक शब्दसे विश्वास दिलाते हुए आगे बढ़े। नानासाहब क़िलेपर चढ़ते जारहे हैं; पर किसी पहरेदारको भी यह नहीं मालूम होता, कि यह सैयदुल्लाख़ांका आदमी नहीं है। एक पहरेपर अवश्य ही उनसे यह प्रश्न किया गया कि, "और लोग कहां हैं?" नाना-साहब कुछ घबड़ाये; पर शीघ्र ही सम्हलकर यह कहते हुए, कि "सब घड़ीभरमें आते हैं, होशियार रहो," वे आगेकी ओर झपटे। निस्सन्देह उनको इस प्रश्नका कोई वास्तविक महत्व मालूम नहीं था; किन्तु जो कुछ उस समय उनकी ज़बानपर आ-गया, वह उत्तर उन्होंने दिया। और उससे बहुत लाभ होगया। अन्यथा कहीं यदि वे उलटे यह पूछ बैठते कि, कौनसे लोग? तो सारा खेल बिगड़ जाता; क्योंकि उनका भेद खुल जाता। अस्तु।

प्रत्येक पहरेको लांघते हुए नानासाहब बिलकुल ऊपर निकल गये; और उनको कोई विशेष अड़चन कहीं भी उपस्थित नहीं हुई। परन्तु जब वे ऊपर पहुंच गये, तब उनको यह चिन्ता हुई कि, अब पिताजीके पास पहुंचनेतक न जाने किन किन

विघ्नोंका सामना करना पड़े । अबतक प्रत्येक पहरेदारने यही अनुमान किया था कि, नीचे जो हमारे चुने हुए लोग हैं, उन्हीं-मेंसे यह कोई होगा; यह ख़ांसाहबके पास उनकी ओरसे कोई सन्देशा लाया होगा, अथवा, कुछ देर बाद जो लोग आनेवाले हैं, उनके आनेके पहले ही सब आवश्यक बातोंका प्रबन्ध करनेके लिए आगया होगा। परन्तु अब, जबकि ऊपरके लोगोंने यह देखा कि, यह मनुष्य ख़ांसाहबके महलकी ओर न जाते हुए क़िलेदार साहबके महलकी ओर जाता है, तब कुछ लोगोंका सन्देह जागृत हुआ। इधर ख़ांसाहबके कान मुख्यद्वारकी ही ओर लगे हुए थे; और क्षण क्षणपर वे इस बातकी प्रतीक्षामें थे कि,अब कोई न कोई आता होगा, अब आनेमें देर नहीं है। इस-लिए जब उन्होंने मुख्यद्वारके खुलने; और पुलके गिरनेकी आवाज़ पाई, तब उनकी उपर्युक्त आतुरता और भी अधिक बढ़ी। बेगमके लोगोंको शराब पिलाकर उन्हें बेहोश कर डालने-की युक्ति उसने की सही, पर उसमें पूर्णतया उसे सफलता प्राप्त नहीं हुई थी। उनमेंसे किसी मनुष्यके भी अपनेमें मिल जानेका उसे विश्वास नहीं था। अतएव उसने सोचा था कि, अब हमारे ही आदमियोंसे जो कुछ होनेको होगा, सो होगा, अन्यथा कुछ नहीं होगा। बेगमके आदमी कुछ ऐसे-वैसे नहीं, वे जब-तक पूरे पूरे घायल नहीं होजायँगे, तबतक हमारे आदमियोंकी एक भी न चलेगी। बस, इसी चिन्तामें वह निमग्न होरहा था कि, इतनेमें नानासाहब ऊपर पहुंचे। ख़ांसाहबको ख़बर पहुँच

चुकी थी कि, कोई आदमी ऊपर आया है; और वह अपने ही आदमियोंमेंसे है, अन्यथा वह सांकेतिक शब्द कैसे बोलता? किन्तु पहलेसे तो किसी आदमीके आनेकी सम्भावना नहीं थी; और न ऐसा निश्चित ही हुआ था—फिर यह आया कहांसे? शायद किसी कार्यवश आगया हो—यह सोचकर सैयदुल्लाख़ां इस बातके लिए आतुर होरहा था कि, अब यह आदमी कब हमारे पास आता है। परन्तु इतनेहीमें उसे यह मालूम हुआ कि, वह आदमी आपके महलकी ओर नहीं आरहा है, बल्कि वह तो क़िलेदारके महलकी ओर मुड़ पड़ा। फिर क्या पूछना था? चट उसको विश्वास होगया कि, यह कोई न कोई धोखेबाज़ी हुई; और इसलिए तुरन्त ही उसने अपना आदमी भेजा कि, देखो, यह कौन मनुष्य है, जो इस प्रकारकी दग़ाबाज़ी करके इतनी रातको क़िलेदारके पास जारहा है। इस बातके जाननेको वह इतना उतावला होरहा था कि, पहला आदमी अभी कुछ ही दूर गया था, इतनेमें उसने दूसरा आदमी भी भेजा, उसके पीछे ही पीछे तीसरा, चौथा, पांचवां—और अन्तमें जब कोई आदमी ही वहां न रहा, तब स्वयं ही जानेको उठा; पर इतनेमें किसीने उसे धक्का देकर नीचे गिरा दिया!

इधर नानासाहब ऊपर आते ही सपाटेके साथ एकदम अपने महलकी ओर गये; वहां उनको प्रवेश प्राप्त होनेमें कुछ भी कठिनाई नहीं पड़ी। उन्होंने अपना सच्चा नाम बतला दिया; और पहरेदारोंने उन्हें भीतर जाने दिया। कई लोगोंको उनके

आनेसे बड़ा आनन्द हुआ। एक तो नानासाहबपर पहलेहीसे सबका बड़ा प्रेम था; फिर वे ऐसे समयमें आये—अब और क्या चाहिए? नानासाहब भीतर गये; और दरवाज़ा लगा लिया गया, इतनेमें सैयदुल्लाख़ांके आदमी, एकके बाद एक, आकर उपस्थित हुए; पर उनको भीतर प्रविष्ट नहीं होने दिया गया, सो बतलानेकी आवश्यकता नहीं।

बहत्तरवां परिच्छेद।

पिता-पुत्र।

महलमें प्रवेश होना जितना सहज था, अवश्य ही, पिताके सामने जाना उतना सहज नहीं था। महलमें प्रवेश होनेतक नानासाहबको किसी बातका भय नहीं था; पर उनको असली भय इसी बातका था कि, महलमें जाकर हम पिताजीके सामने कैसे जायंगे; और जाकर उनके सामने क्या कहेंगे। पहलेपहल, क़िलेसे चलते समय पिताजीसे उनकी जो बातचीत हुई थी; और फिर बादको बीजापुरमें पिताजीसे उनका जो सामना हुआ था, वह अभीतक उनको भूला न था; और वही मौक़ा आज फिर आगया! फिर भी उनको यह आशा हुई कि, सैयदुल्लाख़ांके अबतकके सारे कार्य; और दरबारका उनका अपमान, इत्यादि बातोंकी यदि उनको याद दिला दीजायगी; और "सुलता-

नगढ़, राजा शिवाजीके हाथमें जानेपर भी, वास्तवमें आपहीके हाथमें रहेगा; राजा शिवाजी आपका बड़ा आदर करेंगे; और आपहीकी सलाहसे अपना आगेका सारा कार्य करेंगे, स्वराज्य-की नीवँ डालना आपके ही हाथमें है," इत्यादि बातें यदि उन्हें ख़ूब समझाकर बतलाई जायंगी, तो फिर वे कुछ भी नहीं बोलेंगे, हमारे वशमें होजायंगे; और उनके समान स्वामिभक्त सेवक जब एक बार हमारे हाथमें आजायगा, तब फिर स्वराज्य-स्थापनाके कार्यमें उनसे हमको बड़ी सहायता मिलेगी। इस प्रकारके विचारोंने नानासाहबके मनमें बड़े बड़े महल खड़े कर दिये थे; पर वास्तवमें उन महलोंकी नीवँ कितनी कमज़ोर है, सो उनके ध्यानमें नहीं आया था। क्योंकि नवयुवक लोग जब किसी अपनी अभीष्ट बातका विचार करने लगते हैं, तब सारे विचार उनके मनमें ऐसे ही आते हैं कि, जो उनके लिए बिलकुल अनुकूल होते हैं; और यदि कोई प्रतिकूल विचार उनके मनमें आ भी जाता है, तो उसका भय उन्हें तनिक भी नहीं मालूम होता। वे सोचने लगते हैं कि, ऐसी ऐसी कठिनाइयों-की बात ही क्या—ये तो चुटकी बजाते दूर होजायंगी; और हम बातकी बातमें उस व्यक्तिको मिला लेंगे। बस, ऐसे ही विचार उनके मनमें आते हैं; और उन्हींके ज़ोरपर (वास्तविक स्थितिका विचार करके नहीं) उनके सारे व्यापार चलते रहते हैं। पर जब वे संकटोंके पास होकर गुज़रने लगते हैं, तब उः उन संकटोंके स्वरूपका कुछ कुछ ज्ञान होने लगता है; और जब

था, जिससे उनके क्रोधकी परमावधि प्रकट होरही थी। कुछ देर बाद अप्पासाहब अपने आपेमें आए; और बोले—"तू यदि पैदा ही न हुआ होता, अथवा पैदा होते ही मर गया होता, तो मुझे क्षणभरके लिए दुःख हुआ होता, सो हुआ होता! पर तेरे जीवित रहते हुए जो मुझे यह कष्ट भोगना पड़ रहा है, इसका अर्थ क्या है? देख, तू मेरे सामनेसे चला जा। मैंने तो समझ लिया था कि, तू मर गया; और मैं सुखी था—सो वह सुख भी तुझसे देखा नहीं गया; और आकर मेरे सामने खड़ा हो-गया। तू जानता नहीं है कि, तेरे कारण मुझे कितना कष्ट सहना पड़ रहा है; पर अब भी तुझको कल नहीं है। तू इतने दिनतक मेरे सामने नहीं था, इस बीचमें मुझे जो कष्ट मिला, मैं चुपके सहता गया;पर तू इतनेसे भी सन्तुष्ट नहीं दिखाई देता। शायद तूने यही सोचा है कि, बार बार सामने आकर कुछ न कुछ बकवाद करावे; और मुझको कष्ट पहुंचावे; और फिर तू खड़ा खड़ा सामने देख! अभागा, कमबख़्त, तुझसे किसने कहा था कि, तू बीजापुर मेरे पीछे पीछे जाकर अपना यह काला मुख मुझको दिखला? अपना लड़का समझकर मैंने तेरी गर्दन नहीं काटी। मोह आड़े आया। पुत्रहत्याका पाप लगेगा, यही सोचकर हाथ खींच लिया; लेकिन पुत्र-हत्याके पापसे बचकर स्वामिद्रोहका महापातक मत्थे लिया, जो अबतक मेरे हृदयमें सल रहा है। जिसके यहां रहकर 'नमक' खाया, उसके नमककी तो याद कर। तू सोचता होगा, कि मैं तेरा बाप हूं, इसलिए

पुत्र-प्रेमके कारणसे मैं तुझे छोड़ दूंगा—पर अब तू समझ ही गया ! अब मेरे पंजेमें आगया है, अभी तुझे क़ैद करवाता हूं; और सुधरनेके लिए तुझे आठ दिनकी मुहलत देता हूं। यदि आठ दिनके अन्दर तू ये सारे फन्द-फ़ितूर छोड़ देगा,तब तो ठीक; नहीं तो मैं अपने हाथसे तेरी मुसकें बांधूंगा; और तुझे बादशाहके सामने भेज दूंगा। अब तू आगया है पंजेमें—छूट नहीं सकता ! बीजापुरकी बात जाने दे—यहां तेरा निकलना कठिन है—अरे कौन है उधर ? चलो, लाओ—हथकड़ी लेआओ।

बुड्ढा ये सब बातें कहते हुए इतना उग्र दिखाई देरहा था, जैसे प्रत्यक्ष जमदग्निका ही अवतार हो ! "लाओ—हथकड़ी लेआओ," ये शब्द उसने इतने क्रोधसे उच्चारण किये कि जैसे कोई ख़ूनी अपराधी अचानक हाथमें पड़ गया हो; और उसीको क़ैद करनेके लिए हुक्म होरहा हो ! हम यदि यह कहें कि, यह बात नानासाहबको मालूम नहीं थी कि, हमारे पिता इतने निष्ठुर हैं,तो यह सच न होगा; पर हां, इतना उन्हें अवश्य ही नहीं मालूम था कि, उनकी निष्ठुरता इतनी तीव्र होगई होगी ! जो हो, नानासाहबके शरीरमें भी उसका कुछ न कुछ भाग आया ही था। वे भी उनकी वह दशा देखकर अत्यन्त क्रुद्ध हुए। और विचार किया कि, जब हमारे पिता हमारे विषयमें इतनी निष्ठुरता प्रकट कर रहे हैं; और अपने लड़केकी अपेक्षा यवनोंकी सेवा ही इन्हें अधिक प्रिय है, तब हम भी इनसे अब विशेष कुछ न कहें—हां, अपने आनेका उद्देश्य इन्हें

स्पष्ट बतला दें; और देखें, यदि कुछ असर हो। बस,यह सोच-कर वे तुरन्त ही कहते हैं, "पिताजी, कुछ तो विचार कीजिये। स्वामि-सेवा अवश्य निष्ठापूर्वक करनी चाहिए, इसके लिए कोई मना नहीं करता; पर आपकी सेवाकी कुछ क़दर भी तो हो? स्वामीके क़दमोंके नीचे गर्दन रखिये—हम नहीं कहते कि, न रखिये; लेकिन अगर वह उस गर्दनको बिना कारण ही रगड़ने लगे, तो तुरन्त ही उसको खींचकर उस स्वामीको ढकेल न दीजिये? देखिये, अब भी विचार कीजिए—मैं आपका लड़का हूं—यह न ख़याल कीजिए कि, छोटे मुंह बड़ी बात कहता हूं—आप ही सोचिए, अब आपकी दरबारमें, या इस क़िलेपर ही, क्या इज़्ज़त रह गई है? एक मामूली पियादा आता है; और क़िलेको अपने अधिकारमें लेकर आपको ताक़में रख देता है। आपको अपने महलके बाहर निकलनेकी भी तो स्वत-न्त्रता नहीं है—ऐसी दशा होरही है—ज़रा ग़ौर कीजिए। मैं आपका अकेला लड़का हूं—और ऐसा ऐसा कह रहा हूं—इसी-पर न जाइए। मैं जो कुछ कहता हूं, उसका एक क्षणभर—सिर्फ़ क्षणभर—विचार कीजिए, आपको ख़ुद ही मालूम हो-जायगा। आपके समान सच्चे स्वामिभक्त सेवक यदि किसी अच्छे राज्यमें होते,तो न जाने उनकी कितनी क़दर हुई होती—अजी, यहां तो सारा अर्दलियोंका और कुटनियोंका कारोबार है। यहां आपके समान लोगोंकी क्या प्रतिष्ठा होसकती है! अभीतक क्या हुई! और आगे क्या होगी! वही यदि......"

नानासाहबका उपर्युक्त भाषण बराबर अस्खलित रूपसे जारी रहा। अप्पासाहबको कई बार उनका वह भाषण बिलकुल असह्यसा मालूम हुआ; और हाथसे इशारा करते हुए वे बीच बीचमें, अधीर होकर, अरुचि भी दिखलाते रहे; पर नानासाहबका वह भाषण बिलकुल हृदयके अन्तस्तलसे निकल रहा था—वह बीचमें काहेको रुक सकता था! वे ऐसे सपाटेके साथ बोल रहे थे कि, बीचमें कुछ कहने अथवा उनका प्रतिरोध करनेका अप्पासाहबको साहस ही न हुआ। और इधर नानासाहबके भाषणका प्रवाह इतने ज़ोरसे जारी था कि, जिसकी ध्वनि सुनकर ही मानो उनको और भी अधिक जोश चढ़ता आरहा था। बीजापुरमें जितने ज़ोरके साथ उन्होंने अप्पा साहबके सामने भाषण किया था, उससे कहीं अधिक ज़ोर और जोश आजके भाषणमें था। ऐसा जान पड़ता था मानो उनको इस बातका भान ही नहीं रह गया है कि, हम क्या कर रहे हैं; और फिर जब उन्होंने देखा कि, अप्पासाहब बीचमें कुछ भी नहीं बोल रहे हैं, तब उनको और भी अधिक जोश आया। क्योंकि उन्होंने एक प्रकारसे मानो सोचसा लिया था कि, अब अप्पासाहब चाहे हमारे कहनेके अनुसार राज़ी हों, चाहे न राज़ी हों—सुलतानगढ़पर धावा होगा ही; और क़िला एक बार अवश्य जीता जायगा, इसमें सन्देह नहीं, इसलिए जो कुछ कहना हो, कह ही न लो—अब काहेको उठा धरोगे?

"मेरे हाथोंमें हथकड़ियां डालते हैं? डालिये। लेचलिये मुझे

बादशाहके पास। इतनी दूर क्यों? सच्चे बादशाह तो आज-कल यहीं मौजूद हैं, वही सबकुछ कर सकते हैं, उन्हींके पास न लेचलिये! उन्हींकी मर्ज़ी सम्हालना आजकल स्वामिसेवाकी सच्ची कसौटी है। आजकल स्वामी वही है। उनपर भक्ति हुई तो मानो सब कुछ फला! फिर बादशाहके कानमें जाते देर नहीं! ये जाकर तुरन्त कहेंगे, "देखिये, अपने लड़केको भी पकड़कर इन्होंने कालके मुखमें देनेमें कसर नहीं की, बाग़ी बनानेको और बग़ावत सिखलानेको आया था, सो स्वयं बापने लड़केको पकड़-कर मेरे हाथमें देदिया; और सिर काटनेके लिए तलवार आगे रख दी।" बस, इस प्रकारकी प्रशंसा जहां सैयदुल्लाख़ांके मुँहसे बादशाहके कानमें पड़ी वहां फिर और क्या चाहिए? अच्छा, तो कीजिए फिर, वैसा ही कीजिए। अजी अप्पा साहब, इस राजभक्तिके प्रवाहमें आप कितना बहेंगे? स्वयं अपने पेटके लड़केको, राजभक्तिकी सनकमें, बलिदान करके क्या इस क़िलेदारीको लेकर आप फूंकेंगे? या जलायेंगे? राजभक्ति! आपके समान राजभक्त पुरुषकी क़दर करनेके लिए राजा ही दूसरा चाहिए—आप सोच देखिये। आप स्वयं राजा बनना चाहें, तो बन सकते हैं—आपकी क़दर होगी—आज ही, अभी, इसी क्षण आप इस क़िलेके राजा बना दिये जायंगे, सिर्फ़ आपके मनमें आनेभरकी देरी है। सो न जाने कब आपके मनमें आयेगा! राजा शिवाजीको आपके समान एक वीर, एक गुरु, मिल जाय, तो क्या ही अच्छी बात हो—चारों

ओर स्वराज्य स्थापित होनेमें फिर बिलकुल ही विलम्ब न लगे; और न कोई कठिनाई आवे। कहां आपका प्रभाव! कहां आपकी सचाई! कहां आपकी योग्यता! और कहां आपका यह अपमान! देखिये, जो लोग आपका अपमान करने खड़े हुए हैं, उनमें आपमें कितना अन्तर है! लेकिन जब आपके मनमें आजाय, तब! कुछ तो विचार कीजिए। अप्पासाहब, मैं आपका लड़का हूं; और कुछ न कुछ बक रहा हूं, इसपर न जाइये। आपके सामने आकर मैंने इतने उपस्करके साथ कभी बातें नहीं की थीं; पर अब मौक़ा आगया है, देखिये, यदि कुछ मनमें आजाय। बस, इतना ही सूचित करने आया हूं—और कोई बात नहीं। सभी चाहते हैं कि, आप अनुकूल होजायं। आपके अनुकूल होजानेपर फिर और क्या चहिए?...”

अप्पासाहब—चाहे जिस कारणसे हो—बिलकुल स्तब्ध होगये। उनकी आंखोंकी पलकें भी नहीं हिलीं। बराबर जैसे खड़े थे, वैसे ही खड़े रह गये। इसकारण स्वाभाविक ही नानासाहबके मनमें आया कि, शायद हमारे कहनेका इनपर कोई न कोई प्रभाव पड़ रहा है। क्योंकि ऐसा न होता, तो वे चुप कैसे खड़े रहते। बहुत जल्द जो मनमें आता, कर डालते। इसलिए उन्होंने सोचा कि, यदि इसी प्रकार हम अपना कथन जारी रखेंगे, तो शायद अवश्य ही हमारा कार्य सिद्ध होगा। यह सोचकर उन्हें और भी कुछ कहनेका उत्साह हुआ। इसलिए उन्होंने जतलाया कि, देखिये, यवनोंके राज्यमें हिन्दुओं-

को, गोब्राह्मण इत्यादिकी कैसी दुर्दशा होरही है; और इस दुर्दशाको दूर करनेके लिए स्वराज्यके अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं है। इसके बाद फिर उन्होंने राजा शिवाजीकी सब तैयारियोंका ज़िक्र किया; और उनकी सारी सफलताओंकी सविस्तर कहानी बतलाई। फिर उन्होंने यह जतलाया कि, इस समय आपके द्वारा सहायता न होना मुसलमानोंके द्वारा होनेवाली गोहत्या और ब्रह्महत्याका पातक जान-बूझकर अपने सिर लेना है। हमारे हाथमें साधन यदि मौजूद हैं; और जान-बूझकर यदि हम उनका उपयोग नहीं करते, तो इन पापोंका भागी कौन होगा? आपको कुछ तो विचार करना चाहिए। नानासाहब जबकि इस प्रकार कह रहे थे, उस समय ऐसा जान पड़ा कि, उस बुड्ढेके मनपर सचमुच ही कुछ न कुछ प्रभाव हुआ। क्योंकि नानासाहबकी बातें सुनते हुए ही ऐसा जान पड़ा कि, बुड्ढेके चेहरेपरकी कठोरता कुछ कमसी हुई है। यही नहीं, बल्कि चिराग़की रोशनी पड़नेसे ऐसा भी प्रकट हुआ कि, अप्पा साहबकी आंखोंमें कुछ पानीसा झलक रहा है। परन्तु इतनेमें उन्होंने अपना मुँह फेर लिया; पीठ भी फेर ली; और वहांसे वे आगेको चल भी दिये। कह नहीं सकते कि, बुड्ढेके मनमें क्या विचार आरहे थे; पर हां, इतना अवश्य हुआ, कि उसके चेहरेकी कठोरता कम होकर उसमें मृदुताकी झलक दिखाई देने लगी; और इतनेहीमें ऐसा भी समझ पड़ा कि, जैसे आंसूकी एक बूंद उसके सिकुड़े हुए गालोंपर टपक आयी

हो। नानासाहबका कथन अभी जारी ही था। उन्होंने समझा कि, हमारे कथनका इनपर अवश्य प्रभाव पड़ा है; और इस-कारण उन्हें कुछ कुछ आनन्द भी हुआ। पर इतनेहीमें क्या चमत्कार हुआ कि, अप्पासाहब एकदम मुड़ पड़े; और उनके बिलकुल पास आकर कुछ विचित्र चेष्टा बनाकर और एक विचित्र ही आवाज़से बोले, "जा, जा। अब अधिक मत बोल। और मुझे मोहमें डालनेकी आशासे मेरे हाथसे भयंकर पाप मत करवा। जा, तुझको जो कुछ करना हो, कर! मैं तो अपनेको स्वामिसेवाके लिए समर्पित कर चुका हूं। स्वामिद्रोहका कार्य मुझसे त्रिकालमें भी नहीं होसकता। एक क्षण—एक ही क्षणके लिए मैं मोहमें आनेवाला था; पर सम्हल गया। तू जो कुछ कहता है, वह यद्यपि सब सही है, फिर भी स्वामिद्रोह स्वामिद्रोह ही है! उसके लिए कारण कुछ भी हों, परन्तु इससे उसका 'भाव' नहीं जासकता। उससे जो पाप लगेगा, सो भी वही रहेगा; और उसके लिये ईश्वरके घरमें जो दण्ड मिलेगा, उसमें भी कुछ अन्तर न पड़ेगा। जा, तेरे लिए इतना निमित्त तो है, कि तूने कभी स्वामिसेवा स्वीकार नहीं की है; ऐसी दशामें यदि कदाचित् तेरे हाथसे कुछ हो भी जायगा, तो स्वामिद्रोहका······अरे रे रे! यह मैं क्या कह रहा हूं? कभी नहीं। तू क्या करेगा, सो मालूम होते हुए भी तुझको यों ही छोड़ देना—यह भी एक स्वामिद्रोह ही है। ऐसा होते हुए भी मैं इसी मुँहसे तुझे

सब कुछ करनेकी स्वतन्त्रता देरहा हूं ? शिव ! शिव ! इसी घड़ीमें—इसी क्षणमें मुझे तुझको ख़ांसाहबके हाथमें देदेना चाहिए। कमसे कम तुझे क़ैद तो अवश्य ही कर रखना चाहिए। चुप , चुप रह। अब ऐसी अंडबंड बातें कहकर मेरे कान अपवित्र मत कर। तू अपने साथ मुझे भी पापमें मत फँसा। तू बड़ा ही कुलांगार निकला। मुझको मोहमें डाल रहा था; और दोनों ही मिलकर बहत्तर पीढ़ियोंके लिए अच्छी ही जगह ढूंढ़ रहे थे ! अरे रे रे ! मेरे कान इतनी देरतक तेरी बातें सुनते रहे; और फिर भी चुप रहे, इससे तो—ये बधिर क्यों न होगये ? चुप, चुप। एक अक्षर भी अब मत बोल। और न इस जगहसे हिलकर कहीं जानेकी इच्छा कर। यदि की, तो मैं तेरे ऊपर हथियार चलानेमें भी कसर नहीं करूंगा। नीच लोगोंके कहनेमें आकर तू ऐसे फन्दमें पड़ गया, इससे तो मर गया होता, तो बहुत अच्छा होता। बन्दर कहींका ! तेरे समान बन्दरोंके हाथसे यदि स्वराज्य स्थापित होनेको होता, तो फिर कहना ही क्या था ? तुम लोग ग़रीब बेचारोंको कष्ट देते हो, उनको लूटते हो, ख़ून करते हो, डाके डालते हो; और स्वराज्य स्थापित करनेकी गप्पें मारते हो। बादशाही राज्यमें कुछ भी उपद्रव तो कर लो, फिर देखो मज़ा—कैसी तुम्हारी हड्डी-पसली तोड़ी जाती हैं ! कहां बादशाही राज्य; और कहां तुम बन्दरोंका यह प्रयत्न !”

“रामचन्द्रने रावणका राज्य बन्दरोंके ही प्रयत्नसे पाया

था !" नानासाहब बीचमें ही तिरस्कारयुक्त वाणीसे बोल उठे।

फिर क्या कहना ! प्रज्वलित की हुई चितामें मानो तेलका पीपा ही भभका दिया गया। अप्पासाहब क्रोधसे हाथ उठाकर एकदम उनकी ओर दौड़ पड़े; और अब मारनेहीवाले थे कि, इतनेमें सैयदुल्लाखां और उसके पीछे पीछे और भी चार-पांच आदमी यह चिल्लाते हुए भीतर आये—"अजी, अप्पासाहब, अप्पासाहब ! अरे मेरी जान···अरे यह क्या, तोबा ! तोबा !" अप्पासाहब कुछ भी नहीं समझ सके कि, क्या बात है, सैयदुल्लाखां इस प्रकार यहां क्यों आया। परन्तु हां, उसको देखते ही मानो उनको और भी अधिक स्फूर्ति आगई; और वे एकदम बोल उठे—"अजी ख़ांसाहब ! देखो, यह मेरा कम्बख्त—यह नमकहराम, यह स्वामिद्रोही। इसको अपने हाथमें लीजिए। आप···"

परन्तु इतनेहीमें बाहर इतना कोलाहल मच गया कि, उसको देखनेके लिए स्वयं अप्पासाहबको बाहर आना पड़ा।

तिहत्तरवां परिच्छेद ।

क़िलेपर गड़बड़ी ।

अप्पासाहबने बाहर आकर क्या देखा, सो तो हम पीछे बतलावेंगे। इसके पहले इस बातका खुलासा होजाना चाहिए कि, महलके बाहर क्या क्या घटनाएं होरही थीं; और सैयदुल्लाख़ां उनके पास इस प्रकार घबड़ाया हुआ दौड़कर क्यों गया था। पाठकोंको याद होगा कि, जब नानासाहब क़िलेके ऊपर आये; और क़िलेदारके महलोंकी ओर मुड़ पड़े, तब इसका समाचार सैयदुल्लाख़ांने अपने किसी आदमीके द्वारा सुना; और एकदम क्रोधमें आकर उसने अपने कई आदमी—बल्कि अपने पासके सभी आदमी—एकके बाद एक, भेज दिये कि, जाओ, देखो, यह कौन आया है; और उसको पकड़ लाओ। इतना करनेके बाद वह स्वयं वहांसे उठा; और चलना ही चाहता था कि, इतनेमें किसीने एक ज़बरदस्त धक्का लगाकर उसको नीचे गिरा दिया। यह कौन व्यक्ति था, जिसने उसको धक्का देकर गिराया, इसका अनुमान पूर्ण रूपसे पाठकोंको अवश्य ही होगया होगा। इसके सिवाय, धक्का लगते ही ख़ांसाहब गिर पड़े; और उस समय यह देखकर कि, वह धक्का किसने उनको लगाया; उनकी जो दशा हुई होगी, उसका भी अनुमान पाठक भलीभांति कर

सकते हैं। सैयदुल्लाख़ांके शत्रु ने उसको धक्का देकर गिरा दिया; और उसकी छातीपर पैर रखकर बोला, "ऐ दुश्मन, अब मैं तेरे आजतकके सम्पूर्ण कर्मोंके लिए प्राणान्त प्रायश्चित्त देकर तेरे रक्तसे स्नान करूंगा; पर इसके लिए अभी ठीक आधे पहर-का अवकाश है। मैं नहीं चाहता कि, लोग मुझे कहें कि, मैंने तुझको अकेला पाकर अचानक तेरा ख़ून किया। इसीलिए फिर तुझको आधे पहरके पहले ही चितावनी देता हूं। तू अब मेरे हाथसे छूट नहीं सकता। मुझको तू अपने लिए प्रत्यक्ष शैतान ही समझ। इसलिए कहीं भगनेका प्रयास मत कर। तू अब बच नहीं सकता। इसलिए, अब तू अपनी नमाज़ पढ़। परमात्माकी प्रार्थना कर। कृतकर्मोंपर पश्चात्ताप कर। और जो चार घड़ी तुझे मिली हैं, उनको पश्चात्ताप तथा प्रार्थनामें लगाकर ख़ुदाकी इबादतमें ख़र्च कर। तू अब छूट नहीं सकता। व्यर्थके लिए आशा रखकर कदाचित् तू प्रयत्न करेगा; पर कोई लाभ नहीं होगा। तेरे पापके घड़े अब भर गये हैं। तू उबर नहीं सकता। तेरे इतने ही पाप काफी हैं। अब यहां "या अल्ला! या ख़ुदा!" करते हुए बैठ……"

वह जिस समय यह सब कह रहा था, उस समय सैयदुल्लाख़ां नीचे पड़ा हुआ बराबर थर थर कांप रहा था। आंखें खोलकर देखना भी उसके लिए मुशकिल होरहा था। उसकी घबड़ाहटका कुछ ठिकाना न था। उसके होंठ फड़फड़ा रहे थे, जिससे ऐसा जान पड़ता था कि, वह कुछ कहना

चाहता था; पर मुँहसे बोल नहीं निकल रहा था। सांस भी वहुत धीरे धीरे निकल रही थी।

उपर्युक्त वचन कहकर, उसकी छातीपर पैर रखनेवाले उस महाशयने एक बार अत्यन्त तुच्छ दृष्टिसे उसकी ओर देखा;और पैरके अँगूठेसे ही उसकी ठुड्डीको टोंचकर कहा, "उठ, अब उठ; और जो कुछ मैंने बतलाया, उस काममें लग।" इतना कहकर वह तुरन्त ही वहांसे चला गया।

सैयदुल्लाख़ांने ज्यों ही देखा कि,उसकी छातीपरका बोझा निकल गया, त्यों ही उसने कुछ देर इधर-उधर टटोला; और जब उसको विश्वास होगया कि, अब वह यहां नहीं है, तब उसने धीरेसे ही आंखें खोलीं; और उसे निश्चय हुआ कि, सच-मुच ही अब वह यहांसे चला गया। इससे उसे कुछ धैर्य आया; और फिर वह वहांसे चुपके उठा। इतनेमें बाहरकी ओरसे कुछ गड़बड़ी मचनेकी आवाज़ उसके कानोंमें आई। देखता है, तो उसके आदमी, जिनको उसने उक्त व्यक्ति (नानासाहब) का पता लगानेके लिए भेजा था, क़िलेदारके महलके दरवाज़ेके पास दंगा कर रहे हैं। पहरेदार उनको भीतर नहीं आने देरहे हैं; और वे लोग भीतर जानेके लिए बराबर उपद्रव मचा रहे हैं। अप्पासाहबके आदमियोंको यह भलीभांति मालूम था कि, भीतर कौन व्यक्ति गया है; इसके सिवाय यह बात भी वे जानते थे कि, सैयदुल्लाख़ांके आदमी यदि भीतर पहुंच जायँगे, तो ये नानासाहबके साथ कैसा व्यवहार करेंगे। इसके सिवाय, अप्पा-

साहबके वे आदमी स्वयं अप्पासाहबसे भी अधिक नानासाहब-पर प्रेम रखते थे; और इसकारण स्वाभाविक ही वे सैयदुल्ला-ख़ांके आदमियोंको भीतर नहीं जाने देसकते थे। कुछ पहरे-दार सिपाही तो उनमें, ऐसे भी थे कि, जो नानासाहबको बचानेके लिए अपनी जानपर भी खेल जासकते थे। और उसमें भी सैयदुल्लाख़ांके सिपाहियोंसे उनका मुक़ाबिला था, कि जिनके विषयमें क़िलेका प्रत्येक आदमी पूरा पूरा असन्तुष्ट हो-रहा था! ऐसी दशामें, फिर क्या कहना है? सैयदुल्लाख़ांने ज्यों ही देखा कि, हमारे आदमियोंको महलके अन्दर घुसने नहीं दिया जारहा है; और बराबर झगड़ा जारी है, त्यों ही उसने समझ लिया, कि अवश्य ही यह कुछ बग़ावतका मामला है। इसलिए उसने सोचा कि, थोड़ी देरके इस लड़ाई-झगड़ेसे क्या लाभ? अब तो एकदम ही हमारे सब सिपाही ऊपर आनेवाले हैं; और उनके आजानेपर इन सबको ख़ूब ही दुरुस्त करेंगे। यह सोचकर वह बड़े ज़ोर ज़ोरसे अपने आदमियोंको वापस बुलाने लगा। परन्तु वे आदमी तो ख़ूब झगड़नेमें लगे हुए थे, वे कहां उसकी बात सुनते हैं! हां, उनमेंसे एक आदमीने अवश्य ही उसकी पुकार सुनी। वह झगड़नेमें कुछ कच्चा था। इसके सिवाय,जो बात उसने सुनी थी,उसे अत्यन्त महत्वपूर्ण समझकर, ख़ांसाहबको शीघ्र ही बतलाना भी आवश्यक समझता था, इस-लिए वह वहांसे चल दिया; और ख़ांसाहबके पास आकर उसने वह समाचार बतलाया। समाचार यही था कि, नानासाहब

आया हुआ है; और अपने पिताके पास जाकर कुछ गुप्त मंत्रणा कर रहा है। यह समाचार सैयदुल्लाख़ांने सुना और उसके कान एकदम खड़े होगये। अभी पाव घड़ी भी नहीं हुई थी कि, उसका भयंकर अपमान होचुका था; और उस अपमान करनेवालेने उसे भयंकर चितावनी भी दी थी; पर उपर्युक्त समाचारके सुनते ही वह सब भूल गया; और एकदम बड़े घमंडमें आगया! उसने सोचा कि, हमारे सिपाहियोंके ऊपर आनेका समय अब बिलकुल निकट है, शीघ्र ही वे सब आते होंगे; और जहां वे आगये कि, बहुत जल्द हम इन दोनों—पिता-पुत्र—को, तथा बेगमको भी, क़ैद कर लेंगे; और बादशाहके सामने उनको पेश करके प्रत्यक्ष दिखला देंगे कि, देखो, यह क़िलेदार कितना दग़ाबाज़ है; और फिर ऐसे मनुष्यका पक्ष लेनेवाले रणदुल्लाख़ांकी स्वामिभक्तिका भी परदा खोल देंगे। अहा! उस समय फिर हमारा कार्यभाग कितना सहज होजायगा! बादशाह तो बिलकुल हमारी मुट्ठीमें ही आजायगा। इस प्रकारके स्वप्नसुखका अनुभव करनेमें सैयदुल्लाख़ां बिलकुल निमग्न होगया। उसके पीछे पिशाचकी तरह उसका शत्रु लगा हुआ था; और अभी हालहीमें वह उसे फिर भी चितावनी दे-गया था, सो उसे याद थी—ऐसा नहीं कि याद न हो—परन्तु फिर भी वह इस घमंडमें भूला हुआ था कि, वह हमारा क्या कर लेगा? हमारे सिपाही अभी क़िलेपर चढ़कर आते होंगे; हम तुरन्त ही उसको तलाश करायंगे; और सबके देखते

देखते वृक्षमें गलफांस लगाकर उसे मरवा डालेंगे, अथवा हाथीके पैरमें बांधकर उसे बीजापुरतक लेजायंगे! इस प्रकारकी शेख़ी वह मन ही मन मारने लगा। यही नहीं, बल्कि इनमेंसे कुछ बातें तो उसने अपने उस आदमीके सामने भी प्रकट कीं। इससे उसे भी बड़ा जोश होआया; और वह इधर-उधर देखने लगा कि, हमारे नीचेके आदमी कब आते हैं। ख़ांसाहबने उससे कहा कि जाओ, क़िलेदारके दरवाज़ेके पाससे अपने आदमियोंको बुला लाओ। मालिकका हुक्म पाकर वह जाने लगा, इतनेमें मालिक कहता है कि, अच्छा न जाओ; फिर कहता है, जाओ; और फिर वापस बुलाता है! बेचारेको क्षण क्षणपर यही मालूम होरहा था कि, यह चला जायगा, तो फिर हम अकेले ही रह जायंगे; और शायद फिर न वह हमारा शत्रु हमारे सामने आकर खड़ा होजाय! अस्तु। सैयदुल्लाख़ांकी डेवढ़ीपर जो पहरेदार थे, उन्होंने भी जब सुना कि, क़िलेदारके दरवाजेपर भीड़ एकत्र होरही है; और मारपीट जारी है, तब वे भी अपना अपना काम छोड़कर चलते बने; और उसी गड़बड़ीमें जाकर शामिल होगये। ऐसी दशामें सैयदुल्लाख़ांने सोचा कि, अब हमारे पुकारनेपर कोई आवाज़ देनेवाला भी नहीं है, इसीलिए वह अपने उस आदमीको जाने नहीं देता था। परन्तु अन्तमें उसने सोचा कि, अब इसीमें क्या लाभ है कि,हम इसको यहींपर रख-कर परस्पर एक दूसरेका मुँह ताकते रहें? यह सोचकर उसने

यह निश्चय किया कि, अब हमारे लोग चूंकि घड़ी-आधी घड़ीमें ही आनेवाले हैं, इसलिए, आओ, हम भी तबतक अपने ही लोगोंके पास चलकर यह समय व्यतीत कर। यह निश्चय करके वह तुरन्त ही उठा; और अपना चोगा पहना। सब पोशाक पहन लेनेके बाद हथियारबन्द होकर वह बाहर निकल पड़ा। बाहर निकलते समय उसने इधर-उधर,चारों तरफ,नज़र डाली—कोई कोनेमें तो नहीं बैठा है, किवाड़ेके पीछे तो छिपा हुआ नहीं खड़ा है—इस प्रकारकी शंका करते करते वह बाहर निकला। दरवाज़ेके बाहर निकलकर जब उसने देखा कि, यहां एक भी सिपाही या पियादा नहीं रह गया है, तब उसको बड़ा क्रोध आया; पर मुग़लोंका ज़माना तो था ही, उसमें व्यवस्था और टीपटाप कहांसे आती! जलते-भुनते ख़ांसाहब बाहर निकले; और अपने सब लोगोंको गालियां बकते हुए क़िलेदारके महलकी ओर चले। परन्तु इतनेमें, नज़दीकके बुर्जपर जो सिपाही था, उसने यह ख़बर दी कि, ऐसा जान पड़ता है, कि कोई बहुतसे लोग आरहे हैं। इस ख़बरको सुनते ही ख़ांसाहबकी ख़ुशीका पारावार न रहा! उन्होंने समझा कि, अब हमारा उद्देश्य पूर्णतया सफल हुआ, अब विलम्ब नहीं है, हमारे लोग आये; और सब काम बन जायगा! बस, इसी ख़यालमें डूबकर वे अपने उन लोगोंको,जो महलके दरवाज़ेपर लड़ रहे थे; और भी अधिक गालियां देने लगा। इसके सिवाय,सैयदुल्लाख़ांने यह सोचा कि, आज नानासाहब भी यहीं मौजूद है; और पिता-पुत्र, दोनों

भीतर बैठे हुए गुप्त विचार कर रहे हैं—अब उन दोनोंको क़ैद करके मैं कृतकृत्य होऊंगा। यह सोचकर वह जल्दीसे महलकी ओर गया; और अप्पासाहब, नानासाहब, तथा अन्य सभी लोगोंको उसने ऐसी ऐसी गालियां बकनी शुरू कीं कि, जिनका कुछ कहना ही नहीं! साथ ही वह अपने लोगोंसे बार बार यह कहने लगा कि, "देखो, तुमलोग अभी इसी प्रकार लड़ते-झगड़ते रहो, लेकिन जब मैं इशारा करूं, तब तुरन्त ही, पीछे न हटते हुए, दरवाजा तोड़कर भीतर घुस पड़ो; और उन राजद्रोही विश्वासघातियोंको अपने हाथसे छूटने मत दो।" उसने कहा कि, इन हरामख़ोरोंको पकड़कर, मुसकें बांधकर, लेचलो; और बादशाहके सामने खड़ा करके इनकी ख़ूब बेइज़्ज़ती करो, इनको गधेपर सवार करके निकालो और मरवा डालो। इस प्रकारका जब अनर्गल भाषण जारी हुआ, तब और लोगोंको भी अच्छा मौक़ा मिला। वे ख़ूब शोरगुल मचाकर दंगाफ़िसाद करने लगे। इतनेमें बुर्जपरके पहरेदारने फिर ख़बर दी कि, लोगोंने क़िलेके सामने आकर सांकेतिक शब्दका उच्चारण किया; और पुल लगानेको कहा, तथा और भी कुछ इशारे बतलाये। फिर क्या था, तुरन्त ही भीतरका अर्गल निकाल लियागया, दरवाज़ा खुल गया; और ख़न्दकके ऊपरका पुल भी लगा दिया गया। तुरन्त ही इधर-उधर गड़बड़ी मच गई, लोग ख़न्दक पारकर आये;और दरवाज़ेसे भीतर घुसे। बातकी बातमें उन्होंने पहरेदारोंको क़ैद करके उनके हथियार छीन लिये; और कहा कि, देखो, तुम

चिल्लाना-विल्लाना नहीं, जहां ज़रासा चिल्लाये कि, फिर तुम्हारा कुशल नहीं। यह कहकर उन्होंने उनकी मुसकें बांध दीं; और अपने आदमी वहां तैनात करके आगे बढ़े। बस, यही हाल उन्होंने सब दरवाज़ोंपर किया। इस प्रकार करते करते वे लोग एकदम ऊपर पहुँच गये। अब सैयदुल्लाख़ांको मालूम हुआ कि, हमारे लोग आगये, अतएव उसके आनन्दका ठिकाना न रहा। उसने सोचा कि, अपने लोगोंसे अब खुशदिलीका बर्ताव करके उनके द्वारा इतना काम तो अभी करा लो; और बाक़ी फिर देखा जायगा। अतएव ज्यों ही उसने लोगोंको ऊपर आते हुए देखा, त्यों ही उनको लेनेके लिए वह आगे बढ़ा। उसको क्या मालूम कि, क़िलेपर आनेवाले इन लोगोंने सब दरवाज़ोंके पहरेदारोंको बांधकर अपने पहरेदारोंको रख दिया है? उसने सोचा था कि, आगे बढ़कर हम इनमेंसे तीन चौथाई लोग तो बेगमके महलके चारों ओर लगा दें; और एक चौथाई, नानासाहब तथा अण्णासाहबको पकड़नेके लिए, उनके महलपर धावा बोल दें। इस प्रकार अपना निश्चय स्थिर करके वह बेचारा उन लोगोंके स्वागतके लिए आगे बढ़ा; और अपने सिपाहियोंके अध्यक्षका नाम लेकर पुकारा। उसकी आवाज़ सुनते ही, ऊपर आनेवाले लोगोंमेंसे, एक नन्हेसे सिपाहीराम उसके आगे आये; और बोले, "क्यों जी, ख़ांसाहब, मुझेकु कायक बुलाते?" इस प्रकार टूटी-फूटी 'हिन्दुस्तानी' बोलकर वह छोटासा छोकरा सिपाही ज़ोर ज़ोरसे हँसने लगा!

यह देखते ही ख़ांसाहब क्रोधसे लाल होगये, अथवा आश्चर्यसे चकित होगये—यह मानो वे ख़ुद ही समझ नहीं सके। हमने पुकारा किसको था; और यह एक छोटासा लड़का ढाल-तलवार सजाये हमारे सामने आकर खिलखिल हँस रहा है! उन्होंने समझा कि, शायद हमारे सिपाहियोंहीमेंसे किसी सिपाहीका ढीठ छोकरा होगा; अतएव वे बड़े ज़ोरसे डौंकक़र उसकी ओर दौड़े। यह देखकर वह लड़का और भी हँसने लगा, साथ ही साथ और भी लोग हँसने लगे। परन्तु "यह हँसनेका समय नहीं है, अब मशालें जलाकर आगे बढ़ो"—यह इशारा किसी गम्भीर ध्वनिवाले पुरुषकी ओरसे एकदम मिला; जिसे पाते ही एकदम सौ-पचास मशालें जल गईं; और ख़ांसाहबको विश्वास होगया कि, ये हमारे सिपाही नहीं हैं, उसी शैतानकी सेना है, जो हमें पकड़ने आई है! उन सैनिकोंके शरीरपर कमलीको छोड़कर और कुछ भी नहीं था—हां, हाथमें भाला और कमरमें तलवार, तथा कितनोंहीके हाथमें लम्बी लम्बी बन्दूकें थीं! इसके अतिरिक्त सिपाहियोंकी और कोई भी शान अथवा निशानी नहीं थी। यह है क्या? ये कौन लोग हैं? ख़ांसाहबको सोचनेकी ज़रूरत ही न पड़ी! उन्होंने तत्काल समझ लिया कि, आज इतने दिनसे हमारा जो दुश्मन हमारे ऊपर दांत लगाये हुए है, वह सचमुच ही शैतान है; और उसीने यह सेना अपने राज्यसे लाकर हमारे सामने खड़ी की है। बस, यह सोचकर सैयदुल्लाख़ां तुरन्त ही लौट पड़ा; और दौड़ता हुआ अपने उन आदमियोंके पास

गया कि, जो अप्पासाहबके दरवाज़े पर अबतक झगड़ा-फ़िसाद मचा रहे थे। उसके पीछे पीछे हमारा वह छोटा सिपाही यह कहता हुआ चला—"अबे वड़े शिपाईके छोरे, क्या भाग जासीं म्होरे;" और उसके पीछे पीछे और भी कुछ मावले गये। ख़ांसाहबका अपेक्षित 'दीन' 'दीन' शब्द न जाने कहांका कहां गया; और उसकी जगहपर "हर हर महादेव" की ध्वनि आकाशमें गूंजने लगी। ख़ांसाहबने ताड़ लिया, कि हो न हो, यह कोई बाग़ियोंका मामला है। अप्पासाहबके छोकरेने अपने आदमी लाकर छिपा रखे होंगे; और आप स्वयं अपने पिताको समाचार देनेके लिए पहले आगया होगा। निस्सन्देह, पिता-पुत्रकी सलाहसे ही यह काम हुआ है। सैयदुल्लाख़ां अप्पासाहबके महलके पास जापहुंचा; और उसके पीछे पीछे वे लोग भी जापहुंचे। अब सैयदुल्लाख़ां क्या करे? उससे कुछ करते-धरते नहीं बना, वह बिलकुल घबड़ा गया। बेगमके लोगोंसे उसे कुछ सहायता मिल ही नहीं सकती थी; क्योंकि उनसे उसने पहले ही द्रोह कर रखा था। फिर भी यदि इस समय वह उनके पास सहायता माँगनेके लिए अपना कोई आदमी भेजता, तो कोई लाभ भी नहीं होसकता था; क्योंकि पहले तो अब आदमी ही काहेको जाता, और यदि जाता भी, तो इस बातका विश्वास कहां था कि, बेगमके आदमी उसको सहायता करनेके लिए उसके पक्षमें आवेंगे? जो हो, इसी प्रकारके सोच-विचारमें वह पड़ा था कि, इतनेमें मावलोंने उस

महलको चारों ओरसे जाकर घेर लिया; और उसके नामसे एक-दम गुल-गपाड़ा मचाने लगे—चारों ओरसे यही आवाज़ आने लगी कि, "सैयदुल्लाख़ां कहां है? उसको जल्दी लाओ—हमारे हाथमें दो!" इधर सैयदुल्लाख़ांका नाम ज्यों ज्यों निकलता, त्यों त्यों उसकी घबड़ाहट और भी बढ़ती जाती; और महलके पहरेदारोंको भी चूंकि मालूम न था कि, यह क्या मामला है; अतएव वे भी अब झगड़ेसे बाज़ आये। यह मौक़ा पाकर सैयदुल्लाख़ां और उसके चार आदमी भीतर घुस गये। भीतर जाकर उन्होंने क्या देखा; और क्या बात हुई, सो पिछले परिच्छेदमें पाठकोंसे प्रकट होचुका है।

चौहत्तरवां परिच्छेद।
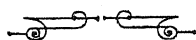
प्रभुभक्तिकी पराकाष्ठा

सैयदुल्लाख़ां किसी शरणापन्न व्यक्तिकी भांति दीन और दुःखी होरहा है; और अप्पासाहब अत्यन्त आदर और आग्रहके साथ उससे अपने लड़केको क़ैद करके बादशाहके सम्मुख उपस्थित करनेकी प्रार्थना कर रहे हैं, ख़ांसाहबके लोग भी घबड़ाये हुए उसके पीछे खड़े हैं; और बाहर "हर हर महादेव!" "हर हर महादेव!" तथा "भवानी माताकी जय!" "भवानी मातीकी जय!" का लगातार जयघोष होरहा है! सम्पूर्ण स्थिति अत्यन्त

विलक्षण दिखाई देरही थीं। यह सारा गोलमाल जब अप्पा-साहबके कानोंमें आया, तब क्रोधके मारे उनका मस्तिष्क इतना फिर गया कि वे बिलकुल पागलकी भांति दिखाई देने लगे; और एकदम तीरकी तरह वे बाहरको लपके। दरवाजेपर आकर देखते हैं, तो उनको बाहर निकलनेको भी सांस नहीं है। सम्पूर्ण महलके आसपास कमलीधारी वीरोंका घेरा पड़ा हुआ है; और दरवाजेके सामने एकदम सैयदुल्लाख़ांकी पुकार मची हुई है! उसे सुनकर बुड्ढा दरवाजेके बाहर आया; और उन लोगोंको मनमानी गालियां देने लगा। उनकी गालियोंसे गुस्सेमें आकर एक आदमी आगे बढ़ा; और अब उनपर आक्रमण करनेही-वाला है कि, इतनेमें पहलेकी ही उस धीर-गम्भीर वाणीसे ये शब्द सुनाई दिये :—"हां! वे कुछ भी कहते रहें, उनपर आक्रमण न किया जाय, उनके बालको भी धक्का न लगाया जाय। सबसे पहले सैयदुल्लाख़ांको पकड़ो। चुपके आत्मसमर्पण न कर दे, तो निस्सन्देह शस्त्रप्रहार करो। क़िलेपर जितने हिन्दू हों, उनका तभी प्रतिरोध करो, जब वे जान-बूझकर दंगा करें; और यदि वे कुछ भी न बोलें, तो उनपर भी शस्त्र न उठाओ। हां, यदि वे चुप न रहें, व्यर्थके लिए हमारा प्रतिरोध करें, तो फिर लाचारी है। अप्पासाहब! अब आप एक ओर हट जायँ; और हमको रास्ता देदें, इसीमें कुशल है। उस दुष्ट मनुष्यको शरण देना उचित नहीं है—उसके दुष्कर्म क्या आपको मालूम नहीं हैं? यह यदि बीजापुर-दरबारमें न होता, तो बीजापुरके

बादशाहकी ऐसी दुर्दशा न होती !" ये धीर और गम्भीर वाणी-से उच्चारण किये हुए शब्द ज्यों ही अप्पासाहबके कानमें पड़े, त्यों ही—न जाने क्यों—उनकी बड़ी ही विचित्र सी दशा होगई। यह पुरुष, जो बोल रहा है, कौन है? उसको देखनेके लिए मानो उनके नेत्र बिलकुल उत्सुकसे दिखाई पड़ने लगे। क्षणमात्रके लिए उन्होंने विचार किया; और फिर एकदम पहलेहीकी भांति सन्तप्त होकर कहते हैं, "जान पड़ता है, राजा शहाजीकी शुभ्र कीर्त्तिमें कालिमा लगानेवाला, उनकी प्रभुभक्तिमें कलंक लगाने-वाला कुलांगार तू ही है! तू इधर आया क्यों? मेरा कमबख़्त अभागा लड़का बाग़ी होगया—इसी कारण तो? लेकिन तू अच्छी तरह समझ ले कि मेरा कमबख़्त—अरे रे रे! अब उसे 'मेरा' कहनेमें भी लाज आती है—यद्यपि वह बाग़ी होचुका है; और उसको मेरे पास भेजकर यद्यपि तूने मुझे भी फोड़नेके लिए काफ़ी प्रयत्न किया है, फिर भी तू यह आशा मत रख कि, मैं एक क्षणभरके लिए भी तेरे पक्षमें आमिलूंगा—हां, इस क़िलेको भले ही तू एक बार इधरसे उधर उठाकर रख लेनेकी आशा कर; पर मेरे मिलनेकी आशा तू नहीं कर सकता! मेरे अभागे (पुत्र) की भांति तू चार कमबख़्त छोकरोंको इकट्ठा करके स्वराज्य स्थापित करनेको चला है! बस, एक इसी क़िलेको ले-लेनेसे काम चल जायगा? मेरे घरमें एक अभागा कुलांगार उपजा, पर सभी क़िलेदारोंके घरमें ऐसे ही अभागे नहीं उपजे हैं सभी इस प्रकारकी बग़ावत—नमकहरामी—नहीं करेंगे।

तू कहता है, सैयदुल्लाख़ांको मेरे हाथमें देदो; वह दुष्ट है, होगा दुष्ट—लेकिन मेरे यहां तो राजदरबारसे मेहमानके तौरपर आया है। जबतक मेरे इस जर्जर शरीरमें प्राण हैं, तबतक तो तू उसे अपने हाथमें पानेकी आशा नहीं रख सकता। तू समझता क्या है? यही नहीं,—" आगे वह बुड्ढा और भी कुछ कहनेवाला था; पर फिर नहीं बोला। क्योंकि जिसको सम्बोधन करके वह यह सब कह रहा था, वह पुरुष—ऐसा उसे भास हुआ—कि किसी दूसरी तरफको चला गया; अथवा यह भी सम्भव है कि, बुड्ढे के मनमें कोई दूसरा ही विचार आगया हो। जो भी कुछ हो—वह आगे बोला नहीं; किन्तु अपने आदमियोंको पुकारने लगा। अप्पासाहब ज़ोर ज़ोरसे लगातार अपने सिपाहियोंको बुला रहे हैं, इतनेमें दरवाजेके सामने खड़े हुए उन लोगोंके पीछेसे, अप्पासाहबको पुकारकर, उनका एक बाहरका सिपाही कहता है—"महाराज चारों ओर नाकेबन्दी होगई है। सारी पलटन इन्होंने रोक रखी है। हमारे हथियार भीतर बन्द हैं। यह कहकर कि—जबतक तुम हमपर आक्रमण नहीं करोगे, हमारे कार्योंमें बाधा नहीं दोगे, तबतक हम तुम्हारे बालको भी धक्का नहीं लगावेंगे—ये लोग हमको पकड़ रहे हैं; और हमारे हथियार छीन रहे हैं। सब बुर्जोंपरके सिपाहियोंको इन्होंने इसी प्रकार क़ैद कर लिया है; और उनको निःशस्त्र करके अपने आदमियोंको तैनात कर दिया है। रसद-गल्ला, हथियार-वथियार कुछ भी हमारे हाथमें

नहीं रखा है !" यह सुनते ही अप्पासाहबके क्रोधकी सीमा न रही ! वे इतने क्रुद्ध हुए कि, कुछ पूछो मत ! और एकदम, बोले, "अच्छा रोओ, बदमाशो रोओ ! चूड़ियां पहनो। चोगे चढ़ाओ। कमसे कम हिजड़े तो बनो, तुमसे और क्या होगा ! हरामखोरो, घूस खाकर बाग़ी बन बैठे—सब उनके हाथमें दे दिया—अब हमारे सामने आये हो यह रोना रोने ! किसने बग़ावत की ! उसी कमबख़्त अभागेने तो ! आह ! मैं यदि इसका प्राण ले लूं—तो क्या पुत्रहत्याका पातक मुझे लगे ? नहीं—कभी नहीं। जिसने स्वामिद्रोह किया, पितृद्रोह किया, विश्वासघात किया, उसको मार डालनेमें तो पुण्य ही होगा ! यही नहीं, बल्कि अन्य भी किसी भयंकर हत्याका पाप यदि होगा, तो वह भी मिट जायगा। इस बातका मुझे पक्का विश्वास है। अच्छा। देखता हूं !" इतना कहकर अप्पासाहब लौट पड़े। फिर बाहरसे "सैयदुल्लाख़ांको हमारे हाथमें दो !" की चिल्लाहट हुई। उसे सुनकर अत्यन्त तिरस्कारपूर्ण चेष्टासे उन्होंने एक बार उन लोगोंकी ओर देखा; और फिर सदर बैठकपर आगये। देखते हैं, तो सैयदुल्लाख़ां वहां बिलकुल गौ बनकर बैठा हुआ था। उसने एक बार फिर सुना कि लोगोंने उसके नामसे पुकार की; और चिल्लाये कि "सैयदुल्लाख़ांको हमारे हाथमें दे दो !" यह सुनकर बेचारा बहुत ही घबड़ा गया और अप्पासाहबको सामने देखते ही बोला " अप्पासाहब, अब मेरी रक्षा आपहीके हाथमें है। मैंने आजतक आपके अनेकों अपराध किये !

आपको कष्ट पहुंचाया। आपको कष्ट पहुंचानेके लिए बहुत प्रयत्न किये। ऐसी दशामें आपके सामने मेरी याचना कैसे सफल होगी! किन्तु फिर भी मैं याचना करता हूं—आप चाहे जो करें—लेकिन उस शैतानके इन दूतोंके हाथसे मुझे बचाव—मैं आपकी शरण आया हूं। मैं यदि बच गया, इन दुष्टोंके हाथमें न पड़ा, तो अवश्य ही आपका कोई न कोई कल्याण करके ही रहूंगा। किसी न किसी उपायसे आप मुझे क़िलेके नीचे मेरे सिपाहियोंके समीप पहुंचा दें। मैं उनके पासतक पहुंच जानेपर फिर क्षणभर भी यहां न ठहरूंगा, सीधा बीजापुर चला जाऊंगा। आप यदि चाहें, तो यह बात होसकती है। नहीं तो वह शैतान—वह शैतान—मेरे प्राण लिये बिना आज न रहेगा। अभी वह मुझे चितावनी देगया है।"

"वह शैतान? कौनसा शैतान? कौन वही मेरा कमबख़्त? वही तुमसे कह गया है, कि प्राण लूंगा? मेरा कमबख़्त? मेरा? छि: अब फिर यदि ये दो अक्षर मेरी जीभपर आवेंगे, तो मैं जीभ ही काट डालूंगा! वह चांडाल, वह कुलांगार, जिसने पितृद्रोह, स्वामिद्रोह किया, उसको अब फिर मेरे घरको अपवित्र न करना चाहिए। लाओ रे मेरी तलवार! या तो मैं ही मर जाऊंगा—या इसीको मारूंगा। आह! आह! ईश्वरने मुझे ये दिन दिखानेको क्यों रखा? हमारी सत्रह पीढ़ियोंमें भी ऐसी नीचता, ऐसी नमकहरामी, कभी न हुई होगी—और आज मेरी इन आंखोंके देखते हुए! न जाने ऐसे मैंने कौनसे पाप

किये हैं कि, जिनका फल मैं यह भोग रहा हूं ! यदि मैं पुत्र-मोहको आज छोड़ दूंगा, तभी इन पापोंका क्षालन होगा, अन्यथा नहीं होगा। लाओ लाओ, मेरी तलवार—ले आओ ! मैं उसकी हत्या करता हूं, नहीं तो उसके हाथसे पितृ-हत्या ही करता हूं। वह मुझे मारे, नहीं तो मैं उसे मारकर अपनेको मरवाता हूं। लाओ, लाओ, कोई न कोई हथियार इस समय लाओ—नहीं तो उसका सिर्फ गला ही दाबकर मैं प्राण लिये लेता हूं—आह !" इतना कहकर वे बड़े जोशके साथ, बिलकुल पागलकी भांति, एकदम अपने लड़केकी ओर दौड़ पड़े। सच-मुच ही उनका पित्त भड़क उठा; और उन्होंने नानासाहबकी गर्दनमें हाथ डाल दिया। इसनेमें उनके नौकरोंने, जो वहां मौजूद थे, उनको एक ओर हटा दिया; और नानासाहबसे बाहर जानेकी प्रार्थना की। सैयदुल्लाखां बिलकुल दीन होकर अप्पासाहबकी ओर देख रहा था। उसका चित्त न जाने कैसा होरहा था। वह आंखें फिरा फिराकर चारों ओर देख रहा था। इसके बाद अप्पासाहबसे फिर एक बार उसने प्रार्थना की कि, किसी न किसीतरह, बेगमके लोगोंकी सहायतासे मुझे आप नीचे पहुँचाइये; और अपने लोगोंसे मिलने दीजिए। अप्पासाहबने इसे स्वीकार किया; और कहा कि, " मैं अपने प्राण रहतेतक तुम्हारी रक्षा करूंगा, तुम चलो।" इतना कह-कर उन्होंने अपनी युद्धकी वर्दी पहनी, अपने हथियारोंको खूब मज़बूतीके साथ बांधा; और बांयें हाथसे सैयदुल्लाको पकड़-

कर दरवाजेके बाहर निकल पड़े। दरवाजेपर जो लोग जमा थे, उनकी ओर एक तुच्छ दृष्टिसे देखा; और कहा—"अरे, ये सैयदुल्लाखां मेरे साथ हैं! मैं इनको नीचे लेजाकर इनके आदमियोंके पास पहुँचाऊंगा; और फिर तुम्हारे साथ भिड़नेको लौट आऊंगा। अब मैं इनको लिये जाता हूं—जिसका साहस हो, वह आगे बढ़े। और पहले मुझपर वार करे, मुझे मार डाले; और तब इनके शरीरमें हाथ लगावे। देखता हूं अब कौन माईका लाल है!" ये शब्द सुनते ही और सैयदुल्लाखांको उनके हाथमें देखते ही, तीन व्यक्ति एकदम जोशमें आकर आगे बढ़े; और बाकी बिलकुल क्रुद्ध होकर ज़ोर ज़ोरसे उसके नामका हल्ला मचाने लगे। परन्तु इतनेहीमें पीछेकी ओरसे कुछ इशारा हुआ; लोग तुरन्त ही दोनों ओरसे कुछ कुछ हट गये; उन्होंने अप्पासाहबको सैयदुल्लाखांके साथ निकल जानेको रास्ता देदिया। वे बीचसे निकले जारहे हैं;परन्तु किसीने भी उनका किसी प्रकारसे प्रतिरोध नहीं किया। यही नहीं, बल्कि खांसाहबके जो वे पांच-सात आदमी थे, उनको भी शस्त्र रख देनेके लिए लाचार किया; और कहा कि, तुम भी अपने मालिकके पीछे पीछे चले जाओ। वे भी चले गये। उन बेचारोंको क्या मालूम कि, नीचे उनके लिए क्या तजवीज हो-चुकी है! उन्होंने देखा कि, चलो, अच्छा हुआ, हम भी छूट गये! वे बड़े आनन्दित हुए। अधिकांश लोगोंने हथियार रख देनेमें कुछ भी आनाकानी नहीं की। हां, एकने कुछ तेज़ी दिख-

लाई; पर जहां एक मावलेने उसके ज़रा भाला टोंचा, कि वह भी रास्तेपर आगया; और हथियार रखकर लम्बा हुआ।

इधर बेग़मके सिपाहियोंको अभीतक यह भी नहीं मालूम हुआ था कि,यह क्या गड़बड़ी मची हुई है। पांच-सात आदमी-पहरेपर थे। उन्होंने कुछ पूँछ-तांछ की; तो दो एक मराठोंने—तानजी वहीं कहीं ख़ास तौरपर खड़े थे, सो उन्होंने—विशुद्ध हिन्दुस्तानीमें उनसे कहा, "सैयदुल्लाख़ांके आदमी ऊपर आ-गये हैं; और वे ज़बरदस्ती तुम्हारी बेग़मसाहबाको यहांसे भगा लेजानेके विचारमें हैं। इस समय वे क़िलेदारकी पुतोहूके लिए शोरगुल मचाकर उसीके महलमें घुसना चाहते हैं। सम्हालो। तुम अपने आदमियोंको जगाओ; और होशियार होजाओ। सैयदुल्लाख़ां बेग़मसाहबापर बहुत दिनसे दांत लगाये हैं। और आज तुम्हारा रक्तपात करके उसको यहांसे लेजायगा। तुम यहांसे एक आदमीको भी हटने मत दो। उसके सिपाही अब उस महलकी ओरसे तुम्हारे ही महलपर धावा बोलेंगे।" बस, इतना कहकर तानाजीराव वहांसे चलते बने। सैयदुल्लाख़ांका यह विचार उन सभीको मालूम था। इसलिए तानाजीका उप-र्युक्त कथन उनको बिलकुल सत्य जान पड़ा। मशालोंके उजे-लेमें उनको आदमी ज़रूर दिखलाई दिये, लेकिन उनकी वर्दी मुग़ल सिपाहियोंके समान न थी, बल्कि केवल कमली लपेटे हुए ही सब आदमी थे। इससे एकने कुछ शंका भी प्रकट की, तब दूसरेने कहा कि, अच्छा, दो आदमी जाकर ठीक ठीक बातकी

जांच कर आवें। इतनेमें एक दूसरा ही कहता है—"अजी, जानेमें क्या धरा है? बदमाशोंने जान-बूझकर तमाशा बनाया होगा। वह हरामख़ोर सब कुछ कर सकता है। देखो न, हमारे ख़ांसाहबको कर्नाटक कैसे भेज दिया! उनके जानेकी क्या ज़रूरत थी? झूठा स्वांग रचा! अब हमारा कर्त्तव्य यही है कि, हम होशियार रहें। वहां जाकर देखनेकी क्या ज़रूरत है?" एक और उससे कुछ विरुद्ध कहने लगा; और आपसहीमें उनमें बातचीत शुरू होगई। इतनेमें एक मनुष्यको, जिसे सैयदुल्ला-ख़ांने फोड़ लिया था, पश्चात्ताप हुआ; और वह अचानक ही बोल उठा, "अजी यारो, सैयदुल्लाख़ां, बेगमसाहबाके विषयमें, अवश्य ही दुष्ट उद्देश्य रखता है। वह मुझे कल ही फोड़नेका प्रयत्न कर रहा था। मुझसे कहा था कि, मैं तुम सबको शराब पिलाकर बेहोश कर दूंगा। लेकिन मैंने स्वीकार नहीं किया।" यह अन्तिम वाक्य उसका मिथ्या था। वास्तवमें वह फूट गया था। लेकिन वह कुछ कर नहीं सका; और अब, जबकि उसने अपने मित्रोंकी बातें सुनीं, इसके सिवाय यह भी सोचा कि, सैयदुल्लाख़ां अभी आकर शायद हमसे प्रेमसे बोलेगा; और यह बात ये हमारे साथी ताड़ जायँगे, तब उसने, खोलकर ऊपरकी बात कही। इसपर एकने उससे पूछा कि, पहले ही क्यों न बतलाया? उसने कहा कि, मुझे इसमें कोई तत्व नहीं मालूम हुआ था। यह सुनकर सबने उसे गालियां देना शुरू किया। अस्तु। उन लोगोंमें जबकि यह चर्चा चल रही थी, उधरसे ऐसा

जान पड़ा कि, क़िलेदारके महलकी ओरसे वे लोग अब उनके महलकी ओर चल पड़े हैं ! यह देखकर उन सबको भी विश्वास होगया कि, सचमुच ही इस समाचारमें सत्यता है। तुरन्त वे अपने अपने हथियार बांधकर खड़े होगये। वे लोग भी उधरसे आगये। नानासाहब आगे थे। तानाजी उनके साथ थे। नानासाहबने ज़ोरसे बेग़मके सिपाहियोंको पुकारकर कहा, "भाइयो, तुम यदि चुपकेसे अपना सारा तवाज़मा यहांसे उठा लेजाना चाहते हो, तो चले जाओ। तुमसे कोई नहीं बोलेगा। लेकिन अगर तुम दंगा-फ़िसाद करोगे, तो व्यर्थमें मारे जाओगे। यह क़िला अब अप्पासाहबके अधिकारमें नहीं। अब यहां वह पुरानी हुकूमत नहीं। रणदुल्लाख़ां एक भलामानुस है, उसके आदमियोंको विशेषतः स्त्रियोंको, हमारी ओरसे कुछ भी कष्ट नहीं दियाजायगा। तुमको मैं एक घड़ीका अवकाश देता हूं। बस, इसी अवकाशके अन्दर तुम महलको ख़ाली करके एकदम चले जाओ। ऐसा न करना चाहो, तो अभी हथियार रखकर चुप बैठ जाओ। जब सुविधा देखो, तब चले जाओ। लेकिन क़िलेपर अब पुराना शासन नहीं है, यह ख़ूब ध्यानमें रखो।" नानासाहबके इस कथनका तात्पर्य एकदम किसीके ध्यानमें नहीं आया। रणदुल्लाख़ांको भलामानुस बतलाकर यह व्यक्ति हमसे सामोपचारका भाषण कर रहा है, यह क्या बात है? वे बड़े चमत्कृतसे दिखाई दिये। परन्तु उनमें दो एक जो कट्टर थे, वे क्रुद्ध होकर आगे आये; और अकड़कर बोले, "हम यहांसे जा

नहीं सकते; और न हथियार ही रखेंगे।" एक बोला, "हम तुम्हारा सब कपट जानते हैं। हमको महल छोड़नेमें फँसा कर तुम अचानक हमपर हल्ला करना चाहते हो।" यह जिसने कहा, उसकी आवाज़ जैसे नानासाहबने पहले कभी सुनी हो, ऐसा जान पड़ा;और इसलिए उसको देखनेके उद्देश्यसे उन्होंने ध्यानपूर्वक अपनी नज़र डाली;पर कोई दिखाई न दिया। नानासाहब फिर कुछ कहनेवाले थे;इतनेमें फिर वही मनुष्य,बड़े जोशके साथ अपने साथियोंसे कहता है, "अरे यारो, जो समझा था, वही निकला। मैं अनेक संकट सहकर, कपटके द्वारा, जिसके पंजेसे छूटकर, यहां तुमसे आमिला, वही यह दुष्ट है। हमारे ख़ांसाहबका यह पक्का दुश्मन है। यह सैयदुल्लाख़ांके ही मेलका है। देखते क्या हो, आओ, बोल दें इसपर धावा!"

यह कहते समय नानासाहबको उसकी सूरत दिखाई दी। उसे देखकर वे कुछ आश्चर्यितसे दिखाई दिये; परन्तु फिर एकदम क्रुध होकर वे उसकी ओर टूट पड़े। दोनों ओरसे हथियार बजने लगे। इतनेमें आप्पासाहब ऊपर आये;और वह युद्ध देखकर सन्तुष्ट हुए। उन्होंने पहले ही समझा था कि,रणदुल्लाख़ांके सिपाही चुप नहीं रहेंगे, वे ज़रूर मोर्चा लेंगे; और ऐसा ही हुआ। इसलिए उस लड़ाईको देखकर उनको काफी जोश आया और वे रणदुल्लाख़ांके सिपाहियोंको उत्साह दिलाते हुए स्वयं भी उन्हींके बीचमें घुस पड़े। यह एक छोटीसी लड़ाई बिलकुल अचानक ही छिड़ गई। नानासाहबके ख़यालमें भी नहीं आया

था कि, ऐसी कोई लड़ाई छिड़ जायगी। उन्होंने समझा था कि, क़िला अब अपने हाथमें आ ही गया, किन्तु पिता-पुत्रका सामना अवश्यम्भावी था।

पचहत्तरवां परिच्छेद।

लड़ाईके होते हुए दूसरी ओर।

नानासाहबने ज्यों ही देखा कि, हमारे पिता युद्धमें घुस पड़े, त्योंही उनके हाथपैर बिलकुल ढीले होगये। उन्होंने देखा कि,हमको अपने पिताके विरुद्ध शस्त्र ग्रहण करके,उन्हींके हाथसे, उन के अधिकारका क़िला हस्तगत करनेमें सहायता देनी पड़ी-यही नहीं, बल्कि स्वयं उनसे सामना करनेको भी समुपस्थित होना पड़ा, अतएव उनको अत्यन्त ही विषाद हुआ; और वे पीछे हट गये। उनका हाथ आगे न चलने लगा। परन्तु केवल उन्हींपर तो वह लड़ाई अवलम्बित नहीं थी। लड़ाईका प्राण कोई दूसरा ही था। नानाजीने जब देखा कि, रणदुल्लाख़ांके सिपाही बड़ी वीरतासे मुक़ाबला कर रहे हैं, तब उन्होंने श्यामा-को अन्य दो सवारोंके साथ सूर्याजीके पास सहायक सेना लानेके लिए भेजा। अप्पासाहब तो अपनी उस वृद्धावस्थामें भी केवल जमदग्निसे ही दिखाई देरहे थे—वे बराबर मराठोंको नमकहराम, मातृद्रोही, पितृद्रोही, राजद्रोही, विश्वासघाती, इत्यादि इत्यादि अनेक पदवियोंसे विभूषित करते हुए उनपर

गोलियोंकी पुष्पवृष्टि कर रहे थे। और नानासाहबपर तो उस वृष्टिकी ऐसी कुछ तीव्र बौछार पड़ रही थी, जिसका कुछ पूछना ही नहीं! "यह अभागा यदि मारा जाय, तो हमें बड़ा सुख हो, किसी न किसीकी तलवार उसे लगे!" यहांतक उद्गार उनके मुखसे निकल रहे थे! ये सब बातें देखकर नानासाहबका धैर्य और भी गलित होगया। क्षणभरके लिए उनके मनमें यह भी आया कि, हम नाहक इस झगड़ेमें पड़े—न पड़े होते, तो अच्छा होता। स्वयं पिताजी हमको ऐसे शाप देरहे हैं! यह हमारे लिए अच्छा नहीं। स्वयं लड़ाईके मौक़ेपर ही जब ये विचार मनमें आगये, तब हाथपैर कहांतक काम देवें? वे चुपके एक एक क़दम पीछे ही हटते गये। और अन्तमें लड़ाईके स्थानसे बिलकुल अलग जापड़े। यह मौक़ा देखकर किसीने पीछेसे बिलकुल अचानक—उनके बिलकुल असावधान और विमनस्क होते हुए—तलवारका वार किया, जो बिलकुल उनके मर्मस्थानमें ही बैठा। नानासाहब चक्कर खाकर एकदम धरामसे नीचे गिर पड़े। उनके नीचे गिड़ते ही वह व्यक्ति, कि जिसने उनपर वार किया था, एकदम उनकी छातीपर चढ़ बैठा; और बोला, "ऐ दुश्मन, मैं कितना ख़ुशनसीब हूं कि, अन्तमें मेरा इरादा पूरा हुआ; और तेरे कलेजेका ख़ून पीनेके लिए मैं आगया। याद करले, तू भी बीजापुरमें इसी प्रकार मेरी छातीपर चढ़ कर मेरे प्राण लेनेको तैयार था! बस उसी समयसे मैंने पक्की प्रतिज्ञा कर ली थी कि, मैं तेरे कलेजेका ख़ून पिऊंगा। ऐ दुश्मन

तेरी औरतको मुसलमानोंने भ्रष्ट करदिया है; और इसीलिए क्या तू मेरी फ़तिमाको भगा लाया है? उसीको उड़ा लेनेके लिए तू मेरा ख़ून करना चाहता था? तूने मेरे साथ इतना ही सलूक नहीं किया; बल्कि अन्तमें मेरा बड़ा भारी अपमान भी किया। उस छोकरेने मुझे स्त्रियोंका लहगा पहनाकर तेरे हाथमें देदिया। तूने मुझे तुच्छ दृष्टिसे देखा; और यह सोचकर कि, चूड़ी पहननेवाले और लहँगा पहननेवाले खोजेपर शस्त्र कौन चलावे, तूने मुझे उसी पोशाकमें क़ैदखानेमें डलवा दिया। पर मैं भी कैसा उस्ताद निकला कि, तेरे आदमियोंकी आंखमें धूल झोंककर भाग आया। सूर्याजीका दल चला ही आया था, इसलिए मुझे अच्छा मौक़ा मिल गया; और मैं सिधे क़िलेतक पहुंचकर अपने ख़ांसाहबके लोगोंमें आमिला। मुझे कोई भी पकड़ नहीं सका। कल ही मैं यहां आगया। लेकिन तुझ मुर्देको इन सब बातोंसे क्या मतलब? मुर्दा नहीं तो क्या? अब तू मुर्दा ही है; और यदि अभी नहीं हुआ, तो अब देख मैं तुझे शीघ्र ही मुर्दा किये डालता हूं; और अपनी फ़तिमा तथा उसकी मालकिनको बहका लानेका बदला लेता हूं! देखूं, अब तुझे कौन छुड़ाने आता है?" यह कहकर उसने नानासाहबका कंधा पकड़कर ख़ूब दबाया—मानो उनका बध करनेके पहले वह उनको होशमें लाकर यह जतलाना चाहता था कि, देख, अब तू यह मरा! कन्धा हिलाते ही नानासाहबने "घर्र-घर्र" करके एक प्रकारकी विचित्र आवाज़ की—अथवा यों कहिये कि वैसी आवाज़ उनके

गलेसे निकली। अतएव यह समझकर, कि अभी यह जीरहा है, अहमद (यह दुष्ट पुरुष अहमद ही था, सो उपर्युक्त भाषणसे पाठकोंके ध्यानमें आगया होगा) ने भुजाली लेकर उनके गलेमें भोंकनेके लिए हाथ उठाया। एकक्षणभर—एकही क्षणभरका यदि विलम्ब होजाता, तो नानासाहबका काम तमाम होजाता। पर इतनेमें "ख़ुदा! ख़ुदा" कहते हुए अहमदने अपने बांयें हाथसे, जो कि अभीतक नानासाहबके कंधेको दबाये हुए था, अपने कटे हुए दाहने हाथको पकड़ा! किसी ज़बरदस्त आदमीने पीछेसे तलवार चलाकर उसका वह दाहना हाथ, जिसमें वह भुजाली पकड़े हुए था,बड़ी सफाईसे उड़ा दिया! और जैसा कि हमने ऊपर बतलाया, वह 'ख़ुदा ख़ुदा' करते हुए अपने दूसरे हाथसे अपना कटा हुआ हाथ पकड़ता है, इतनेमें एक ज़बरदस्त वार उसकी गर्दनपर हुआ, जिससे वह एकदम उलट-कर धड़ामसे नीचे गिड़ पड़ा।

वर्णन करनेमें तो यह घटना बहुत बढ़ गई; पर वहां इतनी देर नहीं लगी, बहुत थोड़े समयमें ये सब काम हुए। अब उस पुरुषने, जिसने अहमदपर वार किये थे,देखा कि, अहमद उलट-कर गिर पड़ा,अतएव वह तुरन्त ही आगे आया; और अहमदकी टांग पकड़कर खींचते हुए उसे एक तरफ़ लेजाकर डाल दिया। सच पूछिये तो एक ढोरको भी किसीने सावधानीसे ही डाला होता, पर बेचारे अहमदकी इससे भी बुरी गति हुई। अहमदको एक तरफ़ खींचकर डाल देनेके बाद वह पुरुष नाना-

साहबके पास आया; और अँधेरेमें ही उसने उनके हृदयको टटोला, उनकी नाकमें हाथ लगाया। इसके बाद वह वहांसे उठा, और अहमदके पास गया। उसके भी हृदयपर हाथ लगाकर देखा, नाकमें भी हाथ लगाया। इतनेमें अहमद अपने गलेको घर्र घर्र करके कुछ कहनेका प्रयत्नसा करने लगा; पर बोल उसके मुंहसे नहीं निकला। इससे उस पुरुषको स्पष्ट मालूम होगया कि, यह पापी अभी जीवित है; और कदाचित् फिर उठे; और नानासाहबकी ओर जानेका प्रयत्न करे, अतएव इसको पूरा पूरा घायल कर देना चाहिए—जानसे मारनेकी ही कोई विशेष आवश्यकता नहीं। बस, यही सोचकर उसने अहमदके दोनों पैरोंपर गहरे वार किये; और इसके बाद फिर वह वहांसे आदमियोंको लानेके लिए चला कि, जिससे नानासाहबको वहांसे उठवाकर सुरक्षित स्थानमें लेजावें। वह अभी सौ क़दम भी नहीं गया होगा कि, इतनेमें उसे मालूम हुआ कि उसी ओरसे कोई क़िलेपर चढ़ता हुआ आरहा है। इसके साथ ही साथ चूड़ियोंके खनकनेकी आवाज़ उसके कानोंमें आई। इतनी रातको क़िलेके सीधे मार्गसे नहीं, किन्तु एक दूसरे ही रास्तेसे, और स्त्रियां ऊपर चढ़ती हुई आरही हैं—यह मामला क्या है? उसको बड़ा आश्चर्य हुआ; और सोचनेपर कुछ ध्यानमें न आया। वह कुछ ठहर गया। इतनेमें ये शब्द उसके कानोंमें पड़े—"क्यों बाईसाहबा, तुमने तो कहा, रास्ता भूल गईं! अजी, ऐसे कौनसे चार-पांच बरस होगये, जो रास्ता भूल जातीं? देखो, जिस

रास्तेसे तुमको उतार लेगई थी, उसी रास्तेसे आज ऊपर ले-आई। लेकिन इतना आग्रह करके इस समय तुम आईं क्यों? यहां तो अभी भारी उपद्रव मचा हुआ है, ऐसे समयमें तुम्हारे आनेका काम क्या था?"

"मेरा काम! मेरा काम!—देखना अब मेरा काम, मालूम होजायगा!"

"मैं नहीं समझी।"

"अब समझ जायगी। अरी पगली, मेरा ऐसा ही कुछ काम है! तुझे मालूम नहीं है, वे इधर आये हैं?"

"हां, यह तो मुझे मालूम है, लेकिन तुम इतनी रातको क्यों आईं?"

"उनके साथ लड़नेको—नहीं तो—अरी! देख तो, इधर यह कौन पड़ा हुआ है—कोई पड़ा ज़रूर है! पर कौन? अवश्य ही कोई वीर…"

परन्तु इतनेमें उस वीर पुरुषके मनमें, जो वहीं खड़ा हुआ उन दोनोंकी बातें सुन रहा था, न जाने क्या विचार आया, कि वह एकदम अपनी गम्भीर वाणीसे उन स्त्रियोंसे बोला, "हां, हां। यह एक वीर पुरुष ही पड़ा हुआ है; और इसको जिसने विश्वासघात करके गिराया है, वह भी उस तरफ़ मरा पड़ा है। तुम कोई बड़ी शूरवीर और साहसी स्त्रियां हो; और इस क़िलेसे परिचित भी दिखाई देती हो, अतएव तुम इसी वीर पुरुषके पास बैठो; और मैं इतनेमें दो-तीन आदमियोंको

तथा एक मशाल लिये आता हूं। अब हमलोग इस घायल वीरको किसी सुरक्षित स्थानपर लेचलेंगे; और इसको होशमें लानेका प्रयत्न करेंगे। वह अभी अच्छी हालतमें है। घबड़ाना नहीं। और यहांसे टलना नहीं।"

ऐसा जान पड़ा कि, जैसे उस पुरुषकी आवाज़ उन स्त्रियोंने कहीं सुनी थीं। क्योंकि उसको सुनकर वे विशेष चमत्कृत नहीं हुईं। परन्तु अब वे इस गोलमालमें पड़ी कि, जिस पुरुषके पास बैठनेके लिए इसने हमसे कहा, वह वीर पुरुष वास्तवमें है कौन? वे बड़ी चिन्तामें पड़ीं। एकके मनमें कुछ विचित्र ही विचार आया; और बिलकुल भयभीत वाणीसे उसने अपने उस विचारको दूसरीसे प्रकट भी किया, जिससे वह भी कुछ घबड़ाई; और फिर उससे बोली, "नहीं, नहीं। बाईसाहबा, ऐसा नहीं होसकता। तुम ऐसी शंका क्यों करती हो? मन जो कुछ सोचता है, सो दुश्मन भी नहीं सोचता। ऐसा ही है!" यह कहकर वह नीचे झुक झुककर देखने लगी। लेकिन उजेला तो था ही नहीं। जो कुछ था, सो सिर्फ़ चांदनीका था। उतने उजेलेसे वह कुछ भी नहीं जान सकी। परन्तु जब कोई आकृति मनमें समा जाती है, तब फिर वही चारों तरफ़ दिखाई देने लगती है—यही कारण शायद हो, अथवा, कह नहीं सकते, अन्य कोई कारण हो—किन्तु उस स्त्रीके मनमें ऐसा ही कुछ विचार आया कि, जिस पुरुषकी मूर्तिका वह ख़्याल कर रही है, उसी पुरुषकी मूर्ति, उस जगह, उस समय, उस हालतमें

पड़ी हुई है। उसका उक्त विचार अब दृढ़ होने लगा; और ज्यों ज्यों उसका वह विचार दृढ़ होने लगा, त्यों त्यों, ऐसा जान पड़ा कि, उसकी यह उत्कंठा भी बढ़ने लगी कि, जिस तरह हो, वह दूसरी स्त्री नीचे झुककर न देखे; और हमारे मनका विचार उसके ध्यानमें न आने पावे। वह दूसरी स्त्री बार बार झुककर देखना चाहती; पर ज्यों ही वह झुकनेको होती, त्यों ही वह पहली स्त्री उससे कोई बात छेड़कर उसका मन दूसरी ओर आकर्षित कर लेती। उस पड़े हुए वीर पुरुषका श्वास बराबर चल रहा था; और स्पष्ट सुनाई भी देरहा था। इसके सिवाय बीच बीचमें वह कभी कभी अपने हाथ भी उठा उठाकर पटक देता था। परन्तु, हां, अभीतक उसने कोई शब्द उच्चारण नहीं किया था। उन स्त्रियोंकी बातचीत होरही थी; और उपर्युक्त विचार भी उनके मनमें आरहा था, इतनेमें उसका कराहना एक बार उनके कानमें पड़ा, जिसे सुनते ही एक स्त्री, अपना कुछ कानसा लगाकर, एकदम उसकी ओर चली। इतनेमें मानो उसके कानोंमें ये शब्दसे पड़े—"कौन है यह? अप्पासाहब?" इन शब्दोंका उसे केवल भास मात्र हुआ था कि, एकदम वह आगे बढ़ी; और उस पुरुषके पास जाकर ध्यानसे देखने लगी, तथा देखकर तुरन्त ही बोली, "अरी, देख री! वही है, वही! अब मैं क्या करूं? कहा था कि, साथ रहकर लड़ूंगी, पर यहां यह अनर्थ! अरी जा, दौड़, देख, वह पुरुष शायद श्यामाका मामा ही है—उसे गये कितनी देर होगई, अभीतक

मशाल लेकर नहीं आया; और न कोई आदमी ही आया। जा, दौड़ती जा। और थोड़ासा पानी और दिया भी लेती आ। जा—जल्दी।"

वह यह कह ही रही थी कि, इतनेमें उसके कानोंमें ऐसी कुछ आवाज़ आई कि, जैसे उधर, एक "तरफ़ कोई व्यक्ति मौतके बिलकुल अन्तिम ख़ुर्राटे भर रहा हो! उसे सुनकर वह दूसरी स्त्री घबड़ाती हुईसी कहती है, "बाईसाहबा, मैं तुमको इस प्रकार कैसे छोड़ जाऊं? मैं नहीं जाऊंगी; तुम अकेली हो!"

"अरी पगली, देख इधर, इनके प्राणोंको क्या होरहा है? ऐसी दशामें मेरी चिन्ता क्यों? मुझ अभागिनीको क्या? जा! जा। अब देर न कर।"

उस दूसरी स्त्रीने फिर कुछ नहीं कहा। तुरन्त ही चली गई। इधर इस स्त्रीकी दशा बिलकुल पागलकीसी होगई—उसे सूझ ही न पड़ने लगा कि, क्या करे और क्या न करे। इतनेमें उसे याद आया कि, वह जहांपर बैठी है, उससे कुछ ही दूरपर पानीके एक सोतेका कुण्ड है। उस कुण्डके ध्यानमें आते ही वह एकदम उठी; और दौड़ती हुई उस कुण्डकी ओर गई। क़िलेकी जानकारी उसे पूरी पूरी थी, अतएव वह अचूक रीतिसे उस सोतेके ही पास जापहुंची। सोतेका वह कुण्ड कुछ गहरा था; किन्तु इसकी उसे कुछ भी कठिनाई मालूम नहीं हुई। उसने बहुत जल्द कुण्डमें झुककर अपना अंचल भिँगोया; और फिर उसी प्रकार ख़ूब प्रयासपूर्वक झुककर एक अँजुली पानी

भी भर लिया; और ऐसी युक्तिके साथ अँजुलीको ऊपर निकाला कि, जिससे एक बूंद पानी भी नीचे गिरने नहीं पाया। इसके बाद वह ऐसे धीरे धीरे पैर रखती हुई चली, जैसे कांचकी फर्शपर चल रही हो। उसका सारा चित्त उस वीर पुरुषकी ओर लगा हुआ था; और यह सोच रही थी कि, यह अँजुलीका पानी कब जाकर मैं उनके मुखमें डालूं; और इस भींगे हुए अंचलसे कब उनके नेत्रोंमें पानी लगाऊं; और उनको होशमें लाऊं। प्रत्येक क्षण उसे युग युगकी भांति बीत रहा था। एक क़दम रखकर वह दूसरा क़दम इस उत्साहसे रखती कि, अब जल्द ही मैं उनके पास पहुंचती हूं। इस प्रकार चलते चलते वह उसी वीर पुरुषके पास आई। इसके बाद उसने अपनी अँजुलीका पानी ज्यों ही उनके मुखमें डालनेके लिए अँजुली बढ़ाई; त्यों ही अत्यन्त क्षीण आवाज़से ये शब्द उसके कानोंमें आये—"पानी! पानी! कोई पानी दो!" यह सुनते ही उसे अत्यन्त हर्ष हुआ। तुरन्त ही उसने उनके मुखमें पानी डाला इसके बाद वह भींगा हुआ अंचल उसने उनकी आंखोंमें लगाया; और मस्तकपर रखा। ठंढक पहुंचते ही "अहा हा!" यह शब्द उनके मुखसे निकला, जिसे सुनते ही उस स्त्रीको अत्यन्त सन्तोष हुआ। इसके बाद वह यह सोचने लगी कि, अब और क्या करूं कि, जिससे इनके मनको आराम मालूम हो; फिर उसने सोचा कि, देखो, हमने दासीको भेजा; और उस पुरुषको गये तो बड़ी देर होगई, पर अभी दोमेंसे कोई भी नहीं लौटा। यह वह सोच ही रही थी

कि, इतनेमें दो-तीन मशालें और चार-पांच आदमी आते हुए उसे दिखाई दिये। इससे स्वाभाविक ही उसके मनमें आया कि, हों न हों, ये वही मनुष्य हैं, जो हमारे पास आ रहे हैं, और वह अपना अंचल बार बार उस पुरुषकी आंखोंपर रखती और उठाती हुई उस ओरको देखने लगी। इतनेमें उसे क्या भास हुआ कि, जैसे मृत्यु-कालके समान किसीको हुचकी आ रही है; और वहीं थोड़े अन्तरपर कोई अन्तिम खुर्राटे भर रहा है। इसके बाद वह यह सोचती हुई कि, देखो, अब सब मालूम हो-जायगा, उन मशालें लानेवाले लोगोंकी प्रतीक्षा करने लगी। इतनेमें वे सब लोग आगये, जिनमें उसकी दासी थी; और वह पुरुष भी था कि, जो उन दोनोंको पहले उस वीर पुरुषके निकट बैठाल गया था। उन लोगोंके आते ही और मशालका उजेला पड़ते ही उस लेटे हुए पुरुषकी सूरत उन स्त्रियोंकी नज़रमें पड़ी। उसको देखते ही एक स्त्री उनमेंसे एकदम रोने लगी; पर दूसरीने उसका समाधान किया। इसके बाद उस साथवाले पुरुषने, जो उन स्त्रियोंको बैठाल गया था, उनसे प्रार्थना की कि, "अब इनको महलके अन्दर कहीं न कहीं लेचलना चाहिए। मैं इनको लेचलकर वहां पड़ा दूंगा; और तुम इनकी सेवा करो।" वे स्त्रियां भी—वे स्त्रियां कौन थीं, सो अब पाठकोंको बतलानेकी आवश्यकता नहीं जान पड़ती—यही चाहती थीं। उस पुरुषका—यह पुरुष कौन, सो भी पाठकोंको मालूम हो-गया होगा—यह हुक्म होते ही दो आदमी आगे आये; और

नानासाहबको उठाकर महलकी ओर लेचले। मशालवाले आगे चल रहे थे। उनके पीछे वे स्त्रियां, फिर दूसरे दो आदमी और सबके पीछे कमली लपेटे हुए शिवबा चल रहा था! इतनेमें उन पीछेवाले दो आदमियोंका ध्यान मरणापन्न अहमदकी ओर गया; और तुरन्त ही उनके मनमें आया कि, इसी हरामजादेने नानासाहबकी ऐसी दशा की—फिर क्या कहना है? तुरन्त ही उनमेंसे एक आगे बढ़ा और बोला, "ऐ सुअर, जा। अब एकबार अपने ख़ुदाके पास जा। तू यदि शीघ्र नहीं जासकता, तो मैं तुरन्त ही तुझे भेज दूं!" यह कहकर उसने उस मृतवत् पड़े हुए अहमदके शरीरमें एक लात मारी। यह देखते ही शिवबा तुरन्त उसको मना करते हुए कहता है—"जीवा, देख—ऐसी बात मैं कभी, कभी भी—पसन्द नहीं करूंगा। तूने यह काम बड़ा बेजा किया। चाहे मुसलमान हो, चाहे हिन्दू—मरणावस्थामें सब बराबर ही है। सभीको उस समय शान्ति और पवित्रताकी आवश्यकता होती है। मान ले कि, तू ही कभी मरनेपर आजाय; और उस समय कोई मुसलमान आकर तेरे एक लात जमा दे, तो तुझको कितना बुरा मालूम होगा? बस, ऐसी ही इसकी दशा समझ। अब जा। उसके पास बैठ। और मैं भी बैठता हूं। चल, इस मरणावस्थामें जो कुछ सुख उसे मिलजाय, वह हम लोग उसे देवें!"

यह सुनकर जीवाको बहुत ही आश्चर्य हुआ। ऐसे हराम-

जादेके पास जाकर हम बैठें! लेकिन देखते हैं, तो शिवबा सचमुच ही उसके पास जाकर बैठ जाता है; और जीवाको दूसरी ओर बैठनेको कहता है। इसके बाद, एक और आदमी, जो उसके साथ था, उसको पानी लानेका हुक्म देता है। अहमदका अन्त बिलकुल निकट आगया; और वह और भी अधिक ज़ोर ज़ोरसे खुर्राटे भरने लगा। इतनेमें वह तीसरा आदमी पानी लेकर आता है; और शिवबा अपने हाथसे अहमदके मुखमें पानी डालता है। इसके बाद, इस विचारसे कि अहमदकी आंखें खुली न रहें, वह उसकी आंखोंपर हाथ रखे हुए जीवासे कहता है, "देख जीवा, जबतक आमने-सामने आदमी युद्धमें खड़ा होकर लड़ाई करे, तभीतक तो उससे द्वेष और शत्रुता है। परन्तु मृत्युके समय सभीकी एक गति है। हम सब समान ही हैं। यहां भिन्न-भाव नहीं।"

यह सुनकर जीवाके मनमें जो कुछ भी आया हो; पर वह कुछ बोला नहीं—सिर्फ़ चमत्कृत चेष्टासे बैठा रहा। इतनेमें कुछ आदमी दौड़ते हुए आये; और क़िलेके पूर्णतया हस्तगत हो-जानेका समाचार सुनाया। साथ ही यह भी कहा कि,—हां, अप्पासाहबको पकड़ रखा है, उसका अब क्या किया जाय, आज्ञा हो! इसके सिवाय बेग़मके आदमियोंने भी शस्त्र रखकर आत्मसमर्पण कर दिया। आगे क्या किया जाय, सो आज्ञा मिले। शिवबाने उत्तर दिया, कि अच्छा, उनको ऐसा ही रहने दो, फिर देखा जायगा। अभी उन आदमियोंमेंसे दो-चारको

लेआओ, जो आकर इसका अन्तिम संस्कार करें। यह हुक्म पाते ही आदमी दौड़े; और रणदुल्लाख़ांके आदमियोंमेंसे चार मुसलमानोंको लेआये। उनके आनेपर शिवबा स्वयं उनके द्वारा अहमद्के शवको नीचे बस्तीमें लेगया; और मुसल्मान-धर्मानुसार उसकी अन्त्येष्टि क्रिया करवाई!

अस्तु। अब हमारे पाठक यह जाननेकेलिए उत्सुक होंगे कि, सैयदुल्लाख़ांका क्या हुआ—वह क़िलेके नीचे जाकर कुशलपूर्वक अपने आदमियोंमें मिला, अथवा उसकी और कोई गति हुई। इस प्रकारकी जिज्ञासा होना स्वाभाविकही है। इसलिए अब अगले परिच्छेदमें हम यही बतलाएंगे।

——

छिहत्तरवां परिच्छेद।
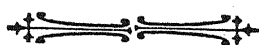
प्रतिज्ञाकी पूर्ति।

अबतक उस काले-कलूटे महाशयने जैसा कुछ कहा था; और जैसी उसकी इच्छा थी, उसी प्रकार सब बातें हुईं। पर अब यह देखना चाहिए कि, आगे जिस प्रकारसे वह अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण करना चाहता था, उसी प्रकारसे उसकी प्रतिज्ञाकी पूर्ति हुई, अथवा उसमें किसी प्रकारका विघात हुआ।

सैयदुल्लाख़ांको जब शैतानके भयने बड़ी बुरी तरहसे सताया, तब उसने अप्पासाहबके पैर पकड़कर यह प्रार्थना की

कि, "जिस तरहसे होसके, मुझे अपने लोगोंसे मिला दो—एक बार मैं उनमें जाकर मिल जाऊं, फिर मैं अपना सारा प्रबन्ध ख़ुद ही कर लूंगा।" अप्पासाहबने उसकी यह प्रार्थना स्वीकार की; और उसको क़िलेके मैदानतक पहुँचा देनेका दायित्व लिया; और तदनुसार उन्होंने उसे पहुंचा दिया। इसके बाद फिर उन्होंने सोचा कि, हमारा बहुत देरतक नीचे रहना उपयोगी न होगा; क्योंकि क़िलेकी भी तो ख़बर लेनी चाहिए। अपना यह विचार उन्होंने सैयदुल्लाख़ांसे भी प्रकट किया; और ऊपर चले आये। सैयदुल्लाख़ांने भी और कुछ नहीं सोचा; क्योंकि उसको तो किसी प्रकार अपना प्राण बचाकर क़िलेसे दूर निकल जाना था। अतएव उसके मनमें अब सिर्फ एक ही बात आरही थी; और वह यह कि मैं अब किस प्रकार अपने दलमें जामिलूं; और वहांसे एकदम बीजापुर भाग जाऊँ। इसके अतिरिक्त, मुमकिन है, और भी कोई बात उसके मनमें आई हो; पर वह बख़ूबी जानता था कि, यह मौक़ा और कुछ कहने सुननेका नहीं है! और जो कोई बात उसके मनमें आरही थी; और जिसे कि, वह प्रकट नहीं कर रहा था, वह अवश्य ही अप्पासाहबके प्रतिकूल थी। परन्तु इस समय उसके लिए तेजी दिखलानेका मौक़ा ही न था—यह मौका तो उसके लिए झुकनेका ही था। अप्पासाहब चाहे जितनी सचाईके साथ उसके साथ व्यवहार किया हो, फिर भी वह ऐसा मनुष्य नहीं था कि, जो उनकी प्रभु-भक्तिपर पूरा पूरा विश्वास करता।

पर इस समय अप्पासाहबके सामने वह यह थोड़े ही कह सकता था कि, मैं तुमको पक्का धूर्त समझता हूं! अतएव उसने सोचा कि, अब जो कुछ होगा, सो देखा जायगा, बीजापुर पहुँचनेपर सब समझ लिया जायगा, इस समय तो हां-जी हां-जी, करके ही अपना काम निकालना चाहिए। बस, यही सोचते हुए सरदार सैयदुल्लाखां बहुत जल्द क़िलेका वह मैदान छोड़कर, अपने लोगोंको जहां रखा था, उधरकी ओर गया।

"समय तो होता आया; और अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार कार्य होनेके कोई लक्षण अभीतक दिखाई नहीं देते—यह है क्या? यदि अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार हम कार्य नहीं कर सके, तो अवश्य ही हमको अपने हाथसे चिता लगाकर उसीको अपनी देह समर्पित करना होगा। और ऐसा करनेमें भी हम संकोच नहीं करेंगे; पर इसके प्राण तो अवश्य हमारे हाथसे जाने चाहिएं। उसीके रक्तसे हमारे हाथ रंजित होने चाहिएं। ऐसा किये बिना प्रतिज्ञा पूर्ण नहीं होगी; और न हमारे जीकी जलन जायगी। इस जलनके जानेका एक ही उपाय है—और वह उपाय है इस मनुष्यका रक्तपात! बस रक्तपात ही! इसका ख़ून! आज इतने दिनसे मैं ऐसा ही मौक़ा प्राप्त करनेके प्रयत्नमें हूं कि, किसी प्रकार यह हमारा मुक़ाबला करनेको हमारे सामने आवे; और फिर मैं इसको डंकेकी चोट यह चितावनी दूं कि, अब तू याद कर ले अपने खुदा को; और मैं तुझे शैतानके घर भेजूं! और सच तो यह है कि, यदि ख़ाली इसका मुझे

ख़ून ही करना होता, तो अबतक कभीका कर डाला होता। परन्तु अपने कुल-शीलको स्मरण करके मैंने यही निश्चय किया है कि, कपटसे इसका वध न करूं—किन्तु समरमें इसका सामना करके तब इसके प्राण लूं; कमसे कम ऐसी जगह कहीं इसका मुक़ाबला करनेको मिले, कि जहां फिर इसको यह कहनेका मौक़ा न मिले कि, विश्वासघातसे मेरा ख़ून किया। परन्तु यदि आजका यह अवसर निकल गया, तो फिर मानों सब गया। फिर मेरी प्रतिज्ञा पूर्ण नहीं होसकती; और मुझे अपने ही हाथसे चिता रचकर अग्निप्रवेश करना होगा। मेरे और मेरी बहनके घरपर जिसने ऐसा भयंकर संकट डाला उसी नीच...” आगे मानो वह कुछ सोच ही न सका। सैयदुल्लाख़ांके इस कट्टर दुश्मनने वास्तवमें यह विचार कररखा था कि, सैयदुल्लाख़ां ज्यों ही नीचे आवे, त्यों ही उसके सिपाहियोंपर सूर्याजीके सिपाहियोंकी ओरसे धावा करा दिया जाय; और फिर उसी युद्धमें मैं सैयदुल्लाख़ांका सामना करूं। आपने इसी विचारके अनुसार सब तैयारी करके यह ख़ांसाहबका विकट शत्रु, उसके मार्गपर बैठा हुआ, उसकी प्रतीक्षा कर रहा था; और जैसा कि, हमने अभी ऊपर बतलाया, उसी प्रकारके विचार बार बार उसके मनमें आरहे थे, तथा क्षण क्षणपर कान लगाकर वह सैयदुल्लाख़ांके आनेकी आहट लेरहा था। बहुत देरतक उसका मन उपर्युक्त रीतिसे अस्वस्थ दशामें रहा; पर अन्तमें एकाएक उसको कुछ आशा उत्पन्न हुई। अर्थात् उसकी प्रतीक्षाके

अनुसार सचमुच ही ऊपरसे सैयदुल्लाख़ां उसे आता हुआ दिखाई दिया। वास्तवमें सैयदुल्लाख़ांने जिस जगह अपने सिपाही रखे थे, उधरकी ओरसे कुछ गोलमालकी आवाज़ सैयदुल्लाख़ांके कानोंमें आई। पर वह सोच नहीं सका कि यह क्या मामला है। और तुरन्त ही अप्पासाहबके दिये हुए आदमियोंके साथ वह अपने सिपाहियोंकी ओर आगे चला। उसका कट्टर दुश्मन भी उसके पीछे पीछे छायाकी भांति चलने लगा। वह मन ही मन सोचता जाता था कि, अब चाहे प्रत्यक्ष यमराज ही क्यों न आजायँ, इसको मेरे हाथसे छुड़ा नहीं सकता—अब यह मेरे हाथसे मरा! इधर सैयदुल्लाख़ां अपने आदमियोंमें जामिलनेकी आकांक्षासे अत्यन्त उत्कंठाके साथ चला जारहा था। साथ ही साथ वह यह भी सोचता जाता था कि, देखो, हमारी आज्ञाके अनुसार हमारे आदमी क़िलेपर नहीं आये, उनकी जगह दूसरे ही आदमी आगये। ऐसी दशामें निश्चित है कि, कोई न कोई अपघात अथवा विश्वास-घात अवश्य ही हुआ! पर क्या करता, अब उसके हाथमें कोई उपाय नहीं था, अतएव वह चुपके चला जारहा था। इतनेमें उसे क्या मालूम हुआ कि, जहां उसने अपने सिपाही रखे थे, उस ओर कोई भयंकर मारकाट मची हुई है। अतएव उसने अपने साथके एक आदमीको आगे रवाना किया। उसके पीछे एक दूसरा आदमी भी भेजा। वे दौड़ते हुए गये; और जाकर क्या देखते हैं कि, ख़ूब भयंकर लड़ाई हो रही है; और एक ओरसे

"दीन दीन !" तथा दूसरी ओरसे "हर हर महादेव !" के गम्भीर शब्दोंसे आकाश कम्पायमान होरहा है ! सैयदुल्लाख़ां भी अब पास ही आरहा था, अतएव उसने भी उस कोलाहलको स्पष्ट-रूपसे सुना। अब उसको पूरा पूरा मालूम होगया कि, हमारे लिए किसी तरफ़को भी मार्ग नहीं है—सब ओरसे हम घेर लिये गये हैं। उसको अब विचार करनेके लिए भी अवकाश नहीं रह गया। इतनेमें उसका वह कट्टर शत्रु उसके पास ही आकर बोला, "अरे दुष्ट, अब तू भग नहीं सकता; और न ऐसा करनेसे तुझे कोई लाभ होगा—कपटसे यदि मैं तेरा ख़ून करना चाहता, तो आज इतने वर्षोंमें चाहे कब कर डाला होता। कई बार तुझे मैंने अपने पंजेमें पकड़कर भी छोड़ दिया है। सो तू अच्छी तरह याद करले। यद्यपि तूने बड़े बड़े भारी नीच कर्म किये हैं;पर फिर भी मैं धर्मयुद्ध करके ही तुझसे बदला लूंगा। इस बातका तू पूरा पूरा विश्वास रख। आज अब तू छूटकर जा नहीं सकता। मराठोंके साथ तेरे सिपाहियोंकी लड़ाई होरही है, उसीमें अब तू भी प्रवेश कर। मराठोंकी ओरसे मैं प्रवेश करता हूं। आजा—मेरा तेरा सामना होने दे--या तो तू ही मुझे मार डाल; और नहीं तो मैं तो तुझे मारूंगा ही। वास्तवमें ऐसा गौरव तो तुझे नहीं मिलना चाहिए; क्योंकि जो कर्म तूने किया है; और जिसके कारण कि मैं तुझसे बदला लेनेको उद्यत हुआ हूं, वह इतना निन्दनीय है कि, आधीरातके बीचमें, अचानक आकर, तेरी प्रगाढ़ निद्रामें भी, यदि मैंने तेरा

ख़ून किया होता, तो भी अधर्माचरण करनेका पाप मुझे नहीं लग सकता था। तू जातिका योद्धा नहीं है, कुलीन भी नहीं है, ऐसी दशामें तेरे साथ धर्मका व्यवहार करना भी अनुचित ही है। पर मैं जातिका सच्चा मराठा हूं, अतएव मेरे हाथसे ऐसा कभी नहीं हो सकता। बस, इसीकारण मैं इतने दिन रास्ता देखता रहा। अब आज मौक़ा आगया है। मैं तुझको पहले हीसे सचेत कर रहा हूं। अचानक आकर तुझपर छापा नहीं मारता। जा अपने दलमें शामिल हो। शूर-वीरकी तरह अपने दलको सम्हाल। मैं मराठोंकी ओरसे आता हूं; और फिर देखता हूं तेरा कर्त्तव्य!"

जिस समय वह महाशय यह भाषण दे रहा था। सैयदुल्लाख़ांका सारा शरीर थर थर कांप रहा था। वह पसीनेसे बिलकुल लतफद होगया; और कँपते कँपते ही बोलनेका यत्न करने लगा। किन्तु शब्द ही जीभसे न निकला। उसकी यह दशा देखकर उसका दुश्मन फिर उससे कहता है, "याद रख, तू कहेगा कि, मैं भग जाऊँगा। पर नहीं, कदापि नहीं—तुझसे ऐसा कभी नहीं हो सकता। मराठोंने इस सारे जंगलको घेर रखा है। बातकी बातमें पकड़ा जायगा। और फिर मैं तो तुझको भगोड़ा समझकर तेरा स्पर्श नहीं करूंगा—हां, पन्द्रह दिनतक भूखे रखे गये भेड़ियोंसे तुझे नुचवा नुचवाकर मरवा डालूंगा।" इतना कहकर वह वहांसे चलता हुआ! और सैयदुल्लाख़ां भी उसके भयसे जरा छूटकर भाग जानेके विचारमें

था—इतनेमें सामने हीसे भारी कोलाहल मचाते हुए कुछ सिपाहियोंका एक दल आपहुँचा। यह दल मराठोंका ही था। उस दलको देखते ही सैयदुल्लाखां और भी अधिक घबड़ाया; और इस विचारमें लगा कि, अब भग जावें या किसीसे उधार लेकर धैर्य धारण करें। इतनेमें एक आदमी यह चिल्लाता हुआ उसकी ओर दौड़ा कि, "अरे यह वही है, कि जिसको सूर्याजीने जीवित पकड़ लानेके लिए हम लोगोंको आज्ञा दी है। चलो पकड़ो इसको; और लेचलो उनके पास!" सैयदुल्लाखांने ये शब्द सुने; पर वह पहलेका एक अर्दलीमात्र था, लड़ाई वगैरह करना उसको क्या मालूम? उसकी लड़ाई तो यही थी कि, दीनहीन गरीबों और किसानोंको तंग करो, उनको लूटो-खसूटो; जिस तरह बने, द्रव्य वसूल करो, उनकी सुन्दर सुन्दर लड़कियां अथवा स्त्रियां ज़बरदस्ती भगा लाओ; और बादशाहके जनानख़ानेमें डाल दो। जिस किसी बड़े सरदारके पास विपुल सम्पत्ति सुनाई दे, अथवा जिस किसीकी बहू-बेटी सुन्दरी रूपवती सुनाई दे, उस सरदारपर एकदम धावा बुलवा दो, उसके घरके पुरुषोंको क़ैदखानेमें डलवा दो, जो कुछ धन-दौलत हो, लूटकर थोड़ी तो बादशाही खजाने; और बाकी अपने घरमें पहुँचा दो; और जो स्त्रियां हों, उनको अपने अथवा बादशाहके अन्तःपुरमें लेजाकर रखो। बस, यही उसका युद्ध-कौशल और यही उसका सारा कर्त्तव्य! यह काम वह अकेला ही नहीं करता था। उसके कई आबुर्दे भी थे। पाठकोंको याद होगा कि,

सूर्याजीके घरपर जब धावा बोला गया, तब एक सरदार साहब, बड़ी बुरी तरहसे वहां मारे गये थे। वे भी सैयदुल्लाख़ांके ही आवुर्द थे। इन सब बातोंपर ध्यान देनेसे पाठकोंको मालूम होजायगा कि, सैयदुल्लाख़ां किस कैंडेका आदमी था। अतएव ऐसे मनुष्यके लिए धर्म-भाव और सत्यमार्गकी बात क्या कहना! उसको तो इस समय यही सूझ रहा था कि, किसी न किसी तरह मेरी जान बचे—मैंने भर पाया! अस्तु। उन मराठोंने उसपर धावा किया, उस समय पहले-पहल तो उसने तेज़ी दिखलाई; पर जब उन्होंने उसे धर घसीटा, तब वह तेज़ी न जाने कहां चली गई; और उसकी जगह तुरन्त ही लाचारी प्रकट करने लगा। किन्तु वहां किसीने न उसकी लाचारी देखी; और न तेज़ी—अब बेचारा क्या करे? मराठे लोग धक्के देते हुए उसे सूर्याजीके पास लेचले। अब उसको पूरे तौरपर मालूम होगया कि, मेरा ख़ातमा हुआ; पर फिर भी, जैसे कोई कुत्ता बिलकुल अस्थिपंजरावशेष होजावे; और मरनेपर आरहे, तथापि यदि कोई उसके लात मार देवे, तो वह डरते डरते भी गुर्रावे; और दांत दिखाते हुए भगे, तथा भोंकता भी जावे—बस, ऐसा ही सैयदुल्लाख़ां भी करता जारहा था। भाग जाना तो अब उसके लिए सम्भव नहीं था। परन्तु हां, बीच बीचमें वह कभी कुछ दीनता दरसाता; कभी कुछ गुरगुराने लगता। बस, इसी प्रकार करते हुए वह उनके साथ चला जारहा था। अन्तमें उन लोगोंने सैयदुल्लाख़ांको वैसा ही

लेजाकर सूर्याजीके सामने पेश कर दिया। सूर्याजीने अभी हालहीमें उसके सिपाहियोंको पूर्ण पराजित करके उनको जंगलमें इधर उधर भाग जानेको लाचार किया था। इसके बाद अब वे कुछ विश्राम लेनेके विचारमें थे। इतनेमें ज्यों ही उनको ख़बर मिली कि, सैयदुल्लाख़ां गिरफ़्तार करके लाया गया है, त्यों ही वे किसी क्रोधित किये हुए व्याघ्रकी तरह उठे; और यह कहते हुए कि, "कहां है वह दुश्मन ?" वे बाहर निकल आये। सैयदुल्लाख़ां उनके सामने लाया गया। उसको देखते ही उनका सारा शरीर जल उठा; और वे एकदम उससे बोले, "ऐ दुश्मन्, अब तू हमारे हाथसे छूट नहीं सकता। मेरे श्वसुर, मित्र और स्वयं मेरे कुटुम्बके सत्यानाशका मूल कारण तू ही है। तेरे राई राईके समान टुकड़े कर डालने चाहिएं। परन्तु तेरे शरीरके राई राईके समान कण भी गिरकर पृथ्वीको अपवित्र करेंगे, इसलिए तुझको ऐसा ही खड़ा जला देना चाहिए। हम मराठोंकी स्त्रियोंकी बेइज़्ज़ती करना कोई छोटा-मोटा पाप नहीं। उस पापका क्षालन करनेके लिए तुम अधमोंका रक्तपात ही करना चाहिए। अरे तू ही देख—हमारे तीन घरानोंकी तुम अधमोंने क्या दशा कर दी! हमारे समान राजभक्त और ख़ान्दान ढूँढ़नेपर भी न मिलेंगे। किन्तु तुम पापियोंको उस राजभक्ति अथवा स्वामिभक्तिकी क्या क़द्र? तुम तो ऐसे लोग हो, जो व्यसनी बादशाहको और भी अधिक व्यसनोंमें फँसाकर, उसीके बलपर, अत्याचार करते हुए अपना पेट पालते हैं!

तुम राजभक्ति और उसके भक्तोंकी क़द्र क्या जानो! उसकी कल्पना ही तुमको क्या होगी? चल। आज तेरे दिन पूरे हुए। अब तू मरनेके लिए तैयार हो! अपने मित्र, अपने श्वसुर, अपने साले और मैं स्वयं अपना, बदला लेनेके लिए भी तुझको एक ही आघातसे ख़तम करता हूं। इससे सबको सन्तोष होगा।" यह कहकर उन्होंने अपनी तलवार निकाली। इतनेमें पीछेसे आकर किसी व्यक्तिने उनसे कहा, "नहीं, नहीं—भैया, यह अधिकार तुमको नहीं। मुझको है। अन्ततक मैं समझता था कि, समरमें इसका सामना करके वैर-परिशोध करूंगा। पर नहीं। इतना पुण्य भी इसके भाग्यमें नहीं। अब एक तलवार इसको दो; और मेरी तलवार मेरे पास मौजूद ही है। दोनोंका सामना होने दो। तुम बीचमें मत पड़ो। अपनी प्रतिज्ञा मुझे पूर्ण करने दो। इतने वर्षोंकी उम्मेद पूरी होने दो। इस आशाके सफल होजानेपर एक और काम मुझे करना है, उसको करूंगा। आज यह मेरी प्रतिज्ञाका अन्तिम दिन है। आज यदि मैं अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण नहीं कर सका, तो मुझे आत्म-हत्या करके प्राणत्याग करनेके अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं है। इसको तुम अच्छी तरह समझ लो।" उस व्यक्तिको देख-कर और उसका यह भाषण सुनकर सूर्याजीको बहुत ही आश्चर्य हुआ। उन्होंने ज्यों ही उस पुरुषको देखा; और उसका उपर्युक्त कथन सुना, त्यों ही उनको उस झोपड़ीवाले बुड्ढेकी कही हुई कुछ बातोंका स्मरण आया। मन ही मन उन्होंने दिन

गिनकर हिसाब लगाया, तो हिसाब बिलकुल बराबर बैठा; और सचमुच ही आज उसकी प्रतिज्ञाका अन्तिम दिन था। अतएव सूर्याजी बहुत ही चमत्कृत दृष्टिसे उसकी ओर देखकर आश्चर्य-चकित होगये। इसके बाद उन्होंने धीरेसे ही कहा, "हां, हां ठीक है। इससे बदला लेनेका अधिकार तुम्हींको है। और तुम्हीं इसको पूर्ण करो। मैं अपनी तलवार उसको देता हूं— सो वह लेवे और खुशीसे तुम्हारे साथ लड़े।"

परन्तु सूर्याजीके इस कथनसे लाभ ही क्या था? क्योंकि सैयदुल्लाख़ां बिलकुल ही घबड़ा रहा था। परन्तु हां, इतनेमें उसको कोई बात सूझी; और वह कुछ धीरज धरकर उनसे बोला, "मैं यहां अकेले पड़ गया हूं, तुम चाहे जिस तरह मेरा बध कर सकते हो, इसमें कुछ असम्भव नहीं; और न कोई आश्चर्य। लेकिन, अगर मैं मर जाऊंगा, तो जानते हो, तुम लोगोंकी क्या दशा होगी? बादशाह मुझपर बहुत प्रेम करता है। जब उसको यह बात मालूम होगी, तब वह 'मराठा' ओषधिके लिए भी नहीं रखेगा, फिर क्या हाल होगा, उसको ज़रा सोचो। इसके बाद मुझे ख़ुशीसे मारो। लेकिन अगर छोड़ दोगे, तो मैं तुम्हारा कल्याण करूंगा। अबतक तुमने हमारा जितना कुछ अपमान किया है, सब मैं भूल जाऊंगा; और बादशाहसे तुम्हारी शिफ़ारिश करूंगा। तुम्हारे सब लोग, जो क़ैद किये गये थे, उनको छोड़ दूंगा। मुझको भर छोड़ दो। मेरे बालको भी धक्का न लगाओ। अन्यथा "मराठा" नाममात्रके लिए भी

संसारमें न रहेगा। इस बातको तुम अच्छी तरह समझ लो। सोचो इस बातको; ख़ूब सोचो। और मुझको छोड़ दो। इसीमें तुम सबोंका कल्याण है। जो बातें होगईं, सो होगईं! उनके विषयमें विचार करनेकी आवश्यकता नहीं।"

उसका यह कथन सुनकर सूर्याजी और उसका वह साला (पाठक समझ ही गये होंगे) दोनों हँसे; और उससे बोले "सैय-दुल्लाख़ां अब ऐसी बातोंमें व्यर्थ समय मत गवां। अब तू अपने ख़ुदाको याद कर, और वीरोंकी तरह मैदानमें आकर लड़नेको तैयार हो। तेरे कुकर्मोंका तो बदला हम तुझे दे दें; और फिर जो कुछ मराठोंका होनेवाला होगा, सो पीछेसे होता रहेगा। उसकी चिन्ता तू मत कर। हम तुझको अब छोड़ नहीं सकते। तू ही सोच देख, मान ले कि तू ही हमारी दशामें होता, तेरी ही तरह हमने भी तेरे घर-द्वार और इज़्ज़त-आबरूका सत्यानाश किया होता, तो तू हमारे साथ क्या बर्ताव करता--हमसे बदला लेनेके लिए तू ने क्या क्या प्रयत्न किये होते? किन्तु तू तो एक ऐसा मनुष्य है कि,जिसको कुल-शील कुछ है ही नहीं,तेरे सामने ऐसी उदारताकी बातें करनेसे क्या लाभ? सो कुछ नहीं हो सकता! अब तुझे मरना ही पड़ेगा। और कोई बात नहीं। मराठोंके सारे ख़ान्दान तेरे मरनेके बाद चाहे बादशाह नष्ट कर डालें; उनके घर द्वारपर चाहे हल चलवा दे, फिर भी कोई परवा नहीं। आजकल जैसी दशामें वे जीवन रख रहे हैं, उस दशामें जीवन रखनेकी अपेक्षा उनका मरना कोई बुरा न होगा। चल,

चल। अब दूसरी कोई बात मत निकाल। जहां तू बैठा है, वहीं हम तुझको नहीं मार रहे हैं, यह देख तेरे ऊपर कितना उपकार है। तुझको वीरोंकी तरह मरनेका मौक़ा देरहे हैं; और फिर भी तू तैयार न हो, तो इसके लिए हम क्या करें? अब मुझे यही करना पड़ेगा कि;अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करनेके लिये मैं तुझपर एक छोटासा वार तो जरूर करूंगा; और तेरे शरीरका रक्त निकालूंगा—फिर उसमें एक उँगली डुबोकर, सबके सामने वृक्षमें बांधकर तुझको फांसी दूंगा। बस, यही दण्ड तेरे लिए उचित भी है। किन्तु फिर भी हम तुझे बड़प्पन देते हैं। वीरोंकी तरह मरनेको तुझसे कहते हैं। अब आगे तेरी इच्छा! तू यदि कोई मामूली आदमी होता, तो तुझको थोड़ासा दण्ड देकर, तेरी नाक कान काटकर तुझे छोड़ दिया होता। लेकिन तू इतना नीच और अधमाधम प्राणी है, कि तुझको यदि जीवदान दिया जायगा, तो तू इस उपकारको भी कभी नहीं मानेगा, तुरन्त ही भूल जायगा; और यहांसे जाते ही हमारे समान पुराने पुराने सभी खान्दानोंको जड़ मूलसे मटियामेट करानेका बादशाहसे प्रयत्न करावेगा। ऐसा तू अधम है, तू काला सांप है,जो उपकार करनेपर भी दंश करना नहीं छोड़ सकता। किन्तु अब इन व्यर्थ बातोंसे क्या फायदा। हम तुझको जीता छोड़कर अनेक पतिव्रताओंपर अत्याचार करानेका पातक अपने सिर थोड़े ही लेंगे? अब तो तुझे यमराजके घर जाना ही होगा; और तभी बादशाह भी कुछ अच्छी दशापर आवेगा। तू कहता है कि,तुझपर उसका

प्रेम है, तेरी मृत्युका समाचार सुनते ही वह बदला लेनेको तैयार होगा; किन्तु—बाबा! तू भूल रहा है। तेरे मरनेपर स्वप्नमें भी बादशाहको तेरी याद नहीं रहेगी—बाबा! तेरी जगह लेनेको कितने ही लोग वहां काफी प्रयत्न कर रहे हैं! तेरे जाते ही वे आगे बढ़ेंगे। जैसे पानीपर लकीर खींचनेसे वह कभी टिक नहीं सकती, वैसे ही—राजा हुए, बादशाह हुए—इनके मनपर कभी भी किसीके उपकारों, अथवा सेवाओंका प्रभाव नहीं टिकता। इस बातको अच्छी तरह समझ ले। तथापि, यदि तुझे इसी बातसे सन्तोष होता हो, कि, बादशाह तेरे मरनेके बाद तेरा बदला लेगा, तो अच्छी बात है—तू इसीसे सन्तोष होने दे। हमको उसका डर मत दिखला। और हम उससे डरेंगे नहीं, सो ध्यानमें रख।"

इतना कहकर वह काला महाशय क्षणमात्रके लिए खिन्न होगया। ऐसा जान पड़ा कि, किसी बातपर वह कुछ निराशसा होरहा है। उसने एक लम्बी सांस ली; और सैयदुल्लाख़ांसे फिर बोला, "सैयदुल्लाख़ां, मुझको बड़ी आशा थी कि, मैं वीरोंकी तरह तुझसे वैर-परिशोध करूंगा; पर देख, तूने मुझे बहुत ही निराश किया! संग्राममें नहीं खड़ा हुआ; फिर मैंने सोचा—न सही संग्राममें, तुझे अकेले ही सामने बुलाकर तेरे हाथमें तलवार दूं; और वीरोंकी तरह हम दोनों लड़कर, अन्तमें तुझसे बदला लूं। सो तू ऐसा करनेपर भी तैयार नहीं हुआ। इस तरहसे भी तूने मुझे निराश किया। देख, अब भी मौक़ा है।

इस मौक़ेको हाथसे मत जाने दे। ले यह तलवार ले; और युद्धके लिये खड़ा हो। क्या ठीक है—शायद तू ही मुझे मार ले—मुमकिन है। मैंने तो समझा था कि, तू यह कहकर कि, 'तू मेरे साथ लड़नेकी योग्यता नहीं रखता' लड़नेसे इन्कार करेगा; पर यहां कुछ दूसरा ही मामला निकला!"

परन्तु सैयदुल्लाख़ांने एक अक्षर भी मुखसे नहीं निकाला; और न तलवार ही हाथमें ली। उसको वीर-मृत्यु काहेको पसन्द आती है? वृक्षकी डाली और डोरी ही उसके लिये विधनाने सिरजी थी!

सतहत्तरवां परिच्छेद।

कुछ पूर्व वृत्तान्त।

अन्तमें उस महाशयको अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार अपने शत्रुसे लड़कर उसका रक्तपात करनेको नहीं मिला। अपना कट्टर दुश्मन समझकर इतने दिन जिस व्यक्तिका वह पीछा करता रहा, वह अन्तमें बिलकुल हिजड़ा ही निकल गया; और उस काले-कलूटे महाशयको अपनी भुजाओंकी खुजली मिटानेका भी अवसर नहीं मिला। इस बातपर उसे कितना ख़ेद हुआ होगा, इसकी पाठकगण ही कल्पना करें। रामदेवराव (वही काले-कलूटे महाशय) कोई साधारण व्यक्ति नहीं थे। बल्कि

दौलताबाद अथवा देवगिरीके यादवोंके ख़ान्दानसे उनका सम्बन्ध था; और यादवोंके घरानेके प्रसिद्ध रामरावके नामपर ही उनका नाम भी रामदेवराव रखा गया था। बादशाह अलाउद्दीन-खिलजी जब दक्षिणमें आया, तब पूर्वके रामदेवरावने बहुत अच्छा पराक्रम दिखलाकर अपने ख़ान्दानका नाम रखा था। सो हमारे इन सत्रहवीं शताब्दीके रामदेवरावको भी बड़ी आशा थी कि, हम भी पूर्वके रामदेवरावकी तरह ही कुछ न कुछ कर दिखलावेंगे। परन्तु यह समय कुछ दूसरा था, मुसलमानी बादशाहतकी जड़ काफी जम चुकी थी, अतएव उन्होंने सोचा था कि, समयके अनुकूल चलकर ही हमको अपनी और अपने घरानेकी उन्नति कर लेनी चाहिए। उनकी और उनके पिताकी यह इच्छा थी कि, बादशाह मुहम्मदशाहके ज़मानेमें हमको दरबारमें चलकर अपनी अलौकिक वीरता और प्रभुभक्तिका परिचय देना चाहिए; तथा बादशाहकी प्रसन्नता प्राप्त करके उत्तम रीतिसे अपने ख़ान्दानकी उन्नति कर लेनी चाहिये। इस प्रकारकी केवल इच्छा ही रखकर वे चुप नहीं रहे; बल्कि स्वयं रामदेवराव अपनी जागीरका गाँव छोड़कर अपने कुटुम्बके साथ बीजापुरमें जा रहे। उनका घराना बहुत ही पुराना और स्वामिभक्तिके लिए प्रसिद्ध था, इस कारण बादशाहके दरबारमें बहुत जल्द उनका ख़ूब प्रभाव जम गया। सब लोग यही समझने लगे कि, रामदेवराव बहुत जल्द बढ़ जायंगे, शीघ्र ही मुरारपन्तकी जोड़के होजायंगे; और उनके बाद प्रधान मन्त्रीका पद इन्हींको मिलेगा।

बादशाह उनपर प्रसन्न भी बहुत था। सब बात बिलकुल ठीक थी। आकाश बिलकुल स्वच्छ है, सृष्टिके सम्पूर्ण प्राणीमात्र आनन्दपूर्वक सूर्य भगवानके कल्याण-कारक प्रतापका अनुभव कर रहे हैं, ऐसे सुन्दर समयमें अचानक चारों तरफ़से घनघोर घटा घिर आवे, आकाश मेघाच्छादित होजाय; और सारी सृष्टिमें अन्धकार छाजाय, यही नहीं, बल्कि बादलोंकी भयङ्कर गड़गड़ाहट होकर भारी वृष्टि होने लगे; और ऐसा जान पड़े कि जैसे सारे ब्रह्माण्डका ही प्रलय होने आया हो,—उस समय जैसी दशा हो, वैसी ही दशा अचानक आ उपस्थित हुई। रामदेवराव बड़े आनन्दमें थे; उनके पिता भी बड़े प्रफुल्लित थे कि, देखो, हमारे लड़केने बहुत अच्छा नाम कमाया है। उनको इस बातका अभिमान होने लगा था कि, अन्य कुछ मराठे घरानोंकी तरह हमारा घराना बिलकुल अन्धेरेमें ही नहीं रहेगा; कुछ न कुछ—कुछ न कुछ क्यों, बहुत अच्छा—नाम करेगा। इधर, रामदेवरावकी पत्नी अति रूपवती थी। उसके लावण्यकी ख्याति सैयदुल्लाख़ां और उसके समान अन्य भी कितने ही नरपशुओंके मुखसे बादशाहके कानोंतक पहुंची, इससे बादशाहको लालसा हुई कि, किसी न किसी प्रकारसे एक बार उसके दर्शन अवश्य होने चाहिए। इस लालसाको पूर्ण करनेके लिए युक्ति क्या की जाय, इस विषयमें विचार शुरू हुआ; और अन्तमें सैयदुल्लाख़ांके पतित हृदयसे एक युक्ति निकली। वह युक्ति यही कि, बादशाहके अन्तःपुरसे स्वयं बेग़मसाहबाकी ओरसे—कमसे कम

हमारी सब तरहसे तरक्की होगी। हमारी पत्नी जब बार बार अन्तःपुरमें जाने आने लगेगी, तब बेगमसाहबाकी नज़रोंमें भी हमारी प्रतिष्ठा बढ़ जायगी; और बादशाहकी हमपर और भी अधिक मिहरबानी होजायगी। किन्तु उस बेचारेको यह कल्पना भी न थी कि, हम जो ये मनके महल खड़े कर रहें हैं, उनकी नींव बड़ी बुरी तरहसे—बड़ी भयंकर रीतिसे—कोली जारही है। सैयदुल्लस्वरूपी चूहा इस काममें लगी हुई थी। बादशाहको तो उस दिनसे और किसी बातका ध्यान ही नहीं रहा—रात-दिन उसीका ध्यान—ऐसा एक क्षण भर भी नहीं गया कि जिस समय उसने रामदेवरावकी पत्नीका नाम न निकाला हो, और उसको लानेके लिए हठ न किया हो। परन्तु सैयदुल्लाख़ां उस समय बादशाहके साथ अपनी पूरी पूरी अक़लसे काम ले रहा था। जैसे किसी बाघको विशेष क्रुद्ध करनेके लिए उसको भूखा रखते हैं,अथवा कभी कभी यों ही एक आध टुकड़ा उसके सामने डाल देते हैं—बस, इसीप्रकार सैयदुल्लाख़ां कर रहा था। बार बार बादशाहको वचन देता कि, देखो अब कोई न कोई युक्ति निकालते ही हैं; और जब देखता कि, बादशाह बहुत ही बिगड़ रहा है, तब एक आध दिन फिर बेग़मसाहबाके नामसे सन्देशा भेजकर उसको अन्तःपुरमें बुलवाता; और बादशाहकी एक दृष्टि उसपर डलवा देता। बस, ऐसा ही उसने चार पांच बार किया। इससे बेग़मसाहबाको भी बड़ा आश्चर्य हुआ कि, यह बाई बार बार हमारे घर क्यों आती है। पांचवीं बार जब

रामदेवरावकी पत्नी आई, तब ऐसी कुछ बातें निकलीं कि, जिनसे सैयदुल्लाख़ांको बड़ा भय हुआ कि, कहीं हमारा यह षड्यंत्र खुल न जाय। इसलिए उसने सोचा कि, यह युक्ति अब आगे काम न देगी। इसके सिवाय पांचवीं बार बादशाहकी हालत भी बहुत ख़राब हो गई, तब सैयदुल्लाख़ांने सोचा कि, बादशाह कहीं कोई बहुत ही अविचारपूर्ण कार्य न कर बैठे। इस-लिए अब जल्दी ही दो कदम आगे बढ़कर और कोई न कोई मार्ग निकालना चाहिए, तभी बादशाह कब्ज़ेमें रह सकेगा, अन्यथा सारा मामला बिगड़ जायगा। यह सोचकर सैयदुल्ला-की दुष्ट बुद्धि कोई न कोई और ही अजीब युक्ति निकालनेमें लगी। बादशाह प्रतिदिन कमसे कम पांच-सात बार उससे पूछता कि, "अब कोई युक्ति निकाली?' 'अब कोई युक्ति निकाली?' सैयदुल्ला कह देता, 'नहीं हुज़ूर, बड़ी कोशिश करता हूं; पर अभीतक तो कोई युक्ति सूझी ही नहीं।' बादशाहने देखा कि, यह रोज़ रोज़ ऐसे ही टाल रहा है, तब एक दिन उसने स्वयं कहा, "देख सैयदुल्ला, तुझको कोई युक्ति नहीं सूझती; किन्तु मैंने एक युक्ति निकाली है। बधिकोंके द्वारा रामदेवका बध करवाकर उसकी स्त्रीको खुल्लमखुल्ला अपने महलोंमें रखूंगा।" सैयदुल्लाख़ांको यह युक्ति पसन्द न आई हो, सो नहीं; किन्तु उसने ख़्याल किया, जब बादशाह ही अपनी ओरसे सारी कार्यवाही कर लेगा, तब फिर हमारा उसमें प्रभाव क्या रह जायगा? अतएव उसने बादशाहकी इस युक्तिका बड़ी

चतुरताके साथ खण्डन किया; और यह वचन दिया कि, अब दो ही दिनके अन्दर मैं कोई न कोई बहुत ही अच्छी युक्ति निकालता हूं। वे दो दिन बादशाहको बड़ी मुशकिलसे बीते। उसने सैयदुल्लाखांको बहुत ही तंग किया। अन्तमें सैयदुल्लाखांने आकर बादशाहको यह युक्ति बतलाई—"रामदेवरावको दक्षिणकी ओर कर्नाटकमें उपद्रवोंका दमन करनेके लिए अथवा नवीन प्रान्त जीतनेके लिए भेज दिया जाय; और उसको अवकाश इतना थोड़ा दिया जाय कि, जिससे अपने घरके लोगोंको साथ लेजानेका विचार करनेके लिए भी उसे फुरसत न मिले। इस प्रकारके कार्यके लिए वह बड़े आनन्दसे चला जायगा। इसके सिवाय उसके घरके लोगोंको उसकी जागीरपर उसके पिताके पास कुशलपूर्वक भेज देनेका दायित्व आप अपने ऊपर लेलीजिए। रामदेवरावके यहांसे जाते ही मैं उसके पिताके पास यह समाचार भिजवा दूंगा कि, वह अपनी पत्नीसहित कर्नाटककी चढ़ाईपर चला गया। इसके सिवाय मैं इसका भी प्रबन्ध करूंगा कि, रामदेवरावके पत्र उसके पिताके पास पहुंचने न पावें। रामदेवराव जब चला जायगा, तब उसकी पत्नीको, यह कहकर कि तुझे तेरे जागीरके गांवपर तेरे श्वसुरके पास भेजते हैं, उसके घरसे हटाकर बिलकुल गुप्त रूपसे किसी स्थानमें लाकर रखेंगे। इसके सिवाय इस विषयमें और किसीको कुछ भी नहीं मालूम होने देंगे। बस्तीके लोग और रामदेवराव यही समझेंगे कि उसको पिताके पास रवाना कर दिया।

यही नहीं, बल्कि ऐसा भी प्रबन्ध करेंगे कि, जिससे इस प्रकार-का समाचार उनके कानमें पहुंच जाय। लोगोंमें यह बात बिलकुल फूटने नहीं देंगे। इधर रामदेवरावके घरके लोगोंको ऐसा विश्वास करा देंगे कि, वह रामदेवरावके साथ चली गई। इस प्रकार कुछ दिन होनेके बाद रामदेवरावपर वहींकी वहीं कोई तोहमत लगा देंगे, और वहीं उसका अन्त करवा डालेंगे। फिर चारों तरफ़ यह हूल उड़ा देंगे कि, उसकी पत्नी घर न जाते हुए स्वयं ही शाही ज़नानख़ानेमें आकर रहने लगी है।" बादशाहने जब उसकी यह युक्ति सुनी, तब उसकी तबी-यत इतनी ख़ुश हुई कि, कुछ पूछिये ही नहीं! उसने समझा कि, बस—सैयदुल्लाख़ांके समान चतुर और राजनीतिज्ञ कार्य-कर्त्ता हमारे राज्यभरमें शायद ही और कोई हो। उसने उसीके कथनानुसार सब कार्यवाही करनेका विचार किया। दूसरे ही दिन उसने रामदेवरावको अपने निजी दरबार-हालमें बुलाकर उसकी ख़ूब प्रशंसा की; और बहुत जल्द उस चढ़ाईपर चले जानेकी आज्ञा दी। उससे कहा कि, "देखो, तुम यदि इस कार्यपर बहुत जल्दी, एक क्षणका भी विलम्ब न लगाते हुए, चले जाओगे; और हमारे इच्छानुकूल सब कार्य करोगे, तो तुम्हारी कितनी तारीफ़ होगी कि, जिसको मैं आज बतला नहीं सकता।" बादशाह जब स्वयं ही ऐसा कह रहा है, तब फिर और क्या चाहिए? रामदेवराव पहले ही एक बड़े महत्वा-कांक्षी पुरुष थे, फिर उनको यह एक ऐसा मौक़ा मिल रहा है

कि, जिससे उनकी उस महत्वाकांक्षामें मानो एक प्रकारका अंकुर ही फूट रहा हो। उन्होंने तत्काल ही बादशाहकी आज्ञा स्वीकार कर ली। उन्होंने सोचा कि, बादशाह हमारे घरके लोगोंको हमारे पिताके पास भेजनेका दायित्व लेता ही है, अब और काम ही कौनसा है? हमारे भाग्य जागे, अब हम दक्षिण विजय करके ज्यों ही आये, त्यों ही बादशाहके दरबारमें हमको और भी विशेष गौरव प्राप्त होगा। इस प्रकार आनन्दमें निमग्न होते हुए बेचारे रामदेवराव अपने महलमें वापस आये। इधर बादशाहने उनके लिए फ़ौज-फाटाका सारा प्रबन्ध करके तीसरे दिन उनको वहांसे रवाना कर दिया। सब लोग कहने लगे कि, रामदेवरावने अपने ख़ान्दानका गौरव बहुत अच्छा बढ़ाया; और अब वे विजय करके ही वहांसे लौटेंगे, इसमें बिलकुल सन्देह नहीं। सभी उनका ख़ूब अभिनन्दन करने लगे। रामदेवरावके जोशका ठिकाना न रहा। उन्होंने अपने पिताको पत्र लिखा; पर धूर्त सैयदुल्लाख़ांने उनके हरकारेको बीचमें ही फोड़ लिया, और उससे वह पत्र लेलिया। उसकी जगहपर उसने एक पत्र अपनी तरफसे उनके पिताको लिखा, जिसमें यह जतलाया कि, रामदेवरावको पत्र लिखनेका अवकाश नहीं मिला, इसलिए मैं उनकी ओरसे आपको यह पत्र भेज रहा हूं। उसने सब वृत्तान्त उस पत्रमें लिखकर अन्तमें लिखा कि, वे अपने घरके लोगोंको साथ लेकर चढ़ाईपर गये, आप कोई चिन्ता न करें। अवश्य ही उस पत्रको पाते ही उनके पिताको परम

प्रसन्नता प्राप्त हुई—उस बुड्ढे के आनन्दका ठिकाना न रहा। फिर भी उसके मनमें यह ज़रूर आया कि, देखो, घरके लोगोंको साथ लेकर रामदेव चढ़ाईपर गया, यह अच्छा नहीं किया। परन्तु उस आनन्दके आवेगमें उसे इस बातपर विशेष विचार करनेका अवकाश कहां? उसने तुरन्त ही बादशाहको एक अत्यन्त उपकार-दर्शक और कृतज्ञता-प्रदर्शक पत्र लिखा, जिसमें यह जतलाया कि, लड़का आपहीका है, सब प्रकारसे आपके चरणोंमें समर्पित कर दिया है। वह पत्र जब दरबारमें आया, तब बादशाहने उसे सैयदुल्लाख़ांको दिखाया। दुष्ट सैयदुल्ला हँसकर धीरेसे ही बादशाहके कानमें कहता है, "लड़का ही क्यों बहू भी हुज़ूर···"। यह सुनते ही बादशाहको उसकी उस समय-सूचक नीचतापर हँसी आई। इससे तो ख़ांसाहब और भी विशेष प्रफुल्लित हुए। फूले न समाये। अस्तु। जो हो, उस पत्रके कारण दरबारपर बहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ा। सभी बादशाहकी प्रशंसा करने लगे। बादशाहने देखा कि, वाह, यह तो बहुत ही अच्छा काम बना; और सैयदुल्लाख़ांपर वह पहलेसे भी अधिक प्रसन्न हुआ। इसके बाद दो ही चार दिनमें सैयदुल्लाकी कपट कार्यवाहीके अनुसार वह कार्य भी बहुत ही गुप्तरूपसे सिद्ध हुआ कि, जो अत्यन्त नीचातिनीच था। अर्थात् बादशाहकी अत्याचारपूर्ण इच्छाके पूर्ण होनेका अवसर मिला। रामदेवरावकी पत्नी रम्भावतीके नामसे प्रसिद्ध हुई। परन्तु उसको भ्रष्ट करनेमें बादशाहको बड़े बड़े अत्याचारपूर्ण

कार्य करने पड़े; और अन्तमें जब उसके मरनेतककी नौबत आगई, तब वह लाचार हुई। इन सब बातोंका अत्यन्त दुःखद इतिहास देनेका हमारा यहां विचार नहीं। उसका थोड़ासा दिग्दर्शनमात्र आगे चलकर उस स्त्रीके मुखसे ही पाठकोंको मालूम होगा। अस्तु।

रम्भावतीको भ्रष्ट करनेका गुप्त षड्यंत्र बहुत दिनोंतक स्वयं अन्तःपुरमें भी किसीको मालूम नहीं होने दिया गया। आगे चलकर धीरे धीरे उस स्त्रीके विषयमें जिज्ञासा बढ़ने लगी; और उसके सच्चे स्वरूपके प्रकट होनेकी सम्भावना भी बढ़ने लगी। यह देखकर सैयदुल्लाख़ां और उसके पिल्लुओंने उस स्त्रीके असली पतेके विषयमें अनेक झूठी झूठी गप्पें उड़ानेमें ख़ूब कमाल किया। इधर रामदेवराव और उनके पितामें जो पत्र-व्यवहार होता, उसे वह बीचहीमें ग़ायब करवा देता। इस विषयमें उसने पूर्ण दक्षतासे काम लिया; और उसे इसमें काफी सफलता भी हुई। अन्तमें उसने मानो अपनी नीचता अथवा अपनी काली कार्रवाईका कमाल कर दिखलानेके निश्चयसे ही रामदेवरावको अपनी ओरसे एक पत्र लिखा। उसमें उसने अपनेको उनका बड़ा भारी मित्र प्रकट किया; और अत्यन्त विश्वास दिखलाकर, बादशाहके द्वारा रम्भावतीके भ्रष्ट किये जानेका विस्तृत वृत्तान्त लिखा। उसमें सारा दोष बादशाहके ऊपर डाला; और अपने लिए लिखा कि, हमने बादशाहको इस भयंकर कार्यसे पराङ्मुख करनेके लिए बहुत उपदेश

किया; और जितने उपाय हो सकते थे, सब उसको बचानेके लिए किये; पर बादशाहने हमारी एक न सुनी। इसके बाद अन्तमें उसने लिखा कि, "अब रम्भावती बादशाहकी सच्ची सच्ची पटरानी बन चुकी है; और बादशाहने मुझसे आज ही तेरा बध करनेके लिए, वधिकोंको भेजनेका, वचन दिया है। ये जल्लाद बहुत ही भयंकर रीतिसे तुम्हारा ख़ून करनेके लिए आरहे हैं। सो, तुमको यद्यपि मुझपर प्रेम नहीं है; किन्तु मुझको तुमपर बड़ी दया आती है; और तुम्हारे स्नेहकी मैं सदैव आकांक्षा रखता हूं, इसलिए मैं समझता हूं कि, इस समय मैं तुमको सजग कर दूं और इसीलिए, अपना कर्त्तव्य समझकर, मैं बहुत ही गुप्तरूपसे तुमको यह पत्र लिख रहा हूं। पत्र पढ़कर तुरन्त फाड़ डालना। तुम्हारे विषयमें ये भयंकर घटनाएं हुई हैं, इनको प्रकट कर देना जिस प्रकार मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूं, इसी प्रकार आगेके लिए तुमको क्या करना चाहिए, इस विषयमें सलाह देना भी मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूं! तुम ख़ुद ही होशियार हो। पर ऐसे समयमें दूसरेकी ही अक़्ल काम दिया करती है। इसलिए पहले तुम यह काम करो कि, इस पत्रके पाते ही वहांसे बहुत जल्द कहीं चले जाओ; और फिर बहुत दिन बाद वेशान्तर करके मेरे पास आकर मिलो। मुझे तुमसे और भी बहुतसी बातें बतलानी हैं। इस पत्रमें लिखी नहीं जासकती। ऐसे नीच अधमाधम बादशाहकी सेवामें रहना मुझे तो एक मिनटके लिए भी नहीं भाता। मैं

बहुत ही उद्विग्न होगया हूं। क्या बतलाऊं ? नौकरीका मामला है; तुम इस पत्रको पढ़कर तुरन्त ही फाड़ डालो।" इस पत्रको पाकर रामदेवरावके मनकी क्या दशा हुई, उसकी कल्पना नहीं की जासकती। उनमें महत्वाकांक्षा बहुत भारी थी सही; परन्तु सबसे मुख्य बात तो यह थी कि, उनको अपनी पत्नीपर बड़ा प्रेम था। और उनके शरीरमें सच्चा सच्चा राजपूत रक्त दौड़ रहा था। अतएव पत्र पढ़ते ही उनका सारा शरीर एकदम जल उठा—वे क्रोधसे बिलकुल अंधे होगये। बादशाहने हमारे साथ ऐसा विश्वासघात किया? यह देखकर उनको इतना भयंकर क्रोध आया कि, यदि बीजापुरमें वे इस समय होते, तो तत्क्षण जाकर उन्होंने बादशाहका ख़ून किया होता। पर अब? अब बदला लेनेकी प्रतिज्ञा और सैयदुल्लाख़ांकी सूचनाके अनुसार तत्काल ही कार्य करनेके अतिरिक्त उनके लिए कोई मार्ग ही नहीं था। सैयदुल्लाख़ांको वे अबतक अत्यन्त नीच एक अर्दलीमात्र समझते थे; अतएव उनकी दृष्टिमें उसकी कोई भी क़द्र नहीं थी; पर आज वही उनके काम आया, इसपर उन्हें आश्चर्य हुआ; और सैयदुल्लाख़ांके विषयमें उनके हृदयमें आदर-भाव उत्पन्न हुए। अब उनकी महत्वाकांक्षाके लिए कोई भी कारण शेष नहीं रहा। उन्होंने सोचा कि, अब राजदरबारमें हम चाहे जितनी उन्नति करते जावें; पर उसका क्या मूल्य? स्त्रीका पातिव्रत्य बेच कर उसके बलपर अपनी उन्नति करना मानो अपने मुखपर एक ऐसा कलंक लगाना है, जो कभी हज़ार

प्रयत्न करनेपर भी नहीं मिट सकता—न सिर्फ अपने ही मुखपर, बल्कि अपने कुल,अपनी मान मर्यादा सबको ही अक्षय कलंकसे कलंकित करना है। यह सोचकर उनको अत्यन्त परिताप हुआ; और उन्होंने इस बातका विचार किया कि, अब जल्लादोंके हाथसे अपने प्राणोंको बचाकर यहांसे बहुत शीघ्र चल देना चाहिए; और हमारे कुलमें कलंक लगानेवाले उस बादशाह-रूपी राक्षसको शीघ्र ही यमपुरीका मार्ग दिखाना चाहिए; और उसके रक्तसे यह अपमान—यह कलंक, जहांतक शीघ्र होसके, धो डालनेका प्रयत्न करना चाहिए। अबतक स्वामिभक्तिका एक बन्धन उनके मनमें था, सो आज वह भी टूट गया; और वे एकदम बिगड़ उठे। बहुत जल्द उन्होंने सैयदुल्लाख़ांकी सूचनाके अनुसार कार्य करनेका निश्चय किया; और वैसा ही किया भी। इधर सैयदुल्लाख़ांने यह सोचा था कि, ज्यों ही रामदेव उधर हमारे पत्रकी सूचनाके अनुसार भाग जायगा, त्यों ही हम इधर यह हूल उठावेंगे कि, उसने बादशाहके साथ कोई विश्वासघात किया; और इसीकारण जब बादशाहने उसको वहींका वहीं प्राणदण्ड देनेका हुक्म दिया, तब वह कहीं तुरन्त ही भाग गया। इसके सिवाय उसने यह भी सोचा कि, उसका विश्वास-घात ऐसा कोई प्रकट किया जाय, कि जिसकी भयंकरताको सुनकर प्रत्येक प्रजाजन उससे घृणा करने लगे! उसने इस बातका भी पूरा पूरा प्रबन्ध कर रखा था कि, जिससे रामदेव-रावके वहांसे भागनेका समाचार उसे जल्दीसे जल्दी मिल

जावे। इसके सिवाय उसने यह भी सन्धान वांध लिया था कि, उधरसे वह समाचार आवे; और इधर उसके विरुद्ध हूल उठाई जावे; और फिर उसी क्रोधपर रामदेवके पिताको भी क़ैद करके मरवा डाला जाय। इसके सिवाय, बादशाहको अब वह उतनी ही बातें बतलाता था कि, जितनी बातें बतलानेकी ख़ुद आवश्यकता समझता था; और बादशाहने तो उसे अत्यन्त राजनीति पटु और विश्वासपात्र कार्य-कर्त्ता समझ ही रखा था। सब बातें उसके अनुकूल थीं—अब और क्या चाहिए? उसको निश्चय था कि, रामदेवराव उसके उपदेशके अनुसार फौज-फाटा छोड़कर वहांसे चल देगा; और फिर वह गुप्तरूपसे उससे आकर मिलेगा। इसलिए, इसके बाद उसने अपने मनमें एक यह भी भयंकर सन्धान बांध रखा था कि, जहां रामदेवराव एकान्तमें आकर उसको मिले, वहीं वह तुरन्त उसको गिरफ्तार करा लेवे; और उसके विश्वास-घातके लिए उसको प्राणदण्ड दिलावे। परन्तु उसका यह भयंकर षड्यंत्र अन्ततक गुप्त नहीं रह सका। रामदेवरावके पिताको ऐसी कुछ ख़बर मिली कि, उनकी पुत्रवधू किसी संदिग्ध स्थानमें पड़ गई है, इसके सिवाय यह ख़बर भी उनके कानोंमें पहुंच गई कि, उनको पकड़कर मार डालनेके लिए भी दरबारसे हुक्म निकल चुका है। यह सुनते ही उन्होंने अपना स्थान छोड़कर वेशान्तर कर लिया। सैयदुल्लाख़ांने देखा कि, एक शिकार उसके हाथसे निकल गया, इसका उसे बड़ा ही

अचम्भा हुआ। वह सोच ही न सका कि, उसके इतने गुप्त विचार इस प्रकार बाहर कैसे फूट गये। फिर भी यह कहकर उसने अपने मनको समझाया कि, हमारे विचार फूटनेके कारण यह शिकार हमारे हाथसे नहीं गया; वल्कि इसका और ही कोई कारण होगा। इधर रामदेवराव वहांसे भग खड़े हुए, और वेशान्तर करके बीजापुरकी तरफ आये। बादशाहके उक्त दुष्ट कार्यका बदला लेनेको वे विलकुल तैयार थे। लेकिन इतनेमें एक आदमीने उनको पहचान लिया; और उनको एक ऐसा पत्र दिया, जिसमें सैयदुल्लाख़ांकी सब कार्यवाहियोंका पूरा पूरा उल्लेख था। उस पत्रको देनेके बाद उस महाशयने उनसे कहा कि, तुम बहुत जल्द अमुक अमुक जंगलको चले जाओ; और वहां अमुक जगहपर एक झोपड़ीमें कोई भिल्ल रहता है, उससे जाकर मिलो। उसने जो पत्र दिया, उसके अक्षर रामदेवरावकी पहचानके थे। इससे रामदेवका चित्त द्विधामें पड़ गया। उनको यही निश्चय न होने लगा कि,वे सैयदुल्लाख़ां-को अपना दुश्मन समझें या बादशाहको। अन्तमें उन्होंने यही विचार किया कि, उस भिल्लसे मिलनेके बाद, जो कुछ करना होगा, देखा जायगा। यह सोचकर वे उस पत्रमें लिखे हुए जंगलमें जाकर उस भिल्लसे मिले। वह भिल्ल उनका पिता है।

अठहत्तरवां परिच्छेद ।

और कुछ वृत्तान्त; और आगे ।

रामदेवराव अपने पितासे मिले। उस समय उन दोनोंके मनकी जो दशा हुई; और उन दोनोंमें जो बातचीत हुई, उनका सविस्तर वर्णन यहां देनेकी आवश्यकता नहीं है। क्योंकि उन बातोंको पाठकगण स्वयं ही अपनी कल्पनासे भलीभांति विचार सकते हैं। बहुत देरतक तो वे दोनों एक दूसरेकी ओर एकटक देखते हुए चुपके खड़े रहे। इसके बाद दोनोंके चित्तमें एकदम कोई ऐसा विचार आया कि, जिससे उन्होंने एकदम अपनी अपनी गर्दन नीची कर ली; और फिर उसी दशामें वे बहुत देरतक खड़े रहे। किसी प्रकार भी किसीके मुखसे कोई शब्द न निकला। परन्तु वह दशा भी कितनी देर टिक सकती थी? कुछ देर बाद दोनों एकदम खूब लिपटकर मिले; और फिर एक दूसरेसे धीरेसे ही छूटकर वे दोनों अलग अलग नीचे बैठ गये। इसके बाद रामदेवराव अपने पितासे बोले, "आपने यह वृत्तान्त लिखकर हमारे पास भेजा, इससे मेरा चित्त दुविधामें पड़ गया है। वास्तवमें हमारा शत्रु कौन है? बादशाह या सैयदुल्ला?" "सैयदुल्ला! वही नीच सैयदुल्ला!" उनके पिताने उत्तर दिया। उसे सुनकर रामदेवराव कुछ देर ठहर गये; और फिर एक लम्बीसी सांस लेकर कहते

हैं, "तब तो ठीक है। यह बात यदि सत्य है,तब कोई हर्ज नहीं। अब स्वामिद्रोहके पातकसे हम बच जायंगे। आप लड़कपनसे हमको यह शिक्षा देते आये हैं कि, स्वामी चाहे जो कर डाले, फिर भी उसका विश्वासघात करके उससे बदला लेना सच्चे सेवकका व्रत नहीं। आपकी यह शिक्षा हमारे मनको बारम्बार टोंच रही थी। परन्तु अब मालूम हुआ कि, इस सम्पूर्ण पाप-कर्मको करानेवाला वही नीच सैयदुल्ला है; और यह यदि सच है, तो मैं उसके रक्तमें अपने हाथ डुबोकर अवश्य ही अपने मनको सन्तुष्ट कर लूंगा; और फिर..." इसके आगे उनके मुखसे शब्द ही न निकला। वे चुप होरहे। उनके पिताने बहुत देरतक अपने मनको रोका; और फिर जब देखा कि, पुत्र अब कुछ शान्त होगया है, तब वे धीरेसे ही बोले, "तेरा दुश्मन सैयदुल्ला ही है,दूसरा कोई नहीं। उसने यदि यह सारा षड्यंत्र न रचा होता, तो बादशाह इतना कभी नहीं कर सकता था। इसका साक्षी मैं स्वयं ही हूं। मैंने बारीकीके साथ सब जांच की है; और मेरा प्राण बचानेवाली सिर्फ 'वही' है—यदि उसने समयपर मुझे सूचना न भेज दी होती, तो जल्लादोंके हाथसे अत्यन्त भयंकर रीतिसे मेरा खून होगया होता। उसने (अपनी पुत्रवधूकी तरफ इशारा करता है) जो कुछ समाचार मुझे दिया, वह बिलकुल सच निकला। मैं अपने महलको छोड़कर बाहर चला आया,इसके पाव घंटे बाद ही जल्लाद लोग महलमें जाघुसे। मैं मिला नहीं, इसलिए उन्होंने बड़ा उपद्रव

अन्तिम प्रश्नके भीतरका व्याजार्थ और मर्मभेदक भाव राम-देवरावके पिताके ध्यानमें न आया हो, सो नहीं। किन्तु उन्होंने, उस विषयमें कुछ भी प्रकट न करते हुए, एकदम इस प्रकार कहा, "हां, उसीने भेजा। उसे चांडालिन इत्यादि कहकर गालियां देनेसे क्या लाभ? वह कर ही क्या सकती थी? उसको कुशलपूर्वक पहुंचा जाना किसका काम था? अपने साथ लेजानेकी बुद्धि क्यों नहीं हुई? जिस दशामें उसके साथ विश्वासघात किया गया, उस दशामें कोई भी होता—उसके साथ और क्या होसकता था? उसके साथ विश्वास-घात होनेका दोष किसपर है!" ऐसा मालूम हुआ कि, कहीं उसी विषयको लेकर पिता-पुत्रमें झगड़ा न होने लगे; पर कुशल हुई, थोड़ेहीमें निपट गया। पिताको जितनी बातें प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष-रूपसे मालूम होसकती थीं, उतनी सब उसने मालूम कर ली थीं; और सैयदुल्लाख़ांके भयंकर काले षड्यन्त्रका सारा वृत्तान्त यद्यपि रम्भावतीके द्वारा ही उनके पिताको मालूम हुआ था, तथापि जब वह सारा वृत्तान्त अपने पितासे स्वयं रामदेव-रावने सुना, तब उनको एकदम वहीं आत्महत्या कर लेनेकी इच्छा हुई; पर अन्तमें उनके मनमें यह विवेक जागृत होगया कि, इस प्रकार आत्महत्यासे कोई लाभ नहीं—पहले उस नीचका रक्तपात करके उसमें अपने हाथ डुबाने चाहिएं कि, जिसने हमारे साथ ऐसा भयङ्कर विश्वासघात किया है—उससे बदला लिये बिना आत्महत्या कर लेना बिलकुल कायरता होगी।

बस, यही सोचकर उन्होंने अपनी घोर प्रतिज्ञा की। परन्तु फिर उन्होंने सोचा कि, हमारी यह इतनी घोर प्रतिज्ञा-एकदम बहुत जल्द पूर्ण नहीं होगी, इसमें कुछ अवकाश लगेगा; और यदि हम इसको उतावलीके साथ पूर्ण करना चाहेंगे, तो बहुतेरे विघ्नोंसे हमको सामना करना पड़ेगा; यही सब सोचकर उन्होंने कुछ काल अज्ञातवासमें ही व्यतीत करनेका निश्चय किया; और सूर्याजीके ग्रामसे थोड़ी दूरपर एक जंगलमें बटवृक्षके नीचे एक झोपड़ी बनाकर वे उसमें कोल-भिल्ल और बहेलियोंके समान अपना जीवन बिताने लगे। हां, बीच बीचमें वे बीजापुर अवश्य होआते थे, नाना प्रकारके भेष बदलकर ख़बरें लेआते थे; और अपने बदला लेनेका यथोचित मौक़ा न देखकर वैसे ही जलते-भुनते लौट आते थे। जङ्गलमें वे दोनों भिल्ल रहते थे; पर सूर्याजीको छोड़कर अन्य किसीको भी उनके स्वरूपका पूरा पूरा परिचय नहीं था। वे बहुत दिनोंतक तो कुछ बोलते ही न थे; और न किसीसे उनका कोई संपर्क था। सूर्याजी अवश्य ही बिलकुल गुप्तरूपसे कभी कभी उनके पास होआया करते थे; और उनका समाचार लेकर फिर अत्यंत गुप्तरूपसे लौट जाया करते थे। उन्हीं दिनोंके लगभग सूर्याजीके घरपर सैयदुल्लाखांने धावा करवाया। उस धावेमें उनके घरकी क्या दशा हुई; और सैयदुल्लाका आबुर्दा प्यारेखां किस प्रकार श्यामाके द्वारा मारा गया, इत्यादि बातें पाठकोंको पहले-के परिच्छेदोंमें विदित होचुकी हैं। उस समय पीछेसे मुसल-

मानोंने सूर्याजीके महलोंमें आग लगा दी थी; और उस आगसे सूर्याजीकी धर्मपत्नी, उनके छोटे बच्चे और स्वयं सूर्याजीको भी मृत्युके मुखसे बाहर खींच लानेवाला जो कालाकलूटा व्यक्ति पाठकोंको दिखाई दिया था, वे हमारे यही रामदेवराव थे। यही रामदेवराव उन सबको आगके मुखसे बचाकर अपनी झोपड़ीमें लेगये; वहां फिर उनके सम्पूर्ण चरित्रमें क्या क्या परिवर्तन होते गये, सो सब पाठकोंको मालूम हैं। सूर्याजी और अपनी बहनको जब रामदेवने लाकर अपनी झोपड़ीमें रखा, तब उन्हें ऐसा मालूम हुआ कि, अब शायद हमारे अज्ञातवासमें कोई बाधा न आवे; और यही सोचकर पीछेसे उन्होंने अचानक अपना स्थान बदल दिया था, जिसका वृत्तान्त पीछे आ ही चुका है। उसके बाद और भी जो जो घटनाएं हुईं, वे सब पाठकोंको मालूम हैं।

उन घटनाओंमें पाठकोंको यह भी स्मरण होगा कि एकबार रामदेवका अपने पितासे बातोंही बातोंमें कुछ झगड़ा होगया था; और उसी समय उन्होंने अपने शत्रुसे बदला लेनेकी घोर प्रतिज्ञा की थी। यही नहीं, बल्कि उस प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिए एक खास अवधि नियत करके वे अपने पिताको छोड़कर एकदम बीजापुर चले आये थे। बीजापुरमें आकर उन्होंने बड़ी बड़ी विचित्र कारस्तानियां कीं। एक दो विश्वास-पात्र मनुष्योंकी सहायतासे भेष बदलने और उस बदले हुए भेषके अनुसार कार्य करनेका कौशल उन्हें अच्छी तरह सिद्ध

होगया था। थोड़े ही दिनमें अनुभव प्राप्त करके वे इस कार्यमें बड़े निपुण होगये। इसके बाद भेष बदल बदलकर उन्होंने अनेक स्थानोंमें अपना बहुत अच्छा प्रवेश कर लिया; और सैयदुल्लाखांके विषममें सब बातोंका पूरा पूरा ज्ञान रखने लगे उनका ऐसा निश्चय था कि, सैयदुल्लाख़ांको कहीं मुक़ाबलेमें खड़ा करके,अपना सारा वृत्तान्त उससे प्रकट करके, तब उसका बध करें; और इसीमें हमारा पुरुषार्थ भी है; और ऐसा ही हम करेंगे। उसको चुरा छिपाकर मारने अथवा उसकी असावधान दशामें विश्वासघातक बधिककी भांति उसका बध करनेमें कोई भी खूबी नहीं; और न ऐसा करना हमारे लिए शोभा देगा। इस प्रकारका सम्पूर्ण निश्चय करके उन्होंने सोचा था किसी युद्धमें उसका सामना करना ठीक होगा, और यदि युद्धका मौक़ा न मिलेगा, तो अकेला ही उसको पकड़ेंगे, और उसके हाथमें तलवार देकर असियुद्धमें उसे प्रवृत्त करके तब उसका शूरवीरकी भांति बध करेंगे। परन्तु इस बातका उन्हें विश्वास नहीं था कि, इन दो बातोंमेंसे हमारी एक बात भी पूर्ण न होगी। अस्तु। सैयदुल्लाख़ांपर निगाह रखते हुए बीजापुरमें वे बुड्ढे मौलवी अथवा फकीर या साईंका भेष धरकर रम्भावतीसे भी कभी कभी मिलते रहते थे। यही नहीं, बल्कि एक दो बार उसका बध करनेके लिए उन्होंने शस्त्र भी उठाया था; पर अन्तमें स्त्रीहत्याका पाप करनेके लिए उनका हाथ नहीं उठा। इसके सिवाय उन्होंने यह भी सोचा

कि, इसका बध करनेके बाद यदि हम कहीं पकड़ लिये गये, तो हमारी असली प्रतिज्ञा जो सैयदुल्लांखाके बध करनेकी है, सो एक ओर रह जायगी; और हमको तुरन्त ही प्राणदण्ड मिलेगा। इसीलिए उन्होंने सोचा कि, अब वह तो चूंकी एकबार भ्रष्ट हो ही चुकी है, अब उसको दो महीने इसी प्रकार रहने देनेमें कोई हानि नहीं है—पहले हम अपने शत्रुका प्राण हरण कर लेवें, तब फिर उसका बध करनेमें कोई कठिनाई नहीं पड़ेगी। बस यही सोचकर रामदेवराव अपने कट्टर शत्रुका बध करनेका अवसर देख रहे थे। बीजापुरके घर घरका पूरा पूरा समाचार उनको सदैव मिलता रहता था। ऐसे ही समाचारोंसे लाभ उठाकर उन्होंने रणदुल्लाखांके महलके तहखानेसे,—अहमदके पंजेसे—नानासाहबको छुड़ाया था। इसके बादका सारा वृत्तान्त पाठकोंको मालूम है, इसलिए अब यहांपर उस विषयमें कुछ भी उल्लेख न करते हुए यह बतलाना चाहिए कि, सैयदुल्लाखांका अन्त करनेके बाद रामदेवरावने क्या किया। सैयदुल्लाखांसे बदला लेनेके बाद सूर्याजी तथा अन्य लोगोंने भी रामदेवरावसे कहा कि, अब तुम कहीं मत जाओ; पर उनका चित्त ठिकाने नहीं था। उनको इस बातका अत्यन्त दुःख था—मरणप्राय दुःख था—कि सैयदुल्लाखांका बध अन्तमें वे किसी वीर पुरुषकी तरह नहीं कर सके। परन्तु बेचारे करते क्या? कोई उपाय न था। अस्तु। अब अन्तमें एक बात और रह गई; और वह बात थी रम्भावतीका निपटारा करना। इसलिए

रम्भावतीका निपटारा करनेके लिए रामदेवरावने बीजापुरको प्रयाण किया। बादशाहके अन्तःपुरमें जानेके लिए साईं बाबाका भेष उनके लिए विशेष उपयुक्त था, क्योंकि उस भेषमें वहांके पहरेदार और दासी लोग उनका बड़ा आदर करती थीं। और इसी भेषसे वे इसके पहले और भी कई बार वहां गये थे। इस बार भी वे साईं बाबाके भेषसे ही बिलकुल शामको वहां पहुंचे। संयोगवश बादशाह उस समय शराबके नशेमें बिलकुल बेहोश पड़ा था, अतएव रम्भावतीसे उनकी भेंट होगई। वह उनको देखते ही पहचान गई। रामदेवरावने शान्तिपूर्वक उससे कहा, "तू बाग़में चल; वहां एकान्तमें तुझसे कुछ कहना है।" उन्होंने यद्यपि ये शब्द बहुत ही शान्तिके साथ कहे थे; परन्तु रम्भावती यह भलीभांति जानती थी कि, उनका चित्त कितना क्षुभित होरहा है। अस्तु। क्षणमात्र वह कुछ नहीं बोली, फिर तुरन्त कहती है; "आती हूं आप अमुक ओर, अमुक पुष्करणीके पास, जाकर खड़े हों।" यह कहकर वह वहांसे चल दी। लगभग चौथाई घड़ीमें ही वह वहां पहुंच गई। इस समय उसकी चेष्टा बहुत ही विचित्र होरही थी। उसको देखते ही रामदेवरावकी जिह्वा मानो बिलकुल चिपक गई, और उनका हाथ तो बिलकुल उठने ही न लगा। वे बिलकुल स्तब्ध खड़े रहे। उनके चित्तकी दशा रम्भावती ताड़ गई; और धृष्टताके साथ आगे आकर उनसे बोली, "अब मैं जो कुछ कहनेवाली हूं, उसमें निर्लज्जता तो अवश्य ही है, पर लाचारीसे कहना

पड़ेगा। आप इस समय यहां किस उद्देश्यसे आये हैं; सो मैं जानती हूं; और उस बातके लिए मैं तैयार भी हूं। पर आपके ही हाथसे उसके होनेकी आवश्यकता नहीं है। आपको इस पापमें पड़नेकी क्या ज़रूरत है? देखिये, यह शीशी आज कितने ही दिनोंसे मैं अपने पास रख रही हूं। आपकी आज्ञा प्राप्त करके इसके उपयोग करनेका मेरा निश्चय था। जिस दिन पहले पहल आपको मैंने पहचाना, उसी दिन मैं इसको लाई। इस शीशीका उपयोग तो किसी न किसी दिन होना ही था; पर इच्छा थी कि, एक बार आपका समाचार फिर मिल जाय; और तब मैं अपने जीवनका ख़ुशीके साथ अन्त करूं। मुझको इन चाण्डालोंने बाह्यतः भ्रष्ट किया है; पर मैं अन्तःकरणसे अब भी वही बनी हूं। बाह्यतः भ्रष्ट करनेमें भी इनको बड़े बड़े प्रयत्न करने पड़े; मुझे बड़ी बड़ी भयंकर धमकियां इन्होंने दीं; और बड़े बड़े अत्याचार किये। उन सबको मैं बतलाना नहीं चाहती हूं। जो भी कुछ हो; मैं भ्रष्टा अवश्य होगई हूं; और अब उन सब बातोंको कहनेसे कोई लाभ नहीं है। बहुत समयतक तो मेरे ऊपर इतना सख़्त पहरा रखा गया था कि, मैं अपने जीवनका अन्त करनेमें भी बिलकुल असमर्थ थी। उसी बीचमें मुझे ऐसी ऐसी ख़बरें भी मिलीं कि, आपको ये नरपिशाच न जाने क्या क्या कष्ट देकर न जाने क्या कर डालना चाहते हैं। इसलिए मैं बहुत ही घबड़ाई; और इस बातका विचार करने लगी कि, आपके प्राण बचानेके लिए मैं किन किन उपायोंसे काम लूं।

मुझे अपने निजके प्राणोंकी रत्तीभर भी चिन्ता नहीं थी। सिर्फ मैंने यही सोचा कि,इस समय यदि कपटसे मैं काम नहीं लूंगी, तो आपकी और श्वसुरजीको जानको न जाने ये राक्षस क्या कर डालेंगे। इसीलिए किसी प्रकार प्राणोंको रखा। दुष्टता धारण की। और उस अपनी भ्रष्टावस्थामें भी कपटपूर्ण कार-वाइयोंसे इन दुष्टोंकी सब गुप्त गुप्त कारस्तानियां मैंने जान लीं। इसके लिए नाना प्रकारकी युक्तियां और दांव-पेंच मैंने किये। इस प्रकार वे सब गुप्त कारस्तानियां समझकर फिर मैंने श्वसुरजीके पास उनकी ख़बर भेजी। मैं ईश्वरको साक्षी देकर आपसे कहती हूं कि, आप मेरे बाह्य आचरण, मेरी बाह्य भ्रष्टता का ख़याल करके मुझको सचमुच ही भ्रष्टा न समझें। मैं अन्तः-करणसे बिलकुल निर्मल हूं। उस दुष्टका अन्त आपके हाथसे होगया, इसी बातके जाननेको मैं उत्सुक हूं, सो आप बतला-इये; और फिर मैं इस शीशीका विष पान करके अपनी देहका अन्त करूं। ईश्वर मेरे सच्चे अन्तःकरणका पक्का साक्षी है। वह मुझे जन्म-जन्मान्तरमें आपका ही साथ देगा। जाइये, अब विलम्ब न कीजिए—यह सुसमाचार एक बार मुझे सुनाइये कि उस दुष्टका अन्त आपके हाथसे होगया—फिर मैं एक क्षणका भी विलम्ब न लगाते हुए अपने प्राणोंका बलिदान आपके चरणोंपर दूंगी।”

रामदेवराव शान्तिपूर्वक सुन रहे थे। परन्तु उनकी चेष्टासे यह कुछ नहीं मालूम होरहा था कि, उसका कथन उनको सत्य

मालूम होरहा है अथवा असत्य मालूम होरहा है। उसका कथन समाप्त होते ही किसी निराश और दुश्चित्त मनुष्यकी तरह वे उससे कहते हैं, "अच्छा, तो अब तू पीले यह ज़हर! और इस पृथ्वीपरसे अपने भ्रष्ट शरीरका अन्त कर। मैं उसका वध कर आया।"

रम्भावती क्षणभर शान्त खड़ी रही; और फिर एक दम इतना ही प्रश्न उच्चारण किया—"सचमुच?" इसपर रामदेव-राव फिर उससे उपर्युक्त दुश्चित्तताके ही साथ कहते हैं, "हां! हां! सचमुच। तुझको दुःख होता है क्या?"

रम्भावती फिर विशेष कुछ नहीं बोली। तुरन्त ही उस शीशीकी ढट्टी निकाली और शीशीको अपने मुँहमें लगाकर सिर्फ इतना ही कहा—"हां, मुझे दुःख होता है कि, आपको मेरी सच्ची परीक्षा बिलकुल नहीं हुई। अब इस ज़हरके घूंटसे ही हो!" ऐसा कहती हुई एकदम वह उस हलाहलको पान कर गई!

* * * *

दूसरे दिन एक स्त्री और एक पुरुषकी लाश उस बाग़में मिली। रामदेवराव वहां आत्महत्या करके मरे, अथवा किसी दूसरेने उनको मारा, किसीको मालूम नहीं हुआ।

उन्नासिवां परिच्छेद।

सुलतानगढ़पर

रामदेवरावका सारा चरित्र पिछले परिच्छेदमें परिपूर्ण हो-चुका। अब यहांपर रम्भावतीके विषयमें थोड़ा उल्लेख अवश्य करना है। मनुष्य सोचता कुछ है; और होता कुछ है! वह तो प्राय: इसी विचारसे अपने सब कार्य करता है कि, ऐसा करनेसे अमुक अमुक परिणाम होगा; परन्तु कभी कभी ऐसा भी होजाता है कि, जो कुछ वह सोचता है, वह तो होता ही नहीं; और कुछ अन्य ही परिणाम उसके सामने उपस्थित होता है। रम्भावतीने इस उद्देश्यसे वह हलाहल पान किया था कि, जिससे उसके पतिकी आंखों देखते उसके अन्तःकरणकी पवित्रता स्पष्ट प्रकट होजाय; और वह अपने उस अत्यन्त अपवित्र जीवनक्रमसे मुक्त होजाय। पर बेचारीका उद्देश्य जैसाका तैसा सिद्ध नहीं हुआ। वह बेहोश पड़ी थी—ज़हरका पूरा पूरा प्रभाव उसपर अभी नहीं होपाया था कि, इतनेमें एक दासी वहां पहुंच गई। परिणाम यह हुआ कि, चारों ओर दौड़-धूप शुरू होगई, और राजवैद्यकी औषधियां देकर उसके विषका प्रभाव नष्ट किया गया; पर फिर भी वह सर्वथा चंगी कभी नहीं हुई। हृदयको अत्यन्त पवित्र और दृढ़ रखकर बाहरकी दुस्सह यातनाओंमें उसे और भी बहुतसा समय व्यतीत करना पड़ा। हां, इतना

अवश्य हुआ कि, बादशाहकी कृपा उसपर बराबर वैसी ही बनी रही। सैयदुल्लाख़ांकी मृत्युसे बीजापुरके दरबारमें, और दर-बारसे बाहर भी, किसीको कोई शोक नहीं हुआ। बहुत जल्द बादशाहके मनसे भी उसका नाम पानीकी लकीरकी भांति ही मिट गया, जैसा कि रामदेवरावने सैयदुल्लाख़ांसे कहा था। इधर बादशाहके पास यह समाचार भी आया कि, सुलतान-गढ़का क़िला शहाजीके लड़केने लेलिया। पर उसका भी बाद-शाहको कोई विशेष महत्व मालूम नहीं हुआ। शिवाजीपर कोई विशेष क्रोध भी उसका नहीं देखा गया; और यदि कुछ देखा भी गया, तो वह बहुत दिनतक टिक नहीं सका। क्योंकि इधर शिवाजीकी ओरसे भी दरबारको इस अभिप्रायका एक पत्र लिखा गया कि, मैं भी आपका सेवक ही हूं—आपके सेवकका एक पुत्र हूं—इस क़िलेपर सिर्फ इसी उद्देश्यसे आकर रहने लगा हूं कि, जिससे इस ओरके प्रदेशकी पूरी पूरी चौकसी रहे। और मेरा कोई भी उद्देश्य नहीं। इस गौरवयुक्त पत्रका दरबारमें अच्छा ही प्रभाव पड़ा; और ऐसा दिखाई दिया कि, उनके इस कार्यका थोड़ेहीमें वहां विस्मरण होगया।

परन्तु ये सब घटनाएं तो बहुत आगेकी हुईं। वास्तवमें क़िला जिस दिन हस्तगत किया गया, उस दिनके बाद फिर क़िलेपर क्या क्या घटनाएं हुईं, सो हमको यहांपर बतलानी चाहिएं।

पाठकोंको मालूम है कि, नानासाहब बहुत बुरी तरहसे घायल हुए थे; और पहले वे मैदानहीमें पड़े थे, फिर शिवाजीने

उनको उठवाकर महलमें भिजवा दिया था। नानासाहबकी धर्म-पत्नी भी, अपनी दासीके साथ, उसी मौक़ेपर क़िलेपर आगई थी, अतएव महलमें पहुँचनेपर नानासाहबकी सेवा-शुश्रूषाका भी बहुत अच्छा प्रबन्ध होने लगा। उस साध्वीने उनकी किस लगनके साथ शुश्रूषा की, सो बतलानेकी आवश्यकता ही नहीं है। नानासाहबका घाव बहुत गहरा था, अतएव लोगोंका ख़याल था कि, यह बहुत दिनमें आराम होगा। और सच ही था; क्योंकि कई दिनतक तो नानासाहब बिलकुल बेहोशीकी ही हालतमें रहे। बाह्य जगत्का उनको कुछ भी ज्ञान नहीं था। एक दिन तो उनकी तबीयत ऐसी ख़राब होगई कि, उस रातको उनका बचना बहुत ही कठिन दिखाई देने लगा। नानासाहबकी उस दशामें सभी लोगोंका मन बहुत ही उदास होरहा था; पर उसमें भी दो व्यक्तियोंका मन बहुत अधिक शोकग्रस्त दिखाई देरहा था। एक व्यक्ति तो नानासाहबकी स्वयं धर्मपत्नी और दूसरी फ़तिमाकी स्वामिनी रणदुल्लाख़ांकी बहन मेहरजान। बचपनकी कई घटनाओंके कारण मेहरजानका प्रेम नानासाहब-पर पूर्णतया होगया था। परन्तु यह बात स्पष्टतया कभी किसी पर भी प्रकट नहीं हुई थी। मेहरजान एक अत्यन्त कुलीन घरकी बेटी थी। फ़तिमाके अतिरिक्त उसके मनका भाव, शब्दोंसे तो क्या—कल्पनासे भी और किसीपर प्रकट नहीं हुआ था। नाना-साहबकी धर्मपत्नीको जब उसके भ्राताने बीजापुरमें लेजाकर अपने महलके पास ही रखा, तब उसको इस बातका समाचार

तुरन्त ही मिल गया था; और उसने इस बातकी भी ख़बरदारी रखी थी कि, उसके भाई रणदुल्लाख़ांके द्वारा उसके साथ कोई अविचारपूर्ण व्यवहार न होने पावे। यही नहीं, बल्कि अहमदने जब नानासाहबको अत्यन्त नीचताके साथ उसके महलके तहख़ानेके अन्दर लाकर बन्द किया, तब मेहरजानके ही कहनेसे फ़तिमाने उनके साथ उतना अच्छा व्यवहार किया था; और उनकी सब प्रकारकी फ़िक्र रखी थी, सो पाठकोंने उसी समय ताड़ लिया होगा। पहले-पहल तो जब फ़तिमाको यह मालूम हुई कि, अहमद यह जिस व्यक्तिको क़ैद कर लाया है, वह अमुक ही व्यक्ति है, तब उसने तुरन्त जाकर अपनी मालकिनसे नहीं बतलाया; क्योंकि वह जानती थी कि, इस समाचारको पाकर हमारी मालकिनको बड़ा दुःख होगा; और रणदुल्लाख़ांसे वह प्रकट रूपसे कुछ कह भी नहीं सकेगी। इसके सिवाय अहमदने उसे यह भी विश्वास करा दिया था कि, नानासाहबको रणदुल्लाख़ांकी आज्ञासे ही यह कष्ट दिया जारहा है। किन्तु, जो हो, अन्ततक वह समाचार फ़तिमा गुप्त नहीं रख सकी। अपनी मालकिनसे उसे बतलाना ही पड़ा; और नानासाहबको छुड़ानेके लिए मेहरजान, अपनी लाज एक ओर रखकर, उस तहख़ानेकी ओर गई, वहां उसे उसके भाईने भी देख लिया, इत्यादि सब बातें पाठकोंको मालूम हैं। यहांपर सिर्फ़ तात्पर्य यही है कि, रणदुल्लाख़ांको भी इस बातका संशय हो गया था कि, मेहरजान नानासाहबपर प्रेम रखती है। किन्तु उसने अपने

उस संशयको मिटानेका कभी प्रयत्न नहीं किया। उसको ओर वह उपेक्षाकी दृष्टिसे ही देखता रहा। हां, एक दो बार जब उसने मेहरजानके विवाहके सम्बन्धमें बात निकाली, तब मेहर-जानने यही प्रकट किया कि, वह विवाह नहीं करेगी—आजन्म अविवाहिता रहेगी। इससे उसका उपर्युक्त संशय दृढ़ अवश्य हो गया।

जो हो, नानासाहबकी उस आसन्नावस्थामें मेहरजानके मनकी जो दशा होरही थी, उसकी कल्पना पाठकोंको स्वयं ही करनी चाहिए। नानासाहब जितने दिन बीमार रहे, उतने दिनोंके बीचमें कई बार वह उनको देखने आई थी। परन्तु बराबर बहुत देरतक वह कभी नहीं बैठी। परन्तु आज, जबकि नाना-साहबकी दशा बहुत ही ख़राब होरही थी, वहांसे उठनेको उसका जी नहीं चाहता था; और बराबर उसके नेत्रोंमें आंसू आरहे थे; परन्तु फिर भी उन आंसुओंको उसने किसीपर प्रकट नहीं होने दिया। सायंकाल होनेको आया; परन्तु फिर भी नाना-साहबकी हालतमें कोई अच्छा परिवर्तन नहीं हुआ। क्षण क्षण-पर अंदेशा बढ़ रहा था। सूर्याजी इत्यादि सभी लोग बाहर उप-स्थित थे। उन्होंने अप्पासाहबसे भी जाकर नानासाहबका वह समाचार बतलाया। उद्देश्य यह था कि, अन्तमें भी बुड्ढा यह कहे कि, अच्छा,अब मैं लड़केके पास बैठने जाता हूं। परन्तु उनका यह उद्देश्य सफल नहीं हुआ। बुड्ढा अत्यन्त ही दृढ़ और सच्चा स्वामिभक्त पुरुष था। अतएव उस भयंकर दशामें भी

उसने यही कहा कि, अब मैं यहां नहीं रहूंगा, उसका मुख नहीं देखूंगा।" यह सुनकर उस बुड्ढे के विषयमें सर्वसाधारण लोगोंके मनमें कुछ तिरस्कारहीके भाव उठे; परन्तु शिवबाके मनमें अत्यन्त पूज्यभाव उत्पन्न हुआ। उन्होंने सोचा कि; सेवक ऐसा ही होना चाहिए—तभी स्वामीका कल्याण होता है। इसके बाद उनके मनमें यह बात भी आई कि, अन्तमें मैं भी अप्पासाहबसे दो चार बातें नम्रतापूर्वक करूंगा; और उनको समझा-बुझाकर अपने अगले कार्यकी सहायताके लिए उनको रख लूंगा। इस प्रकार मन ही मन सोचकर वे चुप बैठे रहे।

इधर आधीरातके बाद नानासाहबकी प्रकृतिमें कुछ परिवर्तन हुआ; और धीरे धीरे प्रभातकालतक उनको बहुत कुछ आराम मालूम हुआ। यही नहीं, बल्कि उस समय उन्होंने पहले ही पहल अपनी आंखें खोलकर इधर उधर देखा भी। उसी समय अचानक उनकी दृष्टि मेहरजानकी ओर भी गई। उसके साथ उनकी चार आंखें हुईं। मेहरजानको उस समय जो सन्तोष हुआ, उसका वर्णन करना कठिन है। उसने समझ लिया कि, अब इनको मृत्युका भय नहीं रहा; और तुरन्त ही उसने हर्षसे यह कहते हुए नानासाहबकी पत्नीको आलिंगन किया कि, "अब संकट गया, खुदाने आपपर मेहर की!" इसके बाद एकाएक न जाने क्या विचार उसके मनमें आया; और वह तुरन्त उठकर अपने महलको चली गई। इसके बाद फिर नानासाहबकी तबीयत बराबर अच्छी ही होती गई; और लगभग

तीन दिनमें वे बिलकुल होशमें आगये। परन्तु उनके होशमें आते ही एक नवीन संकट उपस्थित हुआ। अपनी बेहोशीकी हालतमें वे अपनी धर्मपत्नीके हाथसे औषधि-पानी लेनेमें आना-कानी कर ही नहीं सकते थे। परन्तु जब वे होशमें आगये, तब उनका अपनी स्त्रीके सम्बन्धका पूर्व दुराग्रह फिर उद्भूत हो-आया; और उनका चित्त बहुत ही खिन्न होगया। उनके मस्तकमें बराबर सिकुड़न पड़े रहते! हां, उन्होंने प्रकाश्य-रूपसे अपने कुविचारोंके विषयमें एक अक्षरका भी उच्चारण नहीं किया। प्रकट रूपसे यदि वे कुछ कहते, तो उनको समझानेका कोई न कोई प्रयत्न करता। जो हो, उनकी पत्नीने अवश्य ही उनके दिलकी बात ताड़ ली। परन्तु उनकी उस सन्दिग्धावस्थाका निराकरण किस प्रकार किया जाय, सो उस बेचारीको कुछ सूझ नहीं पड़ता था। निस्सन्देह, वह यह समझती थी कि, उसकी मूर्त्ति उसके पतिके सम्मुख रहनेसे उसके पतिको कष्ट होता है; पर वह यदि उनके पास न रहे, तो उनके औषधोपचार और पथ्यपानी-का ठीक ठीक प्रबन्ध किस प्रकार हो? बेचारी बड़ी चिन्तामें थी। दो दिन उसे इसी चिन्तामें बीते। परन्तु पतिदेवके मनकी अवस्था सुधरनेके कोई भी लक्षण दिखाई नहीं दिये। उसकी दासी बड़ी विलक्षण स्त्री थी। वह स्पष्टरूपसे नानासाहबसे सब कुछ पूछ बता सकती थी; पर केवल पूछने बताने अथवा बहस करनेका वह मौका न था। अब तो ऐसे किसी मनुष्यकी आवश्यकता थी कि, जो नानासाहबके मनका उक्त सन्देह

बिलकुल जड़-मूलसे मिटा सके। परन्तु ऐसा मनुष्य कौन था? हां, एक मनुष्य था। इसलिए नानासाहबकी स्त्रीने सोचा कि, देखो—यदि वह मनुष्य हमारे मनके अनुकूल कार्य कर दे, तो बहुत ही अच्छी बात हो। वह मनुष्य मेहरजान है। मेहरजानके ही भाईके पंजेमें फँसकर दुर्भाग्यवश वह अपने पतिके लिए संशयका कारण बन गई थी; परन्तु थी वह बिलकुल निष्कलंक परन्तु इस बातको प्रत्यक्ष बतलाकर नानासाहबको विश्वास कौन दिला सकता था? वही मेहरजान दिला सकती थी, उसके सिवाय और किसीको भी वैसा करनेकी सामर्थ्य न थी; और न किसी दूसरेकी बातका उतना विश्वास ही नानासाहबको हो-सकता था। यही सब सोच समझकर नानासाहबकी धर्म-पत्नीने यह निश्चय किया कि, जो भी कुछ हो, इस मौकेपर मेहरजानसे मिलकर इस विषयमें हमको उससे प्रार्थना करनी चाहिए। यह सोचकर वह तुरन्त ही मेहरजानके पास गई; और सरलतापूर्वक अपने आनेका सब कारण स्पष्टरूपसे उसको बतलाया।

मेहरजानने देखा कि, यह एक बहुत ही विचित्र प्रकारका कार्य उसके सामने आया, अतएव स्वाभाविक ही उसके मनकी बड़ी विचित्र दशा हुई! वह कुछ देर तो बिलकुल स्तब्ध बैठी रही। जिस पुरुषपर आजतक उसका इतना प्रेम रहा, उसी पुरुषसे इस अवस्थामें उसे बोलनेका मौक़ा आरहा है; और सो भी दूसरेके विषयमें! कैसी विलक्षण घटना है! परन्तु उसने

सोचा कि, इस समय नानासाहबके प्राणोंको बचानेके लिए, और इस साध्वीकी निष्कलंकता स्पष्टरूपसे प्रकट करके बतलानेमें, बिलकुल संकोच न करना चाहिए। यह सोचकर उसने नानासाहबके पास आकर उनसे बोलना स्वीकार किया। उनके साथ एक बार बातचीत करनेका उसे और भी मौक़ा आया था; और वह अवसर बराबर उसके हृदयपर खचित होरहा था। हां, नानासाहबको अवश्य ही उसका कभी स्मरण नहीं आया। अस्तु। उस बेचारी साध्वी स्त्रीको क्या पता कि, मेहरजानके मनकी, हमारी इस प्रार्थनाके कारण, इस समय क्या दशा होरही है।

इधर मेहरजानके सिपाहियोंको इस बातपर बड़ा आश्चर्य होरहा था कि, अब यद्यपि क़िला दूसरेके हाथमें चला गया है; और जिसके हाथमें क़िला गया है, उसने यद्यपि हमको यहांसे रवाना होजानेकी आज्ञा भी देदी है, फिर भी न जाने क्यों हमारी मालकिन अभीतक क़िलेको छोड़नेकी इच्छा नहीं कर रही है। इस बातका आश्चर्य अन्य सब लोगोंको तो हो रहा था; पर उनमें एक ऐसी भी थी, जिसे कुछ भी आश्चर्य इस बातका नहीं मालूम होरहा था; और वह थी—फ़तिमा। परन्तु फ़तिमाने भी सच्चा कारण कभी किसीसे प्रकट नहीं किया; किन्तु वह अपने सिपाहियोंसे सिर्फ़ यही कहती कि, "ख़ांसाहबके कर्नाटकसे वापस आजानेका समाचार जबतक प्राप्त न [होजाय, तबतक बीजापुर हम लोगोंका जाना

उचित न होगा, इसीलिए हमारी मालकिन अभी यहांसे नहीं जारही हैं।" इसके अतिरिक्त क़िलेके हस्तगत होजानेपर राजा शिवाजीने उन सबके साथ इतना उत्तम व्यवहार किया कि, मेहरजानके वहां रहनेसे उसके लोगोंको कोई कष्ट भी नहीं मालूम होरहा था। स्वयं मेहरजानके साथ तो शिवाजीके लोगोंने इतना सम्मानपूर्ण व्यवहार किया कि, जिससे उसके मनमें आया कि, बीजापुर जानेकी अपेक्षा यहां रहना ही; इस दृष्टिसे भी, विशेष अच्छा है। अस्तु।

मेहरजान अपने दिये हुए वचनोंके अनुसार, उसी दिन शामको नानासाहबसे मिलने गई। उसने अपने मनमें यह निश्चय किया था कि, परदेकी ओटमें बैठकर उनसे बातचीत करेंगी; और जो कुछ कहना होगा, कह देंगी; तथा फिर तुरन्त ही उठकर चली आवेंगी। अपने इसी निश्चयके अनुसार उसने फ़तिमाको; सब प्रबन्ध करा रखनेके लिए, पहले ही भेज दिया था। फ़तिमाकी और नानासाहबकी अच्छी पहचान थी। इस-लिए नानासाहबके पास पहलेसे ही जाकर उनको उसने सब बातें समझा दीं कि, आज मेहरजान आपसे मिलने आनेवाली हैं; और जो बातें वे आपसे कहें, उनको आप ध्यानपूर्वक सुनेंगे, इत्यादि जो कुछ,उसको कहना सुनना था;और जो प्रबन्ध करना था, सो सब करके वह फिर अपनी मालकिनके पास वापस गई; और नानासाहबके पास उसको लेआई। इधर मेहरजानने जबसे नानासाहबकी स्त्रीको आनेका वचन दिया था; और विशेषकर

जबसे उसने फ़तिमाको पहलेसे ही सब प्रबन्ध कर आनेके लिए वहां भेजा था, तबसे उसका चित्त बहुत ही व्याकुल हो-रहा था। वह यही सोच रही थी कि, हम क्या कहेंगी, और किस प्रकारसे कहेंगी, जो कुछ हमको कहना है, उसके कहनेके बाद और तो कोई शब्द हमारे मुंहसे न निकल जायंगे? इस प्रकारके अनेक विचार उसके मनमें आरहे थे। फिर जब ठीक मौक़ेका समय आगया, तब तो उसका चित्त बहुत ही व्यग्र हुआ। तथापि वह चली; और नानासाहबके भवनमें जहां उसके बैठनेकी योजना कीगई थी, वहीं जाकर बैठ गई। परन्तु वहां बैठनेपर भी उसे अपने मुंहसे एक शब्द भी बाहर निकालनेका साहस न होरहा था। फ़तिमा उससे बार बार इशारा कर रही थी कि, "बोलो, कुछ बोलो।" पर फिर भी उसे बोलनेका साहस न होता था। अन्तमें बहुत ही धैर्य करके उसने ये शब्द उच्चारण किये—"नानासाहब, व्यर्थके सन्देहमें पड़कर आप बिना कारण अपनी बीमारी और बढ़ा रहे हैं। आपका सन्देह बिलकुल ही अप्रयोजक और मिथ्या है। इस विषयमें आप रत्तीभर भी शंका न लावें। यदि मेरे शब्दोंकी आपको रत्ती-भर भी क़ीमत हो, तो आप मेरे कथनपर पूर्ण विश्वास रखें। आपकी पत्नी बिलकुल निष्कलंक साध्वी है—इससे अधिक और क्या कहूं? अपने अप्रयोजक सन्देहसे आप अपनी बीमारी बढ़ा रहे हैं, अपनी पवित्र पत्नीको व्यर्थके लिए कष्ट देरहे हैं; और..."

आगे उसके होंठपर "मुझे भी" ये शब्द अवश्य आये थे।

परन्तु उनको वह फिर पीछे लौटा लेगई; और चुप होरही। बिलकुल चुप होरही। उपर्युक्त शब्द उसने इतने गद्गद कंठसे निकाले कि उनको सुनकर नानासाहबके शरीरपर एकदम रोमाञ्च होआया; और उनके हृदयमें यह बात बिलकुल जम गई कि, इसके प्रत्येक शब्दमें सत्यता पूर्णतया भरी हुई है; और यही नहीं, बल्कि बोलनेवालेका हृदय भी उसके साथ ही साथ अत्यन्त प्रेमसे हमारी ओर दौड़ता आरहा है। उन शब्दोंको सुनते ही वे बिलकुल स्तब्ध होगये। जब स्वयं मेहरजान उस विषयमें खुलासा कह रही है, तब संशयके लिए स्थान कहां? कुछ देरतक स्तब्ध रहनेके बाद नानासाहब बोले, "तुम्हारा वचन हमारे लिए प्रमाण है। हमको विश्वास होगया। इतने दिनतक हमने बिना कारण अपनेको क्लेशमें डाले रखा। इसके लिए क्षमा करो।"

नानासाहब जिस समय स्तब्ध थे, मेहरजानका चित्त बहुत ही आतुर होरहा था। जिस बातका उसे अबतक भय था, वह बात आज फिर उसके ध्यानमें आई। किसी समय जबकि वह अपनी छोटी अवस्थामें थी, उसका पिता इसी तरह उसे सुलतानगढ़पर लाया था। उस मौक़ेपर एक बार वह नानासाहबके साथ खेल रही थी। खेलते खेलते दोनोंमें कोई विनोदपूर्ण वार्तालाप हुआ। नानासाहब तो उसे केवल विनोद समझकर तत्काल ही भूल गये; पर मेहरजानके हृदयपर वह वार्तालाप वैसा ही बना रहा; और अबतक अनेक बार उसके मनमें

वह बात आई भी थी। नानासाहबको उस बातकी बिलकुल याद नहीं थी; और यदि याद भी होती, तो भी उससे कोई लाभ न था; यह बात मेहरजान भी जानती थी। पर फिर भी, जब उसने देखा कि, नानासाहबको सचमुच ही उस बातकी बिलकुल याद नहीं, तब उसे बहुत खेद हुआ। और उसके मनमें आया कि, लाओ, उस बातका स्मरण एक बार इन्हें दिला दें। यही नहीं, बल्कि उसने यह भी सोचा कि, खाली स्मरण ही न दिलावें; किन्तु बीचमें जो यह परदा लगा हुआ है, उसको एक ओर हटाकर, उनके मुखकी ओर एक बार देखकर, तब उस बातका स्मरण उनको दिलावें। क्षणभरमें ही उसका यह विचार इतना प्रबल हुआ कि, परदेकी ओर जानेको उसका हाथ और बोलनेके लिए उसके होंठ—ये दोनों एक साथ ही चले; पर उसकी नैसर्गिक शालीनता एक क्षणमें उसको चेतानेके लिए दौड़ पड़ी; और एकदम उसके मनमें आया कि, "ऐसा करना हमारा व्रत नहीं।" यह भाव उसके मनमें आनेमें देर नहीं लगी कि, वह उठकर एकदम बिजलीकी तरह वहांसे लपक गई! यही नहीं, बलिक उसने सोचा कि, जो बात इस समय हमारे मनमें आई, शायद फिर कभी आजाय; इसलिए उसको आनेका मौक़ा ही न रखा जाय; और इसीलिए महलमें पहुँचते ही उसने अपने आदमियोंको एकदम वहांसे कूच कर देनेका हुक्म दिया।

इधर शिवाजीने अप्पासाहबका चित्त अपनी ओर खींचनेका

बहुत कुछ प्रयत्न किया। परन्तु उन्होंने कहा कि, "तेरे समान भ्रष्ट मनुष्यके कारण ही मेरे समान स्वामिभक्त पुरुषोंके लड़के बिगड़े जारहे हैं। मेरा लड़का एक सिर्फ तेरे ही कारणसे बिगड़ा; और ऐसा बिगड़ा कि मैं उसके लिए और वह मेरे लिए बिल्कुल दुश्मन होगया। अब यदि तुझमें कुछ भी भलमनसाहत हो, तो तू मुझे, जहां मेरा मन हो, वहां जाने दे। मेरे लड़केने मेरे मनके विरुद्ध चलकर जितना मुझे सन्ताप दिया है, उतना सन्ताप तेरे लड़केके कारणसे तुझे न हो, यही मेरी इच्छा है। मुझसे स्वामिद्रोह करानेके लिए अब तू मेरे सामने घृणित बातें करके मेरे कान अपवित्र मत कर। जा, मेरा कमबख़्त अभागा लड़का तुझे मिल ही गया है, बस वही काफी है।" इतना कहकर बुड्ढा बिगड़कर उठ खड़ा हुआ। परन्तु शिवाजीके मनसे उनके विषयका पूज्य भाव ज़रा भी कम नहीं हुआ। उन्होंने अप्पासाहबसे सिर्फ इतना ही कहा कि, "अप्पासाहब, ऐसा जान पड़ता है कि, मेरे इन सम्पूर्ण कार्योंका उद्देश्य आपके ध्यानमें नहीं आया। अस्तु। मैं आपको क्षणभरके लिए भी प्रतिबन्धमें नहीं रख सकता। जहां आपकी इच्छा हो, आनन्दपूर्वक जासकते हैं।" बुड्ढा उसी दिन वहांसे चला गया। इधर सुलतानगढ़का क़िला जिस दिनसे शिवबाके हाथमें आया, उस दिनसे श्रीरामदासस्वामीका वह वचन उनको कई बार याद आया कि, जो उन्होंने शिवाजीसे कहा था। श्रीसमर्थने यही कहा था कि, कोई न कोई सिद्धि होनेपर मैं तुमको

दर्शन देने वहीं आऊंगा। और इसी वचनका स्मरण करके शिवाजीने श्रीधरस्वामीको श्रीसमर्थकी सेवामें पहलेहीसे भेज दिया था कि, आप चलकर वहां देखें—श्रीसमर्थका कैसा विचार है, कब आवेंगे, इत्यादि। इसलिए अब राजा शिवाजी इसी प्रतीक्षामें थे कि, श्रीधरस्वामी, देखें, अब कब लौटते हैं; और अकेले लौटते हैं या श्रीसमर्थको भी साथमें लिये आते हैं।

—— ——

अस्सीवां परिच्छेद।

समाप्ति।

सुलतानगढ़ हस्तगत होजानेके बाद जितनी 'कुछ घटनाएं हुई', उन सबका वर्णन ऊपर किया जाचुका है। अब उन घटनाओंके बाद और नानासाहबके आराम होजानेके बाद शिवबाका सारा ध्यान किस ओर लग रहा था, सो भी पाठकोंको पिछले परिच्छेदके अन्तमें मालूम होचुका। क़िलेके हस्तगत होजानेके बादसे ही शिवाजीके मनमें एक यह विचार भी बराबर आरहा था, कि, क़िला एक बार हमने हस्तगत तो कर लिया; पर अब ऐसे कौन, कौनसे प्रयत्न किये जायँ कि, जिससे क़िला स्थायी रूपसे हमारे हाथमें बना रहे; और दिन प्रतिदिन हमको अपने अभीष्ट उद्देश्यमें अधिकाधिक सफलता प्राप्त होती रहे। प्रायः संसारमें ऐसे ही लोग विशेष देखे जाते हैं कि,

उनको जो कुछ मिल जाता है, उसीमें फूलकर सन्तुष्ट हो रहते हैं; पर नहीं, शिवाजीकी महत्वाकांक्षा बहुतही भारी थी—उनकी उस महत्वाकांक्षाको, महत्वाकांक्षा कहना ठीक नहीं होगा; बल्कि उस महत्वाकांक्षाको 'महत्वाकांक्षा' न कहकर यदि "दीन-हीन लोगोंको यवनोंके अत्याचारसे छुड़ानेकी इच्छा" कहा जाय, तो विशेष उपयुक्त होगा। यह इच्छा उनकी इतनी प्रबल थी कि, जिसके कारण केवल उस क़िलेको ही प्राप्त कर लेने भरसे उनको कोई सन्तोष नहीं हुआ। बल्कि, उनके मनमें अब बार बार यही विचार आने लगा कि, यह क़िला जो प्राप्त हुआ है, उसको स्थायी रूपसे अपने कब्ज़ेमें कैसे रखा जाय; और आगे भी इसी प्रकारके कार्योंमें हमको सफलता किस प्रकार मिलती रहे, जिससे दिनपर दिन हम अपने उद्देश्यके समीप समीप पहुँचते जायँ। बस, इन्हीं बातोंका विचार वे बार बार अपने मनमें कर रहे थे। इसके सिवाय, इस बातका तो उन्हें पूर्ण विश्वास था कि, भवानी माताकी कृपासे ही हमको यह विजय प्राप्त हुआ है; और श्रीगुरुमहाराजके प्रसादका इसमें सहारा है। बस, इसीकारण वे इस बातकी प्रतीक्षामें थे कि, देखें अब गुरुवर्य कब आते हैं; अथवा कब हमें अपने समीप बुलाते हैं। इधर क़िलेपर जो प्रबन्ध करना था, उसका प्रारम्भ उन्होंने करा दिया था। किस किस ओरकी क़िलेबन्दीमें क्या क्या कसर है, किस ओरसे शत्रुके आनेसे क़िलेके जीतनेमें उसको सुविधा है, उस सुविधाको नष्ट करनेके लिए—क़िलेके

उस पार्श्वको विशेष रूपसे अगम, अभेद्य तथा बिकट बना देनेके लिए—क्या क्या योजना करनी चाहिए, इत्यादि सभी बातोंका वे विचार कर रहे थे। शिवाजीका लड़कपनसे ही यह तरीक़ा, अथवा स्वभाव था, कि जो कुछ करना हो, वह अत्यन्त विचार-पूर्वक तो किया ही जाय; पर उसके लिए व्यर्थमें दस-पांच मनुष्योंकी सलाह लेते रहनेकी कोई आवश्यकता नहीं। जहां-तक मुमकिन हो, स्वयं अपने निजके ही विचारसे प्रत्येक बातका निर्णय किया जाय; और फिर जब कोई बात अपने मनमें निश्चित होजावे, तब फिर, अपने ढंगसे, उसको पूरा करनेमें दूसरोंसे मदद लीजाय। एक बार जहां उनका विचार निश्चित होगया; और जो कुछ मनमें आया, उसीके अनुसार वे हुक्म देते; और उसको अमलके लानेके लिए किसी मनुष्यकी, जो उसके योग्य होता, योजना कर देते थे। फिर वह मनुष्य यदि अपने कार्यमें कुछ भी त्रुटि करता, तो यह बात उनसे सहन नहीं होती थी। उनके अगलेके चरित्रमें तो हमारा उपर्युक्त कथन चरितार्थ हुआ ही है; पर उनकी कई बातोंसे यह भी प्रमाणित होता है कि, लड़कपनसे ही उनमें इसी प्रकारकी प्रवृत्ति थी; और अपने इसी तरीक़ेसे वे सदैव काम लिया करते थे। कहना नहीं होगा कि, शिवाजीके समान व्यक्ति सदैव उत्पन्न नहीं हुआ करते; किन्तु जब समय आजाता है; और परमेश्वरका वैसा ही प्रसाद भी होता है, तभी ऐसी विभूतियां उत्पन्न होती हैं। अस्तु। क़िलेको जीतनेमें जिन जिन लोगोंसे सहायता मिली थी, उन

उन सब व्यक्तियोंको यथोचित रीतिसे पुरस्कृत करनेका उन्होंने निश्चय किया। परन्तु हां, साथ ही साथ उन्होंने इस बातका भी विचारकर रखा कि, जिन लोगोंने सचमुच ही कार्यकी ओर ध्यान रखकर सहायता दी थी, उन्हींको उचित पुरस्कार दिया जाय; और बाकी जिन लोगोंने केवल अपने स्वहितकी ही ओर ध्यान रखकर अपने पहलेके स्वामीसे दग़ाबाज़ी की थी, उनको, उनकी योग्यताके अनुसार ही, पुरस्कृत अथवा तिरस्कृत किया जाय। श्यामापर वे बहुत प्रसन्न थे, इसलिए उसको सदैव अपने पास रखनेका उन्होंने निश्चय किया। और अपना यह निश्चय उन्होंने स्वयं श्यामा और उसकी माँसे प्रकट भी कर दिया। श्यामाका पिछला वृत्तान्त जब उन्होंने सुना, तब उस लड़केके साहस और उसके चातुर्यपर उन्हें बड़ा कौतूहल हुआ। साथ ही उनके मनमें यह आया कि, यह लड़का आगे चलकर बहुत ही अच्छा निकलेगा; और हमारी ओरसे इसको सब प्रकारकी सहायता भी होगी। इसके बाद फिर उन्होंने इस बातका विचार शुरू किया कि, इस लड़केको किस किस प्रकारकी शिक्षा दी-जाय। श्यामाके साथ ही साथ एक चौकीदार (सर्फोजी) का भी नाम निकला। इसका व्यवहार बहुत ही अप्रामाणिक समझा गया था। क़िलेदारी प्राप्त करनेके लिए इसने अपने स्वामीके साथ बहुत ही दग़ाबाज़ीका व्यवहार किया था। पाठकोंको याद होगा कि, यही चौकीदार सैयदुल्लाखांको अप्पासाहबके विरुद्ध, क़िलेके सब समाचार गुप्त रूपसे पहुँचाया करता था।

एक दिन रातको जब एक घुड़सवार क़िलेके पीछेकी ओर एक पहाड़ीपर इससे कुछ गुप्त वार्तालाप कर रहा था, तब श्यामाने बन्दरकी तरह उस बिकट पहाड़ीपर चढ़कर उन दोनोंकी गुप्त बातें सुनी थीं। अस्तु। इस चौकीदारको शिवाजीने अपने सामने बुलवाया; और उसके मुँहसे उसका सारा अपराध और उसके षड्यंत्र स्वीकार कराये; और फिर उसको बहुत ही भारी दण्ड दिया। नानासाहबको उनके पिताका कार्य देना निश्चित हुआ। सूर्याजीसे सदैव अपने साथ रहनेके लिए कहा। यह सब प्रबन्ध धीरे धीरे उन्होंने किया। नीचेकी बस्तीके पटेलजीको भी यथोचित पुरस्कार दिया गया, साथ ही उनको यह भी आश्वासन दिया गया कि, आपको चार-छै गांवोंकी पटेली और भी दी जायगी। इतना सारा प्रबन्ध किया। पर यह विचार अभी उनके मनमें बना हुआ था कि, यह क़िला, जो हमने लिया है, हमारा पहला प्रयत्न है; अब यह अन्ततक किस प्रकार हमारे पास बना रहे। अब बीजापुरमें यह सब समाचार जावेगा ही; और सैयदुल्लाख़ांकी मृत्युका समाचार भी बादशाहके कानोंमें पहुंचेगा ही उस समय क्या दशा होगी;और क्या नहीं होगी, इस बातका कोई भी अनुमान उनको नहीं होरहा था। परन्तु फिर भी यह सोचकर वे अपने मनको सन्तोष देरहे थे कि, जिन भवानी माता और गुरु महाराजकी कृपादृष्टिसे हमारे लिए इस क़िलेका विजय करना सुलभ हुआ है, उन्हींके कृपाकटाक्षसे फिर भी कोई न कोई युक्ति सूझेगी;और बादशाहको भी हम मना लेंगे।

वास्तवमें शिवाजीका यह सदैवका ही विचार था कि, जबतक प्रत्यक्ष संकट सामने न आ जावे, तबतक वे उसके विषयमें व्यर्थ ही नानाप्रकारके तर्क-वितर्क करनेमें अपना समय और शक्ति नहीं खोते थे। परन्तु जब संकट सामने आजाता था, तब उनको कोई न कोई युक्ति भी तत्काल सूझ जाती थी। वैसा ही इस समय भी हुआ। उनका सारा चित्त वास्तवमें स्वामीके चरणोंकी ओर लगा हुआ था; और साथ साथमें उपर्युक्त सब प्रबन्ध भी करते जाते थे। कई दिन इसी प्रकार बीते। इसके बाद ज्यों ज्यों स्वामीके आनेका समय समीप आने लगा, त्यों त्यों फिर उनका मन अन्य कार्य्योंकी ओर बिलकुल ही न लगने लगा। वे इस बातके लिए बिलकुल आतुरसे होरहे थे कि, कब स्वामी आवें; और कब हम अपने इस प्रथम प्रयत्नका फल उनके चरणोंमें निवेदन करके आगेके लिए उनका आशीर्वाद ग्रहण करें। इस प्रकार कुछ दिन बीतने-पर जब उन्होंने अपने साधारण हिसाबसे यह देखा कि, आज अब उनको अवश्य ही आना चाहिए, तब उस दिन फिर उनका मन इतना चंचल हुआ कि, कुछ पूछिये मत! वे चारों ओरकी क़िलेबन्दीके ऊपरसे इस प्रकार चक्कर काटने लगे कि, कब महाराज दूरसे आते हुए हमें दिखाई देवें, मनका उद्देश्य यह कि, दूरसे आते हुए जब हम उनको देख लें, तब नीचे उतर-कर उनके स्वागतके लिए जावें। इस प्रकार, जबकि वे क़िलेके एक सिरेपर खड़े हुए बड़ी आतुरताके साथ उनके आनेकी

प्रतीक्षा कर रहे थे, उनको ऐसा भास हुआ, जैसे वायव्य दिशाकी ओरसे कुछ लोग आरहे हों। इसके कुछ ही देर बाद उनको निश्चय होगया कि, यह हमारे गुरुवर्यकी ही सवारी आरही है। बस, तुरन्त ही उन्होंने अपने बहुतसे आदमियोंके साथ क़िलेपरसे उनके स्वागतके लिए जानेका निश्चय किया। शीघ्र ही सब लोग चल पड़े। क़िलेके नीचे पालकी इत्यादिका सारा प्रबन्ध पहले ही कर रखा गया था। सब लोग लगभग आध कोसतक उनकी अगवानीको गये, इतनेमें वह दिव्य स्वरूप सचमुच ही सब लोगोंको दीख पड़ा। सबको उनके दर्शनसे विशुद्ध आनन्द प्राप्त हुआ। सब लोगोंने जब उनके चरणोंकी वन्दना इत्यादि कर ली, तब स्वामीने एक बार शिवबाकी ओर किंचित् हास्यपूर्वक देखा; और इतना ही कहा—"कामनाके अनुसार सिद्धि हुई। उस पवनसुत अंजनीकुमार और श्रीजगदम्बाका प्रसाद प्राप्त हुआ। यह ऐसा ही स्थिर रहेगा। बाबा, अपना उद्योग ऐसा ही जारी रख। संकट आवे, तो भी डगमगाना नहीं।" इसके बाद शिवबाने स्वामी महाराजसे पालकीमें बैठनेकी प्रार्थना की। इसपर उन्होंने अर्थपूरित नेत्रोंसे शिवबाकी ओर देखते हुए सिर्फ इतना ही कहा—"पालकीमें बैठनेका अवसर अभी दूर है। इस समय तो उस प्रभु रामचन्द्रके महाभक्तके दिये हुए पैरोंके बलसे ही ऊपर चढ़ेंगे!" शिवबा इन शब्दोंका आशय तुरन्त समझ गये; और फिर उन्होंने पालकीमें बैठनेका आग्रह नहीं किया। सब लोग पैदल ही चलने लगे।

इतनेमें क्या विचित्रता हुई कि, एक स्त्री दौड़ती हुई उनकी ओर आई। उसको देखते ही सूर्याजीने आगे बढ़कर उसको दूर करनेका प्रयत्न किया। परन्तु स्वामीका ध्यान उनकी ओर तुरन्त ही गया; और उन्होंने एकदम पूछा, "वह स्त्री कौन है? मेरे पास लाओ।" इसपर पासके लोगोंने जतलाया कि, "वह पगली है। आपके सामने आकर अदबसे व्यवहार करनेका उसे ज्ञान नहीं है......" इत्यादि। इसपर स्वामीने हँसकर इतना ही कहा—"न जाने उसको ज्ञान नहीं है, या हमको—यह किसको मालूम?" इतनेमें वह स्त्री सचमुच ही उनके सामने आकर उपस्थित होगई; और अपना सदैवका यह गीत—

"मसल गये सब मेरे फूल।
किसी दुष्टने पैर तले ये कुचल मिलाये धूल॥"

अपनी सदैवकी पद्धतिके अनुसार ही गाने लगी; और लोगोंकी अणुमात्र भी लाज न करते हुए अपने हाथ आगे बढ़ा बढ़ाकर हिलाने लगी। यह देखते ही स्वामीने बहुत ही विचित्र चेष्टा बनाई; फिर शीघ्रतापूर्वक स्वयं उसके पास गये; और उसके मस्तकपर हाथ रखकर कहा, "सच है, सच है, दुष्टोंने फूलोंको मसलकर पैरोंसे अवश्य कुचल डाला है। तुझको भी उनकी चिन्ता होरही है न? होंगे—फिर भी शीघ्र ही वे ताज़े होंगे। तू अब चिन्ता बिलकुल न कर।" यह कहकर उन्होंने एक बार फिर अपनी कृपापूर्ण दृष्टिसे उसकी ओर देखा। और "जा, सुखसे रह," इतना कहकर उसे जानेकी आज्ञा दी।

इस घटनाको चाहे कोई चमत्कार कहो, सत्पुरुषका साक्षात्कार कहो, अथवा यह कहो कि, बोलते हुए फूलसे भेंट होगई—जो कुछ कहो; किन्तु स्वामीका उक्त आशीर्वाद सुनते ही उस स्त्रीने अपना वह गाना-रोना-हँसना बन्द कर दिया; और कुलीन स्त्रियोंकी तरह लज्जा-विनयसे पूर्ण होकर, वह वहांसे, कायदेके साथ, चल दी; और वहीं एक ओर वृक्षोंकी घनी छाया देखकर ओटमें जाबैठी। सूर्याजीको उनकी पत्नी फिर जैसींकी तैसी प्राप्त हुई। इस घटनाको देखते ही स्वामीके विषयमें वहांके लोगोंके मनमें जो भाव आये—जो अपूर्व पूज्य भाव और अनुपम भक्ति उनके मनमें उत्पन्न हुई—उसका वर्णन करना बिलकुल असम्भव है। सब आपसमें खुसफुसाकर बातें करने लगे; और आश्चर्यमें चकित होगये। किन्तु स्वामीके मनमें फिर वह बात एक क्षणभर भी नहीं रही। वे जैसेके तैसे फिर आगे चल दिये। क़िलेपर महाराजके पहुंचते ही चारों ओर बड़ी धूमधाम मच गई। बालक, वृद्ध, नर-नारी, सभी स्वामीके दर्शनोंको बड़ी उत्कंठाके साथ दौड़े। सभीकी यह प्रबल इच्छा थी, कि हमको अपने हाथोंसे स्वामीकी कुछ सेवा करनेका सौभाग्य प्राप्त हो; और इसी इच्छाके वश होकर सभी आगे आगे दौड़ने लगे। अन्तमें जब सब लोगोंने यथेच्छ दर्शनसुख और वन्दनसुख प्राप्त कर लिया; और स्वामीके आशीर्वाद पाकर आनन्दित होगये, तब लोगोंकी भीड़ भी धीरे धीरे कम होने लगी। अन्तमें मुख्य मुख्य लोग रह गये। तब श्रीधर स्वामीने समर्थसे स्नान-संध्यादि

नित्यकर्म करनेके लिए उठनेकी प्रार्थना की। स्वामी उठे; और विधिवत् सब कार्य हुए। इसमें एक पहर व्यतीत हुआ। फिर उपाहार होनेके बाद जिस समय स्वामी बैठे हुए थे, राजा शिवाजी फिर उनकी वन्दनाके लिए वहां आये। नानासाहबकी अभी ऐसी दशा नहीं थी कि, क़िलेके नीचे उतरकर फिर ऊपर चढ़ सकते, अतएव वे स्वामीके स्वागतको नीचे जा नहीं सके थे; और न भीड़में ही उनके दर्शनोंको पहुंच सके थे। इसलिए वे भी अब वन्दना करनेको आये। उन्होंने आते ही स्वामीकी चरणवन्दना की; और स्वामीने उनके मस्तकपर हाथ रखकर कहा, "वाह! ख़ूब काम किया! परन्तु अभी और बहुत कुछ करना है! हां, साध्वीके विषयमें व्यर्थके तर्क-वितर्क मनमें मत लाओ। इससे कभी कल्याण नहीं होता।" यह अन्तकी बात सुनते ही नानासाहब भौंचक्के होकर समर्थकी ओर देखने लगे। क्या समर्थको यह बात मालूम है? और मालूम कैसे हुई? वे बड़े आश्चर्यचकित हुए। पर अन्य लोगोंकी भांति उनको भी विश्वास था कि, समर्थकी दृष्टिमें कोई भी बात अज्ञात नहीं है, इसलिए उनका वह आश्चर्य शीघ्र ही दूर होगया; और मन भक्ति-भावसे भर गया। इसके बाद उन्होंने सिर्फ इतना ही कहा— "समर्थकी आज्ञा शिरसावन्द्य है!" यह कहकर उन्होंने अपनी गर्दन नीची कर ली। फिर तीसरे पहर स्वामीके दर्शनोंके लिए नीचेकी बस्ती और आसपासके गाँवोंकी स्त्रियोंके झुंडके झुंड आने लगे। नानासाहबकी धर्मपत्नी भी दर्शनोंके लिए आई।

उनको स्वामीने बहुत ही सुन्दर आशीर्वाद दिया। संध्याकाल होते ही समर्थ फिर अपने सन्ध्यावन्दन जपतपादि नित्य-कर्मोंके लिए गये। सब कर्मोंसे निपटने और समाधि-विधिके समाप्त होनेके बाद फिर बैठक हुई। उस समय राजा शिवाजी, सूर्याजी, नानासाहब, तानाजीराव, येसाजी,कल्याण स्वामी, श्रीधर स्वामी—बस, इतने ही मुख्य मुख्य लोग वहां थे। इतनेमें राजा साहब उठे; और हाथ जोड़कर प्रार्थना की:—

"श्रीभवानी माता और श्रीसमर्थके चरणोंके कृपाप्रसादसे यहांतक तो सब निर्विघ्न पार हुआ;और यह पहली सिद्धि प्राप्त हुई। अब आगे भी ऐसा ही क्रम जारी रखना सर्वथैव महाराजकी ही आज्ञा और कृपाप्रसादपर अवलम्बित है। महाराजकी कृपादृष्टि यदि न होती, तो यह कुछ भी न हुआ होता। मैं महाराजका एक लघु सेवक हूं; और जो कुछ आजतक मुझसे बन पड़ा है; और जो आगे बन पड़ेगा, सो सब महाराजके ही चरणकमलोंमें अर्पण है। आगे क्या होगा, उसका ज्ञान इस दासको कुछ भी नहीं। परन्तु आजका यह प्रथम लाभ, गुरुदक्षिणाके तौरपर, आपके ही चरणोंमें समर्पित करनेकी उत्कट इच्छा है। यह क़िला आजसे मेरा नहीं है, आपका है; और क़िलेके आस-पासके ग्राम भी आपके ही हैं। स्वीकार करके आशीर्वाद दें—यही अभिलाषा है।" यह सुनते ही महाराज ज़ोरसे हँसे; और बोले, "वाह! ख़ूब किया! हमारे इस भगवे पर आगये! क़िले और राज्य ख़ूब शोभा देंगे! बावा, ये क़िले और भावी राज्य न तेरे

हैं, न मेरे। यह तेरा है, अथवा मेरा है—ऐसा विचार मनमें रखकर यदि प्रयत्न करने लगेगा, तो इससे तो न करना ही अच्छा। ऐसा भाव रखकर यदि सफलता भी प्राप्त हो, तो मेरी नज़रमें उसकी कोई क़द्र नहीं। भाव ऐसा मत रख कि, यह मेरा होगा; और इसीलिए मैं इसकी वृद्धि करूंगा; क्योंकि यदि ऐसा समझेगा, तो फिर सारा कारबार ही समाप्त हुआ! वास्तवमें यह तेरा नहीं। यह उनका है कि, जिनको ज्ञान नहीं, बल नहीं; और इसीकारण जिनको बलवान और क्रूर यवनोंका अत्याचार सहना पड़ रहा है—उन्हींका यह सारा राज्य है। हम केवल सूत्रधार हैं। ऐसे भावसे जब तू चलेगा, तभी सिद्धि प्राप्त होगी। और वही श्लाघनीय होगा। इसलिए ऐसी ही भावना रख।"

यह सुनते ही शिवबा क्षणभरके लिए स्तब्ध होरहे। स्वामीका उपदेश उनके हृदयमें बिलकुल गड़ गया; और वे एकदम बोले, "यह सब मैंने किया, अथवा करूंगा—ऐसा भाव मेरा बिलकुल ही नहीं। मैं यह पूर्णतया जानता हूं कि, भवानी माता और आपके चरणोंकी जब कृपा होगी, तभी हाथमें लिए हुए कार्यकी सिद्धि होगी—सिर्फ व्यवहार-दृष्टिसे मैंने उक्त बात कही। इसके लिए क्षमाप्रार्थी हूँ; और—उन अज्ञ तथा दीन-हीन लोगोंके लिए ही—मैं महाराजके चरणोंमें यह गुरुदक्षिणा अर्पण करता हूं। सो मनोभावसे स्वीकार हो; और कोई न कोई चिन्ह महाराजकी ओरसे मुझे मिले, जिससे यह ज्ञात होता रहे कि, आगे जो कुछ सिद्धि होगी, वह महाराजकी ही कृपा-दृष्टिका फल है।"

स्वामीने इसपर भी बहुत कुछ आपत्ति प्रकट की; पर जब सभी लोगोंका अत्यन्त आग्रह देखा, तब तुरन्त ही अपनी भगवे रंगकी एक कफनी,जो वहीं पास ही पड़ी सूख रही थी, उठा ली और शिवबाके हाथमें देकर कहा, "यह लो मेरा चिन्ह। इसका झंडा बनाओ। और जो मैं बतला रहा हूं, उन अक्षरोंको क़िलेपर खुदवाकर सब कागजपत्रोंमें इसी सिक्केका व्यवहार किया करो।"

"विक्रमैर्वर्धिता विष्णोः
सा मूर्तिरिव वामना।
शाहासुतस्य मुद्रेयं,
शिवराज्य राजते॥"

श्रीधर स्वामीने शीघ्रतापूर्वक इन अक्षरोंको टीप लिया, और शिवबाने उस कफनीको मस्तकपर धारण करके बड़े आदरके साथ स्वीकार किया।